महाकवि

ग्वाल व्यक्तित्व एवं कृतित्व

[आगरा विश्वविद्यालय की पी एच० डी० उपाधि के
लिये स्वीकृत शोध प्रबन्ध]

डा० भगवान सहाय पचौरी 'मवेश'
एम० ए०, पी एच० डी०

राज्यश्री प्रकाशन
मथुरा

मूल्य पैंतालीस रुपये।
रु० ४५.००

पुस्तकालय संस्करण

प्रकाशक : प्रमोद बिहारी, बी० कॉम०
राजश्री प्रकाशन, तिलकद्वार, मथुरा

मुद्रक : नत्थाराम पुष्पध
बवाजिंगे प्रिंटर्स, मथुरा

आमुख

उन्नीसवी शताब्दी के प्रथम ५० वर्ष स्थूल रूप से हिंदी के रीति काल और अंतिम ५० वर्ष आधुनिक काल में पड़ते हैं, अतः यह सन्धि युग है और इस अवधि में लिखा गया साहित्य अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण रहा है। इस युग के रीति कवियों की कविता में जहां रीति परम्परा के प्रति आग्रह था, वहीं आधुनिक काल की नई चेतना और नई प्रवृत्तियों की झलक भी उसमें परिलक्षित होने लगी थी। अतीत के प्रति मोह और वर्तमान के प्रति जिज्ञासापूर्ण दृष्टि— इन दोनों के गंगा जमुनी सामंजस्य की झांकी इस शती के अंतिम चरण के काव्य में स्पष्ट दिखाई देती है। इस दृष्टिकोण से इस शती के काव्य पर अभी तक विचार नहीं किया गया। इसमें भी रीति के अंतिम प्रसिद्ध आचार्य कवि ग्वाल के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रामाणिक अध्ययन प्रस्तुत करने की बात तो दूर रही अभी तक इनके अनुपलब्ध ग्रन्थों की न तो खोज का ही प्रयास हुआ और न उनकी कोई प्रामाणिक ग्रन्थावली ही अब तक तैयार हो पाई। इस शोचनीय स्थिति में आज से प्रायः चार वर्ष पूर्व इस कवि के ग्रन्थों की खोज और उनकी प्रतिलिपियाँ तैयार करने का मैंने सकल्प किया था। यह कार्य लगभग दो वर्ष में पूर्ण हो सका। ग्वाल ग्रन्थावली संगृहीत होने पर ग्वाल पर अध्ययन प्रस्तुत करने का विचार बनना स्वाभाविक ही था। इसके साथ उन्नीसवीं शताब्दी के रीतिकाव्य का अध्ययन भी अत्यन्त आवश्यक था। अतः मेरे शोध-प्रबन्ध का विषय उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य और उसके अंतर्गत ग्वाल कवि का विशेष अध्ययन बना। मुझे हर्ष है कि उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य के परिप्रेक्ष्य में ग्वाल कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व को समग्र रूप में उभारने वाला यह प्रथम शोध प्रबन्ध मां भारती के मन्दिर में निवेदित हो रहा है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध दस अध्यायों में विभक्त किया गया है, जिनमें से प्रथम चार अध्यायों में इस शती के रीति काव्य का विवेचन प्रस्तुत है और अंतिम छः अध्याय ग्वाल कवि के विशेष अध्ययन को अर्पित हैं। इस प्रकार इस शती के रीति काव्य के परिप्रेक्ष्य में कवि का व्यक्तित्व और कृतित्व विशद रूप में विवेचित हुआ है। रीतिकाव्य का विवेचन करते समय अठारहवीं शताब्दी के रीति काव्य को भी दृष्टिपथ में रखा गया है, जिससे आलोच्य शती

मूल्य पैंतालीस रुपया
रु० ४५.००

पुस्तकालय संस्करण

प्रकाशक : प्रमोद बिहारी, बी० कॉम
राजश्री प्रकाशन, तिलकद्वार, मथुरा

मुद्रक : नत्थाराम पुष्पद
चकालिथो प्रिंटर्स, मथुरा

आमुख

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम ५० वर्ष स्थूल रूप से हिन्दी के रीति काल और अन्तिम ५० वर्ष आधुनिक काल में पड़ते हैं, अतः यह संधि युग है और इस अवधि में लिखा गया साहित्य अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण रहा है। इस युग के रीति कवियों की कविता में जहाँ रीति परम्परा के प्रति आग्रह था, वहीं आधुनिक काल की नई चेतना और नई प्रवृत्तियों की झलक भी उसमें परिलक्षित होने लगी थी। अतीत के प्रति मोह और वर्तमान के प्रति जिज्ञासापूर्ण दृष्टि— इन दोनों के गंगा जमुनी सामंजस्य की झाँकी इस शती के अंतिम चरण के काव्य में स्पष्ट दिखाई देती है। इस दृष्टिकोण से इस शती के काव्य पर अभी तक विचार नहीं किया गया। इसमें भी रीति के अन्तिम प्रसिद्ध आचार्य-कवि ग्वाल के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रामाणिक अध्ययन प्रस्तुत करने की बात तो दूर रही अभी तक इ के अनुपलब्ध ग्रंथों की न तो खोज का ही प्रयास हुआ और न उनकी कोई प्रामाणिक ग्रन्थावली ही अब तक तैयार हो पाई। इस शोचनीय स्थिति में आज से प्रायः चार वर्ष पूर्व इस कवि के ग्रन्थों की खोज और उनकी प्रतिलिपियाँ तैयार करने का मैंने संकल्प किया था। यह कार्य लगभग दो वर्ष में पूर्ण हो सका। ग्वाल ग्रन्थावली संगृहीत होने पर ग्वाल पर अध्ययन प्रस्तुत करने का विचार बनना स्वाभाविक ही था। इसके साथ उन्नीसवीं शताब्दी के रीतिकाव्य का अध्ययन भी अत्यन्त आवश्यक था। अतः मेरे शोध प्रबन्ध का विषय 'उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य और उसके अन्तर्गत ग्वाल कवि का विशेष अध्ययन' बना। मुझे हर्ष है कि उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य के परिप्रेक्ष्य में ग्वाल कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व को समग्र रूप में उभारने वाला यह प्रथम शोध प्रबन्ध माँ भारती के मन्दिर में निवेदित हो रहा है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध दस अध्यायों में विभक्त किया गया है, जिनमें से प्रथम चार अध्यायों में इस शती के रीति काव्य का विवेचन प्रस्तुत है और अन्तिम छः अध्याय ग्वाल कवि के विशेष अध्ययन को अर्पित हैं। इस प्रकार इस शती के रीति काव्य के परिप्रेक्ष्य में कवि का व्यक्तित्व और कृतित्व विशद रूप में विवेचित हुआ है। रीतिकाव्य का विवेचन करते समय अठारहवीं शताब्दी के रीति काव्य को भी दृष्टिपथ में रखा गया है, जिससे आलोच्य

के साहित्य की प्रवृत्तियों और प्रतिपाद्यों का एक तुलनात्मक चित्र अंकित हो सके और जिसमें विवेच्य कवि का स्थान निर्धारण किया जा सके।

प्रथम अध्याय में आलोच्य शती की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों पर विहंगम दृष्टिपात करते हुए तत्कालीन रीति साहित्य का अठारहवीं शती के साहित्य की तुलना के साथ परिचयात्मक विवेचन प्रस्तुत हुआ है।

द्वितीय अध्याय में आलोच्य शताब्दी की प्रमुख प्रवृत्तियों और प्रतिपाद्यों का विवेचन अठारहवीं शताब्दी की प्रवृत्तियों और प्रतिपाद्यों को सामने रख कर किया गया है। संधिकालीन काव्य की नई उपलब्धियों का परिचय इस अध्याय की विशेषता है।

हिन्दी काव्य संस्कृत, उर्दू, फारसी और पंजाबी भाषाओं के साहित्यों से आकृति, प्रकृति, सिद्धान्त चेतना वस्तु विषय और शैली आदि में कितना प्रभावापन्न हुआ है तथा हिन्दी काव्य ने उर्दू और पंजाबी काव्य को कितना प्रभावित किया है यह विवेचन तृतीय अध्याय का प्रतिपाद्य है।

चतुर्थ अध्याय में तत्कालीन काव्य और ललित कलाओं के विकास का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने की नवीन दृष्टि से चेष्टा की गई है।

पंचम अध्याय में अन्तःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य के आधार पर ग्वाल कवि का प्रामाणिक जीवन वृत्त प्रस्तुत किया है। कवि के जीवन दर्शन रहन-सहन वेशभूषा स्वभाव और काव्य प्रतिभा के प्रसंग विविध अन्तःसाक्ष्यों के आधार पर विवृत है।

ग्वाल के लिखे प्रामाणिक ग्रन्थ साहित्य का संक्षिप्त परिचय षष्ठ अध्याय का प्रतिपाद्य विषय है। आरम्भ में प्रामाणिक बहिःसाक्ष्य का सिंहावलोकनात्मक अनुशीलन प्रस्तुत करके तथ्यपूर्ण निष्कर्ष निकाले गये हैं जिससे कवि के चर्चित ग्रन्थों की एक बड़ी तालिका प्रस्तुत हुई है।

सप्तम अध्याय ग्वाल के काव्य के प्रतिपाद्यों और उसकी प्रवृत्तियों का परिचय सात उपशीर्षकों में देता है। इस विवेचन में कवि के समसामयिक प्रमुख रचनाकारों के प्रतिपाद्यों और उनकी प्रवृत्तियों को भी यत्र तत्र तुलना में स्थान दिया गया है। ग्वाल जैसे एक सर्वथा स्वतंत्र एकमेव व्याख्याकार आचार्य कवि से क्या क्या अपेक्षाएं की जा सकती हैं और वह वहाँ तक सफल रहा है इन प्रश्नों को भी दृष्टि पथ में रखा गया है।

अष्टम अध्याय में ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत है। बहुभाषाविद् ग्वाल कवि की भाषा का परीक्षण तत्कालीन काव्य के परि

प्रबंध में प्रस्तुत हुआ है। कहने की आवश्यकता नहीं कि ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक तलस्पर्शी अध्ययन प्रस्तुत करके हिन्दी में प्रथम बार उसका स्थान निर्धारण किया गया है।

ग्वाल के साहित्य में प्रतिबिम्बित समाज के चित्रण को नवम अध्याय का विवेच्य विषय बनाया गया है। ग्वाल ने युग-चेतना प्रतिबद्ध रचनाएँ भी कीं थीं इस नाते उनमें ऐतिहासिक तत्वों का भी समावेश है। इस दृष्टि से उनका काव्य तत्कालीन समाज की सच्ची झाँकी से प्रतिबिम्बित है। अतः इस अध्याय का विशेष ऐतिहासिक महत्व है।

अंतिम अध्याय में ग्वाल कवि का मूल्यांकन अभिप्रेत है। ग्वाल की काव्य शक्ति, निपुणता और अभ्यास के अतिरिक्त उनके काव्य पर संस्कृत हिन्दी के प्राचीन कवियों का प्रभाव देखा गया है। उनका काव्य का परवर्ती कवियों के रीति निरूपण और काव्य पर उस का कितना प्रभाव पड़ा है, इन दृष्टि बिंदुओं से कवि की प्रतिभा का यहां प्रथम बार मूल्यांकन किया गया है। विविध क्षेत्रों में हिन्दी साहित्य को ग्वाल की क्या देन है, इसके विवेचनपूर्ण निष्कर्ष इस अध्याय में निकाले गये हैं।

मूल शोध प्रबन्ध के पश्चात् परिशिष्ट में ग्वाल के उपलब्ध रंगीन चित्र उनके मकान और मन्दिर तथा कतिपय ग्रंथों के कुछ पृष्ठों के फोटोप्रिंट भी उपयोगिता और प्रामाणिकता की दृष्टि से दे दिये गये हैं, जो साहित्य में प्रथम बार केवल मेरे द्वारा ही प्रयुक्त हुए हैं और जिन पर एकमेव मेरा स्वामित्व है।

संक्षेप में हिन्दी के एकमेव व्याख्याकार आचार्य ग्वाल कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व का यह प्रथम प्रामाणिक अध्ययन है, जिसे हिन्दी को मेरी विशेष देन कहा जा सकता है।

निर्देशक डा० मनोहर लाल गौड़, प्रकाशक श्री प्रमोद बिहारी, सहयोगियों एवं सन्दर्भित विद्वानों के प्रति आभारी—

ग्वाल पुण्यतिथि १३-९-७० भगवान सहाय पचौरी 'भवेश'

२५, प्रभा प्रवेन एम० ए० (हिन्दी, इतिहास) एल० टी०,

कृष्णापुरी, मथुरा पी एच० डी०

विषयानुक्रम

प्रथम अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य

द्वितीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ और प्रतिपाद्य

तृतीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य पर इतर साहित्य का प्रभाव

चतुर्थ अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य का तत्कालीन ललित कलाओं से सम्बन्ध

पंचम अध्याय

ग्वाल कवि का जीवन वृत्त

षष्ठम अध्याय

ग्वाल के ग्रन्थ

विषयानुक्रम

प्रथम अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य

द्वितीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ और प्रतिपाद्य

तृतीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य पर इतर साहित्य का प्रभाव

चतुर्थ अध्याय
उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य का तत्कालीन ललित कलाओं से सम्बन्ध

पंचम अध्याय
ग्वाल कवि का जीवन वृत्त

षष्ठम अध्याय
ग्वाल के ग्रन्थ

प्रथम अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी का रीति-काव्य

भावना के फलस्वरूप—उच्च वर्ग और मध्यम वर्ग में संघर्ष, विज्ञान और पौराणिक परम्पराओं एवं अन्धविश्वासों में संघर्ष, व्यक्तित्व और सत्ता में संघर्ष, और सर्वोपरि पूर्व और पश्चिम में संघर्ष। डा० वार्ष्णेय का यह मत सम्भवतः तर्क सम्मत है। अठारहवीं शताब्दी का भारत राजनीतिक अस्थिरता, अस्तव्यस्तता, अराजकता और विशृंखलता का था। सन् १७५७ ई० (सं० १८१४ वि०) के पलासी के युद्ध तथा १७६५ ई० (सं० १८२२ वि०) की इलाहबाद की संधि से ईस्ट इण्डिया कम्पनी को व्यापारी से शासक बनने में देर न लगी। देश की अनिश्चित स्थिति से लाभ उठाकर धीरे धीरे अँग्रेजों ने बंगाल, बिहार, अवध, में तो राजनीतिक सत्ता का सूत्र अपने हाथों में ले ही लिया था टीपू सुलतान, निजाम, मरहठे आदि दक्षिणी भारत के शासकों को भी प्रायः पंगु बना दिया था। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक दक्षिणी भारत और प्रायः पूरे उत्तरी पूर्वी भारत में उसकी तूती बोलने लगी थी। अँग्रेजी कम्पनी की विजयों ने भारतीय राजाओं और नवाबों में देशभक्ति की भावना में उत्पन्न करदी। पददलित राज्य अंग्रेजों से खोई सत्ता छीनने की ताक में रहते थे किन्तु इस शताब्दी के पूर्व तक पंजाब और राजस्थान के राज्यों तक अँग्रेजी राजनीति की पहुंच नहीं हो सकी थी। पंजाब के लाहौर पटियाला, नाभा, कपूरथला, जींद, रोपड़ आदि और राजस्थान में जोधपुर बीकानेर, भरतपुर, अलवर आदि राज्यों की राजनीति का संचालक सूत्र इसी शताब्दी में विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने के कई संगठित प्रयास भी हुए। वलौर का विद्रोह और १८५७ ई० का स्वतन्त्रता संग्राम ऐसे ही प्रयत्न थे। परन्तु अँग्रेजों के संगठन और अनुशासन के आगे भारतीय राजाओं के असंगठित और अस्तव्यस्त प्रयास कृतकार्य नहीं हो सके। इस समय तक प्रायः समस्त भारत में अँग्रेजों का प्रभुत्व स्थापित हो चुका था। अंतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह रंगून में कैद था और अंतिम लाहौराधिपति दलीपसिंह इङ्गलैण्ड में अँग्रेजों की निगरानी में जीवन काट रहा था।

इस राजनीतिक परिवर्तन का प्रभाव देश की सांस्कृतिक स्थिति पर भी पड़े बिना न रह सका। अठारहवीं शताब्दी तक तो हिन्दू मुस्लिम संस्कृति और धर्म ही परस्पर सम्पृक्त हुए थे। अब ईसाई धर्म और यूरोपीय संस्कृति ने देश के जीवन में प्रवेश करना आरम्भ कर दिया था। अंग्रेजी शिक्षा और संस्कृति ने देश के उच्च वर्ग को पर्याप्त प्रभावित किया। मध्ययुगीन जीवन हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियों के सम्मिलन के फलस्वरूप प्रत्येक क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रियाशीलता से पूर्ण होगया था, परन्तु तब भी वह मन्दगतिपूर्ण एवं विस्तार भार से बोझिल था। इस तीसरी संस्कृति ने आकर उस मध्ययुगीन

बोझिलता को पूरी तरह झकझोर कर खडा कर दिया जिसमे भारतेन्दु युगीन साहित्यिक राष्ट्रीयता का जन्म हुआ। राजमहलो म प्रस्फुटित और पल्लवित होने वाली रीतिकविता का रग फीका पडने लगा और शन-शन वह भवनो की क्लासिक चहारदीवारी से बाहर झाकने को विवश हुई।

रीतिकाव्य की स्थिति— रीति कवि राज्याश्रित थे। परम्परानुसार देशी दरबारो म पुराने विषयो पर कवितायें लिखी जाती रही। इन कवियो के आश्रयदाता भारतीय थे अग्रेज नही। अत कवियो न पूर्व परम्परा के अनुरोध स्वरूप उनके प्रशस्ति गायन किये और शृ गारी रचनायें लिखी। भले ही उपमान बदल गये, परन्तु उनके मन और 'मनोज नही बदले—कचन रचित राज नूपुर अनूप क्यों बाज बजें भू पर मनोज अग्रेज के।[1] अग्रेजों सम्बधी ऐसी अनेक उक्तिया तत्कालीन साहित्य म मिलती हैं[2] परन्तु यह अपवाद स्वरूप ही मानी जानी चाहिये। 'सामान्यत कविगण प्राचीन विषय और शैली ग्रहण कर काव्य रचना करते रहे। अभी उन्होने ईस्ट इण्डिया कम्पनी और भारतीय नरेशो के सबध को अथवा किसी नवीन विषय को अपनी काव्य रचनाओ का स्वतन्त्र विषय नही बनाया था'।[3] ग्वाल कवि ने अपने वीर काव्य विजय विनोद' म अनेकत्र 'कम्पनी' कौंसिल' और कलकत्ता के 'लाट साहब' के प्रासगिक सन्दर्भ अवश्य दिये।[4] सेवक कवि ने अग्रेजों की सहायता करने के लिये अपने आश्रयदाता हरिशकर सिंह की प्रशसा म छन्द रचे[5] और बिहारी सिंह ने—चिरजीवौ सदा विक्टोरिया रानी[6] आदि लिखकर अग्रेजों की प्रभुता के गुण गाये। बक्सवाडे के कवि दुलारे ने राजा बेनी माधवसिंह को उसकी अग्रेजी सेवा के लिये यह लिखकर भर्त्सना की- 'तुम तौ जाय अग्रेजन मिलिहौ हमहै का भगवान'।[7] कवि बजरग प्रभुभट्ट ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से बहादुरी से लडने के उपलक्ष मे एक राणा की प्रशसा भी की थी।[8] एसी उक्तिया और कुछ के नये विषय इस शताब्दी के कुछ कवियो ने अपनाये अवश्य, परन्तु ये सब प्रयोग इस युग के रीति

१ चन्द्रशेखर वाजपेयी पटियाला—नखशिख।

२ देखिये इस शोध प्रबन्ध का द्वितीय अध्याय-रीतिकाव्य के प्रतिपाद्य विषय और प्रवृत्तियाँ।

३ उन्नीसवीं शताब्दी—पृष्ठ ३१

४ देखिये इस शोध प्रबन्ध का सप्तम प्रकरण ग्वाल के प्रतिपाद्य विषय और प्रवृत्तियाँ।

५ वही।

६ वही।

७ वही, पृष्ठ २७२।

८ वही।

काव्य के खारी सागर मे मीठे जल की कतिपय बूदो के समान ही कहे जाने चाहिये ।

वास्तव म कवि अभी भी रीति की प्राचीन शृगार-रस निरूपण और नर प्रशसा आदि की परम्परा का ही कविगण अनुगमन कर रहे थ । आश्रय दाताओ की मनोवृत्ति म अभी कोई परिवतन नही आ सका था अत कवियो के पास रीति-रचना करन के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प भी न था ।

उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य—जहा तक गुण का प्रश्न है अठारहवी और उन्नीसवी शताब्दी के रीति काव्य म प्राय कोई भिन्नता दिखाई नही देती । हाँ मात्रा और विस्तार म आलोच्य शताब्दी का काव्य पूववती काव्य से कुछ अशो म अधिक वृद्धिगत दृष्टिगोचर होता है । इसका कारण सम्भवत यह था कि कविगण परम्परा से इस काव्य के सृजन म अधिक दीक्षित हो गये थे, सस्कृत और हिन्दी के लक्षण साहित्य का उन्ह पर्याप्त ज्ञान हो गया था तथा आदश रूप म उनके सामने हिन्दी का पूरा रीतिवाड्मय था। साहित्य के सूक्ष्म निरीक्षण से प्रकट होता है कि इस शताब्दी के कवियो ने अठारहवी शताब्दी के कवियो के सभी प्रकार के ग्रन्थो की तुलना म कही अधिक ग्रन्थ लिखे । इनकी गणना इस प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय म की गई है । जहाँ तक रीति के सर्वांग निरूपक ग्रन्थो का प्रसग है इस युग म इनकी सख्या पहले के ऐसे ग्रन्थो से कही अधिक है । इनमे स कुछ के नाम हैं—साहित्य सुधानिधि[1] (जगतसिंह), काव्य रत्नाकर[2] (रणधीर सिंह), साहित्य सुधानिधि[3] (हरिप्रसाद), साहित्य सुधाकर[4] (सरदार कवि) साहित्य शिरोमणि[5] (निहाल कवि), साहित्य तरगिणी[6] (वशीधर), काव्य विलास[7] (प्रताप साहि), गोविन्दानन्दघन[8] (गोविन्द), साहित्यानन्द (ग्वाल) दलेल प्रकाश[9] (थान कवि), काव्यविनोद[10] (प्रतापसाहि)[1] आदि। सस्कृत के काव्य प्रकाश' के दो हिन्दी अनुवाद भी देखन म आये । एक है धनीराम कृत काव्य प्रकाश'[11] और दूसरा रामजन कृत 'काव्य प्रभाकर'[12] ।

---

१ खो० रि० १९०९ १२७ ए, १९२० ६४ ए बी १९२३ १७९ एन एम १८२६ १९२ बी । २ वही, १९०६ ३१६ बी १९२३ ३५२ ।
३ वही, १९२६ १७० ए,बी । ४ वही १९२० १७४ ।
५ वही, १९०३-१०८ । ६ वही १९२० १२ ।
७ वही १९२६ ३५१ ए, बी, सी डी ई १८४१ ५१६ ।
८ वही १९३२ १८८, १९१२ ६५ १८०६ १२२ ए पं० २२ २ ।
९ वही १९०८ ३१७ १८२३ ४२७ १९२६ ४८० ।
१० वही १९०६ ९१,एच । ११ वही १९२३ ६८ ।
१२ वही, १९२६ ३९१ ए, बी ।

उक्त सभी ग्रन्थो की रचना उन्नीसवी शताब्दी म हुई। केवल रस निरूपक ग्रन्थो की सख्या भी इससे पूव लिखे ग्रन्थो से कई गुनी दिखाई देती है। अलकार और पिंगल के ग्रन्थ भी पहले से सख्या मे कही अधिक लिखे गये। नायिका भेद और नखशिख पर रचे गये स्वतन्त्र काव्य ग्रन्थो की सख्या भी इस युग म आशातीत है।

ग्रन्थो की भाषा म तो पहले से कोई उल्लेखनीय परिवतन दिखाई नही दिया, परन्तु लक्षणो के निरूपण की शली म गद्य के कारण आशातीत अन्तर आगया दीखता है। इस शताब्दी के पूव के भिखारीदास आदि अचार्यों ने लक्षणो के स्पष्ट करने म छोटे छोटे गद्य वार्तिको का प्रासगिक रूप म आश्रय ग्रहण किया था, परन्तु इस युग म ग्वाल आदि कवियो ने पर्याप्त लम्बी-लम्बी गद्य वार्ताओ और टीकाओ द्वारा विषय बोध को हृदयगम कराने की चेष्टा की यही नही रसिकगोविन्द ने गोविन्दानन्दघन' प्रतापनारायणसिंह ने रसकुसुमाकर' एव प्रतापसाहि ने 'व्यग्याथ कौमुदी' मे अधिकाश लक्षण गद्य के माध्यम से ही समझाये। इससे पूव लक्षणो म गद्य का उपयोग प्राय नही हो हुआ। यह एक प्रकार से अभि यक्ति मे गद्य के महत्व का सकेत है, आधुनिक काल की एक विशिष्ट और यापक विधा है।

नीति म दीनदयाल गिरि का अन्योक्ति कल्पद्रुम इसी शताब्दी की देन है। बोधा ठाकुर विशुद्ध प्रेम की परिपाटी के कवि भी इसी युग म हुए। पर घनानन्द की नेह की सच्ची पीर इनमे खोजने पर भी नही मिलती। रीति कवियो ने वीर का य भी लिखे थे। पूववर्ती भूषण, सूदन और लाल कवि वीर रस के प्रसिद्ध कवि है। उन्नीसवी शताब्दी ने भी वीररस के कई कवि और कई वीर प्रबन्ध प्रदान किये। पद्माकर की हिम्मत बहादुर विरुदावली चन्द्रशेखर वाजपेयी का 'हम्मीर हठ' ग्वाल का 'हम्मीर हठ' तथा विजय विनोद इस युग की वीर रस की प्रसिद्ध रचनायें हैं। इस काल म राजस्थान और पजाब के हिन्दी कवियो ने भी कई वीर काव्य लिखे।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उन्नीसवी शताब्दी का रीति काव्य एतत्पूर्वलिखित रीति-काव्य से कुल मिलाकर गुण और मात्रा मे उन्नीस दिखाई नही देता परन्तु बिहारी की सी सतसई और जसवन्त सिंह के से 'भाषा भूषण' इस शताब्दी म नही लिखे जा सके।

आलोच्य शताब्दी के कतिपय प्रतिनिधि ग्रन्थो का सक्षिप्त धारावाहिक परिचय आगे की पक्तियो मे प्रस्तुत किया जा रहा है। इसम आलोच्य कवि ग्वाल के रीति निरूपक (सर्वांग रस अलकार, पिंगल) रीतिबद्ध रीति-मुक्त, वीररस भक्ति ज्ञान वराग्य एव अनुवाद के काव्यग्रन्थो को सम्मिलित नही

किया जा सका है। इनका विवरण पृथक रूप म इस प्रबन्ध के छठे अध्याय म किया जायगा।

(अ) विविधाग निरूपण

गोविन्दानन्दघन[1]—लेखक—गोविन्द नाटाणी[2] रचनाकाल स० १८५८ वि०[3]। रीति का यह एक अच्छा सर्वांग निरूपक ग्रन्थ है। इसके अवलोकन स ज्ञात होता है कि लक्षण निरूपण म सम्मिश्र शैली को अपनाया गया है। लक्षण अधिकागत गद्य म रखे गये हैं और वे भी सम्मिश्र हैं। इसका कारण अन्तर्साक्ष्य म ही मिल जाता है कवि को इसके द्वारा आचार्यत्व प्रदर्शन नहीं करना था। इसकी रचना तो उसने अपने भाई बालमुकुन्द के पुत्र श्रीनारायण को काव्य शास्त्र की शिक्षा देने के लिये की थी, जैसा कि ग्रन्थ के इस दोहे स प्रकट होता है —

> बेटा बालमुकुन्द को श्री नारायण नाम।
> तासु पढ़न हित रसमई रच्यौ ग्रन्थ अभिराम॥[4]

ऐसी स्थिति मे ग्रन्थ म कवि का पाण्डित्य खोजने की चेष्टा निरर्थक होगी। सरलता और स्पष्टता लाने के लिये गोविन्द ने अपने उदाहरणों के स्थान पर इधर पूर्ववर्ती कवियों के प्रसिद्ध उदाहरणों का भी उपयोग किया है। अन्यत्र अपने उदाहरण भी रखे हैं। जिन कवियों के उदाहरणों ने ग्रन्थ म स्थान पाया है, वे हैं केशव मतिराम अज्ञात बिहारी सुन्दर कुलपति मुकुन्द देव सोमनाथ तथा काशीराम, कालिदास भूधर लाल कान्ह, घन, मतीराम सेनापति। रीति निरूपण म भरताचार्य का काव्य प्रकाश, विश्वनाथ का

---

१ हस्तलिखित प्रति, प्राप्ति स्थान—श्रीकृष्ण चैतन्य पुस्तकालय वृन्दावन १।३।९ आकार २७½ सेमी × ११½ सेमी, पंक्ति प्रति पृष्ठ ४० पत्र सख्या ८०।

२ साहित्य मे रसिक गोविंद के नाम से प्रसिद्ध निम्बार्क मतावलम्बी जयपुर निवासी गोविंद नाटानी कवि का वास्तविक नाम गोविंद है, जो अन्तसाक्ष्य क आधार पर ठीक है। डा० मोतीलाल गुप्त का भी यही मत है देखिये मत्स्य प्रदेश की हिंदी साहित्य को देन' की पाद टिप्पणी पृष्ठ ३८ व ३८।

३ वसु सर वसु शशि १८५८ अब्द रवि शुभ पचमी वसत। श्रीगोविन्दानन्दघन वृदावन रसवत ॥९॥ गोविन्दानन्दघन —प्रबंध प्रबंध।

४ वही १८।

साहित्यदर्पण, जयदेव कृत चन्द्रालोक और अप्पयय दीक्षित कृत कुवलयानन्द को कवि ने आधार रूप में ग्रहण किया है। लक्षण और उदाहरण स्वच्छ है। विस्तार और विमर्श से कवि बचा है। ग्रन्थ में १४४६ छन्द और ४ बडे बडे अध्याय हैं। जिनका नाम प्रबन्ध है। ग्रन्थ का आरम्भ—'श्री कुंजविहारी जी। अथ गोविन्दघन लिप्यते" के पश्चात् स्वामी गोवर्द्धन देव के मंगलाचरण–कवित्त से होता है और समापन की पुष्पिका इस प्रकार है–इति श्रीमद् राधा सर्वेश्वर श्रीवृन्दावन चंद वर चरणारविन्द मकरन्दपानानन्दित अलि रसिक गोविन्द कविराज विरचित श्रीमद् रसिक गोविन्दानन्दघने गुणालङ्कार निरूपण नाम चतुर्थो प्रबन्ध।।४।।

वर्ण्य विषय मंगलाचरण, गुरुवंश वर्णन, कविवंश वर्णन, ग्रन्थ रचनाकाल और वृन्दावन शोभा वर्णन के पश्चात् कवि ने रसराज में नवरस का समाहार इन शब्दों में किया है—

ललित सिंगार परिहास बिन हूसी मुख विरह निवेदन मे करुणा की साज है।
रुठिबे मे रुद्र सुरतोत्सव मे वीर रूप मे विभत्स भय रद छत की समाज है।।
अद्भुत उलटि सिंगार सात प्यारी के मनावे बिन पी को न सुहाइ कछू काज है।
दंपति विहार चारु चंदन गुविंद सम सबैन सरस रसराज महाराज है।।१३।।
—गोविन्दानन्दघन

तदनन्तर रस निरूपण के अन्तर्गत पहले शृंगार और फिर इतर रसों का संक्षिप्त विवेचन किया गया है। संयोग और वियोग के लक्षण उदाहरण देकर कवि ने ५ प्रकार का वियोग शृंगार बताया है अभिलाषा, ईर्ष्या, प्रवास विरह, शाप। इसमे अभिलाषा के दो विभेद– १-दूती मुख और २ सखी मुख ईर्ष्या तीन विधि श्रवण दर्शन और अनुमान बताई गई है। परम्परानुसार विरह की दस दशायें गिनाई गई है। हास्य के छः वीर के चार और अद्भुत रस के चार भेद गिनाये गये है। रसों की एक दूसरे से उत्पत्ति का वर्णन भी इस प्रसंग में हुआ है। भाव की परिभाषा कवि ने इस प्रकार की है—'प्रधान विभिचारी भाव को वर्णन करे सो भाव। भाव के चारों भेदों के लक्षण देकर कवि ने देवरति, मुनिरति भावध्वनि राजरति भावध्वनि, रसाभास भावाभास, भावशान्ति भावोदय और भावसंधि के उदाहरण दिये हैं। विभाव अनुभाव और संचारी की परिभाषा कवि ने निम्नांकित लिखी है।

विभाव 'विशेष करिके रस को प्रगट करै सो विभाव'
अनुभाव 'रस के अनुभव को प्रगट करैं सो
संचारी 'नौहू रस में नियम बिन जे संचरें ते

रीति परम्परा के अनुसार कवि ने विभाव दो, अनुभाव नौ, सात्विक आठ, स्थायी नौ, सचारी ३३, रस दृष्टिया आठ और सचारियो की २० दृष्टियाँ गिनाई हैं।

ग्रथ मे नायक का वणन नायिका स पहले किया गया है, जिसका कारण इस प्रकार लिखा गया है—

प्रथम नायिका है जदपि, नायक कह्यौ सुजान।
ज्यो तमुआ पहल करत, पुनि अहिरिनि निर्मान ॥२॥ वही प्रथम प्रबन्ध।

नायक के दो विभेद १ पति और २ उपपति करके प्रत्येक के चार चार उप भेद और किये है १ अनुकूल २ दक्षिण, ३ धष्ठ और ४ शठ। पति को मानी और चतुर (क्रिया और वाकचतुर) दो प्रकार का और बताया गया है। सखा चार प्रकार के और नायक म ८ गुण गिनाय गये हैं।

द्वितीय प्रबन्ध मे परम्परानुसार नायिका भेद का वणन है जिनके भेद इस प्रकार किय गये हैं नायिका ३ प्रकार १ स्वीया, २ परकीया और ३ सामान्या।

स्वीया ३ प्रकार १-मुग्धा, २-मध्या और ३ प्रौढ़ा।

मुग्धा ५ प्रकार १ पूर्वावतीर्ण मदना २ पूर्वावतीर्ण मदन विकारा ३ रतीवामा, ४ मानकोमिता ५ अधिक लज्जावती।

मध्या ३ प्रकार १ विचित्र सुरता, २ प्रौढ स्मरा, ३-प्रौढ यौवना।

प्रौढ़ा ६ प्रकार १-कामा धा २ घन तारुण्या, ३-समस्त रसकोविदा, ४ भावोन्नता, ५-तनप्रौढा, ६-आक्रान्त नायिका।

मध्या और प्रौढा के तीन तीन अन्य भेद—१ धीरा, २ अधीरा, ३ धीरा-धीरा। इनके भी दो-दो और उपभेद है —१ ज्येष्ठा और २ कनिष्ठा।

परकीया के ६ भेद १ गुप्ता त्रिविधि, २ विदग्धा द्विविधि, ३ कुलटा, ४ लक्षिता, ५ अनुशयना और ६ मुदिता। इनके तीन-तीन भेद और किये गये हैं। ऊढा और अनूढा के आग तीन-तीन भेद और करक स्वीया और परकीया १६-१६ प्रकार की गिनाई गई हैं। इन सबके आठ आठ सूक्ष्म भेद और हैं। इन सभी के फिर उत्तमा, मध्यमा और अधमा तीन-तीन और उपभेद हैं। पुन दिव्या अदिव्या और दिव्यादिव्या करके नायिकाओं की गणना ११५२ की गई है। कहीं कहीं लक्षण न देकर उदाहरणों से ही काम चला लिया गया है। हाव-भाव और हेला अलकार शरीर म प्रकट बताये गये हैं और शोभा, कान्ति, दीप्ति माधुर्य, प्रागल्भ्य, औदार्य, धैर्य

का अनायास प्रगट होना बताया है। हाव के भेद भी परम्परागत है। भरत की अष्ट नायिकाओ को भी गिनाया गया है। २८ दूतियो के नाम और गुण बताकर नायिकाओं के समान ही उनके भेद किये गये हैं।

तृतीय प्रबन्ध मे दूषण की परिभाषा करता हुआ कवि कहता है—'जद्यपि गुणालंकार रस के उपकारक हैं, याते पहले निरूपण करिये योग्य है। तोहू दोष कहत हैं। काहे तें कि सम्पूर्ण कवि प्रथम दोष ही कहत आये हैं यातें।' दोष का लक्षण कवि ने इस प्रकार दिया है—'मुख्यारथ को घात करै सो दोष। मुख्यारथ रस है। रस के आश्रय ते वाच्य हू मुख्यारथ है। दोऊ के उपयोगत्व मे सब्द हू सब्दार्थ के वर्ण हू मुख्यारथ है। यातें मुख्यारथ कहिबे म इन सबन को बोध होत है।'

कवि ने परम्परानुसार पदपदांशदोष (१६), वाक्य दोष (१८), अर्थ दोष (२५), रस दोष (१०) का वर्णन किया है। इनका आधार मम्मट का 'काव्य प्रकाश' है। कहीं-कहीं इनके नामो म अंतर आ गया है, शेष वर्णन भाषा के कवियो के अनुसार ही हुआ है।

चतुर्थ प्रबन्ध म गुण और अलकारो के भेदोपभेदो का निरूपण परिष्कृत गद्य म हुआ है। वक्रोक्ति, अनुप्रास, यमक, श्लेष, चित्र, पुनरुक्तवदाभास शब्दालकारो के साथ साथ मम्मट, जयदेव और अप्पयय दीक्षित के अर्थालंकारो का वर्णन किया गया है। केशव के अलकारों का भी इसमे विवेचन है।

गोविन्दानन्दघन रीति का प्रतिनिधित्व करने वाली एक प्रौढ और महत्वपूर्ण रचना है। पिंगल को छोडकर सभी अंगो का इसम सरल और संक्षिप्त समाहार है। दूसरे कवियो के लक्षणो पर टिप्पणी नहीं लिखी गई। कवि आचार्य शिक्षक के रूप में पर्याप्त सफल रहा है।

साहित्य सुधानिधि ले० जगतसिंह, रचनाकाल स० १८५८ वि०[1] ग्रन्थ म ६३६ बरव छन्द और दस तरंगें हैं।

वर्ण्य विषय प्रथम तरग म काव्य प्रयोजन, काव्य हेतु और काव्य भेद दूसरी मे शब्द स्वरूप निरूपण तीसरी चौथी और पांचवी तरगो म अभिधा, लक्षणा और व्यजना शक्तिया एवं गम्भीरा, कुटिला और सरला वृत्तियो का निरूपण है। छठी तरग म शब्दालकार और अर्थालकार सातवीं मे माधुर्य,

---

१ सवत वसु सर वसु ससी अरु गुरुवार। शुक्ला पचमी भादों रच्यौ ...

आज और प्रसाद गुण, आठवीं तरंग में नवरस निरूपण है। इस प्रसंग में पांच भाव माने गये हैं १–स्थायी २–संचारी, ३–विभाव, ४–अनुभाव और ५–सात्विक। नौ रसों और नौ स्थायियों का संक्षिप्त परिचय है। शृंगार रसान्तर्गत नायिका भेद की चर्चा परम्परागत की गई है। नवीं तरंग में अति संक्षेप में पांचाली, लाट, गौडी और वदर्भी रीतियों का नामोल्लेख है। अंत की दसवीं तरंग में काव्य दोष निरूपण प्रस्तुत किया गया है। कवि ने केवल १०० दोषों के अन्तर्गत ही समस्त दोषों को मान्यता दी है —

'ये सत दोष मुख्य हैं इन्हीं के अंतरभूत मे और दोस जानिबो'॥

यह निरूपण अधिकांशतः चन्द्रालोक पर आधृत है। दोषों की क्रम व्यवस्था और निरूपण शैली वही संस्कृत की सी है। कहीं कहीं कवि ने मम्मट और जयदेव के लक्षण भी लिये हैं। जयदेव के दोषांकुशों को मिथ्या मानता हुआ कहता है—

औ काहू ने दोषांकुस कियो है। दोष कहिक फिरि दोष मिटाइ डारयो है। जो कहिक मिटावनो हो तो दोष काहे को लिख्यो। तातें दोषांकुस मिथ्या है।

दोष सत्य है। दोष विचारि कवित्त करिये याहि प्राचीन मत जानियो। जगतसिंह की यह धारणा शास्त्रीय रीति के विपरीत ही है क्या कि दोष के निरसन से उपरान्त वह गुण हो जाता है। 'दोषे गुणत्व तनुत दोष या निरस्यति'। चन्द्रालोक २(४१) दोषापहार को किसी आचार्य ने मिथ्या नहीं कहा।

ग्रन्थ प्रणयन में कवि ने जिन आचार्यों से सहायता ली, उनके नाम ग्रन्थ में इस प्रकार वर्णित है —

चन्द्रालोक आदि है भाषा कीन। कहि साहित्य सुधानिधि परम प्रवीन॥
भरत, भोज औ मम्मट श्री जदेव। विश्वनाथ गोविंद भट्ट दीक्षितमेव॥
भानुदत्त आदिक मत करि अनुमान। कियो प्रगट करि भाषाकवित विधान॥

इससे प्रकट होता है कि कवि ने संस्कृत ग्रन्थों का विस्तृत अध्ययन किया था। चन्द्रालोक कुवलयानन्द आदि का कहीं २ अनुवाद भी दे दिया गया है, जिसे कवि स्वयं स्वीकारता भी है। दोषों में वायस पंक्ति मराल, कारस्थूलत्तम और अन्ज अन्गा नामक दोषों के नाम जगतसिंह ने प्रथमबार दिये हैं। वायसपंक्ति मराल का लक्षण देखिये—

मसत गामिनी भाषा भाषा मध्य। वायस पांति मरालिक दूषण हृद्य॥

कारस्थूलत्तम दोष की परिभाषा—

,प्रिथम बोल गुन बरनत पुनि परमाद। कारस्थूलत्तम दूषन रहित सवाद॥

अब्ज अक्ष दोष—

ामलि नयनि आपने ससि कहि पीत । अब्ज अक्ष दूषन सो जानो मीत ॥

कवि ने शब्दालंकारों और अलंकारों में वीर रस पूर्ण उदाहरण 'य हैं। इन्होंने 'संग्रामोद्दाम हुक्ति' नामक नये अलंकार की उद्भावना भी ी है जिसका लक्षण यह लिखा है—

लल प्रति मल्लत्व कहि यहँ जस होइ। संग्रामोद्दाम हुक्ति जानो सोइ ॥[1]

परन्तु लक्षण से ज्ञात होता है कि यह उत्प्रेक्षालंकार मात्र है उदाहरण—

ानु प्रभा जस अहै नितल जातु। गई निसा तब जानो सब मतिभानु॥[2]

इस प्रकार जगतसिंह में मौलिक उद्भावनाओं के स्थापित करने की चेष्टा का आग्रह अवलोकनीय है। डा० सत्यदेव चौधरी के मतानुसार ये या तो सामान्य कोटि की हैं या भ्रमपूर्ण[3]।

आचार्य और कवि के रूप में जगतसिंह सामान्य कोटि में ही आते हैं। कवित्व की दृष्टि से कवि को उत्कर्ष प्रदर्शन का अवकाश कम मिलता है क्योंकि इस ग्रन्थ में कवित्त सवैयों में न होकर वस्तु निरूपण करने जैसे छोटे छन्द में है। छन्दों की भाषा भाव और व्याकरण के सम्मत है।

काव्य विलास—प्रताप साहि रचनाकाल, सं० १८८६ वि०। यह विविध काव्यांग निरूपक काव्य शास्त्रीय ग्रन्थ श्रावण मास की त्रयोदशी को संवत् १८८६ वि० को पूर्ण हुआ था। कवि ने इसका रचनाकाल निम्नलिखित दिया है—

१ ८ ८ ६
संवत ससि वसु वसु बहुरि, ऊपर षट पहिचानि ।
सावनमास त्रयोदसी सोमवार उर आनि ॥[4]

यह ११२६ छन्दों का विशाल शास्त्र ग्रन्थ है जिसका निर्माण कवि ने काव्य प्रकाश, काव्यप्रदीप, साहित्य दर्पण रसगंगाधर, चन्द्रालोक कुवलयानन्द रस तरंगिणी, रसमंजरी आदि के अध्ययन-आलोडन के उपरान्त किया था। जैसा कि कवि स्वयं लिखता भी है—

मत लहि काव्य प्रकास को काव्य प्रदीप सजोइ ।
साहित दर्पन चित्तसमुझि रस गंगाधर सोइ ॥[5]

---

१ हि० सा० का बृहत् इतिहास सम्पादक डा० नगेन्द्र, पृष्ठ ३६८।
२ वही पृष्ठ ३६८। ३ वही, पृष्ठ ३६६।
४ काव्य विलास, प्रतापसाहि छ० सं० ११५२।
५ वही प्रथम प्रकाश—छन्द संख्या २।

ग्रन्थ में सात प्रकाश (अध्याय) हैं। प्रथम प्रकाश में कवि ने काव्य की परिभाषा काव्य के लक्षण, प्रयोजन, कारण शक्ति व्युत्पत्ति, काव्याभ्यास, काव्य के भेद उत्तम, मध्य और अवर काव्य का विभिन्न आधार ग्रन्थों के अनुसार विवेचन प्रस्तुत किया है।

द्वितीय प्रकाश में वृत्ति का लक्षण, लक्षणा के भेद—व्यंग के भेद गूढ़ तथा अगूढ़, व्यंजना का लक्षण, वाचक, लक्षक तथा व्यंजक ग्रन्थ के भेदों की चर्चा है।

तृतीय प्रकाश का प्रतिपाद्य विषय है— ध्वनि तथा रस। रस के लक्षण में कवि ने भरत के सूत्र 'विभावानुभाव सचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्ति' के स्थायी भाव को व्यंग्य रूप मानकर इस प्रकार की है—

मिलि विभाव अनुभाव सत, मिलि सचारी भाव।
थिर होत थाई जहा सोरस कहि कविराव॥[1]

रस के लौकिक और अलौकिक भेद पारम्परिक ही हैं। सचारी भावों के प्रसग मे कवि ने भरत के ३३ सचारियों को ही मान्यता दी है। भाव निरूपणोपरान्त कवि शृंगार रस का वर्णन करता हुआ रीति परम्परा के अनुसार नायक और नायिका भेद का विवेचन प्रस्तुत करता है। आलम्बन-उद्दीपन प्रसग वर्णन के पश्चात् विविध हाव निरूपण है। विप्रलम्भ शृंगार वर्णन के पश्चात् अन्य आठ रसों की भी प्रासंगिक चर्चा ने ग्रन्थ मे स्थान पाया है।

चतुर्थ प्रकाश मे गुणीभूत व्यंग्यान्तर्गत मध्यम काव्य का वर्णन है। पंचम व षष्ठ प्रकाशों मे शब्दालंकारों का वर्णन है।

सप्तम प्रकाश मे अर्थालंकार प्रसंग है जिसमे उपमा से हेतु तक के अलंकारों के लक्षण उदाहरण लिखे गये हैं। काव्य के गुण और दोषों का सक्षिप्त वर्णन भी इसी प्रकाश मे है। यह ग्रन्थ शास्त्रीय दृष्टि से सामान्य कोटि का है।

(आ) रस निरूपण

जगतविनोद पद्माकर भट्ट रचनाकाल—स० १८६७ वि० तथा स० १८७० वि० के बीच।[2]

वर्ण्य विषय—जगत विनोद पद्माकर की एक प्रौढ़ शास्त्रीय रचना है। ग्रन्थ में कुल ७३१ छन्द हैं जिनमें ४६७ दोहा १३४ कवित्त, १२७

१ वही, तृतीय प्रकाश—छन्द संख्या १२१।

२ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० भजनारायणसिंह—पृ० ११५।

सवया और ३ छप्पय हैं। आरम्भ मे १ दोहे म मगलाचरण, दूसरे म आमेर वर्णन, ३ से ६ तक के छदो म राजा जगतसिंह की प्रशस्ति, ७ से १० तक के दोहो म ग्रन्थ-हेतु और ग्रन्थ विषय की चर्चा है। दोहा सख्या ७३१ म पुन ग्रथ का कारण वर्णित है। शेष ७२० छन्दो मे नायक-नायिका भेद और नवरस का वर्णन है। रसो म शृगार का वर्णन प्रधानता से किया गया, शेष रस सक्षेप रूप मे हैं।

कवि ने नायिका का लक्षण इस प्रकार लिखा है —

रस शृगार को भाव उर, उपजहि जाहि निहारि ।
ताही को कवि नायिका बरनत विविध प्रकार ॥[1]

सस्कृत म नायिका भेद म नायिकाओ के आठ रूप माने गये हैं पर हिन्दी म बहुत पूर्व स ही दस नायिकाओ का निरूपण होता आया है पद्माकर ने भी हिन्दी की परम्परा के अनुसरण पर दस नायिकाओ का ही निरूपण किया है ।

कवि ने ये नायिकाए इस प्रकार गिनाई हैं —

प्रोषित पतिका खण्डिता, कलहातरिता होय ।
विप्रलब्ध, उत्कठिता, वासकसज्जा सोय ॥
स्वाधिन पतिका हू कहत, अभिसारिका बखानि ।
प्रगट प्रवत्स्यत प्रेयसी, आगत पतिका जानि ॥—जगत विनोद

नायक की परिभाषा कवि ने इस प्रकार लिखी है —

सुदर गुन मदिर जुवा, जुवति विलोक जाहि ।
कविता राग रसज्ञ जो, नायक कहिये ताहि ॥—वही

नायको क भेदोपभेद पारम्परिक ही रखे गये हैं। इसी प्रकार दूती-भेद म भी परम्परा का निर्वाह है।

उद्दीपन प्रसग में षड्ऋतु वर्णन के ११ कवित्त और एक सवया के सुदर उदाहरण द्रष्टव्य हैं। बसन्त के ४ वर्षा के ३, शरद के २ हेमन्त के २ और ग्रीष्म का १ छन्द हैं। शिशिर का कोई छद नहीं।

कवि ने जृम्भा सहित नौ सात्विक भाव बताये हैं —

स्तम्भ स्वेद, रोमाच कहि, बहुरि कहत स्वर भग ।
कप, बरन बवर्ण्य पुनि, आसु प्रलय प्रसग ॥
अतगत अनुमान मे आठहु सात्विक भाव ।
जभा नवम बखानहीं जे कवीन के राव ॥ —वही

---

१ जगत विनोद—छद २ सख्या ११।

तत्पश्चात् १–खंडिता २–कलहांतरिता, ३–विप्रलब्धा, ४–उत्कण्ठिता ५–वासकसज्जा, ६–स्वाधीन पतिका, ७–अभिसारिका और ८–विरहिणी ये आठ प्रकार की नायिकाओं का वर्णन है। रस मंजरी की प्रोषित भर्तृका शायर द्वारा विरहिणी बना दी गई हैं। शेष सब आधार भानुदत्त का ही लिया गया है। नायक के भेद १–पति, २–उपपति और ३–वैशिक आदि भेद भी रसमंजरी के आधार पर मिलते हैं।

तदुपरान्त कवि ने रस प्रकरण को उठाया है। रस कविता का सार और रस में भाव प्रधान होता है। भाव मनोविकार माना गया है। कवि भाव का लक्षण इस प्रकार लिखता है —

इष्ट वस्तु अनुकूल है जहां मगन मन होइ।
ताकी इच्छा वासना प्रगट भाव है सोइ ॥[1]

भाव चार प्रकार के हैं १–विभाव, २–स्थायी भाव, ३–अनुभाव और ४–संचारी भाव। अनुभाव और संचारी की परिभाषाएं अति संक्षिप्त और परम्परागत ही है

जे रस को अनुभव करें तै अनुभाव बखानि।
बहुविधि विहरें रसन में ते संचारी जानि ॥[2]

रस निष्पत्ति भरतमुनि के सूत्र विभावानुभाव व्यभिचारिसंयोगाद्रस निष्पत्ति' को आधार मान कर लिखा गया है —

लहि विभाव अनुभाव अरु संचारिन के संग।
वस्त नाम थिरभाव जो, सो रस जान अभंग ॥[3]

ग्रन्थ में आगे चल कर नौ रसों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। शृंगार का विस्तृत और शेष रसों को चालू पद्धति अपनाई गई है। भाव वर्णन में कवि रस तरंगिणी से अधिक प्रभावित रहा है। ७४७ वें छन्द में ग्रन्थ रचना काल का उल्लेख करके ग्रन्थ की पुष्पिका इस प्रकार दी गई है—

स्वस्ति श्रीमत् सकल महिमंडलाखंडल खंडमंडली विहंडन विपच्छ सत खंड प्रचंड मारतंड प्रताप संताप हरन सरनागत सुवेस दस दसाधिनायगन सवित सुरेस साम्राज्य सुख पूर्ण चन्द्र वमावतंस श्री मन्महाराजाधिराज रामसिंह कुल मंडल गरीब नवाज महाराज गजगान महाराजाधिराजेश्वर श्री ५ महाराज नरेन्द्र सिंहानामगामिन चन्द्र सेखर कृत रसिक विनोद समाप्त शुभमस्तु।

---

१ रसिक विनोद—छन्द संख्या २४१। २ वही छ० सं० २४४।
३ वही—छ० सं० ३८७।

व्यंग्यार्थ कौमुदी–प्रतापसाहि, रचनाकाल सं० १८८२ वि० । इसका रचनाकाल निर्देश कवि ने ग्रंथ में इस प्रकार किया है—

१ ८ ८ २
संवत ससि वसु वसु सु द्व, गति असाढ को मास ।
किय विग्यारथ कौमुदी सुकविप्रताप प्रकास[1] ॥

वर्ण्य विषय — ग्रंथ में ध्वनि काव्य में नायिका भेद का वर्णन किया गया है, व्यंग्यार्थ कौमुदी कवि की एक अनूठी रचना है। नायिका भेद तो इसका प्रधान वर्ण्य विषय है ही इसमें व्यंग्यार्थ और अलंकारों को मुख्य विषय की पृष्ठभूमि में चातुर्य के साथ रखा गया है। कवि व्यंग्य प्रधान काव्य को उत्तम काव्य मानता है। वह लिखता है—

जिन जीव है कवित मे, सब्द अरथ गति अंग ।
सोई उत्तम काव्य है बरन विग प्रसंग[2] ॥

व्यंग-शक्ति का निदर्शन कराना ही व्यंग्यार्थ कौमुदी का उद्देश्य लिखा है—

करि कविवन सौं बीनती सुकवि प्रताप सुहेत ।
किय विगारथ कौमुदी विंग जानिवे हेत[3] ॥

ग्रंथ के दो भाग हैं—मूल भाग और वृत्ति भाग । मूल भाग में कुल १३० छंद हैं। ग्रंथारम्भ गणपति की वंदना से होता है। तत्पश्चात १४वें छंद तक अभिधा, लक्षणा और व्यंजना शक्तियों और अलंकारों का संक्षिप्त निर्देश किया गया है। १४वें छंद से १२५ तक मूल विषय नायिका भेद का निरूपण है। कवि ने सखी दूती दर्शन हाव और भाव का वर्णन छोड़ दिया है। अंतिम पांच छंदों में ग्रंथ रचना प्रयोजन और रचनाकाल का उल्लेख मिलता है। कवि का नायिका भेद निरूपण का आधार आचार्य भानु मिश्र हैं। वृत्ति भाग में कवि ने गद्य में मूल ग्रंथ के उदाहरणों से सम्बन्धित नायक नायिका, शब्द शक्ति और अलंकारों के भेदोपभेद समझाये हैं। अधिक स्पष्टता लाने के उद्देश्य से पद्यबद्ध लक्षण भी दिये गये हैं। रीति की परम्परा में यह ग्रंथ अपने प्रकार का एक ही है। कवियों ने पद्यों के साथ वार्तिकों का प्रयोग अवश्य किया है परन्तु पृथक से एकत्र गद्य में लक्षण-उदाहरणों को बताने वाले प्राचीन साहित्य में कम ही ग्रंथ हैं। जहां तक विषय वर्णन का प्रसंग है कवि ने भानुमिश्र के अतिरिक्त व्यंग्यार्थ

१, व्यंग्यार्थ कौमुदी–प्रतापसाहि छं० सं० १२६ २ वही–छंद संख्या ५ ।
३ वही–छंद संख्या ६ ।

विवेचन म मम्मट के काव्य प्रकाश[1] का भी आधार बनाया। साथ ही आगत पतिका को रसलीन गणिका क भेदो को कुमारमणि और अकबरशाह की परम्परा से ग्रहण किया है। लक्षणा के लिये कवि संस्कृत आधार ग्रथा का ऋणी है। उदाहरण उसके अपने हैं और अद्वितीय हैं विवेचन म मौलिक सूझ हैं उदाहरणा मे व्यग्य क रत्न हैं। ग्रथ की समाप्ति इस प्रकार होती है—

इति श्री विगाय कौमुदी समाप्ता।

रस सागर —गोपल राय[2] रचना काल स० १८८६ वि०। यह नायिका भेद का रस सम्ब धी ग्रथ है। इसकी हस्तलिपि ८ इच × ६ इ च के आकार मे २७० पृष्ठों म है। इसका रचनाकाल स० १८८७ है जो कवि न ग्रथ म इस प्रकार लिखा है—

ठारह स ससासिया, जेठ बदी रवि तीज।
कवि गुपाल बरनन करयो रससागर को बीज॥

आरम्भ म गणेश वदना का कवित्त ग्रथ नामकरण आदि का वणन है। यह ग्रथ ग्वाल क रसिकानन्द (र०का० १८७९) के नायिका भेद की वणन पद्धति से प्रभावित है। इस म नायिका क वय गुण, प्रकृति आदि के अतिरिक्त वात्स्यायन और कोकोक के नायिका भेदा का भी आश्रय लिया गया है। चित्रिणी का लक्षण यहा उदाहृत किया जाता है—

काम के धाम मे लोभ कछू रति के जल मे मधगंध सो होई।
मित्र के चित्र वह रति सौं, रति गीतरू नत्य कवित्त मे भोई॥
चचल दिष्टरु चित्त अचचल भीमी गुपाल सुगध मे जोई।
चित्र विचित्र कर जो चरित्रन, चित्रिनी जासो कहे सब कोई॥

---

१ विश अथ अतिसय कठिन, को कवि पाव पार।
मम्मट कछुमत कछुसमुझि दित कौनोमति अनुसार॥
— वही छ० स० १२७॥

२ राजन के राजाधिपति पृथ्वीसिंह सुभूप।
रजधानी श्रीकृष्णगढ राजतदुग अनूप॥१॥
४ १ ८ १
वेद ब्रह्मनिधि इदुवर सवत अवधि उदार।
श्रावण शुक्ला त्रयोदसि सयुत शुभ शशिवार॥३॥
दपति वाक्य विलास को पोथी सवसुखदास।
लिखि वृदावन मध्यम श्रीवदावनदास॥४॥
ये वन्दावन वासी ये —दम्पाति वाक्य विलास पृष्ठ १२८।

विवेचन म मम्मट के काय प्रकाश[1] को भी आधार बनाया। साथ ही आगत पतिका को रसलीन गणिका व भेदो को कुमारमणि और अकबरशाह की परम्परा से ग्रहण किया है। लक्षणा के लिय कवि संस्कृत आधार ग्रथा का ऋणी है। उदाहरण उसके अपने हैं और अद्वितीय हैं विवचन म मौलिक सूझ हैं उदाहरणा म व्यग्य क रत्न हैं। ग्रथ की समाप्ति इस प्रकार होती है—

इति श्री विलास कौमुदी समाप्ता।

रस सागर —गोपल राय[2] रचना काल स० १८८६ वि०। यह नायिका भेद का रस सम्बन्धी ग्रथ है। इसकी हस्तलिपि ८ इंच × ६ इंच के आकार म २७० पृष्ठो म है। इसका रचनाकाल स० १८८७ है, जो कवि न ग्रथ म इस प्रकार लिखा है—

> दारह स सत्तासिया, जेठ बदी रवि तीज।
> कवि गुपाल बरनन करयो रससागर को बीज॥

आरम्भ म गणेश वन्दना का कवित्त ग्रथ नामकरण, आदि का वणन है। यह ग्रथ ग्वाल क रसिकानन्द (र०का० १८७९) के नायिका भेद की वणन पद्धति से प्रभावित है। इस म नायिका के वय गुण, प्रकृति आदि क अतिरिक्त वात्स्यायन और कोकोक के नायिका भेदा का भी आश्रय लिया गया है। चित्रिणी का लक्षण यहा उदाहृत किया जाता है—

> काम के धाम मे लोभ कछू रति के जल मे मधुगध सो होई।
> मित्र के चित्र बहु रति सौं रति गोतक नत्य कवित्त में भोई॥
> चचल द्रिष्टर चित्त अचचल मीनी गुपाल सुगध मे जोई।
> चित्र विचित्र कर जो चरित्रन, चित्रिनी जासों कहे सब कोई॥

---

१ चित अथ अतिसय कठिन, को कवि पावै पार।
मम्मट कछुमत कछुसमुझि दित चौनीमति अनुसार॥
— वही छ० स० १२७॥

२ राजन के राजाधिपति पृथ्वीसिंह सुभूप।
रजधानी श्रीकृष्णगढ राजतदुग अनूप॥१॥
८ १ ८ १
वेद ब्रह्मनिधि इन्दुवर सवत अवधि उदार।
श्रावण शुक्ला त्रयोदसि सयुत शुभ शशिवार॥३॥
दपति वाक्य विलास की पोथी सबसुखरास।
लिखि वृन्दावन मध्यम श्री वृन्दावनदास॥४॥
ये वृन्दावन वासी ये —दम्पाति वाक्य विलास पृष्ठ १२८।

नायिका भेद में विशेष विस्तार का आग्रह नहीं मिलता। पर भाषा कवि की अपनी है और निरूपण स्वच्छ हुआ है। रसागार में शृंगार रस का विशेष और इतर रसों का चलता हुआ वर्णन है। शान्त रस का लक्षण कवि ने इस प्रकार दिया है—

> कथा को रतन सतसंग सिद्ध साधन को।
> गुरु उद्दीपन ए विभाव मन हरन॥
> सब मे समान ज्ञान रोम अश्रु अनुभाव।
> धृति मति हर्ष रोज थाई भाव धरन॥
> सुकवि गुपाल सुद्ध सुक्ल है रंग देव।
> नारायन निसा अस्थायी सांति करन॥
> होन तत्व अध्यात्म निरवद उर आनि।
> तहाँ कवि गुन मान जानि सांतिरस बरन॥

शान्तरस वर्णन के साथ ही ग्रन्थ का समापन हो जाता है।

गोपालराय का लक्ष्य एक सरल और सुबोध लक्षण ग्रन्थ लिखने का ही रहा प्रतीत होता है आचार्यत्व प्रदर्शन का नहीं। लक्षण और उदाहरणों की भाषा सरल और स्वच्छ है। विवेचन में संस्कृत और भाषा के आचार्यों के मतों को कवि ने नहीं परखा जिसकी उस जैसे परवर्ती कवि से अपेक्षा थी। नायक नायिकाओं का वर्णन हिन्दी रीति परम्परा के अनुसार हुआ है। इससे प्रकट होता है कि कवि का संस्कृत का अध्ययन अधिक विस्तृत नहीं था।

रस चन्द्रिका —इसका रचनाकाल सं० १८६० के लगभग। यह मूलतः शृंगार रस के अन्तर्गत नायक–नायिका भेद का निरूपक ग्रन्थ है, जो दोहा, कवित्त और सवैया छन्दों में लिखित है। शृंगारेतर रसों का चलता वर्णन भी इसके अन्त में मिलता है कवि के नायिका भेद निरूपण का आधार श्री रूपगोस्वामी का 'भक्ति रसामृत सिन्धु' और 'उज्जवल नीलमणि' है जिसमें शृंगार के उज्जवल और मर्यादोचित रूप का ही कथन है। कवि गणेश वन्दना और राधा ठकुराइन के पदारविन्दों की अर्चना करके नित्यलीला स्थली वृन्दावन और कलिंदजा की अभ्यर्थना करता है। रस की परिभाषा कुलपति मिश्र से प्रभावित है।[2] नवरसों के नाम गिनाकर कवि ने शृंगा-

१ कुंजन करत विहार सखी सेवत सुखदा जो।
रसिक गुविंद गुरु दई बताय वृंदावन राजो॥
—छन्द पयोनिधि छ० सं० १

२ जगत अद्भुत सुख सदन, शब्दानंद समान।
रसिकन कों अवलंबहै, सोइ रस सुखदान॥
—रसचन्द्रिका प्रथम प्रभा छ० सं० ६

रा तगत आलम्बन उद्दीपन विभावों तथा अनुभावों का वणन किया है। नायिका लक्षण आठो गुण के लक्षण रूप शील प्रेम कुल, वभव, भूपणादि का वणन किया गया है। स्वकीया और परकीया नायिक आ के भेदोपभेद निरूपण मे कुलटा को छोड दिया है¹। कवि न पद्मिनी आदि नायिकाओं के भी लक्षण उदाहरण दिय है। कुल नायिका गणना ११५२ है। नायक के भेदोपभेद अनुराग वणन उद्दीपना तगत षटऋतु वर्णन सखी और सखाओं के भेद दूती भेद अनुभाव, हावादि एव शृगारेतर रस वर्णन ग्रथ के अन्य प्रतिपाद्य विषय है। भयानक रस के उपरान्त तेरह प्रभा व ४५० छन्दो का यह ग्रथ समाप्त होता है। इसकी अपूणता देखकर प्रतीत होता है कि कवि इसे कदाचित पूण नही कर पाया। इससे यह कवि की अतिम कृति अनुमानित होती है। ग्रथ म रचना काल नहीं है। पर कन्य की दृष्टि से यह कवि की प्रौढ रचना है।

रस कुसमाकर प्रताप नारायण सिंह रचनाकाल स० १६४६ वि०। यह मूलत रस निरूपक ग्रथ है जिसम रस की स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार की गई है। कवि ने इसम अपने लक्षण तो गद्य म रखे और उदाहरणो म स्वरचित कविताओ के अतिरिक्त अन्य प्रसिद्ध कवियो के छन्द भी अगीकृत किये हैं। द्विजदेव कमल बिहारी, पद्माकर आदि के छन्द इनम प्रमुख है। ग्रथ १५ कुसुमो म विभक्त है। पहले कुसुम म अनुक्रमणिका दूसरे म स्थायी भाव तीसरे म सचारी, चौथे मे अनुभाव, पाचवे म हाव छटे म विभाव और सखा सखी, दूती आदि का वर्णन सातवें म ऋतु वर्णन–विशेषकर वसन्त के उदाहरण आठवें म उद्दीपन के उपादान–पवन चन्द्र चादनी पुष्प पराग और नवें से बारहवें कुसुम तक आलम्बन विभाव का वर्णन है जिसम सम्पूर्ण नायिका भेद का विवेचन आया है। तेरहवें से पन्द्रहवें कुसुम म रस का निरूपण किया गया है। दूतियो के विभाजन म वहिरगिनी अतरगिनी, व्यग्य विदग्धा और हित-कारिणी चार भेद किये गय हैं। हास्य के छ भेद वन के तीव्र तेप्त और दुगन्ध और भेद करके इनक उदाहरण नही दिये। सचारी ३४ है। बोधक और ज मा के लक्षण और उदाहरण नही दिये गये। स्थायी भाव उत्साह के तीन भेद और किये गय हैं—१–बल विद्याप्रतापादि जनित २–आद्र तादि जनित और ३–दान सामर्थ्यादि जनित। वीर रस म केवल तीन भेद किये गये है–युद्धवीर २–दान वीर और ३–दयावीर। नायिका भेद रीति परम्परा के अनुसार विभाजित किया गया है। लक्षण और उदाहरण शास्त्रीय स्पष्ट और स्वच्छ हैं।

१ बसक नायक की प्रीति गनका सु होय है सो रसाभास जानक कही नहीं।
—रसचन्द्रिका–सप्तम प्रभा छ० स० १८

उक्त विवेचन से उक्त कवि की शास्त्रज्ञता एवं विद्वता पर तो प्रकाश पड़ता है, यह भी सिद्ध होता है कि उन्होंने मौलिक उद्भावनायें उत्पन्न करने की भी चेष्टा की हैं। रस कुसुमाकर रस रीति का एक अनूठा ग्रन्थ है।

६ अलंकार निरूपण

पद्माभरण पद्माकर रचनाकाल सं० १८७० व ७६ के लगभग। यह अलंकार निरूपक ग्रन्थ है। डा० व्रजनारायण सिंह ने इस पर अपना मत इस प्रकार स्थिर किया है—'जब हम पद्माभरण जयपुर में रचा जाना स्वीकार कर लेते हैं तो यह बात सिद्ध हो जाती है कि ग्रन्थ महाराज जगतसिंह की मृत्यु के पहले ही निर्मित हो गया होगा। इसलिये इस ग्रन्थ की रचना सं० १८७५ वि० के पूर्व अवश्य हो जानी चाहिए। जब हम जगत विनोद का रचनाकाल सं० १८७० के लगभग मानते हैं तो कवि ने इस ग्रन्थ की रचना निश्चित रूप से सं० १८७० वि० और १८७६ वि० के बीच करली होगी[१]।

वर्ण्य विषय इसमें कुल ३४४ दोहे हैं जिनमें आरम्भ का एक मंगलाचरण और अन्त का एक दोहा ग्रन्थ रचना के उद्देश्य का है। शेष छन्दों में अलंकारों का वर्णन है। कवि ने समस्त अलंकारों को न लेकर अर्थालंकारों का ही निरूपण किया है। शब्दालंकार और उभयालंकार का संकेत इस एक दोहे में देकर उपमालंकार प्रसंग छेड़ दिया है —

> सब्दहु तें कहुं अर्थ तें, कहूं दुहूं तें उर आनि।
> अभिप्राय जिहि भांति जहं, अलंकार सो मानि॥[२]

कवि की अनेक अलंकारों में से प्रधान अलंकार चुनने की यह युक्ति अनूठी है—

> अलंकार इक थलहि में, समुझि परं जु अनेक।
> अभिप्राय कवि को जहां, वहै मुख्य गनि एक॥
> ज्यों विधि एक महल में बहु मंदिर इकमान।
> जो नृप के मन में रुच, मंदिरतु वहै प्रधान॥[३]

उपमा के भेदोपभेदादि से लेकर हेतु आदि अलंकारों का दोहा शैली में वर्णन है। तत्पश्चात् रसवत, प्रेयस ऊर्जस्वित, समाहित भावोदय, भावसंधि, भाव शबलता प्रत्यक्ष अनुमान आदि पचपन अलंकारों के भी लक्षण-उदाहरण दिये गये हैं। तीन अलंकारों के प्रसंग में बिहारी के दोहे भी उदाहृत किये

---

१ कविवर पद्माकर और उनका युग—पृष्ठ ११६।

२ पद्माभरण—दो० सं० २।

३ वही—छं० सं० ३ व

गय हैं। समृष्टि संकर के बाद कवि ने निम्नांकित दोहे से ग्र य का समापन कर दिया है —

> राधा माधव कृपा कहि लखि सुकविन को पथ।
> कवि पदमाकर ने कियो पदमाभरन सुग्रथ ॥[1]

पद्माभरण के निर्माण मे कवि ने संस्कृत के 'चन्द्रालोक' और अप्पय्य दीक्षित की 'कुवलयानन्द' को आधार माना है। इन संस्कृत ग्रन्थो के आधार पर लिख गये जसवन्तसिंह के भाषाभूषण' बरीसाल के 'भाषाभरण' को भी दृष्टिगत रखा गया है। कवि बरीसाल से अधिक प्रभावित है। संसृष्टि संकर के उदाहरणो म 'भाषाभरण' के दोहो को ही उद्धृत किया है[2]। ग्रन्थ के दोहा क्रमाक २,३ और ४ को भाषाभरण के निम्नांकित दोहों से मिला कर देखिये—

> बहु पद त कछु अर्थ ते कहू दुहुन ते जोइ।
> अभिप्राय जैसो जहा अलकार सौं होइ॥
> अलकार यक ठौर मे जो अनेक दरसाहि।
> अभिप्राय कवि को जहा मो प्रधान तिनमाहि॥
> ज्यौं व्रज म व्रज बधुन की निकसत सजी समाज।
> सबकी रुचि जापर गई ताहि लखत ब्रजराज ॥[3]

परन्तु इमस पद्माकर की मौलिकता पर आच नही आती। लक्षणों की उदाहरणा से संगति भाषा की सुग्राह्यता पद्माकर म बरीलाल से कहीं अधिक है। आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के मतानुसार यह ग्रन्थ जसवन्त सिंह क 'भाषाभूषण की अपेक्षा बहुत स्पष्ट और सुग्राह्य अलकार ग्रन्थ है[4]।

भूपण भक्ति विलास हरदेव रचनाकाल स० १८१४ वि०। इसकी रचना फाल्गुन प्रतिपदा स० १८१४ वि० को की गई थी, जसा कि कवि ने ग्रन्थ के अन्तिम छन्द म उल्लेख किया है—

> ४ १ ८ १
> वेद इन्दु नवनिधि विसद वहासक मधुमास।
> हरिदेव सु कीं हों विसद भूपन भक्ति विलास ॥३९८॥

---

१ पद्माभरण छ० स० ३४४।
२ पद्माभरण छ० स० ३३४, ३३८ ३३७ ३३८ ३४० और ३४१।
३ भाषा भरण बरीसाल।
४ हि० सा० का अतीत (द्वितीय भाग) पृष्ठ ५९४।

ग्रन्थ का प्रमुख प्रतिपाद्य अलंकार हैं। विषय निरूपण में कुवलयानन्द आधार है। कवि केशव से इतना प्रभावित है कि उसने केशव का दोहा ही ग्रन्थारम्भ में दे दिया है —

यदपि सुजात सुलच्छनी सुवरन सरस सुवित्त।
भूषन बिन न विराजहीं कविता वनिता मित्त ॥२॥

प्रधानालंकार को देखने की विधि कवि ने नहीं बताई। वह इतनी गहराई में नहीं उतरा जितने अन्य आचार्य। वह केवल यह कह कर सन्तुष्ट हो जाता है —

अलंकार इकठौर में ज्यों अनेक दरसाँहि।
कवि को भावैं है तहां जे प्रधान तिनमांहि ॥३॥

अलंकारों में कवि ने उपमा को प्रधान मानकर[1] केवल अर्थालंकारों का ही वर्णन किया है। अर्थालंकारों के वर्णन के उपरान्त कवि ने वृत्तियों का भी आनुषंगिक विवेचन किया है। कोमला वृत्ति का लक्षण और उदाहरण यहां दिया जाता है

लक्षण बिना मधुरता ओज बिन, कहि कोमला विख्यात।
रच्यो अनेकन ग्रन्थ के मत सों बरनै मात ॥

वही छं० सं० ३९६

उदाहरण भाग भरा मोहनी के छुवें पद कोमल कंज लगें किमि तात।
रूप की रासि अनूप रची विधि ओप सची कों लजात हैं जात॥
है रति मे रति सी हरि देव जू जानत काम कलान की घातें।
जाति बडी है बडे कुल की अरु नैन बडे हैं बडो बडो बात॥

वही छं० सं० ३९७

हरदेव सामान्य रीति कवि-आचार्य हैं। लक्षण और उदाहरण परिमार्जित और स्पष्ट हैं। कवि निरूपण में केशव से प्रभावित है। ग्रन्थ सामान्य कोटि का है। निरूपण पारम्परिक है। लक्षण-उदाहरण कवि के अपने हैं।

---

१ विविध भांति भूषनन में उपमा जान प्रधान।
तासों कविहरिदेव सह प्रथमहिं कहत बखान॥

—भूषण भक्ति विलास छं० सं० ५।

२ रीतिकालीन अलंकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन

—डॉ० ओमप्रकाश १९६५ ई० पृष्ठ ०३० ।

चित्र चन्द्रिका बलवान सिंह रचनाकाल सं० १८८६ वि०।[1] बलवानसिंह ने चित्र काव्य को लेकर इस ग्रन्थ की रचना की है। चित्रकाव्य और चित्रालंकार संस्कृत शास्त्र में हीन माने गये हैं। भाषा में केशव तथा देव ने इनका विवेचन किया। बलवानसिंह ने इनके वर्णन में जितने विस्तार और विशदता से काम लिया उतना संस्कृत वाले भी नहीं कर सके।

बलवान सिंह ने चित्रालंकार के तीन भेद १—शब्द, २—अर्थ और ३—संकर चित्र किये हैं —

अथ सब्द चित्र बखानु पुनि अर्थ चित्रहि जानु।
संकर सुचित्रहि भानु त्रय भेद चित्रहि आनु॥[1]

इन तीनों के निम्नांकित उपभेद और लिखे हैं —

१ शब्द चित्र वर्ण चित्र, स्थान चित्र स्वर चित्र, पद्माकार चित्र गति चित्र आकार बंध चित्र तथा गुणबंध चित्र।[2]

२ अर्थ चित्र एकाक्षरादि अर्थ चित्र प्रहेलिका सूक्ष्मालंकार, गूढोत्तर अपह्नुति, श्लेष और यमक।[3]

३ संकर चित्र पदार्थ समन्वय यमक चित्र।[4]

ग्रन्थकार ने विषय को सुस्पष्ट बनाने के लिये गद्य टीकाओं का आश्रय लिया है नायक—नायिका तथा सखी—नायिकाओं के प्रश्नोत्तरों में चित्रों को बांधा गया है जिससे विषय का सौन्दर्य बढ़ गया है। चित्रों में जीवन के विविध उपादानों को बांधा गया है।

संक्षेप में चित्र चन्द्रिका' बलवान सिंह की भाषा काव्य शास्त्र में अनूठी देन है।[5]

भारती भूषण गिरिधरदास रचनाकाल सं० १८९० वि०। गिरिधरदास का यह अलंकार ग्रन्थ परम्परा के निर्वाहार्थ बना। इसमें सौ

---

१ चित्रचन्द्रिका बलवानसिंह पृष्ठ ३।
वही पृष्ठ १३८ को पादटिप्पणी में उदाहृत।

२ वर्ण स्थान स्वर गिनो, आकृति गति पुनिबंध।
चित्रभेद षट जानिये बरनत कविवर बंध॥ वही छ० ६।

३ वही पृष्ठ ३ व ५।

४ वही पृष्ठ १११।

५ रीतिकालीन अलंकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन पृष्ठ १४०।

अर्थालंकारों और अनुप्रास एवं यमक दो शब्दालंकारों का विवेचन है। ग्रन्थकार ने अर्थालंकारों में 'कुवलयानन्द' और शब्दालंकारों में 'साहित्य दर्पण' का अनुसरण किया है। *अन्त्यानुप्रास* का भी वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत हुआ है। इन्होंने उपमावाचक शब्दों के दो भेद माने हैं। १—मूल शब्द और २—इतर। मूल शब्दों में लों, सा, से सी, सों, सरिस, सम, समान, इव, तूल, एसो, ऐसे तथा इतर कोटि में जिमि तिमि, जसोई, तसोई, जथा, तथा, ज्यों और त्यों हैं। गिरधरदास ने यह शब्द चयन सस्कृत से ग्रहीत किया है।[१]

ग्रन्थकार ने स्मरणालंकार का भेद नहीं लिखा। बस इसे दो प्रकार का बताया है। १—देखने से, २—सुनने से। गूढोक्ति के श्लेषयुक्त और विवृतोक्ति को शब्दशक्तियुक्त तथा अर्थशक्तियुक्त दो-दो भेद किये हैं। इनके लक्षण नहीं दिये। भारती भूषण में लक्षण और उदाहरण दोनों ही स्वच्छ और स्पष्ट दिये हैं। यह एक उत्तम कृति है।[२]

ई पिंगल निरूपण

वृत्त तरंगिणी राम सहाय दास रचना काल सं १८७३ वि०।[३] यही आचार्यत्व की दृष्टि से पर्याप्त महत्व का है। डा० ब्रजनारायण सिंह ने इस की एक पूर्ण प्रति काशी नरेश के पुस्तकालय में देखी थी। लेखक को यह नहीं मिली। अतः उन्हीं के विवरण के आधार पर इसका परिचय प्रस्तुत किया जाता है।

गणेश दुर्गा और गुरुचरण वंदना के अनन्तर कवि ने पिंगल की परिभाषा, गुरु, लघु, पताका, मर्कटी, मेरु सूची, कला आदि के भेदाभेद, उनकी परिभाषा और उदाहरण दिये हैं। नष्ट और उद्दिष्ट का भी सोदाहरण वर्णन है।

छन्दों का वर्णन दूसरी तरंग में प्रस्तुत किया गया है। मात्रिक छन्दों के लक्षण और उदाहरण दिये हैं। तीसरी तरंग में वर्णिक वृत्तों का सोदाहरण वर्णन किया गया है।

चतुर्थ तरंग में कवि ने तुक का प्रसंग उठाकर उसकी परिभाषा की है। स्थूल रूप में तुक के १—उत्तम, २—मध्यम और ३—अधम तीन भेद करके

---

१ रीतिकालीन अलंकार साहित्य का विवेचन पृष्ठ १४१।

२ वही पृष्ठ १४०।

३ सप्त्या सुधि सिधि विधु वरस, गोरी तिथि सुदि दूज।
सुराचाज वासर सुखद अरु घट मे मति सूज॥

उराम को तीन विभेदो म बाटा है। कवि ने तुक को और आगे समसरि विपमसरि आदि श्रेणियो म विभक्त करते हुए उनके लक्षण सोदाहरण दिय है। लाटिया, यामकी, सामा य यामकी, वीप्सरि विशेप वीप्सरि, सामा य विपमसरि, विशप विपमसरि, सामाय वष्टसरि विशेप वष्टसरि आदि का वणन भी किया है। इसी प्रकार अ य तुका का भी वणन है।

राम सहाय दास का आचायत्व इसस स्पष्ट है। ग्र य का आधार शेष-नाग का पिंगल है।

डा० मनमोहन गौतम के अनुसार वृत्त तरंगिणी हिन्दी का सवश्रेष्ठ पिंगल ग्रन्थ है।[1] शैली, विषय वर्गीकरण और निरूपण की दृष्टि से यह ग्रन्थ अति गौरवपूण स्थान पाने का अधिकारी है। कवि ने आचायत्व को तत्परता से निभाया है। उसने अपने लक्षण देकर अपने ही उदाहरणो से स तोष नही किया बल्कि सूरदास जसे सिद्ध कवि के उदाहरण दिये हैं और वार्तिका द्वारा उनकी विशेपताओ को स्पष्ट किया है। श्रेष्ठ ग्रन्थो के पद सस्कृत साहित्य स ज्यो के त्यो रख दिये है जिसस विषय विस्तार भी हुआ है और स्पष्टीकरण भी। तीसरी विशेपता है सूत्र-पद्धति मे लक्षण और छन्द भद लिखने की तथा सख्याओ का कूट पद्धति स लिखने की। चौथी विशेपता है हिन्दी छन्द शास्त्र को नये छन्द देने की। कवि न वृत्त तरंगिणी म अ य ग्र थो की तुलना म सर्वाधिक छन्द सख्या दी है।[2]

छन्द पयोनिधि हरदेव रचनाकाल स० १८९२ वि०। छन्दो का वणन और प्रस्तार प्रस्तुत करने वाला यह अच्छा ग्रन्थ है। इसका रचनाकाल ग्रन्थ के अतिम दोह म इस प्रकार लिखा है —

२ ८ ८ १
धरी ननिधि सिद्धि ससि सवत सुखद उदार।
माघ शुक्ल तिथि पचमी, रविनदन शुभवार॥[3]

ग्रन्थ म कुल ८ तरग और ५४४ छन्द है। प्रथम तरग म बयरा छन्द हैं जिनम मगलाचरण और छन्द का लक्षण लिखा है। कवि न छन्द शास्त्र को बडा ही गम्भीर विषय बताया है और उस सरल बना देने का दावा भी किया है

---

१ हि० सा० व० इतिहास षष्ठ भाग पृष्ठ ४८०।

२ वही पृष्ठ ४६०।

३ छन्द पयोनिधि–हरदेव, सम्पादक–कन्हैया लाल कार्ह-प्रकाशक खेमराज श्रीकृष्ण दास बम्बई, अष्टम तरग छ० स० ५४४।

है अति पथ अगाध दियौ सुगम सो ग्रन्थ करि ।
यह सो मम अपराध, क्षमा करो कवि बुद्धिवर ॥[१]

छन्द वेदाग है, प्रात काल ही इसका पाठ होना चाहिये

छद वेद को अग है कहैं मुनिन के वृद ।
याते पढ़ियत् प्रात ही बरन नाग कविंद ॥[२]

ग्रन्थ के अतिम ३ छन्दो म रचनाकालादि की सूचना देकर कवि ने इस प्रकार पुष्पिका लिखी है —

'इति श्री छन्द पयोनिधौ कवि हरदेव विरचितायाम पद्याधिकरण अष्टमो तरग ॥८॥ इति छन्द पयोनिधि समाप्त ॥[३]

अध्यायश ग्रन्थ का वर्ण्य विषय निम्नाकित है

द्वितीय तरग गुरु लघु विचार, गुरु नामानि, द्वि गुरु नामानि, लघु नामानि ।

तृतीय तरग गण निरूपण का शास्त्रीय विधान किया गया है ।

चतुर्थ तरग अष्टाग वर्णन सख्या, मात्रा प्रस्तार, सूची, नष्ट, उद्दिष्ट मेरु, पताका, मर्कटी (अष्टपाति, दसपाति) मात्रा एकावली मात्रा पाताल चक्र, स्थान विपर्यय, सख्या विपरीत उभय विपर्यय, उभय विपरीत, उभय प्रस्तार आदि के लक्षण स्वरूप, लक्षण आदि ।

पचम तरग वर्ण अष्टाग, वर्ण प्रस्तार वर्ण सूची, वर्ण नष्ट वर्ण उद्दिष्ट, वर्ण मेरु, वर्ण पताका वर्ण मर्कटी (छ पक्ति, आठ पक्ति और दस पक्ति) एकावली, पातालमर्कटी स्थान विपर्यय वर्ण प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, वर्ण प्रस्तार ।

षष्ठ तरग गणागण विचार, गणो के मन लक्षण, देवता, गण सख्या, फलाफल, वर्ण शुद्धाशुद्ध, वर्ण फलाफल ।

सप्तम तरग म मात्रिक छन्दो का वर्णन और अष्टम तरग मे वर्ण वृत्तो का विवेचन प्रस्तुत हुआ है । विवेचन का आधार पिंगलाचार्य नागेश कवि है । भाषा म हरदेव ग्वाल कवि से प्रभावित हैं । उन्होने ग्वाल का एक दोहा लक्षण अपने ग्रन्थ म उदाहृत किया है जो यह है —

षटकल चौकल जाननिवा, पुनि इककल फिर दोइ ।
पुनि षट चौइक क्रम दुकल दोहा सुगतीसोइ ।[४]

---

१ वही ११२ २ वही ११३ ३ वही पृष्ठ २०७
४ वही ७।११९ ।

हरदेव ने अपना दोहा लक्षण इस प्रकार बनाया है

छ क्ल चार इकल दु क्ल प्रथम तीसरे पाय ।
दूजे चौथे दुक्ल तजि दोहा छुद बनाय ॥[१]

हरदेव ने दोहा के २३ भेद एवं २४६४६८ प्रस्तार गिनाए हैं।

पिंगल शास्त्र अत्यन्त कठिन और शुष्क है। कम ही आचार्यों ने इसे लिखा है। हरदेव ने सरल सुबोध और स्वच्छ भाषा में छन्द शास्त्र लिखकर इसके जिज्ञासुओं का बड़ा हित किया। इससे शास्त्र का सरलतापूर्वक ज्ञान किया जा सकता है। उदाहरण बड़े स्वच्छ हैं। लक्षण स्पष्ट हैं।

ङ रीतिबद्ध काव्य

अनुराग बाग दीन दयाल गिरि रचना काल स० १८८८ वि०। अन्तर्साक्ष्य में रचनाकाल का निर्देश निम्नोक्त दोहे में मिलता है

८ ८ ८ १
बसु बसु बसु ससि साल मे रितु बसत मधुमास।
रामजनम तिथि भौम दिन भयो सुबाग बिकास ॥[२]

गिरिजी नीतिकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। अनुराग बाग उनकी रीतिबद्ध रचना है जिसमें अनुराग के बाग की कल्पना करके लाक्षणिक शैली द्वारा राधा माधव के भक्ति और अनुराग का काव्यमय वर्णन किया गया है। कवि इस बाग का माली है उत्थान के कवित्त अंकुर, वत्सल भाव जननी यशोदा, माधव के ध्यानमय कवित्त ही द्रुमावली श्यामा के सखियों के कथन मोहन, मुसकान सुमन, प्रिय तथा प्रिया के सखियों के प्रति वचन कोकिल हरिदर्शन वर्णन बगल, राधा हरि की जोड़ी मंजरी, सखी के सखी के प्रति वचन दोज कलित वक्रोक्ति के प्रश्नोत्तर, वर्णु के खडन मडन वलय सारिकाएं विविध लीलायें बाग के लालित्य, बारहमासे के दोहे मणिमय कूप न द प्रति उद्धव वचन शुक, ऋतु वर्णन पुलिन, निर्गुण खडन मकरन्द ब्रजबालाओं की उद्धव के प्रति अभिलाषा पराग उद्धव के द्वारा कृष्ण के सन्देश कथन सुगन्ध के ढेर, उद्धव द्वारा कृष्ण से राधा-विरह्यना के भाव कथन ही फल है। कवि की कुण्डलियाँ मय विनती ही बाग की शीतलता है आदि। ग्रन्थ पांच अध्यायों में विभक्त है जिनका नाम बैठार है। कुल छन्द संख्या ३७३ है।

---

१ वही ७।१२०।

२ अनुराग बाग दीनदयाल गिरि प्र० बनारस लायट प्रेस

वण्य विषय मगलाचरण के उपरान्त कवि ने एक स्वर चित्र और एक मानिक चित्र दिया है। ग्रथ वाटिका स्पक कथन के अनन्तर वात्सल्य, ध्यान, पूर्वानुराग, रूपकातिशयोक्ति, सिंहावलोकन, मुकरी, छकापह्नुति अलकार, श्लेषालकार आदि के कवित्त हैं। तदनन्तर रूपगविता से दूती वचन, श्रवण स्वप्न, चित्र और प्रत्यक्ष दर्शना की कुण्डलिया तथा होली, धशो, अन्तर्धान लीला आदि की कुण्डलिया हैं। तृतीय केन्गर म कृष्ण के मधुपुरी गमन समय के यशोदा के वात्सल्यपूरित भावो को काव्य का रूप दिया गया है। षट ऋतु वणन का वणन यहा गोपी-विरह म किया गया है। अन्त म श्लिष्ट षटऋतु वर्णन है चतुथ कदार मे उद्धव गोपी सवाद है और पाचवे पराग मे विनय के छन्द दिये गये हैं।

इसम भक्तिमूलक शृगार का वर्णन है। कवि का सन्देश निम्नाकित दोहे से ध्वनित होता है

> सुमन सहित यह बाग है यामे सन्त बसन्त।
> सुखदायक सब काल मे, दुख नाशक विलसन्त। [१]

षटऋतु वणन, अलकार वणन तथा कतिपय नायिकाओ की मनो दशाओ के उदाहरणो के कारण यह रीतिबद्ध ग्रथो की कोटि म आता है। भक्ति के दोहे रीतिबद्ध रचना के रूप म सामान्य है। अनुराग बाग शृगार के भावुक वणनो के रत्नो स भरा है। कवि की भावुकता इतनी है कि इसस उनके भक्तकवि होने का भ्रम होने लगता है।

शृगार लतिका महाराज मानसिंह द्विजदेव रचनाकाल स० १९४० वि० द्विजदेव ब्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि है। 'शृगार लतिका' उनका प्रसिद्ध रीतिबद्ध काव्य है, जिस पर कई टीकाएँ हो चुकी है। भाव और कला का जसा सुन्दर समन्वय इसके छन्दो म है, वसा अन्यत्र सुलभ नही। ध्वनि, रस और व्यग्य के एक से एक अनूठे उदाहरण ग्रन्थ मे उपलब्ध हैं।

कवि न बसन्तागम के वणन से ग्रन्थ की उत्थानिका बाधी है। जिसके अन्तगत राधा और कृष्ण के सयोग और वियोग वणन के छन्द है उनकी विविध लीलाओं के चित्र हैं। इन म उद्दीपन एव आलम्बन विभावो के समग्र उपकरणो की सुन्दर व्यजना की गई है, जिसम नायिका भेद के भावो की व्यजना उपलब्ध है।

---

१ वही ११४१।

नायिका के मुख की उपमा को शरद का मयंक उसी दशा में पा सकता है जबकि नित्य प्रति पूनो रहे और उसका कलंक भी धुला हुआ हो। देखिये —

> निसदिन पूरन जगमग, आव धोइ कलंक।
> जो तो वा मुख की प्रभा पावे सरद मयंक ॥ ३३८॥ वही।

ऊ नीति काव्य

दृष्टान्त तरंगिणी दीनदयाल गिरि, रचनाकाल सं० १८७८ वि०। कवि ने अंत में इसका रचनाकाल इस प्रकार दिया है

> ८ ७ ८ १
> निधि मुनि वसु ससि साल मे फागुन मास प्रकास।
> प्रतिपद मंगल दिवस को कीन्हों ग्रंथविकास ॥[1]

बालकृष्ण की पयापान के वर्णन से ग्रंथ का मंगलाचरण बनता है।

> पयापयी जहँ तहाँ विहरत अति आनंद।
> मुख मुनील नवनीत जुत नौमि सुखद नंदनंद ॥[2]

दोहा शैली में कवि ने नीति वर्णन किया है। प्रथम पंक्ति में नीति की बात कह कर दूसरी पंक्ति मे उसका दृष्टान्त रखा है। कवि ने अपने अनुभव से विविध उक्तियाँ जुटाकर नीति का उपदेश दिया है। इसके प्रमुख विषय हैं— भक्ति वैराग्य, उपदेश सत्संग-महिमा, कुसंगति का दुष्परिणाम, संतो के गुण, उनकी महिमा, विद्या और ज्ञान का प्रभाव, संतोष की महिमा, प्रिय और अप्रिय वाणी का परिणाम, परिश्रम की महिमा, संगठन की शक्ति, पुरुषार्थ महत्ता आदि। कवि ने सामासिक दोहा शैली में बहुत बड़ी बात संक्षेप में कह दी है।

अन्योक्ति कल्पद्रुम दीनदयाल गिरि, रचना काल सं० १८१२ वि०। कवि ने ग्रन्थ में रचनाकाल का निर्देश इस प्रकार किया है

> २ १ ९ १
> करछिति निधि ससि साल मे माघमास सितपच्छ।
> तिथि बसंतजुत पंचमी रविवासर सुभ स्वच्छ ॥
> सोभित तहि औसर बिमल बसि कासी सुरधाम।
> विरच्यो दीनदयालगिरि, कल्पद्रुम अभिराम ॥[3]

---

1 दृष्टान्त तरंगिणी–दीन दयाल गिरि छं० सं० २०६
2 वही छं० सं० १।
3 अन्योक्ति कल्पद्रुम–दीनदास गिरि बनारस लायट प्रेस सं० १९२६ वि० छन्द संख्या ७६ व ८०। शाखा चतुर्थ।

दीनदयाल गिरि ने अ योक्ति के माध्यम से नीति का सु दर निरूपण किया है। इसमे चार शाखायें और कुल २९८ छन्द है। कुण्डलिया इनका प्रिय छद हैं। ग्रन्थारम्भ म श्लेषमय मगलाचरण तथा कल्पद्रुम अन्योक्ति दो कुण्डलिया म लिखकर षट्ऋतु वणन किया किया गया है। पच तत्व, पवन, अनल, जल, भूतल, दिवाकर निशाकर, दीपक, रत्नदीप नीरज, नवरत्न, सागर, नद, नदी, सर कमल, मधुकर, हस, चक्रवाक, बक, मडूक, कूप, भूधर चिन्ता मणि, नालमणि, मुक्ता, रग, लोहा, कानन, वृक्ष, शालमली, अक, वास, दाडिम खजूर, रसाल, कदली, पलाश, चन्दन, तुलसी, करील, अशोक, चपक, निंब, कपास, तुम्बका, गेंदा, गुलाब कुसुम शुक चातक, मयूर, चकोर, पतग, उलूक, वायस, बाला, सिंह मातग, तुरग, कुरग जम्बुक, शूकर, दाशर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, माली, कुलाल दरजी, नट रजक, दारुनटा, ग्वालिनी किरातिनी, पनि हारी, तमालिनी, कृषान, गडरनी, चौरस खिलाडी, जौहरी, सौदागर, चित्रकार, छल, बजन्त्री, मृदग, शख, पाषाण, वाण रसना, नयन, श्रवण, करतल पर अन्योक्त लिखी गई हैं। यहा तक कि काम क्रोध, मोह, लोभ, दम्भ, अभिमान, विवेक, विचार विराग, स तोष, क्षमा, मन, प्रबोध, प्रशसा आदि मनोविकारो के माध्यम से भी नीति कथन किया गया है।

ग्रन्थ म पाच छन्द प्रयुक्त हैं जिन्हे कवि ने पचामत कहा है

> कु डलिका सु घनाक्षरी सुखद सुदोहा वृत ।
>
> हर सवया मालिनी मिलि पचामत चित ॥[1]

कल्पद्रुम नीति का वजाड ग्रन्थ है।

ए वीर काव्य

हिम्मत बहादुर विरुदावली पद्माकर, रचनाकाल स० १८४६ १८५६ वि०।[2] ग्रन्थ का विषय आश्रयदाता हिम्मत बहादुर का वीरतापूर्ण यशोगायन है। इसम कुल २१२ छद है। ग्रन्थारम्भ म श्रीकृष्ण की वदना करके कवि अनूपगिरि (हिम्मत बहादुर) की विजय कामना करता है— नित नप अनूपगिरि भूप कह विजय देहु यदुवश मनि।[3] तदनतर १४ छदो म अनूपगिरि के शौय पराक्रम, दानवीरता, राजभक्त एव वयक्तिक गुणानुवाद करता हुआ कवि उस युद्ध का वणन करता है जो उसके आश्रयदाता और

---

१ वही ४।८०।

२ कविवर पद्माकर और उनका युग डा०व्रजनारायण सिंह पृष्ठ १०६।

३ हिम्मत बहादुर विरुदावली स० लाला भ

धूमधाम धुधरित भूमि असमान न सुज्झ ।
मनु घुमडि घनघोर दौरि दुहु ओर अरुज्झ ॥
सट तोडे चमक्त घोर घहरात घमर ।
घट सार चहु ओर सुनत धुवधाम धमके ॥
गरजत मेघ तडप तडित वज्रसरिस गोला पर ।
अलाउद्दीन हमीर को मार परो साधन सर ॥[1]

ग्रन्थ का आरम्भ श्रीकृष्ण और महादेव की स्तुति से होता है। आगे के ४ दोहों में आश्रयदाता का परिचय, ग्रन्थ लेखन का कारण बताया है। तदनन्तर छं० सं० ३६६ तक कथानक चलता है। अन्त में ग्रन्थ रचना काल का दोहा एवं आश्रयदाता नरेन्द्र सिंह के लिए आशीर्वचन लिखे गये हैं। ग्रन्थ ४०३ छन्दों में पूर्ण हुआ है।

ऐ–रीतिमुक्त काव्य

ठाकुर के कवित्त रीति की स्वच्छन्द काव्य धारा में ठाकुर कवि जैतपुर ने पर्याप्त काव्य सृजन किया था। इनका कोई निजी संग्रह-ग्रन्थ तो नहीं मिलता परन्तु लाला भगवानदीन द्वारा सम्पादित 'ठाकुर ठसक' प्रकाशित हुआ था। इसके अन्तर्गत ठाकुर की नीति, व्यवहार ज्ञान आदि के छन्दों के साथ साथ रीतिमुक्त विशुद्ध प्रेम परक छन्द भी सैकड़ों की संख्या में उपलब्ध होते हैं। यह कवि लोकदर्शापासक थे। ठाकुर ने कविता की निम्नांकित विशेषतायें बताई हैं

मोतिन की सी मनोहर माल गुहै तुक अच्छर जोरि बनावै ।
प्रेम को पंथ कथा हरिनाम की बात अनूठी बनाय सुनावै ॥
ठाकुर' सो कवि भावत मोहि जो राजसभा में बडप्पन पावै ।
पंडित लोग प्रवीनन को जोइ चित्त हरै सो कवित्त कहावै ॥[2]

राज्य सम्मान कविता की उत्कृष्टता की पहली विशेषता और पंडित एवं प्रवीणजनों के चित्त को लुब्ध करना इसका दूसरा गुण ठाकुर मानते हैं। कविता हंसी खेल नहीं है—डेल सो बनाय आय मेलत सभा के बीच लोगन कवित्त कीबो खेल करि जानो है।[3]

---

१ वही छं० सं० २६१ पृ० ३१।
२ ठाकुर ठसक सं० लाला भगवानदीन छं० सं० १३, पृ० ५।
३ वही छं० सं० १२ पृ० ५।

'ठाकुर ठसक' में १८२ छन्द ठाकुर के तथा १२ छन्द उनके पुत्र दरियावसिंह एवं पौत्र शंकर प्रसाद के संगृहीत हैं। गणेश वन्दना से ग्रन्थ आरम्भ होता है। राम, ईश ईशविचक्षणता के छन्दों के उपरान्त निवेदन, काव्य रचना, निज स्वभाव, उपदेश, रूप वर्णन, संयोग वर्णन, अनुराग, वियोग वर्णन, वसन्त, होरी पावस वर्णन, दह गति, मनुष्यत्व, विधि विडम्बना, काल कुटिलता लोकोक्ति, उद्धव वचन, तुलसी समालोचना आदि के प्रसंगों पर छन्द लिखे गये हैं। सबल ठाकुर की प्रांजल परिपक्व भाषा, मंजी हुई परिष्कृत शैली और तीव्र भाव व्यंजना द्रष्टव्य है।

ठाकुर कवि शृंगार की हाट लगाये हुए हैं परन्तु वे प्रेम की सच्ची पीर के ग्राहक पहले हैं। प्रेम के बजार में नम-दलालों द्वारा प्रवीणों का परखवा कर जमा पर दाम लगाने के ही वे पक्ष में हैं

> गुन गाहक सों विनती इतनी हक नाहक नाहि ठगावने हैं।
> यह प्रेम बजार के अंतर सो पर मन दलाल अकावने हैं॥
> 'कवि ठाकुर' औगुन छोडि सबै परवीनन पै परखावने हैं।
> अब देखि विचारि निहारि कें माल जमा पर दाम लगावने हैं॥[1]

ठाकुर की प्रीति एकनिष्ठ और स्थिर है। चाहे जो हो वह अस्थिर नहीं हो सकती। देखिये

> अब का समझावती को समझै बदनामी के बीजन बोय चुकी री।
> इतनौ हू विचार करो तो सखी यह लाज की साज सौं धोय चुकी री॥
> 'कवि ठाकुर' काम न या सबकौ करि प्रीति पतिव्रत खोय चुकी री।
> नकी बदी जो लिखी हुती भाल में होनी हुती सु तो होय चुकी री॥[2]

कवि जिस नेह के बाने को ओढ कर चला है वह उसे सर्वथा निभाना है, चाहे उस की 'सुजान' कुछ भी करे। अनन्य प्रेम की यह झांकी घनानन्द के अतिरिक्त बस ठाकुर में प्राप्त है। कवि लिखता है

> गति मेरी यही निसि बासर है चित तेरी गलीन के गाहने हैं।
> चित कौं हौं कठोर कहा इतनौ अरी तोहि नहीं यह चाहने हैं॥
> 'कवि ठाकुर' नेक नहीं दरसौं कपटीन को काह सराहने हैं।
> मन भाव सुजान सोई करिये हमें नेह के नाते निवाहने हैं॥

---

१ वही छ० स० २१ पृ० ७। २ वही छ० स० ६० पृ० १५।
३ वही छ० स० ५५ पृ० १४।

धूमकाम धुधरित भूमि असमान न सुज्झ ।
मनु घुमडि घनघोर दौरि दुहु ओर अरुज्झ ॥
तह तोडे चमकत धार धहरात धमक ।
घड सोर चहु ओर सुनत धुवधाम धमर्क ॥
गरजन मेघ तडप तडित वज्रसरिस गोला परं ।
आलाउद्दीन हमीर को मार परी तोपन सर ॥[1]

ग्रन्थ का आरम्भ श्रीकृष्ण और महादेव की स्तुति से होता है। आगे के ४ दोहा मे आश्रयदाता का परिचय, ग्रन्थ लेखन का कारण बताया है। तदनन्तर छं० सं० ३९८ तक कथानक चलता है। अन्त मे ग्रन्थ रचना काल का दोहा एव आश्रयदाता नरेन्द्र सिंह के लिए आशीर्वचन लिखे गये हैं। ग्रन्थ ४०३ छन्दो मे पूर्ण हुआ है।

ऐ–रीतिमुक्त काव्य

ठाकुर के कवित्त रीति की स्वच्छन्द काव्य धारा मे ठाकुर कवि जैतपुर ने पर्याप्त काव्य सृजन किया था। इनका कोई निजी संग्रह–ग्रन्थ तो नहीं मिलता परन्तु लाला भगवानदीन द्वारा सम्पादित 'ठाकुर ठसक' प्रकाशित हुआ था। इसके अन्तर्गत ठाकुर की नीति, व्यवहार, पान आदि के छन्दो के साथ साथ रीतिमुक्त विशुद्ध प्रेम परक छन्द भी सैकड़ो की संख्या मे उपलब्ध होते हैं। यह कवि सौन्दर्योपासक थे। ठाकुर ने कविता की निम्नांकित विशेषतायें बताई है

मोतिन की सी मनोहर माल गुहै तुक अच्छर जोरि बनावै ।
प्रेम को पथ कथा हरिनाम की बात अनूठी बनाय सुनावै ॥
'ठाकुर' सो कवि भावत मोहि जो राजसभा मे बडप्पन पावै ।
पडित लोग प्रवीनन को जोइ चित्त हरै सो कवित्त कहावै ॥[2]

राज्य सम्मान कविता की उत्कृष्टता की पहली विशेषता और पडित एव प्रवीणजनो के चित्त को तुष्ट करना इसका दूसरा गुण ठाकुर मानते हैं। कविता हसी खेल नहीं है–डेल सो बनाय आय मेलत सभा के बीच लोगन कवित्त कीबो खेल करि जानो है।[3]

१ वही छं० सं० २६१ पृ० ३१।
२ ठाकुर ठसक स० लाला भगवानदीन छं० सं० १३, पृ० ५।
३ वही छं० सं० १२ पृ० ५।

'ठाकुर ठसक' म १८२ छन्द ठाकुर के तथा १२ छन्द उनके पुत्र दरियावसिह एव पौत्र शकर प्रसाद क सग्रहीत है। गणेश वन्दना स ग्रन्थ आरम्भ होता है। राम, ईश, ईशविलक्षणता के छन्दो के उपरान्त निवेदन, काव्य रचना, निज स्वभाव, उपदेश, रूप वणन, सयोग वणन, अनुराग वियोग वणन बसन्त होरी पावस वणन, देह गति, मनुष्यत्व, विधि विडम्बना काल कुटिलता लोकोक्ति, उद्धव वचन, तुलसी समालोचना आदि क प्रसगो पर छन्द लिखे गये हैं। सवत्र ठाकुर की प्राजल परिपक्व भाषा, मजी हुई परिष्कृत शली और तीव्र भाव व्यजना द्रष्टव्य है।

ठाकुर कवि शृगार की हाट लगाये हुए हैं परन्तु व प्रेम की सच्ची पीर के ग्राहक पहन है। प्रेम क बजार म नेत्र-दलालो द्वारा प्रवीणो को परखवा कर जमा पर दाम लगाने के ही वे पक्ष म है

गुन गाहक सो विनती इतनी हक नाहक माहि ठगावने हैं।
यह प्रेम बजार के अन्तर सो पर नन दलाल अकावने हैं॥
'कवि ठाकुर औगुन छोडि सब परवीननु प परखावने हैं।
अब देखि विचारि निहारि कैं माल जमा पर दाम लगावने हैं॥[1]

ठाकुर की प्रीति एकनिष्ठ और स्थिर है। चाहे जो हो वह अस्थिर नहीं हो सकती। देखिये

अब का समझावती का समझे बदनामी के बीजन बोय चुकी री।
इतनो हू विचार करो तो सखी यह लाज की साज तो धोय चुकी री॥
'कवि ठाकुर' काम न या सबसो करि प्रीति पतिव्रत खोय चुकी री।
नेकी बदी जो लिखी हुती भाल मे होनो हुती सु तो होय चुकी री॥[2]

कवि जिस नेह के बान को ओढ कर चला है वह उसे सवथा निभाना है, चाहे उस की सुजान कुछ भी करे। अनन्य प्रेम की यह झाकी घनानन्द के अतिरिक्त बस ठाकुर म प्राप्त है। कवि लिखता है

गति मेरी यही निसि बासर है चित तेरी गलीन के गाहने हैं।
दिन कौहों कठोर कहा इतनो अरी तोहि नहीं यह चाहने हैं॥
'कवि ठाकुर' नेक नहीं दरसौं कपटीन को काह सराहने हैं।
मन भाव सुजान सोई करिये हमे नेह क नाते निवाहने हैं॥[3]

---

१ वही छ० स० २१ पृ० ७। २ वही छ० स० ६० पृ० १५।
३ वही छ० स० ५५ पृ० १४।

वह प्रिय से दर्शन देने की जिस अनुरोधपूर्वक प्रार्थना करता है उस पर कोई भी बलिहार हो सकता है। देखिये

रोज न आइये तो मनमोहन तो यह नेकु मतो सुन लीजिये।
प्रान हमारे तुम्हारे अधीन तुम्हें बिन देखें सु क्यों क दीजिये॥
'ठाकुर' लालन प्यारे सुनो विनती इतनो प अहो चित दीजिये।
दूसरे तीसरे, पांचयें सातयें आठयें तौ भला आइबौ कीजिये॥[1]

नेत्र से नेत्र मिलने पर प्रेमियों की जो दशा होती है, इसका वर्णन ठाकुर इस प्रकार करते हैं

जब तें दरसे मन मोहन जू तब ते अ खियां ये लगीं सो लगीं।
कुल कानि गई भगि वाही घरी ब्रजराज के प्रेम पगीं सो पगीं॥
कवि ठाकुर नेह के नेजन की उर मे अनी आनि लगी सो लगीं।
अब गाम रे नाम रे कोऊ धरौ हम सावरे रंग रंगी सो रंगी॥[2]

आलोच्य शताब्दी के रीति काव्य के उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि कवियों में रीति परम्परा की सम्पूर्ण प्रवृत्तियों का आग्रह मिलता है। काव्य की भाषा और शैली अब तक पूरी तरह मंज चुकी थी। काव्य शास्त्र के किसी में प्रौढ़ता पा ली थी। कवियों में विषय विस्तार और नवीन उद्भावनाओं की खोज की ललक पाई जाती है। रीति के क्षेत्र में या किसी नवीन उद्भावना के दर्शन तो नहीं होते परन्तु विवेचन-गत निष्कर्षों में मौलिकता का आग्रह मिलता है। कवित्व के क्षेत्र में भी यह युग अपनी विगत शताब्दी से किसी प्रकार ह्रास नहीं दिखता।

१ वही छं० सं० ४८ पृ० १३।
२ वही छं० सं० ४३ पृ० १२।

द्वितीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रमुख प्रतिपाद्य और प्रवृत्तियाँ
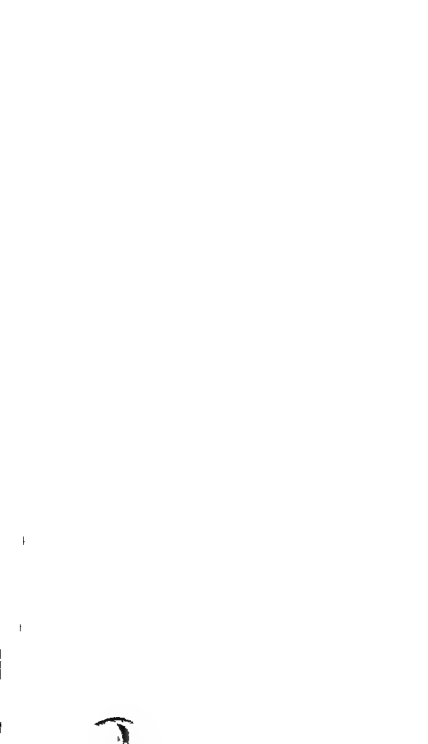
२ | उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य के प्रमुख प्रतिपाद्य और प्रवृत्तियाँ

पृष्ठभूमि हिन्दी मे 'रीति' शब्द का प्रयोग सस्कृत से पृथक अथ मे हुआ है। सस्कृत म विशेष प्रकार की चमत्कारपूर्ण पद रचना रीति[1] मानी गई है। सस्कृत के प्रसिद्ध आचाय वामन ने रीति को काव्य की आत्म माना है[2] इनके अनुसार रीति शास्त्र के अ तगत केवल उन्ही ग्रन्था का समावेश हो सकता है जिनम रीति को काव्य की आत्मा मान कर काव्य के स्वरूप का विश्लेषण किया गया हो। पर हिन्दी म रीतिशास्त्र का अथ व्यापक है और उसका प्रयोग विशिष्ट अथ म किया गया है। यहा 'रीति' को मान वणन परिपाटी, शैली, के पर्याय के रूप म ग्रहण किया गया है। हिन्दी मे रीतिशास्त्र का तात्पय उन लक्षण या सिद्धा त ग्रन्थो से है, जिनम अलकार रस, रीति वक्रोक्ति, ध्वनि आदि के स्वरूप भेद प्रभेद, तत्व और गुणों आदि पर विचार किया गया है। इनमे इन विषयो के निरूपण की रीति सव साधारण पर प्रकट की गई है[3]। डा० नगेन्द्र के अनुसार काव्य रचना सबन्धी नियमो के विधान को ही समग्रत रीति नाम दे दिया गया है[4]। अनेक कवियों ने अपने ग्रन्थो मे इस रीति या प्र थ पथ शब्द का प्राय प्रयोग किया है[5]। अत सस्कृत म जहा यह शब्द रीति सम्प्रदाय का बोधक था वहाँ हिन्दी म यह शैली का प्रतिपादक बना। कवियो ने कविता लिखने की यह एक प्रणाली ही बना ली कि पहल दोहे म अलकार या रस का लक्षण लिखना फिर उसके उदाहरण के रूप म कवित्त सवया लिखना। हिन्दी साहित्य

---

१ विशिष्टा पद रचना रीति -काव्यालकार सूत्र वामन १।२।६।

२ रीतिरात्मा काव्यस्य—वही, १।२।७।

३ हिन्दी साहित्य—द्वितीय खण्ड। स० डा० धीरेन्द्र वर्मा। रीतिशास्त्र —डा० भगीरथ मिश्र पृ० ४२२।

४ रीति काव्य की भूमिका डा० नगेन्द्र, पृष्ठ १४१।

५ कवित पुरुष की साजि सब समुझि लोक की रीति।
—चिन्तामणि –कविकुल कल्पतरु
रीति सुभाषा कवित की, बरनत मति अनुसार। वही

म यह एक अनूठा दृश्य प्रकट हुआ।[1] लगभग २०० वर्षों की सुदीर्घ अवधि मे ऐसे शतशत रीति ग्रन्थो की रचना हुई, जिनमे रीति के विविध अगो के लक्षणो एव उदाहरणो को दृष्टिगत रख कर काव्य की रचना की गई। लक्षणकारो को आचार्य कवि और एतदाधारित काव्य कर्ताओ का काव्य कवि कहा गया। पर वास्तव म ये दोनो ही कोटि के ग्रन्थकार रीति कवि थे। चिन्तामणि त्रिपाठी रीति लक्षणकार थे पर बिहारी केवल रीति काव्य कवि थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने चिन्तामणि, जसवन्तसिंह बिहारी प्रभृति ५७ कवियो को रीति ग्रन्थकार माना है।[2] इस काल म रीतीतर विषयो पर कविता लिखने वाले कवियो

ल भाषा प्राकृत ससकृत, देखि महाकवि पथ। देव–काव्य रसायन।
अपनी अपनी रीति के काव्य और कवि रीति। वही।
ग समुझि सुकवि भाषा कियो ल और कवि पथ।
—भिखारीदास–काव्य निर्णय।
काव्य की रीति सिखी सुकविन सों देखी सुनी सब लोक की बातें। –वही
घ सुकविन हू की कछु कृपा, समुझि कविन को पथ।
— भूषण–शिवराज भूषण
ङ–बरनत मनरञ्जन जहा, रीति अलौकिक होई।
—सूरति मिश्र काव्यसिद्धान्त।
च–रीति चारिहू देस का सो समास ते होइ।
—करन कवि–रस कल्लोल।
छ–ज ज पिंगल नाम, छन्द रीति जिम प्रगट किय।
—नन्दकिशोर–पिंगल प्रकाश।
ज–थोरे क्रम क्रम ते कह्यौ, अलकार की रीति।
—दूलह–कवि कुल कठाभरण।
झ–रीति कुवलयानन्द की कीन्ही भाषा भरण। —बरीसाल, भाषा भरण।
ञ–काव्य रीति जितनी प्रघट आनि करीं इकठौर।
—रणधीरसिंह–काव्यरत्नाकर।
ट–कवित रीति कछु कहत हौं व्यग अरथ चित लाइ।
—प्रतापसाहि–व्यगार्थ कौमुदी।
ठ–देखो कछु साहित्तमत, ग्रन्थ पथ सुख राम।
—ग्वाल–रसिकानन्द १।६२।
ड–काव्यन के दूषनन को बरयो पथ गुपाल।
— गोपालराय–दूषण विलास ७।६९।
ढ–जिनकी कृपावलोक ते, यह कविता रसरीति।
— नवनीत चतुर्वेदी–गोपी प्रेम पीयूष प्रवाह पृष्ठ १०८ छ० स० ७।

१ हि० सा० का इतिहास आ० रामचन्द्र शुक्ल, २०१८ पृष्ठ २२६।
२ वही पृष्ठ २३४ ३०६।

को उन्होंने रीतिकाल के अन्य कवियों की श्रेणी में समाविष्ट किया है। शुक्ल जी ने बिहारी प्रभृति कवियों के काव्य को रीति के अन्तर्गत क्या रखा, इस पर डा० नगेन्द्र का मत है कि 'शुक्ल जी के विधान में जिसने रीति ग्रन्थ रचा हो, केवल वही रीति कवि नहीं है, वरन जिसका काव्य के प्रति दृष्टिकोण रीतिबद्ध हो, वह भी रीति कवि है[1]।'

नामकरण संवत १७०० वि० से सं० १८०० वि० तक हिन्दी में रीति ग्रन्थों की रचना का ही प्राधान्य रहा, इसी से शुक्ल जी ने इस अवधि को रीतिकाल की संज्ञा दी। रस की दृष्टि से शृङ्गार रस का बाहुल्य रहा, अतः पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इस साहित्यिक युग को शृङ्गार काल की अभिधा दी। शुक्ल जी का भी कथन है कि रस के विचार से इस काल को शृङ्गार काल कहें तो कह सकते हैं[2]। इस युग के काव्य की भाषा के अत्यधिक अलङ्कृत होने के कारण मिश्रबन्धुओं ने इसे अलंकृत काल भी कहा है। कला की चरमोन्नति होने के कारण इसे कला काल भी कहा जा सकता है। परन्तु रीति की व्यापक परिधि में उपर्युक्त सभी विशेषताएं समाहित हो जाती हैं, इससे रीतिकाल नाम ही आज सर्वसम्मत समीचीन माना जाता है[3]।

सामान्य परिचय यों रीति परम्परा के दर्शन बीजरूप में हम भक्ति काल के कृपाराम, मोहनलाल मिश्र, करनेश कवि की रचनाओं में हो जाते हैं और काव्य रीति का सम्यक् समावेश शुक्ल जी केशव में देखते हैं[4]। परन्तु वास्तव में रीति की अखंड परम्परा के सूत्रधार चिन्तामणि त्रिपाठी ही माने जाते हैं[5]। इनके पश्चात तो हिन्दी में रीति ग्रन्थों की बाढ़ सी आगई। इस

१ रीति काव्य की भूमिका डा० नगेन्द्र, १९६४ पृष्ठ १४२।

२ हि० सा० का इतिहास आ० रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ २३३।

३ वही पृ० २३३।

४ सं० १५९८ में कृपा राम थोड़ा बहुत रस निरूपण कर चुके थे। उसी समय के लगभग चरखारी के मोहनलाल मिश्र ने शृङ्गार सागर नामक एक ग्रन्थ लिखा। नरहरि कवि के साथी करनेस कवि ने कर्णाभरण, श्रुतिभूषण और भूप भूषण नामक तीन ग्रन्थ अलंकार सम्बन्धी लिखे। रस निरूपण और अलंकार निरूपण का इस प्रकार सूत्रपात हो जाने पर केशवदास जी ने काव्य के सब अंगों का निरूपण शास्त्रीय पद्धति पर किया। इसमें सन्देह नहीं कि काव्य रीति का सम्यक समावेश पहले पहल आचार्य केशव ने ही किया।

—हि० सा० का इतिहास - रामचन्द्र शुक्ल, पृ०

५ वही - पृ० २२६ तथा २२८।

युग के कवियों ने संस्कृत के परवर्ती आचार्यों—जयदेव, अप्पय दीक्षित मम्मट, विश्वनाथ आदि, के लक्षण ग्रन्थों को आधार मानकर हिन्दी में लक्षण तो लिखे ही, रसों और अलंकारों के अत्यन्त सरस और हृदयग्राही काव्य-उदाहरणों द्वारा साहित्य की भारी सेवा की। कुछ कवियों ने तो केवल उत्कृष्ट मुक्तक काव्य रचना ही की, जो लक्षणों में सौ प्रतिशत खरी उतरती है। अलंकारों की अपेक्षा शृंगार रस का विवेचन अधिक रहा और उसमें भी नायिका-भेद पर कवियों की प्रतिभा अधिक रमी। शृंगार में का इतना विस्तार हुआ कि नायिका और उसके अंग प्रत्यंग—को लेकर स्वतन्त्र नायिका भेद और नखशिख-वर्णन पर प्रचुर मात्रा में काव्य रचनाएं हुई। षडऋतु वर्णन पर अनेक पृथक ग्रन्थ रचे गये। बारहमासों की रचनायें हुई। शृंगारेतर रसों का निरूपण भी हुआ पर वह गौण और आनुषंगिक ही रह गया। पिंगल पर भी ग्रन्थ बने। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में 'बड़ा भारी काम यह हुआ कि रसों विशेषकर शृंगार रस और अलंकारों के बहुत ही सरस और हृदयग्राही उदाहरण प्रचुर परिमाण में प्रस्तुत हुए। ऐसे उदाहरण संस्कृत के सारे लक्षण ग्रन्थों में चुनकर इकट्ठे करें तो भी उनकी इतनी अधिक संख्या न होगी। चाहे रीति कवियों का उद्देश्य काव्यांगों का शास्त्रीय पद्धति पर निरूपण करना न रहा हो, पर वे इतना पर्याप्त काम कर गये कि संस्कृत साहित्य शास्त्र के इतिहास की एक संक्षिप्त उद्धरणी हिन्दी में हो गई।[1]

आधार रीति शास्त्र का आधार संस्कृत का काव्यशास्त्र है। संस्कृत के पूर्ववर्ती आचार्य भरत वामन, रुद्रट, ध्वनिकार अभिनव गुप्त, कुन्तक, मम्मट आदि, आचार्य थे, कवि नहीं। इन्होंने सूत्र, कारिका, वृत्ति आदि द्वारा सैद्धान्तिक विवेचन किया। राजशेखर दण्डी आनन्दवर्धन पंडितराज जगन्नाथ, जयदेव आदि में कवित्व और आचार्यत्व का सम्मिश्रण है। शताब्दियों तक का संस्कृत शास्त्र सिद्धान्तों के खंडन-मंडन का इतिहास है। परन्तु उत्तरार्द्ध काल में इस प्रवृत्ति का ह्रास होता गया। पंडितराज जगन्नाथ प्रभृति परवर्ती आचार्य अपने आश्रयदाताओं और रसज्ञ नागरिकों को काव्य शिक्षा देने और उनकी स्तुति पाठ भी करने लगे थे। विवेचन का स्थान संक्षिप्त लक्षणों ने ले लिया था। दूसरे संस्कृत कवियों के उदाहरण उद्धृत होते और स्वरचित भी दिये जाने लगे थे। शृंगार रस लोकप्रिय हो गया था। हिन्दी के रीति शास्त्र में संस्कृत की इसी परम्परा का अनुधावन हुआ। रीति कवि राज्याश्रित होते थे। उनको आश्रयदाता एवं रसज्ञ जनों का मनोरंजन करते हुए काव्य

१ वही पृ० २२६।

शिक्षा भी देनी पड़ती थी। अत उन्होंने संस्कृत की इस परम्परा को प्राप्त किया। प्राकृत और अपभ्रंश का जो साहित्य प्राप्त है उससे स्पष्ट है कि उसमें भी यही परिपाटी चली जो आलोचना की अपेक्षा काव्य को अधिक महत्व देती थी। रीति काव्य इसी का सीधा विकास है। इसमें आचार्यत्व और कविता का सम्मिलन है।[1] रीति ग्रन्थकारों ने जिन संस्कृत ग्रंथों को आधार माना है, डा० भगीरथ मिश्र के अनुसार वे हैं—भरत का नाट्य शास्त्र भामह का काव्यालंकार, दण्डी का काव्यादर्श, उद्भट का अलंकार सारसंग्रह केशव मिश्र का अलंकार-शेखर, अमर देव का काव्यलता-वृत्ति जयदेव का चन्द्रालोक, अप्पय दीक्षित का कुवलयानन्द मम्मट का काव्य प्रकाश, आनन्दवर्धन का ध्वन्यालोक, भानुदत्त का रसमंजरी व रसतरंगिणी, विश्वनाथ का साहित्य दर्पण आदि।[2] प्रथम छः ग्रंथों को केवल केशव तथा कतिपय अन्य परवर्ती कवियों ने ही अपने विवेचन का आधार बनाया। चिन्तामणि आदि कवियों ने विषयानुसार सभी संस्कृत ग्रंथों में से सामग्री ली है। अलंकार विवेचकों ने मुख्यत चन्द्रालोक और कुवलयानन्द, ध्वनि विवेचकों ने काव्य प्रकाश रस और नायिका भेद निरूपकों ने अधिकांशत श्रृंगार तिलक, रस-मंजरी रसतरंगिणी, साहित्य दर्पण, दशरूपक, नाट्य शास्त्र, रति रहस्य, कामसूत्र आदि से अपनी विवेच्य सामग्री का चयन किया है। पिंगल निरूपक आचार्यों ने पिंगलाचार्य के पिंगल और प्राकृत में प्राकृत पगलम आदि के आधार पर पिंगल विवेचन प्रस्तुत किया है।

रीति के सम्प्रदाय संस्कृत वाङ्मय में रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति और ध्वनि इन पांच प्रवित्तियों का इतिहास मिलता है। हिन्दी में रीति और वक्रोक्ति के सिद्धान्तों की चर्चा नहीं के बराबर है, प्रमुखतया रस, अलंकार और ध्वनि का विवेचन किया गया है। हिन्दी में गुण रीति और वृत्ति के वर्णन संक्षेप में अवश्य है, पर वे सिद्धान्त नहीं बन पाये। अलंकारों एवं रसांगों के साथ ही प्राय उनका उल्लेख है।[3] इन कवियों के मध्य विभाजक रेखा खींचना दुरूह है, क्योंकि रस और अलंकारों को अधिकांश ने अपना विवेच्य विषय बनाया है। चिन्तामणि, मतिराम, भिखारी दास, पद्माकर ग्वाल आदि ने अलंकार रस, नायिका भेद, छन्द गुण दोष, शब्दशक्ति आदि

१, रीतिकाव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र पृ० १४३।

२ हिन्दी रीति साहित्य—डा०भगीरथ मिश्र प्रथम संस्करण १९५६ पृ० २३ हिन्दी साहित्य द्वितीय खण्ड (सं० डा० धीरेन्द्र वर्मा) रीतिकाव्य और रीतिशास्त्र डा० भगीरथ मिश्र पृ० ४२५।

३ हिन्दी रीति साहित्य - डा०-भगीरथ मिश्र, पृ० २६।

सभी का विवेचन अपने ग्रन्थों में किया है। अतः इनमें से किसी को भी केवल रसवादी या अलंकारवादी या ध्वनिवादी कहना कठिन है। इनकी प्रमुख प्रवृत्ति के अनुसार जिस वाद में भी उनका समावेश हुआ है, उसी में उसका स्थान प्रमुखतः होगा। हिन्दी रीति साहित्य में दो ही प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं एक रसवादी और दूसरी अलंकारवादी। पर दोनों परस्पर मिश्रित ही दिखाई देती हैं।

निरूपण शैली डा० नगेन्द्र के अनुसार रीति ग्रन्थों में तीन प्रकार की निरूपण शैली काम में लाई गई है—१ काव्य प्रकाश की निरूपण शैली जिसमें काव्य के सभी अंगों पर प्रकाश डाला गया है, २ शृंगार तिलक, रस मंजरी आदि शृंगार रसमयी नायिका भेद वाली शैली जिसमें केवल शृंगार के विभिन्न अंगों विशेषकर नायिका भेद का ही निरूपण किया गया है, ३ चन्द्रालोक की संक्षिप्त अलंकार निरूपण शैली, जिसमें अलंकारों के ही संक्षिप्त लक्षण उदाहरण दिए गए हैं।[1] लक्षणों को दोहों में और उदाहरणों को कवित्त और सवैया में लिखा गया। परन्तु दोहों में ही लक्षण और उदाहरण दोनों प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति भी सर्वथा दुर्लभ नहीं रही।

रीति निरूपण संस्कृत वाङ्मय में सिद्धान्तों का निरूपण करने वाला आचार्यों का वर्ग पृथक था। सैद्धांतिक ग्रन्थ–मण्डन–कर्ता विद्वानों ने उदाहरणों में यदि मौलिक रचना भी की तो भी उनका आचार्य रूप अलग ही रहा। हिन्दी में आचार्य और कवि का यह भेद समाप्त हो गया। रीति ग्रन्थकर्ता मूलतः कवि थे। आश्रयदाताओं की इच्छाओं के अनुपालनार्थ ही उनको रीतिशास्त्र के लक्षण ग्रन्थ लिखने पड़े, जिनमें उदाहरणों के रूप में उनका कवित्व उद्भूत हुआ। रीति ग्रन्थों के ये आचार्य लक्षण तो संस्कृत के आधार पर लिख गये, किन्तु उदाहरणों में उन्होंने अपने पूर्ण मनोयोग का परिचय दिया। संस्कृत में रीतिशास्त्र का निरूपण विशदता से हो चुका था, किसी मौलिक उद्भावना की गुंजायश न थी। आचार्य कर्म हिन्दी कवियों का उद्देश्य भी न था। रीति–कवि राज्याश्रित थे परिस्थितियों की माँग थी कि वे आश्रयदाताओं और रसिकों के विनोदार्थ कलापूर्ण चमत्कृति परक काव्य रचना करें। यही उन्होंने किया। इस प्रकार रीति निरूपण की यह प्रवृत्ति रीति काल में मिलती है। इस सम्बन्ध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल लिखते हैं कि 'हिन्दी में लक्षण की परिपाटी पर रचना करने वाले जो सैकड़ों कवि हुए वे आचार्य कोटि में नहीं आ सकते। वे वास्तव में कवि ही थे। उनमें आचार्यत्व के गुण नहीं

१ रीति काव्य की भूमिका - डा०–नगेन्द्र, पृ० १४७।

थे। उनके अपर्याप्त लक्षण साहित्य शास्त्र का सम्यक् बोध कराने में असमर्थ है। बहुत स्थलों पर तो उनके द्वारा अलंकार आदि के स्वरूप का भी ठीक-ठीक बोध नहीं हो सकता। कहीं कहीं तो उदाहरण भी ठीक नहीं हैं। 'शब्द शक्ति' का विषय तो दो ही चार कवियों ने नाममात्र के लिये लिया है जिससे उस विषय का स्पष्ट बोध होना तो दूर रहा, कहीं कहीं भ्रान्त धारणा अवश्य उत्पन्न हो सकती है।[1] इसी विषय पर डा० नगेन्द्र लिखते हैं —

'शताब्दियों तक विस्तृत रीतिकाल में यदि वास्तव में आचार्यत्व के अधिकारी कुछ कवि हुए तो वे सेनापति, चिन्तामणि, कुलपति मिश्र, सूरति-मिश्र, श्रीपति, भिखारीदास, सोमनाथ, कुमार मणिभट्ट, रतन कवि प्रतापसाहि रसिकगोविन्द आदि छः सात कवि ही थे। इन्होंने रीति निरूपण को गम्भीरता-पूर्वक ग्रहण किया है। इनके ग्रन्थों में काव्य लक्षण, काव्य प्रयोजन रसभाव, ध्वनि, नायक अलंकार, पदार्थ निर्णय, शब्द शक्ति गुणदोष, पिंगल आदि सभी का यत्किंचित व्यवस्था के साथ निरूपण किया गया है। पदार्थ निर्णय, गुणदोष आदि उपेक्षित प्रसंगों का भी, जिन का निरूपण करने का अन्य कवियों में न धैर्य था न क्षमता इन लोगों ने यथोचित समावेश किया है। इनके विवेचन से स्पष्ट है कि इनका ध्यान लक्ष्य की अपेक्षा लक्षण पर अधिक रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि इनके लक्षण कहीं-कहीं अस्पष्ट और भ्रामक हैं और यह भी ठीक है कि केवल इन पर निर्भर रहने वाले जिज्ञासु का रीतिज्ञान अधूरा और कच्चा ही रहेगा परन्तु इनका अपना शास्त्र ज्ञान भी बिल्कुल कच्चा या अधूरा था यह कहना इन मनस्वियों के प्रति अन्याय होगा। ये प्रायः सभी कवि रीति शास्त्र के गम्भीर पण्डित थे उनका अध्ययन व्यापक था।"[2]

अतः यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि रीतिकाल ने ऐसे आचार्य अत्यल्प ही दिये, जिनको पांडित्य और लक्षण निरूपण की स्वच्छ दृष्टि प्राप्त थी। कुछ और आगे देखें तो ज्ञात होगा कि सम्यक् स्वच्छ और स्पष्ट निरूपण करने वाले केवल तीन चार ही आचार्य हम मिलते हैं और वे भी उत्तर रीतिकाल से पूर्व नहीं। ये आचार्य हैं प्रतापसाहि— व्यंग्यार्थ कौमुदी रसिक गोविंद- रसिक गोविन्दानन्द घन और ग्वाल 'साहित्यानन्द आदि।

हिन्दी के आचार्यों को विषय प्रतिपादन की दृष्टि से दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—(१) रीति के सर्वाङ्ग या विविधाग निरूपक आचार्य (२) एकांगरस, अलंकार या पिंगल निरूपक आचार्य।

---

१ हि० सा० का इतिहास—आचार्य रा० च० शुक्ल पृ० २२७।
२ रीति काव्य की भूमिका—पृ० १४७ १४८।

आलोच्यकाल के विविधाङ्ग निरूपक आचार्य

रीति शास्त्र के सर्वांग (विविधाङ्ग)—रस, अलंकार, पिंगल, काव्य के स्वरूप, शब्द शक्ति, दोष, गुण रीति एवं वृत्ति आदि—का निरूपण करने वाले आचार्यों में काव्य शास्त्र की गम्भीर ज्ञान गरिमा, अवकाश एवं प्रतिभा की की अपेक्षा होती है। अर्थ और यश के अभिलाषी रीतिकालीन सभी आचार्यों से ऐसी आशा कदापि नहीं की जा सकती थी। गोकुल आदि कवियों के विषय में तो कहना ही क्या है जो आश्रयदाता के आदेश पर अविलम्ब ग्रन्थ रचना कर डालते थे[1]। शास्त्र-पारायण, मनन और चिन्तन के लिए यथोचित भी अवकाश लेना भी अपनी हेठी समझते थे। ऐसे आत्म-प्रदर्शन के आग्रही आचार्य विषय के साथ कितना और क्या न्याय कर सकते थे? इसकी कल्पना की जा सकती है। परन्तु रसिक गोविन्द[2] ग्वाल[3], प्रतापसाहि[4] आदि आचार्यों ने शास्त्र निरूपण केवल साहित्य रस के निमित्त किया किसी आश्रय-दाता के परितोषार्थ नहीं। अतः यहाँ शास्त्र के प्रति पर्याप्त न्याय भी हुआ। ये रीतिकाल के प्रमुखतम आचार्यों में गणनीय हैं और उनके ग्रन्थ श्रेष्ठतम रीति ग्रन्थों में भूषित। संक्षेप में सर्वाङ्ग निरूपक आचार्यों की निम्नोक्त सामान्य विशेषतायें हैं—

१ इन आचार्यों को रीति शास्त्र का करतलगत ज्ञान ही न था, इन्होंने संस्कृत शास्त्र का अध्ययन-मनन किया था।

२ इन्होंने आचार्य कर्म को अपेक्षाकृत अधिक मनोनिवेश के साथ ग्रहण किया था।

३ आर्थिक रूप से ये अधिक निश्चिन्त प्रतीत होते थे।

---

१ गोकुल कवि पर करि कृपा, चेतसिंह छितिपाल।
   माँग दिया घोरे दिये, कीन्हे दुरद बिसाल ॥८३॥
   फेरि सुकवि सों यों कह्यो करिकै अमित सनेह।
   अलङ्कार मत में हमें ग्रन्थ एक करि देहु ॥८४॥
   सुनें नृपति के बैन गोकुल नाथ कृपा भरे।
   धाइ हिये में चैन, ग्रन्थ करन लागे तुरत ॥८५॥ —चेत चन्द्रिका।

२ रसिक गोविन्द आजन्म वृन्दावन में भगवदाराधन में रहे। किसी राजादि के आश्रित न थे।

३ ग्वाल ने साहित्यानन्द की रचना लगभग ९ वर्ष में आत्मप्रेरणा से की, किसी आश्रयदाता के आदेश से नहीं। यह ग्रन्थ सर्वाङ्ग निरूपक है।
   प्रतापसाहि ने काव्य विलास स्वतन्त्र रूप से लिखा।

४ इनकी मनोवृत्ति लक्ष्य की अपेक्षा लक्षण-निरूपण की ओर भी उन्मुख थी।

५ ये शास्त्र पण्डित और शास्त्र के अच्छे शिक्षक भी थे।

६ इन्होंने काव्यांग निरूपण ही करके छुट्टी नहीं पा ली, बल्कि पिंगल जैसे कठिन विषयों में भी अपनी रुचि एवं गति का प्रदर्शन किया।

डा० सत्यदेव चौधरी ने आलोच्य काल के केवल ५ आचार्यों के ६ सर्वांग निरूपक ग्रन्थों का उल्लेख किया है। वे हैं साहित्य सुधानिधि (जगतसिंह), काव्य-रत्नाकर (रणधीरसिंह), काव्य विलास और काव्य विनोद (प्रतापसाहि), रतन प्रकाश (रतन कवि) फतह प्रकाश (रतन कवि)[1] इसके अतिरिक्त मेरी खोज में प्राप्त ग्वाल का नवीनोपलब्ध ग्रन्थ साहित्यानन्द भी इसी शृंखला की एक अमूल्य कड़ी है। दो और सर्वांग निरूपक कवि इधर मुझे खोज में मिले हैं वे हैं नन्दकिशोर (कविता काल सं० १८४१-१८६६ वि०) और गोपालराय (कविताकाल सं० १८८८-१९१४ वि०) इन्होंने काव्य के सर्वांग पर पृथक लक्षण ग्रन्थ लिखे हैं। नन्दकिशोर के रस कल्पद्रुम काव्य विनोद, पिंगल प्रकाश तथा श्यामाश्याम विनोद और गोपालराय के रस-सागर, भूषण विलास दूषण-विलास, ध्वनि-विलास तथा भाव विलास वृन्दावन में मेरे देखने में आये हैं। पंजाब के निहाल कवि का 'साहित्य शिरोमणि' भी सर्वांग निरूपक रीति ग्रन्थ है। कुछ आचार्यों ने रस अलंकार, पिंगल आदि पर एकत्र भी विवेचन किया है और पृथक पृथक भी। किसी-किसी ने अपने विविधांग निरूपक ग्रन्थ में स्वरचित रस, अलंकारादि पर लिखे स्वतन्त्र ग्रन्थों से उदाहरण भी दिये हैं। उदाहरणार्थ ग्वाल ने साहित्यानन्द में स्वरचित यमुना लहरी, रसिकानन्द नखशिख रसरंग, कवन्धीर विनोद और कवि-दर्पण के उदाहरण रखे हैं। इन सभी आचार्यों ने अपने पूर्ववर्ती तथा समसामयिक कवियों के श्रेष्ठतम उदाहरणों को भी अपनों के साथ सम्मानपूर्ण स्थान दिया है। गोविन्द और ग्वाल के ग्रन्थ इसके उदाहरण हैं।

रस निरूपण रीति काव्य में रस को प्रमुखतम महत्व मिला। कोई भी आचार्य ऐसा नहीं जिसने नव-रस-निरूपण न किया हो। सर्वाधिक प्रतिष्ठा शृङ्गार रस को मिली। दूसरा महत्वपूर्ण रस वीर रहा। शृङ्गार रस की अन्तर्धारा समग्र रीतिकाल को ही आप्लावित किये हुए है।

---

[1] हि० सा० वृ० इतिहास (द्वितीय भाग)

—प्र० स० डा० नगेन्द्र पृ० २८८-२९१।

शृङ्गारिकता को रीति काव्य के स्नायुओं में बहने वाली रक्त धारा कहना चाहिए, क्योंकि इस युग की कविता का नवदशांश से भी अधिक शृङ्गार प्रधान है।[1] शृङ्गार की इस अतिशयता के लिये उस युग की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियाँ उत्तरदायी हैं। उक्त युग में भारतीय जन जीवन जीर्ण और जर्जर हो गया था। मुसलमानों की ऐहिक शक्ति तथा सुख के अतिचार ने और हिन्दुओं की पराभव ने निष्प्राण कर कर दिया था। देश की आर्थिक व्यवस्था भ्रष्ट हो गई थी। प्रकाश की कोई किरण दृष्टिपथ में न थी। समाज का हारा थका निराश जीवन न तो बहिर्मुखी बन पाया और न ही अन्तर्मुखी। समाज की समस्त प्रवृत्तियाँ घर की ही चहारदीवारी में ही सीमित रह गई। जीवन में कृत्रिमता घर कर गई थी। जो कुछ बाह्य जीवन में प्राप्य सम्भव नहीं रह गया था, उसी की प्राप्ति का कल्पित सुख भोग मनुष्य अपने घर की चहारदीवारी में कृत्रिम साधन जुटाकर करता था। निदान विलास की सरिता दोनों कूलों को तोड़कर बह रही थी। विलास की केन्द्र बिन्दु थी नारी जिसके चारों ओर कृत्रिम उपकरण एकत्र थे।[2] नैतिक आदर्शों की दृढ़ता और कठोरता के अभाव में विलासिता की प्रवृत्ति को और भी सहारा मिला। फारसी संस्कृति और साहित्य की शृङ्गारिकता भारतीय संस्कृति में अब तक घुल मिल चुकी थी। हिन्दी कविता पर इसका प्रभाव अवश्यम्भावी था। रीति काव्य में प्राकृत और संस्कृत काव्य की शृङ्गारिकता को इससे नैतिक प्रश्रय मिला। ऐसे सामाजिक वातावरण और साहित्यिक प्रभावों में पनी रीति कविता में शृङ्गार की अतिशयता का होना स्वाभाविक ही था। कवियों ने राधाकृष्ण को आलम्बन मानकर ऐहिक शृङ्गार का समग्रत वर्णन किया। भक्तियुग के राधा और कृष्ण रीतियुग के नायिका और नायक बने। नखशिख वर्णन, षट् ऋतु वर्णन, नायक-नायिका भेदोपभेद वर्णन, शृङ्गार रस निरूपण आदि में ही कवियों ने अपनी प्रतिभा का उपयोग किया। इससे कवियों को आश्रयदाता का कृपा प्रसाद तो मिला ही रसिकों की भी प्रशंसा मिली। साथ ही 'राधिका कन्हाई सुमिरन का बहाना'[3] भी मिल गया। इहलोक के साथ साथ परलोक के निर्माण की परिकल्पना इन

१ रीति काव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र, पृ० १७२।

२ वही।

३ आगे के सुकवि रीझि हैं तु कविताई
न तु राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानो है।

कविया की अनूठी सूझ थी, भले ही ग्वाल आदि कवियो को अपने अश्लील शृङ्गार वणन के अपराध के लिये राधाकृष्ण से क्षमा याचना करनी पडी।[१]

रस-वणन प्रभूत मात्रा म हुआ। शृगार की प्रमुखता रही, अय रसो का वणन गौण रहा। ग्रथो म नायक-नायिका भेद वणन का प्रमुखता दी गई। नायिका भेद, नखशिख, षटऋतु वणन पर स्वतत्र ग्रथ भी रचे गये। शृगार के सयोग और वियोग दोनो पक्षो का वणन किया गया। वियोग पक्ष म बारह-मासे भी लिखे गये। सयोग म विभाव, अनुभाव, सचारी भावो के साथ हावो का भी वणन हुआ। विरह की दसो दशाओ का भी वणन मिलता है।

रस और नायिका भेद निरूपण के लिये कवियो ने सस्कृत का आधार लिया। भरत मुनि का नाटय शास्त्र, वात्सायन का कामसूत्र, कोककोक का रति रहस्य, रुद्र भट्ट का शृगार तिलक भोज का सरस्वती कठाभरण और शृगार प्रकाश धनजय का दशरूपक मम्मट का काय प्रकाश, भानुदत्त कृत रसतरगिणी तथा रस मजरी, विश्व नाथ कृत साहित्य दपण आदि इनके प्रमुख आधार ग्रथ थे। हिन्दी कवियो ने अपनी रुचि अनुकूल इनम से एक या एकाधिक ग्रथो के लक्षणो का छायानुवाद देकर रसातगत नायिका-भेद-निरूपक रचनायें की। रीति निरूपक ग्रथो म मौलिक उद्भावनाओ का अभाव है, परन्तु *विषयगत शास्त्रीय अनुशीलन और व्याख्यायें अनोच्यकाल* की अपनी विशषताए हैं। इसस पूव भी यह अनुशीलन अनेकत्र मिलता है, जिसे प्रासगिक उल्लेख की ही सज्ञा दी जा सकती है, जसी कि भिखारी दास और मतिराम के शास्त्रीय वणन म दृष्ट य है। इसके विपरीत उन्नीसवी शताब्दी के सभी आचार्यों म तो नही, हा ग्वाल और रसिक गोविन्द म इस प्रकार के शास्त्रीय परिशीलन को विधिवत ग्रहण किया गया है। आलोच्य काल अपने पूव रीतिकाल स अधिक रस-निरूपण ग्रन्थ दे सका है, जिनम अधिकाश म तो परम्परा के निर्वाह क लिये ही लिखे गये है। परन्तु जिनमे रस का व्याख्यात्मक और आलोचनात्मक प्रतिपादन हुआ है, ऐसे ग्रथो का भी सवथा अभाव नही है। इस सन्दभ म ग्वाल के रस ग्रथ उदाहरण स्वरूप रखे जा सकते हैं। रसो म शृगार को रस-राजत्व दिया जाता रहा। इस रीतिबद्ध काव्यो की सख्या तो पहले से अधिक मिलती है, परन्तु काय की दृष्टि स य रचनायें बिहारी आदि के काव्य स हीन कोटि की ठहराई जायगी। या

---

१ श्री राधा पद पदुम कौ, प्रनछि प्रनमि कवि ग्वाल।
छमवत है अपराध कौं, कियो जु कथन रसाल॥ --ग्वाल (रसरग)।

पद्माकर, प्रतापसाहि, रामसहाय दास और द्विजदेव जैसे प्रसिद्ध कवि भी इस युग में हुए। इस दृष्टि से प्रमुख कवियों और उनके ग्रन्थों की तालिका देना यहाँ उपयुक्त होगा।

रस और नायिका भेद

कविनाम	ग्रन्थ	रचनाकाल (विक्रमीय)
पद्माकर	जगद्विनोद	१८६७
बेनी प्रवीन	नवरस तरंग (सर्वरस)	१८७४
करन कवि	रस कल्लोल ,,	१८९०
नवीन	रस तरंग ,,	१८९८
ग्वाल	रसिकानन्द ,,	१८७९
,,	रसरंग ,,	१९०४
,,	बलबीरविनोद	लगभग १९०३
चन्द्रशेखर वाजपेयी	रसिक विनोद ,,	१९०३
रसिक गोविन्द	रसिक गोविंद ,,	अज्ञात
गोपाल राय भाट	रस सागर ,,	१८८७
,,	भाव विलास	अज्ञात
,,	मान पचीसी (नायिका भेद)	अज्ञात
हरदेव	रस चन्द्रिका (नवरस)	,,
,,	रसभाव माधुरी	,,
कृष्ण कवि	गोविन्द विलास	१८८३
यशोदानन्दन	बरवै नायिका भेद	१८७२
रघुनाथ कवि	रघुनाथ विलास	१९६९
कृष्ण भट्ट	रस कल्लोल	१८९०
प्रतापनारायणसिंह	रस कुसुमाकर	१९५१
हरिदास कायस्थ	रस कौमुदी	१९०१
गणेश चौबे	रस चन्द्रोदय	१८७५
देवीदीन वन्दी जन	रस दर्पण	१९४८
सुन्दर वन्दीजन	रस प्रबोध	१९३०
कृष्णलाल भट्ट बूँदी	रस भूषण	१८७४
गिरिधर दास	रस रत्नाकर	अज्ञात
मौन कवि	रस रत्नाकर	१८८१
रणधीरसिंह सिंगरामऊ	रस रत्नाकर	१८९७

रामसहायदास कायस्थ	रस विनोद	१८७३
"	शृंगार सतसई	लगभग १८९०
"	वनितावली	अज्ञात
रामसिंह	रस विनोद	१८६०
भारती	रस शृंगार	१८६१
मदन भट्ट जयपुर	रस समुद्र	१८७०
मातादीन शुक्ल	रस सारिणी	१९०३
कृष्ण भट्ट मथुरा	रस सिन्धु	१८९६
ब्रजेन्द्र भरतपुर	रसानन्द	१८९१
रसानन्द भट्ट	रसानन्द घन	१८९९
गोकुल कवि	राधाकृष्णविलास	१८५८
गोकुल कायस्थ	वामा विनोद (नायिका भेद)	१९००
प्रताप साहि	व्यंगार्थ कौमुदी	१८८२
"	शृंगार शिरोमणि	१८९४
नकछेदी तिवारी 'अजान कवि	शृंगार चन्द्रिका	१९४८
ब्रज चन्द्र	शृंगार तिलक	१८९५
बख्शी गोपाल	शृंगार पच्चीसी	१८८५
द्विजदेव	शृंगार बत्तीसी	अज्ञात
"	शृंगार लतिका	लगभग १८१३
बनी प्रवीण	शृंगार भूषण	१८८०
सरदार कवि	शृंगार संग्रह	१९०५
मुरलीधर मिश्र	शृंगार सार	१८५७
द्विज कवि	शृंगार सुधाकर	१८४६
द्विज बलदेव	शृंगार सुधाकर	१९३१
रूप अलि	शृंगार हार	१९३०
द्विज कवि	सुन्दरी सर्वस्व	१९४६
लछीराम भट्ट	प्रताप रत्नाकर	अज्ञात
नवीन कवि	रस सुधासागर	१८९५
दीन दयाल गिरि	अनुराग बाग	१८८८
गोकुल कायस्थ	अष्टयाम प्रकाश	१९२१
उरदाम चौबे	उरदाम प्रकाश	१९४७
रत्नेश कवि	कान्ता भूषण	१८७१

ठाकुर	ठाकुर ठसक व ठाकुर शतक	अज्ञात
गोकुल कायस्थ	दिग्विजय भूषण	१८१८
बनी कवि	नवरस तरंग	१८७८
राजा जगत सिंह	नायिका दर्शन	१८७७
बनी प्रवीन	नायिका भेद	१८७६
यशोदानन्दन	,	१८७२
रामसुखराय (पंजाब) जस्सासिंह विनोद भागसिंह विनोद		
हरनाम (पंजाब) रसतरंगिणी, रसमंजरी साहित्यबोध		(१८६६–१९००)
	नख शिख ग्रंथ	
खूब चन्द्र राठ रसीले	अंग चन्द्रिका	१६२०
मृगेन्द्र साहब सिंह	कुसुम वाटिका	१८१७
ग्वाल	कृष्ण जू को नखशिख	१८८०
,	दृग शतक	१६१८
महाराज जसवन्त सिंह द्वि० नखशिख वर्णन		१८६५
प्रतापसाहि	जुगल नखशिख	१८८६
अगराय	नखशिख	१८८६
देवकीनन्दन कन्नौजिया	नखशिख	अज्ञात
नवनीत चतुर्वेदी	श्यामांगावयव भूषण	,
नवीन	नखशिख	,
चन्दन राय	नखशिख	१८६४
चन्द्रशेखर वाजपेयी	,	१८१४
जगतसिंह	,	१८७७
देवीदीन बिलग्रामी	,	१६४८
पजनेश कवि र ना	,,	१८९९
परमानन्द	,	१८८६
बलवीर	■	१८४६
भीरन कवि	,	लगभग १६०५
मुरलीधर मिश्र		१८०२
गोपाल बुन्देलखंडी	नखशिख दर्पण	लगभग १८६६
गोविन्द गिल्लाभाई	ननखावली	लगभग १८५२
,,	पयोधर पचीसी	१८५१
,,	शृंगार षोडसी	१८४५
गिरिधर भट्ट	राधा नखशिख	१८८६

प्रतापसाहि	रामचन्द्र जू को नखशिख	अज्ञात
रसरूप	,,	१६२५
गिरिधर दास	लक्ष्मी नखशिख	अज्ञात
रसानन्द भरतपुर	सिखनख	१८१०
देवीदास कायस्थ	हनुमत नखशिख	१८६५
थानसिंह कायस्थ चरखारी	हयग्रीव नखशिख	१८८४
गोपाल बन्दी जन	सिखनख	१८८१
रामसहाय दास	सिखनखावली	१८८५
सीताराम (न०)	अलक बत्तीसी	१८१०

ऋतु वर्णन संस्कृत के रस शास्त्रियों ने ऋतु वर्णन को उद्दीपन के अन्तर्गत रखा है। नायिका भेद की परम्परा में निर्मित ग्रन्थों के अन्तर्गत षट् ऋतु वर्णन का पर्याप्त निरपेक्ष या स्वतन्त्र रूप से ऋतु वर्णन हुआ है। परन्तु हिन्दी में ऐसे चित्रण विरले ही हैं। जो हैं वे उतने उत्कृष्ट नहीं बन पड़े जैसे संस्कृत के हैं। आलोच्य काल के रीतिबद्ध कवियों ने भी षट् ऋतुओं के उद्दीपन पक्ष में ही अधिक मनोज्ञता का परिचय दिया। प्रकृति के उद्दीपक चित्रों के निर्माण की प्रवृत्ति इस युग में रीति काव्य में सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। आलोच्य काल में षट्ऋतु वर्णन पर लिखित कुछ कवियों और ग्रन्थों के नाम निम्नांकित हैं —

लेखक	ग्रन्थ	रचना काल (संवत)
सरदार कवि	ऋतु विलास	अज्ञात
,,	षट् ऋतु वर्णन	,,
देवकीनन्दन	चतुर्मासा	१८८६
नाथ कवि	पावस पच्चीसी	१६३७
अवधविहारीलाल कायस्थ	बारह मासा	■
रसाल कवि	बारहमासा	१८८६
देवीप्रसाद	बारहमासी	१८०५
ग्वाल	षट ऋतु वर्णन	अज्ञात
रुद्रनाथ	बारहमासी	१८७६
रघुनाथ	षट ऋतु वर्णन	१६४०
हफीजुल्ला खाँ	षट्ऋतु काव्यसंग्रह	१८४६
परमानन्द सुहाने	हजारा (संग्रह)	१६४१
रामसहायदास	बारहमासा	अनिश्चित

श्यामसवक	वर्षा बहार	१८४८
माहवसिंह मृगेन्द्र	बारामाह	—
उमादास (भवानीदास)	,	—
बसन्तसिंह ऋतुराज	बसन्त बहार बसन्त विनोद, बसन्त सतसई	
बोधा	बारहमासी, बाग वणन, फूलमाल।	

अलकार निरूपण —रीतिकाल का साहित्य अलकृत था, इसी से कुछ विद्वानों ने इसे अलकृत काल भी कहा है। आलोच्य काल मे भी शृगार रस के बाद अलकारो पर ही सबसे अधिक संख्या म ग्रन्थ लिखे गये। सर्वांग निरूपक आचार्यों का छोडकर, अन्य रीति कवियो ने भी पर्याप्त ग्रन्थ केवल अलकार निरूपण पर लिखे। अलकार निरूपण रीतिशास्त्र की एक व्यापक प्रवृत्ति है इन ग्रन्थो का भी प्रणयन सस्कृत साहित्य शास्त्र के अनुसरण म हुआ। सस्कृत के चन्द्रालोक और कुवलयानन्द की परिपाटी पर अधिकाश हिन्दी अलकार ग्रन्थ लिखे गये। अधिकाश म लक्षण और उदाहरण दोहा शैली म ही लिखे गये।

आलोच्य काल म आलकारिक आचाय और उनके अलकार ग्रन्थो की तालिका नीचे दी जा रही है —

लेखक	ग्रन्थ	रचनाकाल (सवत्)
गोकुलनाथ	चेत चन्द्रिका	१८५८
ब्रह्मदत्त	दीपप्रकाश	१८६५
सवाईसिंह	का याणव	१८६६
हरदेव	भूषण भक्ति विलास	१६१६
पद्माकर	पद्माभरण	१८६७
बलवीर	उपमालकार	१८७०
बलवानसिंह	चित्र चन्द्रिका	१८८८
प्रतापसाहि	अलकार चिन्तामणि	१८६४
चतुर्भुज	अलकार आभा	१८६६
नेवराज	लघुभूषण	१६००
शालिग्राम शाकद्वीपी	भाषाभूषण की समालोचना	१६२०
गोपालराय भाट	भूषण विलास	—
लीलाधर	काव्योदय	१८७४
गिरिधरदास	भारतीभूषण	१८८०
सरदार	साहित्य सुधानिधि	१६०२
जगन्नाथ	रघुवीर रसायन	लगभग १६५७

रामसहायदास	वाणी भूषण	अनिश्चित
रामसुखाय (प०)	जस्वासिंह विनोद	—

पिंगल निरूपण —पिंगल शास्त्र नीरस और दुरूह है। यही कारण है कि हिंदी मे जितनी संख्या रस और अलंकार के ग्रंथों की है, पिंगल ग्रंथों की नहीं। हिंदी में पिंगल ग्रंथ संस्कृत के पिंगल या प्राकृत के ग्रंथ प्राकृत पैंगलम् के आधार पर लिखे गये और अधिकांश ग्रंथ इन ग्रंथों के छायानुवाद मात्र ही रहे। पीछे वर्णित सभी सर्वांग निरूपक आचार्यों ने पिंगल पर लिखा जिन आचार्यों ने पिंगल पर पृथक ही ग्रंथ लिखे हैं उनकी तालिका निम्नांकित है —

लेखक	ग्रन्थ	रचनाकाल (संवत)
दशरथ	वृत्त विचार	१८५६
नन्दकिशोर	पिंगलप्रकाश	१८५८
चंदन	नघु विग्रम	१८७३
रामसहायदास	वृत्त तरंगिणी	१८७३
ग्वाल	प्रस्तारप्रकाश	लगभग १६००
सीताराम (प०)	वृत्त चन्द्रिका	—
हरदेव	छन्द पयोनिधि	१८६२
मैन कवि (पंजाब)	प्रसार प्रकाश	—
अयोध्या प्रसाद वाजपेयी	छन्दानन्द पिंगल	१८००

इसके अतिरिक्त काव्य दोषों पर भी कतिपय ग्रंथ लिखे गये। ग्वाल कवि का 'रवि दर्पण' और गोपाल राय भाट का 'दूषण विलास' नामक ग्रंथ उपलब्ध होते हैं।

चाटुकारिता-कविता (प्रशस्ति ग्रंथ) यह एक निर्विवाद सत्य है कि रीतिकालीन कवियों ने आश्रयदाताओं को भरपूर प्रशंसा लिखी। इस युग का कवि समाज के मध्यम वर्ग से सम्बन्ध नहीं रखता था। काव्य का परिशीलन और सृजन उनकी आजीविका का साधन था—राजाओं और सामन्तों तथा धनिक कला प्रेमियों का आश्रय मिल जाने से उनकी काव्य साधना निर्विघ्न चलती रहती थी। तत्कालीन सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियां उनके अनुकूल थी। तत्कालीन राजसभायें कवियों, कलाकारों, संगीतज्ञों, चित्रकारों से अलंकृत रहती थी। कई राजाओं एवं सामन्तों को स्वयं काव्य, संगीत, चित्रकला आदि का शौक था। प्रतिभा प्रदर्शन युग की परम्परा बन चुकी थी। कविता हासोन्मुखी था। रूढ़िबद्ध कविता विद्वानों के मनोविनोद का

साधन रह गयी थी। शृङ्गारिकता-प्रधान प्रवृत्ति ने आश्रयदाताओं और रसिकों को मोहित कर रखा था। कवि प्रतिभा प्रदर्शन के प्रति जागरूक थे मन ही व काव्य व्यवसायी और कर्मायशी कवि न थे,[1] उनकी कविता आश्रयदाताओं की इच्छा पर ही अवलम्बित थी। उनको प्रसन्न रखने के लिये कवि उनकी रुचि और इच्छा से उसकी गुणावली का गान करते थे। अधिकांश कवियों ने आश्रयदाता के वंश का वर्णन, उनकी उदारता, गुणग्राहकता दानप्रियता, शास्त्रनिपुणता, शौर्य और पराक्रमादि के वर्णन किये हैं। ग्रन्थारम्भ में एक या आध अध्याय में और ग्रन्थान्त में आशीर्वचन स्वरूप में यह प्रशस्ति प्रकरण पूरा कर दिया जाता था। ग्रन्थ का अधिकांश कलेवर शास्त्र निरूपण को ही अर्पित होता था। कुछ उदाहरणों में भी आश्रयदाता की प्रशंसा के छन्द लिये हैं। ग्वाल और पद्माकर इसके उदाहरण हैं। प्रशस्ति में अतिरंजना की प्रवृत्ति ही अधिक दृष्टिगत होती है। पद्माकर[2] ग्वाल[3] आदि में यह सीमा का अतिक्रमण भी करता दिखाई देती है। पद्माकर ने 'हिम्मत बहादुर बहादुर विरुदावली' पूरा ग्रन्थ ही नाराशंसा में लिखा। आनुषंगिक प्रशस्तियों से रीति-काव्य भरा पड़ा है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ। काल निर्धारणादि में इस प्रवृत्ति ने जहाँ तहाँ समस्याओं को सुलझाने में स्तुत्य योग दिया है।

नर प्रशस्ति में कवियों ने सम्पूर्णत अपने स्वाभिमान को तिलांजलि दे दी हो, सर्वत्र ही ऐसा नहीं दिखता। ठाकुर कवि पर्याप्त स्वाभिमानी थे व

---

१ अपनी प्रतिभा और कला के प्रदर्शन के प्रति ये जागरूक थे, इसका तो निषेध नहीं किया जा सकता परन्तु इसके आगे बढ़कर इनको काव्य व्यवसायी या कर्मायशी कवि कहना अन्याय होगा।

—डा० नगेन्द्र रीतिकाव्य की पृष्ठभूमि–पृ० १४५।

२ 'हिम्मत बहादुर विरुदावली' में पद्माकर ने हिम्मत बहादुरसिंह जैसे अति साधारण कोटि के आश्रयदाता का अति रंजना पूर्ण गुणगान किया है। वह एक शौर्यहीन व्यक्ति था। उसके युद्ध हारने पर भी पद्माकर ने उसे शूरवीर आदि विशेषण दिये द्रष्टव्य हिम्मत बहादुर विरुदावली और बांदा गजेटियर।

३ नाभा नरेश भरपूरसिंह अंग्रेजों का पिट्ठू था। नाभा रियासत ने पंजाब के निर्माण में सिखों की सहायता नहीं की। परन्तु ग्वाल ने 'इश्कलहर दरयाव' में इस आश्रयदाता की प्रशंसा में कलम तोड़ दी है। द्रष्टव्य सिख इतिहास–डा० देशराज तथा 'इश्कलहर दरयाव' आदि और अन्त।

खरी खरी कहने मे नही चूक ।[1] बनी कवि के भड़ौआ प्रसिद्ध ही है। ग्वाल का निम्नांकित छन्द भी इस सन्दर्भ म अवलोकनीय है—

आदर अपार कर सोभा बार बार कर,
भात भांत ब्यार कर प्यार करिवो कर।
सभा में सुनाव कहे कथा जगा तुरी देवो
लायन को बात नित ताजी करिवो कर ॥
'ग्वाल कवि' कहै जब बिदा को सुनत नाम,
सूरत हराम इतराजी करिवो कर।
कविन का दगाबाजी, दमबाजी, ठगबाजी,
पाजिन को पाजी महाराजी करिवो कर ॥[2]

साराश यह है कि इन कवियो मे से कुछ का अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व भी था।

आलोच्यकाल के कुछ प्रशस्ति ग्रन्थो के नाम नीचे लिखे जाते हैं —

लेखक	प्रशसित	ग्रन्थ नाम	रचनाकाल (सवत)
पद्माकर	हिम्मत बहादुर	हिम्मत बहादुर बिरदावली	१८४८ और १८५६ के मध्य।
	प्रतापसिह	प्रतापसिह बिरदावली	१८६७ के पूव
	जगतसिह	जगत विनोद	लगभग १८६७
	दौलतराव सिंधिया	अलीजाह प्रकाश	१८७८
	ऊदाजी	हितोपदश का भाषानुवाद	१८७६-८०
बोधा	खेतसिह	इश्कनामा	अनिश्चित
	खेतसिह	विरहवारीश	"
ग्वाल	जसवन्तसिह (नाभा)	रसिकानन्द	१८७६
	शेरसिह (लाहोर)	विजय विनोद	१८०१
	भरपूरसिह (नाभा)	इश्कलहर दरयाव	१८१७

१ देखिये—ठाकुर ठसक का यह कवित्त—
सेवक सिपाही हम उन रजपूतन के, दान जुद्ध जुरिबे मे जे न नेकु मुरके।

२ भक्त भावन—प्रस्तावक छ० स० २६।

	सिखों के दस गुरु	गुरु पचासा	१९१७
प्रतापसाहि	जयसिंह	जयसिंह प्रकाश	१८५३
चंद्रशेखर	नरेंद्रसिंह-पटियाला	हम्मीर हठ	१९०२
	नरेंद्रसिंह पटियाला	विवेक विलास	१९०४
	,	रसिक विनोद	१९०३
लछीराम	रावणेश्वरसिंह	रावणेश्वरसिंह कल्पतरु	
	प्रतापसिंह (काशी)	प्रताप रत्नाकर	अनिश्चित
साहबसिंह मृगेन्द्र (पंजाब)		गुरुनाम पचासिका	,,
धर्मसिंह ऋतुराज (पंजाब)		गुरुवंश तर्पण	
मन कवि (पंजाब) पटियाला राजवंश		राजतरंगिणी	,
दित्तेराय (पंजाब) मोहन (महेंद्रसिंह)		महेंद्रसिंह प्रकाश	१९१६
गंगाराम (पंजाब) म० कर्मसिंह पटि०		मानमंजरी	अनिश्चित
चंद्रशेखर	सिखगुरु	गुरु पचासिका	,
गणेश कवि (पंजाब) खालसा		फतहनामा खालसा	१८७४ ७८
म तोपसिंह (पंजाब) सिखगुरु		गुरुप्रताप सूर्य	१८८०
बुधसिंह (पंजाब) सिखगुरु		गुरु रत्नावली	१८८० १९१०

भक्ति वैराग्य और नीति-कथन रीति कर्ता कवियों ने शृङ्गार वर्णन में राधा और कृष्ण को आलम्बन आश्रय मानकर काव्य रचना की। भक्तिकालीन राधाकृष्ण का स्वरूप रीतिकाल में आकर बदल गया। व दवी दवता न होकर इस लोक के सामान्य नायिका और नायक मात्र बनकर रह गये। रीतिकारों ने कहीं कहीं तो इनका वर्णन अत्यंत अश्लील रूप म किया। ग्वाल को तो अपने वस अपराध के लिये राधा स स्पष्ट शब्दों म क्षमा मांगनी पड़ी —

> श्री राधा पद पदुम को प्रनमि प्रनमि कवि ग्वाल।
> छमवत है अपराध को, कियौ जु कथन रसाल॥

ग्वाल ने शिव को कुचा के उपमान के लिये चुना ।[१] कवियो का यह रुचि भिखारीदास आदि से मिली थी । उत्तर रीतिकालीन कवि पूर्व रीति के कवियो से कोई भिन्नता लिये हुए नहीं थे । इन कवियो ने भक्ति विषयक ग्रन्थ भी लिखे, पर इनमे भक्ति का भावावेश नहीं मिलता । वैराग्य रचनाओ मे भी वह आवेश नहीं जो सन्तो के काव्य मे है । भिखारीदास बहुत पहले लिख गये थे 'आगे के सुकवि रीझि है तो कविताई न तु राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानो है ।' यह बात उचित ही थी कि शृङ्गार से ऊबकर अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे वे भक्ति भावना से राधिका कन्हाई का स्मरण करते ।

लेखक	भक्ति-वैराग्य ग्रन्थ
पद्माकर	गंगालहरी, रामरसायन प्रबोध पचासा, ईश्वर पचीसी जमुना लहरी ।
ग्वाल	यमुनालहरी, यमुना लहरी, गंगाजी के कवित्त, राधाष्टक, कृष्णाष्टक, दोषणदर्पण, देवी देवताओं के कवित्त, ज्वालाष्टक, कुब्जाष्टक, गोपी पच्चीसी निम्बार्क
(रसिक) गोविन्द	रामायण सूचनिका, कलियुगरासो, युगल रसमाधुरी, समय प्रबन्ध, अष्टयाम के पद ।
गिरिधरदास	गर्ग संहिता, वाल्मीकि रामायण, वाराह कथामृत, नृसिंह कथामृत, बलराम कथामृत, बुद्ध कथामृत ।
घनानन्द	सहस्राधिक फुटकल कवित्त
नागरीदास	छोटी बड़ी ७० रचनायें
चन्द्रशेखर वाजपेयी	हरि भक्ति विलास, वृन्दावन शतक ।
सन्तोषसिंह (पंजाब)	वाल्मीकि रामायण, दशम स्कन्ध, रामचन्द्रोदय, रामायण ।

१ सेवी जान मोको कवि कासी को पठावत हैं,
आवत न मेरे मन काम न धरत हो ।
जघ कदलीवन मे नाभि कूप कूल बठि अन्तर
गंगोतरी को सीसियाँ भरत हो ॥
ग्वाल कवि चंदन चढावो पहिरावों माल
आंगुरिन आरती उतारि वितरत हो ।
सुधिकारि रुचिकारि उच्चपद पाइब कों
प्यारी कुच कुम्भ को मे पूजन करत हो ॥७९॥

साहबसिंह 'मृगेन्द्र'	राम मण्डल कृष्ण कौतूहल ।
ब्रजवासीदास	ब्रज विलास
उमादास, भवानीदास (पंजाब)	नाम माला, कुरुक्षेत्र माहात्म्य, पंचरत्न सुदामाचरित्र
नारायण स्वामी	ब्रज विहार ।
गंगाराम, (पंजाब)	कथा धर्मेश्वर
रामदास (पंजाब)	बाणा रामदास
बीरसिंह, (पंजाब)	वशिष्ठ पुराण, भक्त माल, गौसिंह कथा ।
बिशनसिंह (पंजाब)	कलि भ्रम भजन ।
सेवासिंह जाट	सुदामा चरित ।
हरदयाल (पंजाब)	वैराग्य शतक (अनुवाद)
दीनदयाल गिरि	वैराग्य दिनेश ।
नवनीत चतुर्वेदी	गोपी प्रेम पीयूष प्रवाह, गोपी पचीसी ।
गोपालराम	रास पंचाध्यायी सटीक वंशीलीला, वंशास्तव, वृन्दावन धामानुरागावली, वृन्दावन माहात्म्य, वनयात्रा ।
दयानिधि	नृसिंह चरित्र उद्धव पचीसी ।

नीति ग्रंथ

ग्वाल	प्रस्तावक कवित्त अन्योक्ति कविता ।
दयानिधि	अन्योक्ति पचीसी
गिरधर कविराय	कुण्डलियां ।
दीनदयाल गिरि	अन्योक्ति कल्पद्रुम अन्योक्ति माला दृष्टांत तरंगिणी ।
मान्धसिंह 'मृगेन्द्र'	सुमन संजीवन
उमादास	नीति रत्नाकर
मैन कवि	प्रस्ताव शतक ।
हरदयाल	सारुक्तावली १८८० ।
बुधसिंह	बुधवारिधि ।
पद्माकर	हितोपदेश भाषा ।
जसिंह सैना	भूषण ।

की धार्मिकता और भक्ति भी बाकी रह गया था ।

यह भक्ति भी उन रीति कवियों की शृङ्गारिकता का ही एक अंग थी। जीवन की अतिशय रसिकता से जब यह लोग घबरा उठे होंगे तो राधाकृष्ण का यही अनुराग उनके धर्मभीरू मन को आश्वासन देता होगा। इस प्रकार रीतिकालीन भक्ति एक ओर सामाजिक कवच और दूसरी ओर मानसिक शरण भूमि के रूप में इनकी रक्षा करती थी। तभी तो वे किसी न किसी तरह उसका आँचल पकड़े हुए थे। रीतिकाल का कोई भी कवि भक्ति भावना से हीन नहीं है, हो ही नहीं सकता था, क्योंकि भक्ति उनके लिये एक मनोवैज्ञानिक आवश्यकता थी भौतिक इसकी उपासना करते हुए भी, उनके विलास और मन में इतना नैतिक बल नहीं था विभक्ति रस में अनास्था प्रकट करते, या उसका सैद्धान्तिक निषेध करते।[१]

वैराग्य जनित नैराश्य में इन कवियों ने नीति सम्बन्धी रचनायें भी लिखीं। तत्कालीन जीवन और परिवेश पर आधारित ये नीति-उक्तियाँ कवियों के अवसाद और थकान की द्योतक हैं।

प्रबन्ध काव्य रीति मुक्तकों का युग था। कवियों की प्रतिभा शृङ्गार रस के कवित्त, सवैया और दोहा बनाने में ही व्यय हुई। आलोच्य काल में कुछ प्रबन्ध काव्य भी लिखे गये।

अनुवाद यदि संक्षेप में कहा जाय कि समग्र रीति युग ही संस्कृत साहित्य का छायानुवाद काल है, तो अत्युक्ति न होगी। हिन्दी के लक्षण ग्रन्थ संस्कृत के ग्रन्थों के छायानुवाद ही हैं। आलोच्य काल में महाभारत, वाल्मीकि रामायण और हितोपदेश के पद्यानुवाद हिन्दी में हुए, तथा उर्दू से हिन्दी में अनुवाद करने का सूत्रपात स्वागतयोग्य बात हुई। इसका श्रेय नाभा दरबार को है। ग्वाल ने सं० १८१७ में उर्दू की प्रसिद्ध मसनवी 'सिहर उल बयान [मीर हसन कृत] का 'इश्कलहर दरयाव' नामक बड़ा सुन्दर भाषानुवाद किया। दूसरा है वंशी पंडित द्वारा लिखा हुआ सुमन-विलास। सं० १८२२ जो उर्दू के 'गुलबकावली' का हिन्दी पद्य रूपान्तर है। ग्वाल और वंशी दोनों समसामयिक थे और दोनों ही नाभा नरेश के आश्रित रहे थे। वास्तव में यहीं से आधुनिककालीन अनुवाद कार्य का सूत्रपात समझना चाहिये।

उर्दू ग्रन्थों की भाषा फारसी और अरबी मिश्रित उर्दू है, जिसकी अपार शब्द सम्पत्ति इन कवियों द्वारा हिन्दी को मिली। उर्दू की काव्य शैली छन्द योजना, अभिव्यंजना अलंकार, प्रतीक योजना का चमत्कार हिन्दी में

१ रीति काव्य की भूमिका पृ० १८०।

स्वभावत आया, जो आना भी चाहिए था। अनुवाद की दिशा म साहित्य-कारो ने नई दिशा का निर्देश किया। भारतेन्दु युग म अनुवादो ने साहित्य म क्रान्ति करने म बड़ा योग प्रदान किया।

डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय के शब्दो म अनुवादको ने उन्नीसवीं शताब्दी म नवीन विषय सुझाये, नवीन साहित्य रूपो को जन्म दिया। अनुवादको ने उस समय यह बडा भारी काय किया।[1]

उपालम्भ काव्य की प्रवत्ति हिन्दी के उपालम्भ काव्य का उद्गम श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध के ४६ तथा ४७वें, अध्यायो को माना जाता है। उपालम्भ काव्य 'भ्रमरगीत' के हिन्दी म प्रथम कवि सूरदास हैं। अष्टछाप कवियो ने 'भ्रमर प्रसग को लेकर रचनायें की हैं। नन्ददास का भवरगीत' दूसरा प्रसिद्ध उपालम्भ है। सूरदास भाव प्रवण और नन्ददास 'बुद्धि प्रधान' और भाव प्रधान रहे। यही परम्परा रीतिकाल म फुटकल छन्दों मे विकसित हुई।

उपालम्भ काव्य म उद्धव गोपी सवाद का प्रसग वर्णित हुआ है, जिसम निराकार पर साकार की विजय का विशद वणन है। कृष्ण सखा उद्धव उनका सन्देश लेकर ब्रज मे आते हैं गोपियाँ भाव विह्वल हो जाती हैं। भ्रमर या अन्य प्रतीक के माध्यम से व ताने उलाने देती हैं। यही इन काव्यो का वण्य विषय रहा है।

रीति कवियों के वण्य विषयो के अन्तगत राधा कृष्ण गोपी, उद्धव ग्वाल गोप आदि भी आते हैं। अत गोपियो द्वारा ऊधो के माध्यम से कृष्ण को सदव ही 'सूधो सो सदेश' भिजवाया जाता रहा है। यह केवल प्रासगिक चर्चा का ही विषय बना और उसकी अभिव्यक्ति रीतिकाल के अन्तिम चरण तक पाई जाती है। जिन कवियो ने उद्धव गोपी सवाद या भवर गीत रचे, उनमे वृन्दावन के दयानिधि ने स० १८५० वि० के लगभग उद्धव पचीसी[2] लिखी। सवाराम के "भवरगीत"[3] की भी चर्चा है पर यह उपलब्ध नही होता। ग्वाल ने गोपी पच्चीसी और कुब्जाष्टक' और नवनीत चतुर्वेदी ने 'कुब्जा पचीसी और गोपी पचीसी की रचना करके उपालम्भ काव्य की परम्परा को एक नया मोड दिया। ग्वाल और नवनीत से पूव 'कुब्जा उस

---

१ उन्नीसवीं शताब्दी—डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय १९६३ ई० पृ० १४।

२ चन्द्रिका (उदयपुर) अन्योक्ति पच्चीसी
—ले० गोस्वामी राधाचरण पृ० ५०।

३ ब्रजभाषा रीति साहित्य ग्रन्थ कोश प० जवाहरलाल चतुर्वेदी, मथुरा।

पर किसी कवि ने स्वतन्त्र रूप से रचना नहीं की थी। इस पर ग्रन्थ रचना करके ग्वाल और नवनीत ने आधुनिक युग का नया मार्ग और नया प्रतिपाद्य दिया। श्री रामनारायण अग्रवाल द्वारा लिखा गया कूबरी खंड काव्य इस परम्परा का उल्लेखनीय ग्रन्थ माना जा सकता है[१]

ग्वाल की गोपी पच्चीसी का वर्ण्य विषय तो पारम्परिक है पर अभिव्यक्ति उनकी अपनी है। इसका एक उदाहरण यहाँ देना उचित होगा।

'ऊधो तेरे यार असे ह्वै है रिसवार जाइ
जानतो बिचार तो प सूधो हो न आइबौ।
करनी उपाय भांत भांत के सुझाइ भाइ,
कैसो बडी बात हुती वाको अटकाइबौ॥
ग्वाल कवि पीठिन प येक येक हाडी बांधि,
नीके मनमोहन को करतो रिझाइबौ।
या तौ कहू कोऊ बहुरूपिया तलाश करि,
सीखि लेती सब हम कूब को बनाइबो॥[२]

हिन्दी साहित्य म प्रथम बार ग्वाल की कविता मे उपेक्षिता 'कुब्जा' गोपियो क असह्य उलाहने सुनने के बाद ऐसी खरी-खरी कहती है कि 'सुनकर लखनऊ वाली भी दाँतो के बीच उँगली दबा ले।' एक उदाहरण प्रस्तुत है—

मोहि व्यभिचारिनी कमीन कहि बोलती हैं,
राखती न नेंकहू सम्हारि कै जबान को।
दीनो गोपिकान ने भलो ही ताहिनो है घोर,
खोलती उमो के पतिव्रत के बयान को॥
ग्वाल कवि अबलो रही हूं चुप कत कानि,
कहौं का गवांरिनि के अधिक अयान को।
जानूंगी उँचाई चतुराई उन सौतिनि की,
लेंय तो बुलाय अब सावरे सुजान को॥
गोरी मति लोरी की सुनी मे बात कथ्यन प,
मोकौं तो कुजातिनी कमीन कहि बोली वे।
आपुने न औगुन गिनत पर पनि पागो,
ऐसी बेसरम करें मो हो सों ठिठोली वे॥

१ कूबरी-सन् १६६६ मे राज्यश्री प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित और उ० प्र० शासन से पुरस्कृत हुआ

२ गोपी पच्चीसी ग्वाल, छं० स० ३।

'ग्वाल कवि छिप छिप अंधियारी रातन में
सोये पति त्याग कैं किवारे मु दि खोली वे ।
बनन में, बागन मे, जमुना किनारन मे,
खेतन, खदान मे खराब होत डोली वे।'[1]

गद्य आलोचना का प्रादुर्भाव रीतिकालीन लक्षण ग्रन्थो म उ नीसवी शताब्दी से पूव गद्य का बहुत ही कम आश्रय लिया गया। भिखारीदास ने अपने काव्य निणय म लक्षणों को स्पष्ट करने के लिये छोटे-छोटे वार्तिको का प्रयोग किया था। आलोच्य काल म आचार्यों ने बडी वार्ताओ और व्याख्याओ को अपनाना आरम्भ कर दिया। इसके दशन पहले पहल रसिक गोविन्द के 'गोविन्दान दघन' (स० १८५८ वि०) ग्रथ म मिलत हैं। रस की व्याख्या उन्होने निम्नांकित रूप म की है —

'अन्य ज्ञान रहित जो आनन्द सो रस। प्रश्न अन्य ज्ञान रहित तो निद्रा हू है। उत्तर–निद्रा जड हैं, जड चतन। भरत आचाय सूत्रकर्ता को मत विभाव अनुभाव सचारी भाव के सजोग म रस की सिद्धि। अथ काव्य को मत कारण कारज सहायक है, जो लोक म इन ही का नाटय म काव्य म, विभाव सज्ञा है। अथ टीका कर्ता को मतसत्व, विशुद्ध, अखड स्वप्रकाश, आनन्द चित अन्य ज्ञान नहि सग ब्रह्मास्वाद सहोदर रस।'[2]

इनके ४७ वष उपरान्त ग्वाल ने 'साहित्यानन्द' म और लम्बी गद्य व्याख्याओ का प्रयोग किया जो इस दिशा म विषय को स्पष्ट बनाने के प्रयास कहे जा सकते हैं। रूढि प्रयोजनवती लक्षणा का लक्षण ग्वाल ने वार्ता म इस प्रकार समझाया है —

प्रोजन जो है सो लक्षणा को अग ही है। जुदे नही है। ताते प्रोजनवती भेज करि कहै। प्रोजन लक्षना क्यो करनी थी। जसे काहू ने काहू ते पूछ्यो तुम्हारो घर कहा है। तब वाने कही हमारो घर गगा मे गृह है। तो गङ्गा म गृह असम्भव है। तब लक्षना करी। क्योकि अभिधा म जो गङ्गा प्रवाह ताम तो घर नही है सकै। तब मुख्यारथ गङ्गा प्रवाह को सम्बन्ध तीर ते है। तब जान्यो कि तीर प गृह है। गङ्गा म गृह कहनवारे हू को तात्पय तीर के जनाइव म हो सो पूछन वारे ने जान्यो। परन्तु वा पूछन वारे ने कही क तुमने इतन फेर ते क्यो कह्यो कि मेरो घर गगा म है,

---

१ कुब्जाष्टक–ग्वाल, छ० स० १ व ६।

२ गोविन्दानन्दघन–रसिक गोविन्द, ११।

गङ्गा के तीर पै है। यसेंई सूधो कहनो हो। तब वाने कही कै गगा मे गृह कहिबे को प्रयोजन यह गगा ते अति समीपता, सीत पवित्रता की अधिकता व्यग ते सूचित कराइबे को कह्यो कै गगा के तीर गृह यसेई कहें तो तीर के पह चार चार कोस ताई को भ्रम परै। तो गगा के दूर गृह सूचित भये पै अति समीपत्व आदि धर्म व्यग हो तो तातै गगा विषै गृह कह्यो विवेक हो ते अति समीपता सूचित भई। यसें बिना प्रयोजन लक्षना कहूँ कोई नही है सकै है। जितने सब्द लाक्षनिक है सबमे ते व्यग कढ़ै है। बिना व्यग लक्षना होय ही नही। सूधो मार्ग छोड़ टेढो जो चलानो सो काहू प्रयोजन के लिये ही है। चमत्कार की आधिक्यता के लियें वक्ता टेढ़ो वचन कहै। यसेंई सबल स्थान मे हम प्रयोजन दिखावेंगे। सब ही लक्षना प्रयोजनवती हैं।[१]

आगे चलकर अधिकाधिक गद्य का आश्रय लिया गया। रस कुसुमाकार ने तो पूरे लक्षण ही गद्य मे लिखे। गद्य के विकास ने शास्त्र के क्षेत्र मे युगान्तर सा उपस्थित कर दिया।

भाषा और प्रतिपाद्य में परिवर्तन के सकेत यद्यपि भारत मे अँग्रेजी फ्रांसीसी आदि विदेशी जातियो के चरण अठारहवी शताब्दी के आरम्भ से ही पड चुके थे, और १७५७ ई० मे पलासी के युद्ध ने भविष्य के दुर्भाग्य का सकेत दे दिया था। उन्नीसवी शताब्दी के मध्य (१८५७ ई० तक) अँग्रेजी सत्ता प्राय समूचे भारत पर छा चुकी थी। परन्तु हमारे इन हिंदी कवियो की रूढिबद्ध विचारधारा नये आयामों मे झाकने का नाम तक न लेती थी। अत पतनकालीन छोटे बडे सामन्त साहूकारो के आश्रय मे प्राचीन विषय और प्राचीन शैलियो की ही पुनरावृत्ति होती रही। क्रम इस शताब्दी के मध्य तक चलता रहा, परन्तु रीति के अतिम पचास वर्षों मे नूतनता के कुछ हलके छोटे छाप धरा पर दिखाई दिये।

पद्माकर ने दौलतराव सिंधिया की प्रशस्ति मे प्रथमबार अपने सकुचित क्षेत्र से बाहर निकलकर फिरगियो को दबाने, 'कलकत्ता' के 'लत्ता' उडाने आदि की बात कही।

मीनागढ बम्बई सुमद मदराज बग, बदर को बद कर बदर बसावगो।
कह पद्माकर कसकि कसमीर हू को पिंजर सो घेरि कै कलिंजर छुडावैगो॥
बाका नृप दौलत अलीजा महाराज कबो, साजिदल पकरि फिरगिन दबावगो।
दिल्ली दहपति, पटना हू को झपटि करि, कबहू लत्ता कलकत्ता के उडावगो॥[२]

---

१ साहित्यानन्द—ग्वाल कवि ११।२६।
२ हि० सा० का इतिहास आ० रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ २६४।

इससे कुछ पूर्व घनश्याम शुक्ल ने ईस्ट इण्डिया की सेना पर दलेलखाँ की विजय का रूप इस छन्द में प्रकट किया था।

प्रबल पठान तू दलेलखान बलवान, दच्छिन तें दलहिं ज्यायो मानों हासी स ।
बाँकुरो बहादुर बलीन बीर बरछी न मारहिं बचायो है बिलायत निवासी त ॥
कहै घनश्याम युद्ध कौं हौं मेघनाद जैसे गरुड गोविन्दहिं छडा।ौ नागफासी स ।
कुमदान कपनी कुम्हेडा कैसी से काटि,काढ़ि लायो कारहिं कृपान करिकासीन ॥[1]

पटियाला राज्याश्रित चन्द्रशेखर वाजपेयी के काव्य में भी एक नई सचेष्टा का पुट दिखाई दिया।

कंचन रचित राज नूपुर, अनूप पैरों, बाजे बज्र भूपर मनोज अंग्रेज के ।[2]

वर्ण्य विषय सन् १८५७ ई० के प्रथम स्वाधीनता संग्राम की पहली झलक तत्कालीन हिन्दी साहित्य में दृष्टिगोचर हुई। यह कहना कि हिन्दी का कवि तत्कालीन समाज के सुख दुख का सहयोगी नहीं था और वह अपने वर्तमान से कटा हुआ शृङ्गार कविता में लीन था, कुछ अनुचित होगा। यह तथाकथित गदर तत्कालीन कविता का तत्कालीन विषय बना।

सेवक कवि (सं० १८७२-१८३८ वि०) ने अपने ग्रंथ वाग्विलास' में इस विद्रोह से सम्बन्धित अपने आश्रयदाता हरिशंकर सिंह और गौरीशंकर-सिंह की अंग्रेजों की सहायता का वर्णन किया है। इन्होंने अंग्रेजों की पूरी सहायता की और प्रमाण-पत्र पाये थे।

> पुनतहिं या विधि कौ समर खुसी भये अंग्रेज ।
> मिलत सारटीफिकट हू दोहों सहित मजेज ॥[3]

एक अन्य कवि रसराज बाबू बिहारीसिंह ने अपने भारतेश्वरी भूषण' में अंग्रेजों की विशेषताओं पर प्रकाश डाला—

> गदर अमीम गुबार उठ्यो सत्तावन मे सिगरे अगजानी ।
> कैते अनीति अनीति कियो सब हिन्द प्रजा हिय मे भय मानो ॥
> त्योंही बिहारी लियो कर सासन मेटी प्रजा दुख लेमि सयानी ।
> जैहि ऐसो विचार असीसैं सब चिरजीवो सदा विक्टोरिया रानी ॥[4]

---

१ उन्नीसवीं शताब्दी डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय पृष्ठ २१।
२ नखशिख चन्द्र शेखर बाजपेई।
३ उन्नीसवीं शताब्दी डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृष्ठ १५३।
४ वही पृष्ठ १५३-१५४।

कवि दुलारे ने बैसवाड़े के राजा बनी माधवबक्श सिंह के पराक्रम की प्रशस्ति में लिखा—

> अवध माँ राना है मरदाना ।
> पहिल लड़ाई मे बक्सर मो सेमरी के मैदाना ।
> उहाँ का कूँच भयो पुरवा को तब लाट घबराना ।।
> भाय भतीज सबै बुलवाया हमरो लेउ सलाना ।
> तुम तौ जाय अगरजन मिलिहौ हमहू का भगवाना ।।[1]

बजरंग ब्रह्मभट्ट का यह छन्द भी अवलोकनीय है—

> हिम्मत की हाकिम हजारन में देखि आयो खेदिक हटायो अग्रेज हू सकाना है ।
> जाको तेज तीखन सपत महिमण्डल मे हरिते उलूक से न लागत ठिकाना है ।।
> कहै बजरंग बस अवतर भयो कपनी विलायत सकल बिल लाना है ।
> नैक न डराना छीन लीनो तो परवाना वीर वांधे धीरवाना बसे राना मरदाना है ।।[2]

ज्वालराय भी विद्रोह के समय उपस्थित थे । वे लिखते हैं—

> चंडिका के चेले बस सबल है अकेले फौजैं,
> आयो लीना घेरि गोला खूब ही बजायो है ।
> मारे जरनेल औ कडनल को कद कियो,
> मारे कप्तान गोरा खेट ही चढ़ायो है ।।
> राजन मे राजा महाराजा बनी माधो बक्स,
> लड़ी है लड़ाई अग्रेज चढ़ि आयो है ।
> कहत कवि ज्वालाराय राजन को काम को तो
> बिना अन्न पानी गोला खूब ही बजायो है ।।[3]

कवि सीतलदास ने सं० १८६८ के लगभग खड़ी बोली में 'ईसा' शब्द का प्रयोग करते हुए प्रगतिशील विचार प्रकट किये—

> दुनी की दौलत मिली तुझे, पर तेरा दिल न उदार रहा ।
> तू 'ईसा' हुआ जमाने का, यह दरदमंद बीमार रहा ।।[4]

ग्वाल ने स्वप्रणीत रचना 'विजय विनोद' और इश्क लहर दरयाव में फिरंगियों आदि की प्रासंगिक चर्चा की है । इसी प्रकार मिर्जा के दमो

---

१ वही पृष्ठ १२६ ।
२ वही पृष्ठ १२६ ।
३ वही पृष्ठ १२७ ।
४ उन्नीसवीं शताब्दी डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय पृष्ठ २१ ।

श गार ग्रथों की टीकाएँ   हिन्दी साहित्य मे संस्कृत और हिन्दो क वा य ग्रथो की टीकायें लिखने की परिपाटी प्राचीन काल से ही रही है। बलभद्र के नख शिख पर कई टीकायें उपलब्ध होती हैं। बिहारी की सतसई पर टीकाओ की संख्या सर्वाधिक है। आलोच्य काल म भी निम्नांकित ग्रथ कारो ने टीकाएँ लिखी— श्रीपाल, खजूरी, सुलतानपुर (स० १८४४ वि०) अयोध्या प्रसाद स० १६२० वि० शुभकरन तथा कमल नयन स० १८८५ वि० गंगाधर स० १६०६ वि० गणपति भारती स० १८६० वि० गदाधर भट्ट र० स० अज्ञात गिरिधर र० स० अज्ञात महन्त जानकी दास स० १८२७ वि० ठाकुर कवि स० १८६१ वि० दलवीन दन स० १८६१ प्रभुदयाल पाडे स० १८४३ ई०, प्रतापसाहि स० १८८६ वि० मानुप्रताप तिवारी स० १८६० वि० भावकभाव जी स० १८२६ वि० रणछोड कवि स० १८६५ वि० रामचन्द्र स० १८०४ वि० रामबख्श कवि स० १८०६ के लगभग लल्लू लाल स० १८७२ वि० सरदार कवि स० १८२१ वि० जुल्फकार खा स० १८०३ वि० साहबजादे बाबा समर सिह स० १६५५ वि० भारते दु बाबू हरि चन्द्र, ईश्वर कवि स० १८६१ वि० बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकर स० १६५३ वि०।[1] प्रतापसाहि ने मतिराम के रसराज और बलभद्र के नखशिख पर टीकाए लिखी।

फारसी मिश्र भाषा की प्रवृत्ति   आलोच्य काल के उत्तरार्द्ध म रीति कवियो की कविता की भाषा अत्यन्त फारसी मिश्र होन लगी। यो फारसी के शब्दो को इससे पहले भी रीति कविता म विस्तारपूर्वक सम्मान मिला, पर कवि उनको व्रज भाषा म खपाने मे विकृत कर लेत थे। अब छन्दो मे फारसी की अनेक पक्तिया मणि काचन शैली म अपने तत्सम रूप म ही स्थान पान लगी।

हफीजुल्ला खा   हाफिज' न हिन्दी की एक पक्ति क साथ फारसी की दूसरी पक्तिया इस प्रकार लिखी

सांझ सम घर ते निकसी सब सखि यन साथ वह सांवरी सूरत
रञ्जो नाज नमूदनम बेताब इदम अफ्जूद कुदूरत ॥
मुसिक्याय क मो तन हेरि दियो तिरछी अखिया चितवन की मरोरत ।
होशम रफ्त न मु बदस्त शुदह दिलमस्त जिदी दिने सूरत ॥[2]

---

१ व्रजभाषा रीतिशास्त्र ग्रथ कोश प० जवाहरलाल चतुर्वेदी तथा पुस्तक साहित्य, डा० माताप्रसाद गुप्त।

२ नवीन सग्रह हफीजुल्ला खा 'हाफिज' नवलकिशोर प्रस, लखनऊ।

तृतीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के काव्य पर इतर साहित्य का प्रभाव

३ | उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य पर इतर साहित्य का प्रभाव

हिंदीतर साहित्यों की परिकल्पना करते समय संस्कृत का साहित्य सर्वप्रथम हमारे समक्ष आता है। संस्कृत ने हिंदी साहित्य को आद्यन्त प्रभावित किया है। यह स्वाभाविक है क्योंकि साहित्य का मूल स्रोत समग्रत देव-भाषा-साहित्य है। जब संस्कृत साहित्य की चर्चा म वदिक साहित्य को नहीं भुलाया जा सकता। भारतीय साहित्य का मूल वेदो म और शाखा प्रशाखायें संस्कृत साहित्य म हैं। भावना म वदिक साहित्य धार्मिक और संस्कृत साहित्य लौकिक है। पर प्रकृतित संस्कृत साहित्य का भरणपोषण वदिक साहित्य से हुआ है। अत पूर्व के अभाव मे उपर का अस्तित्व कल्पनीय है। संस्कृत के दशन, स्मृति पुराण ज्ञान का प्रकाश यत्र तत्र हिंदी साहित्य मे भी परिलक्षित है हिंदी के जायसी कबीर आदि ज्ञानमार्गी साहित्यकारो की विचारधाराएँ उपनिषदों की छाया म ही पली प्रतीत होती है भले ही यह छाया उनको मौलिक पद्धति या मौखिक परम्परा किसी भी प्रकार प्राप्त हुई हो। कबीर आदि ने स्वय वदिक साहित्य पढा था यह कहना तो अधिक युक्तियुक्त न होगा परन्तु मौखिक परम्परा द्वारा वे उपकृत अवश्य रहे होंगे।

संस्कृत साहित्य की परिधि म आयुर्वेद, ज्योतिष, स्मृति, पुराण, तन्त्र, सूत्र महाकाव्य गीतिकाव्य नीति शास्त्र, शिक्षा और काव्य शास्त्रादि सभी आते हैं। एतद्विषयक समस्त हिंदी ग्रन्थ संस्कृत साहित्य स ही प्रेरित, पोषित अथवा प्रभावित है। यह प्रेरणा, पोषण और प्रभाव दो प्रकार का है। कहीं हमें हिंदी पर संस्कृत का आकृतिमूलक और कहीं सिद्धान्त मूलक प्रभाव दृष्टि गोचर होता है। हिंदी के रूप और शाखाओं पर संस्कृत का आकृति मूलक प्रभाव है कथाओ और घटनाओं पर विस्तार मूलक प्रभाव की मुद्रा दीख पडती है और धर्म दशन एव काव्य विधान की पद्धति पर सिद्धान्त मूलक प्रभाव का साक्षात्कार होता है। सिद्धान्त प्रभाव के अन्तगत सदाचार वराग्य, मनोवृत्ति योग प्रवाह भक्ति, दाशनिक विचार एव काव्य शास्त्र का समावेश हो जाता है।[१] हिंदी ग्रन्थो के नामो की प्रेरणा के स्रोत म भी संस्कृत साहित्य दिखता

---

१ हिंदी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव डा० सरनामसिंह शर्मा 'अरुण' १९५२, इलाहाबाद भूमिका पृष्ठ क'।

है। सस्कृत के हिन्दी अनुवादों ने हिन्दी को पोषित किया। हिन्दी साहित्य पर यह अनुवाद प्रभाव कई प्रकार से पडा है — १) मूल कृतियो के अनुवादों म, (२) मूल सस्कृत ग्रन्थो के अध्ययन से तथा (३) मौखिक परम्परा। यद्यपि अनुवाद मूल ग्रन्थ के अधिक समीप होते हैं पर तु अनुवादक का व्यक्तित्व उसम समाविष्ट हो जाता है। अनुवाद कितना भी सफल हो फिर भी मूल मूल ही है। अनुवाद का अपनी प्रभाव सीमाएं होती हैं। अत यह प्रभाव शुद्धतम नहीं कहा जा सकता। मूल ग्रन्थ के अध्ययन से पडा प्रभाव पर्याप्त शुद्ध और मौलिक कहा जा सकता है। यह प्रभाव दो श्रेणियो म रखा जा सकता है शुद्ध और मिश्रित। डा० सरनाम सिंह शर्मा मूल के विनियोग से हिन्दी तक आये प्रभाव को भी मौलिक की ही श्रेणी मे रखने के पक्ष म हैं।[1] परन्तु यथार्थत मूल ग्रन्थो का अध्ययन प्रभाव ही शुद्ध कहलाने का अधिकारी है। मूल ग्रन्थ के मौखिक प्रभाव को मिश्रित ही कहा जायगा। परम्परागत प्रभाव म मौलिकता का ह्रास सन्निहित रहता है। हिन्दी के सभी रीति कालीन कवियों ने मौखिक रूप म सस्कृत का प्रभाव ग्रहण किया यह तो निश्चित नही। अधिकाश रीति आचाय और कवि विद्वान् थे, जिनसे गुरु चरणो म बठकर सस्कृत के काव्यशास्त्र वाङ्मय का पारायण हो सका था यह प्रामाणिक रूप से नहीं कहा जा सकता। उन म भी मिश्रित प्रभाव की न्यूनाधिक मात्रा अवश्य रही होगी ऐसा विश्वास किया जा सकता है। जो भी हो, यह निश्चित है कि हिन्दीतर साहित्यो म सस्कृत साहित्य का प्रभाव सर्वाधिक मात्रा म पडा। अत यह आवश्यक होगा कि सस्कृत साहित्य पर एक विहगम दृष्टिपात कर लिया जाय।

काव्य शास्त्र राजशेखर ने काव्यमीमासा म काव्यशास्त्र की उत्पत्ति सरस्वती पुत्र काव्य पुरुष के द्वारा हुई बताई है। काव्य पुरुष ने अपने १७ मानस पुत्रो को इस का व्याख्यान किया और शिष्यो ने काव्यशास्त्र को १७ अधिकरणो मे विभक्त करके अपने अपने विषयो पर स्वतन्त्र ग्रन्थ लिख।[2] परन्तु यह मत विद्वानो को मान्य नही है। काव्यशास्त्र का वास्तविक आरम्भ दशन और व्याकरण के मूल ग्रन्थो के बहुत बाद ईसा की पहली पाच शताब्दियो म हुआ माना जाता है। भरत के 'नाट्य शास्त्र' का मूल रूप तो स्पष्टत

१ वही पृष्ठ ७ मूल के विनियोग से जो प्रभाव हिन्दी तक आया है उसे मौलिक ही कहना चाहिए डा० सरनाम सिंह शर्मा।

२ हि० सा० वृ० इतिहास षष्ठ भाग, स० ले० डा० नगेन्द्र, पृष्ठ ३१।

इसी काल की आरंभिक रचना है।[1]इसके पश्चात काव्य शास्त्र निरंतर विकसित होता गया। इसमें आगे चलकर पांच सम्प्रदाय विशेषकर प्रसिद्ध हुए—(१) रस सम्प्रदाय, (२) अलंकार सम्प्रदाय (३) रीति सम्प्रदाय, (४) वक्रोक्ति सम्प्रदाय और (५) ध्वनिसम्प्रदाय।

'नाट्य शास्त्र' का प्रधान विषय नाट्य है। परवर्ती काव्य शास्त्र के सम्पूर्ण विकास का यही मूलाधार है। इसमें रस की प्रधानता है अलंकार भी गौण रूप से है। अलंकारों को महत्त्व प्रदान करने वाले भामह सातवीं विक्रमी शताब्दी में हुए भामह का 'काव्यालंकार' ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। दंडी ने काव्यादर्श की रचना की, जिसमें भामह की भांति अलंकारों को प्रधानता तो दी गई परन्तु रीति, गुण आदि की अनिवार्यता भी स्वीकार की गई। परन्तु दंडी का अलंकार स्वरूप उनके परवर्ती आचार्यों को मान्य न हुआ। आठवीं विक्रमी शताब्दी में उद्भट ने भामह का अनुगमन किया। तत्पश्चात वामन ने रीति सम्प्रदाय का प्रवर्त्तन किया, जिसमें इन्होंने रीति को 'विशिष्ट पद रचना' और 'काव्यात्मा' भी माना। यह भी परवर्ती आचार्यों को अमान्य रहा। रुद्रट अलंकारवादी आचार्य हुए। विक्रम की नवीं शताब्दी में लगभग किसी अज्ञातनामा आचार्य ने काव्य में ध्वनिवाद का प्रवर्तन किया। परन्तु इसके वास्तविक प्रतिपादक और पुष्टपोषक आचार्य आनंदवर्धन माने जाते हैं, जिन्होंने 'ध्वन्यालोक' की रचना की। ये ध्वनि को ही काव्य की आत्मा मानते थे। आचार्य अभिनव गुप्त ने इन्हीं का अनुसरण किया। इससे रस वाद, अलंकारवाद और रीतिवाद निष्प्रभ हो गये। विक्रम की दसवीं शताब्दी में राजशेखर ने 'काव्य मीमांसा' की रचना करके काव्य शास्त्र को नये मोड़ दिए। इन्होंने अपने ग्रंथ में सभी काव्यांगों की विशद विवेचना प्रस्तुत की। धनंजय ने दशरूपक' में नाट्य शास्त्र का निरूपण किया। कुन्तक ने वक्रोक्ति जीवितम्' लिखकर ध्वनि सिद्धांत का विरोध और वक्रोक्ति को महत्त्व दिया। मम्मट ने काव्य प्रकाश' में काव्य के विविध सिद्धान्तों का समन्वय करने की चेष्टा की। बारहवीं शताब्दी में रुय्यक ने अलंकारवाद को पुनर्जीवित किया। जयदेव ने 'चन्द्रालोक' लिखकर अलंकारों की विस्तृत व्याख्या की, चन्द्रालोक के पंचम मयूखान्तर्गत वर्णित अलंकारों पर अप्पय दीक्षित ने 'कुवलयानन्द' की रचना की। चौदहवीं शताब्दी में विश्वनाथ ने 'साहित्य दर्पण' लिखा जिसमें भामह की भांति काव्य के विविधांगों की विस्तृत विवेचना हुई। पण्डितराज

---

१ वही पृष्ठ ३३।

इस शास्त्र के सिद्धान्त गोपनीय रखे जाते हैं। 'आगम तत्व विलास' और 'वाराही तन्त्र' प्रसिद्ध तन्त्रग्रन्थ हैं। जैमिनि, कपिल, नारद, गर्ग, पुलस्त्य, भृगु, शुक्र, बृहस्पति आदि ऋषियों ने भी कई उपतन्त्र रचे थे।[१]

तन्त्रों के तीन प्रमुख विभाग हैं—ब्राह्मण तन्त्र, बौद्ध तन्त्र और जैन तन्त्र। ब्राह्मण तन्त्र तीन प्रकार के हैं १ वैष्णवागम, २ शैवागम ३ शाक्तागम जिनमें क्रमशः विष्णु, शिव तथा शक्ति की परा देवता रूप से उपासना निहित है।[२] रीति काव्य में मिलने वाली भक्ति की क्षीण धारा पर वैष्णव तन्त्रों का परोक्ष प्रभाव परिलक्षित होता है।

महाकाव्य —वाल्मीकि रामायण संस्कृत का प्रथम महाकाव्य है। संस्कृत में महाकाव्यों के चार वर्ग माने गये हैं १ महाभारत वर्ग, २ रामायण वर्ग ३ मिश्रवर्ग और ४ अवैदिक वर्ग। प्रथम वर्ग के महाकाव्यों में किरातार्जुनीय, शिशुपाल वध, नैषधचरित और नलोदय प्रमुख हैं। द्वितीय वर्ग में रघुवंश और रावणवध विशेषतः उल्लेख्य हैं। मिश्रवर्ग के महाकाव्यों में राघव पाण्डवीय प्रमुख है। अवैदिकों में बुद्ध-चरित सौन्दरानन्द और यशोधरा-चरित हैं।

इन महाकाव्यों का प्रभाव हिन्दी रीति काव्य पर विरलतम है। केवल भक्ति की कतिपय रचनाओं में प्रसंग चर्चा हुई है। पद्माकर ने वाल्मीकि रामायण का भाषानुवाद 'राम रसायन' नाम से किया। रसिक गोविंद ने रामायण सूचनिका लिखी। इस युग में महाभारत के भी कई अनुवाद हुए।[३]

स्फुट काव्य—संस्कृत में तीन प्रकार की स्फुट काव्य रचनाएं मिलती हैं १ धार्मिक २ शृंगारिक, ३ नीति तथा शिक्षा विषयक।

धार्मिक काव्य—इसके अन्तर्गत दो प्रकार के काव्य रचे गये १ भक्तिकाव्य, २ वैराग्य काव्य। प्रसिद्ध भक्ति काव्यों के नाम हैं–स्तुति कुसुमाञ्जलि चण्डीशतक दुर्गासप्तशती सूर्यशतक देवीशतक मुकुन्दमाला सरस्वती स्तोत्रावलि शिवापराधक्षमापण स्तोत्र मंगलाष्टक महिम्न स्तोत्र, पंचस्तवी आनन्द लहरी, शिवस्तोत्र, शिव ताण्डव स्तोत्र गंगा लहरी, विष्णु सहस्रनाम, देवी माहात्म्य आदि। वैराग्य विषयक में योग वाशिष्ठ और वैराग्य शतक ही अधिक प्रसिद्ध हैं।

---

१ वही, पृष्ठ ४८३।

२ भारतीय दर्शन बलदेव उपाध्याय प्र० सं० १९४२ ई०, पृ० ५३८।

३ देखिये इस प्रबन्ध का द्वितीय प्रकरण अनूदित काव्य प्रसंग।

श्रृंगारिक काव्य—इन काव्यों का प्रधान विषय प्रेम और सौंदर्य है इन की रचनाओं में शृंगार तिलक, शृंगार शतक, अमरुकशतक, गीत गोविंद चौर पंचाशिका, ऋतु संहार, घट कर्पर, मेघदूत, आर्यासप्तशती, आदि के नाम आते हैं।

नीति तथा शिक्षा ग्रन्थ—इन ग्रंथों के वर्ण्य विषय मानव धर्म, नीति, राजनीति और शिक्षा आदि हैं। इस में प्रमुख ग्रंथ हैं नीतिशतक, उपदेशशतक हितोपदेश, पंचतन्त्र, चारुचर्याशतक, नीति मंजरी, मुग्धोपदेश, नीति रत्न, सुभाषित रत्न भंडागारम् राजनीति समुच्चय, साधन दीपिका, राजेन्द्र कर्णपूर, चाणक्य नीति, चाणक्य राजनीति आदि। चौरपंचाशिका, सिंहासन द्वात्रिंशति, बेताल पंचविंशति कृष्णाष्टक, राधाष्टक, रामाष्टक, दुर्गाष्टक, गोप्याष्टक आदि कुछ स्फुट मुक्तक ग्रंथ भी संस्कृत में हैं।

रीतिकाल का नीति और भक्ति साहित्य इन ग्रंथों से आशातीत रूप से प्रभावित है। आलोच्यकाल के सभी रीति कवियों ने धर्म शृंगार, नीति तथा वैराग्य का वर्णन किया है।[१]

दर्शन साहित्य—जिस शास्त्र में वस्तु का सत्यभूत तात्त्विक स्वरूप निरूपण होता है, उसे दर्शन की संज्ञा दी गई है। भारतीय दर्शन का मूलस्रोत वैदिक साहित्य है। दर्शन की चौदह विद्याओं में गणना है। वेद के उपांग न्याय और मीमांसा दर्शन के ही अंग हैं।[२] वेदोक्त परलोकों के मानने वाले व्यक्ति आस्तिक और न मानने वाले नास्तिक कहलाते हैं।[३] इन्हीं के अनुसार आस्तिक और नास्तिक दो प्रकार के दर्शन शास्त्र बताये गये हैं। चार्वाक माध्यमिक, योगाचार, सौत्रान्तिक, वैभाषिक और आर्हत् ये छः नास्तिक दर्शन हैं वैशेषिक न्याय सांख्य, योगपूर्व मीमांसा और वेदान्त ये छः आस्तिक दर्शन हैं।[४] नास्तिक दर्शन का रीतिकालीन साहित्य से कोई सम्बन्ध नहीं। वेदान्त योग और सांख्य ये तीन हमारे साहित्य को प्रभावित करते हैं।

हिन्दी के भक्ति काव्य पर वेदान्त का अधिकतम प्रभाव है। द्वैतवाद अद्वैतवाद और विशिष्टा द्वैतवाद के आधार पर भारत में विभिन्न मत और सम्प्रदाय प्रवर्तित हुए। जीव माया और ब्रह्म को लेकर खंडन मंडन भी हुए इन सभी की हिन्दी साहित्य पर गहरी छाप है।

---

१ वही द्वितीय प्रकरण, भक्ति, वैराग्य और नीति कथन प्रसंग।
२ हिन्दुत्व रामदास गौड पृष्ठ ५०३।
३ नास्ति वेदोदितोलोक इति येषां मतिः स्थिरा।
नास्तिकास्ते तथास्तीति मतिर्येषांत आस्तिकाः॥ वही, पृष्ठ ५०४
४ वही पृष्ठ ५०४।

शकर-मत अद्व तवाद का पोषक है। रामानुजीय मत विशिष्टाद्व तवादी है। मध्वाचाय ■ तवादी हैं। भक्ति के क्षेत्र मे इही मतो को लेकर कतिपय सम्प्रदायो का उदय हुआ। रसिक गोविंद, ग्वाल, हरदव, गोपालराय आदि रीतिकालीन कवि किसी न किसी सम्प्रदाय विशेष से सम्बधित थे। उन के का या म इन सम्प्रदायो और मतो के सिद्धातो की क्षीण सी रेखायें अवश्यमेव दिखती हैं। ये सभी राधाकृष्ण के उपासक थे, उन पर लिखे काव्यो म विशेषकर वैराग्य विषयक कविताओ म वेदात की झलक मारती है।

रीति का य म नाटक और कथा साहित्य नही रचा गया।

रीति साहित्य पर सस्कृत का प्रभाव सस्कृत साहित्य का सर्वाधिक प्रभाव रीति के का य शास्त्र पर पडा है। प्रभाव दृष्टि से रीतिबद्ध का या का दूसरा स्थान हो सकता है। तत्पश्चात भक्ति वराग्य, नीति और इतर विषय के ग्रथ आते हैं।

सस्कृत साहित्य शास्त्र परम्परा रीति के आचार्यों को उत्तराधिकार म प्राप्त हुई। यह भरत से आरम्भ होकर पडितराज जगनाथ के साथ समाप्त होती है। जहाँ यह ह्रासो मुखी हुई वही से हिन्दी रीतिकाल आरम्भ हुआ। उत्तर कालीन सस्कृत का य शास्त्र म तत्कालीन काव्य परिस्थितियो के अनुकूल वण्य विषय और विस्तार था। रीति कविता राज्याश्रय मे पली थी। आश्रयदाताओ की रुचि शृङ्गारिक थी दरबारो म कवि कलाकार, चित्रकार, सगीतकार आदि रहत थे। अत इन कवियो को एसे विषयो की आवश्यकता थी जिससे वे पडितो और दरबारियो को प्रभावित और प्रसन्न करके धन और यश अर्जित कर सकें। आश्रयदाताओ को भी लुभा सकें और रसभजना का भी मुग्ध कर सकें। अधिकाश आश्रयदाता ऐसे कवियो को चाहत थ, जो शृङ्गार रस निष्पन्न करके उन्हें रिझा सकें उनका गुण स्तवन करके उनके अह की तुष्टि कर सकें हाला, प्याला और 'तान तुक ताला' का वातावरण चित्रायित कर सकें। सयोग से सस्कृत साहित्य का शृङ्गार वणन नायिका भेद वणन, नखशिख वणन आदि इन कवियो को हस्तामलकवत् प्राप्त हो गये। सस्कृत साहित्य के इस ऋण को स्वय रीति कवियो ने स्पष्ट शब्दो म स्वीकार किया है। कुछ कवियो की आभारोक्तियाँ निम्नांकित हैं

१ मम्मट मत को सार ल, कछुक आपने वित्त।
साहित सिरोमनि ग्रथ मे बाधे उक्त कवित्त॥
मम्मट मत जे काव्य के कछू पदारथ कीह।
ग्रथ बाध पूरा कियो, कवि निहाल मतिहीन॥

—साहित्य सिरोमणि निहाल।

२ कांतिमान ससि हो तो कीरति मान।
यह कुवलयानंद मत कहं विधान ॥२२१॥
और काज आरम्भ करि और ओर।
चंद्रालोक लिखे इमि कवि सिरमौर ॥२६८॥
प्रगट अथ फिर साधे, विधि कहि मोइ।
कहि कुवलयानंद काव्य मनहोइ ॥३७५॥
—साहित्य सुधानिधि, जगतसिंह।

३ नील कमल लीला तय वरनें नैन।
चंद्रालोक देवे इमि कहि ऐन ॥१६१॥
चंद्रालोक आदि दे भाषाकोन।
कहि साहित्य सुधानिधि वरवैबोन ॥ १० ॥
क्षीर जलधि मथ पंकज यो कहि मेव।
चंद्रालोक लिखो कवि श्रीजयदेव ॥ ४६ ॥
कुवलयानंद चंद्रालोक के मत कह्यो, लुप्ता ये आठो आठो पहर बखानिये।
परतच्छ प्रमुख प्रमान आठो अलंकार, कुवलयानंद बखाने जग जानिये ॥
—कवि कुल कंठाभरण, दूलह कवि।

४ लखि गति चंद्रालोक अरु काव्य प्रकास सुदीप्त।
औरो भाषा ग्रंथ बहु, ताको सगत गीत ॥
—काव्य रत्नाकर रणधीर सिंह।

५ रसिक कुवलयानंद लखि, अस मन हरस बढ़ाई।
अलंकार चंद्रोदयहि, बरनतु हिय हुलसाई ॥४॥
तिन मधि कुवलयानंद मत, अपनो कियो उद्योग।
अलंकार चंद्रोदय सु निरस्यो लिखिवे जोग ॥१८७॥
—अलंकार चंद्रोदय, रसिक सुमति।

६ अथ कुवलयानंद को वाच्यो दलपतिराय।
वंसीधर कवि न घरयो कहूँ कवित्त वनाइ ॥३॥
तदपि अलंकृत ग्रंथ को, काहू कवि नहिं कीन।
भाषा भूषण है जऊ कहूंक लक्षन हीन ॥६॥
याते ताहि सुधारि कें देखि कुवलयानंद।
अलंकार रत्नाकर जु किय कवि आनंद कंद ॥७॥
—अलंकार रत्नाकर, दलपतिराय।

७ व्यंग अरथ अति से कठिन, को कहि पावै पार।
मम्मट मत कछु समुझि चित, कीनो मति अनुसार॥
—व्यंगार्थ कौमुदी, प्रतापसाहि।

८ याते काव्य प्रदीप की, और कुवलयानंद।
ऊपर सु ग्रंथ अनेक लखि, जे अति भये पसंद॥
—वाणी भूषण रामसहाय दास।

९ सम्मत काव्य प्रकास को और कुवलयानंद।
चंद्रालोक लताकलप, चंद्रोदय सुभकंद॥
—तुलसी भूषण, रसरूप।

१० कुवलया चन्द्रालोक में, अलंकार के नाम।
तिनकी गति अवलोकि कै अलंकार कहिराम॥
—रघुनाथ अलंकार, सेवा दास।

११ ग्रन्थ संस्कृत देखि कैं, समुझि कविन को अर्थ।
तथा तथा ही मं कह्यौ, जनिहैं बुद्धि समर्थ॥
—काव्याभरण चन्दन।

१२ रूपक में अति व्याप्ति या, या लच्छन की जाति।
कह्यौ मे मायौ जु सो विख्यात ॥१६।६६॥
—साहित्यानन्द, ग्वाल।

अलंकार कितने कहै, कविप्रिया के माहि।
भाषा भूषन ते जुदे नाम लिये चित माहि॥१६।३८७॥ ,,
सो न जुदे करि आनिये, भाषा भूषन माहि।
किये विचार जु जातमिलि नामांतर ठहराइ॥१६।३८८॥
लपत कहू जु प्रहेलिका, अलंकार के माहि।
चंद्रालोकहु में नहीं काव्य प्रकास हु नाहि॥३८९॥,
चार सत लक्ष इन कहि लिये मम्मट जू।
सोई अब ज्यों के त्यों सुनावत हौं टेर टेर ॥१५।६८॥ ,,
कहि विभाव अनुभाव अरु, सात्विक पुन विचार।
इन करि इनकी पूनता सो रस भरत उचार॥४।२॥ ,
विभिचारी तंतीस ये, भाषे भरत प्रमान।
कोतिसम को भेद जो, सो अब करत बखान॥३।३०६॥ ,,
और कह्यो नूतन, सु दर छल संचारी जोद।
रस तरंगिनी कारने थापिन कीयो साइ॥३।३०७॥, ,,

ग्रंथ संस्कृत कोसुदक, रति रहस्य है नाम।

साहित्यानन्द, ग्वाल।

तामें लेप प्रमान यह, बरनत सब सुखधाम ॥४।३७॥
बातसायनो मूत्र मत, जाही के अनुसार।
कहियत है अब और हू, जाति भेद सुविचार ॥४।५४॥ ,, ,,
भानुदत्त ने जो लिखा, रस मंजरि के माहिं।
सो लक्षन अब लिखत हैं, हम दोस कछु नाहिं ॥४।६४॥ ,, ,,
रस मंजरि मे चय लिखे, स्वप्न, चित्र साक्षात।
भाषा म चौथो कहत, स्रवन दरस विख्यात ॥५।२८॥

—रसरंग, ग्वाल।

१३ छन्द वेद को अङ्ग है, कहं मुनिन के वृन्द।
याते पढियतु प्रात ही बरनें नाग फनिन्द ॥३॥

—छन्द पयोनिधि, हरदेव।

१४ जं जे पिंगल नाग, छन्द रीति जिन प्रगट किय।
तिहिं मत मति अति लाग, गद्य पद्य अभिधान किय ॥५॥

—पिंगल प्रकाश, नन्दकिशोर।

१५ व्यंग अर्थ अति ते कठिन, को कहि पावै पार।
मम्मट मत कछु समुझि चित, कीन्हो मति अनुसार ॥

—व्यंग्यार्थ कौमुदी, प्रतापसाहि।

संस्कृत ग्रन्थों के नामों का प्रभाव रीति ग्रन्थकारों ने अपनी रचनाओं के नाम अधिकांशतः संस्कृत के ग्रन्थों के आधार पर रखे। संस्कृत-नामों का प्रभाव कहीं तो समग्रतः और कहीं कम से कम छायारूप में हिन्दी में अवश्य दृष्टिगोचर होता है। निम्नलिखित ग्रन्थ नाम तालिका से यह स्पष्ट हो जायगा कि हिन्दी कवियों ने किस सीमा तक संस्कृत के नाम अंगीकृत किये।

वाणी भूषण (दामोदर मिश्र) प्रतापरुद्रयशोभूषण (विद्यानाथ) नन्दराज यशोभूषण (नृसिंह कवि) आदि। भूषणान्त ग्रन्थों के दृष्टव्य हैं—वाणी भूषण (रामसहाय दास) भारती भूषण (गिरधर दास) वनिता भूषण (गुलाबदास) महेश्वर भूषण (महेश्वर) रामचन्द्रभूषण (लछीराम) भारती भूषण (अर्जुनदास केडिया) रस भूषण (कृष्णलाल) आदि।

हुए यदि शिक्षा में सरल ग्रंथ ही तयार कर पाये थे।[1] आचाय रामचद्र शुक्ल के विचार हैं कि 'केशवदास क वणन म यह दिखाया जा चुका है कि उन्होंने सारी सामग्री कहाँ स ली। आगे होने वाले कवियों ने भी सार लक्षण और भेद संस्कृत की पुस्तकों से लेकर लिखे हैं, जो कहीं कहीं अपर्याप्त हैं। अपनी ओर से उन्होंने न तो अलकार क्षेत्र म मौलिक काम किया, न रस क्षत्र म।[2] ताराश है कि रीतिकवियों ने वण्य विषयो की सामग्री संस्कृत से ग्रहण की। कहना चाहिए कि हिन्दी रीति ग्र थ कई अर्थों म संस्कृत के ग्रंथो के छायानुवाद हैं। लक्षण समग्रत संस्कृत के और केवल उदाहरण उनके अपने हैं।

सद्धान्तिक प्रभाव जसा कि हम लिख चुके हैं हिन्दी म रस, अलकार और ध्वनि इन तीन ही सम्प्रदायो के सिद्धान्तों का अनुसरण हुआ। रीति और वक्रोक्ति सम्प्रदाय तो संस्कृत म मतप्राय हो चुके थ। अत हिन्दी म उनके अनुवतन का प्रश्न ही नहीं उठता। रीति क विविधांग विवेचन आचार्यों ने मम्मट का अनुसरण किया। मम्मट रस ध्वनिवादी थे।[3] डा० नगेन्द्र न कुलपति, श्रीपति भिखारीदास के साथ आलोच्यकाल के प्रतापसाहि का रस ध्वनिवादी[4] और बनी प्रवीन आदि आचार्यों और ठाकुर बोधा आदि रीति मुक्त कवियो को रसवादी,[5] ठहराया है। सभी बहुसख्यक अलकार ग्रन्थो के कर्त्ताओं को वे स्पष्ट अलकारवादी मानने के पक्ष म नहीं हैं क्यो कि उनके मत म न तो उन ग्रंथकारो न रस का तिरस्कार किया है, और न अलकार को ही काव्य का प्रमाण माना है।[6] डा० साहब ने वर्गीकरण के लिये यह सिद्धान्त बनाया है कि जिन्होंने अपने रस प्रेम का कोई विशिष्ट परिचय न दे कर केवल अलकार ग्रंथों का ही प्रणयन किया है उनको अलकार सम्प्रदाय स बाहर नहीं मान सकते।[7] वे जसवन्तसिंह (भाषा भूषणकार) के अनुयायियो ग्वाल आदि को स्पष्ट सिद्धान्त के अभाव मे भी अलकारवादी ही सकेतित करते हैं।[8] वास्तव मे इन तीनो वादो के अनुयायियो के मध्य कोई स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना भगीरथ प्रयत्न साध्य है। इसका कारण है कि इन

---

१ वही पृ० १६६–६७।
२ हि० सा० इतिहास—आचाय रामचद्र शुक्ल पृ० २२७।
३ रीति काव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र, पृ० १६९।
४ वही, १६६। ५ वही, १७०। ६ वही, १७१।
७ वही, १७१। ८ वही, १७१।

कवियो ने प्रथम कोई स्पष्ट सिद्धांत-कथन ही नही किया, दूसरे उसका परि-पोषक ग्रन्थ नही रचा। तीसरे प्राय सभी रीति कवि मूलत शृङ्गारी हैं, अत रसवादी हैं। प्रतापसाहि को ध्वनिवादी केवल उनकी 'व्यग्यार्थ कौमुदी' के आधार पर कहा गया है पर उन्होंने व्यग्य के माध्यम से रस का ही निरूपण किया है। ग्वाल को अलकारवादी कहा गया है, पर उन्होने भी निरूपण शृगार रस का ही किया है।[1] उधर ग्वाल ध्वनि को काव्य की आत्मा मानते हैं

सब्द अर्थ है सरीर सब्द अप्रभाग जानो,
अर्थ प्रिष्ट भाग यह भाग पहिचानिये।
व्यङ्ग धुनि जीव अतिस जे व्यङ्ग सोइ धुनि,
कहू व्यङ्ग कहूँ धुनि असे जीवन जानिये॥
ग्वाल कवि अद्भुत जुक्ति जे बसन बेस,
माधुरज आदि गुन गुन सन मानिये।
भूषन ते भूषन यों काव्य रूप कहियत,
अर्थ व्याधि वत्त कफ दोष दुख दानिये॥[2]

ऐसी दशा मे इनको भी ध्वनि रसवादी ही मानना समीचीन प्रतीत होता है। अस्तु। यहाँ हम केवल यह देखना है कि सस्कृत के सिद्धान्तो का रीति काव्य पर क्या प्रभाव पड़ा। अत हम उक्त विषय के विस्तार म नही जायेंगे।

रस सिद्धान्त का प्रभाव – रस' शब्द का प्रयोग वैदिक साहित्य से ही आरम्भ हो जाता है। 'शतपथ ब्राह्मण' म 'रसो वै मधु' कहा गया है। तैत्तरीय उपनिषद मे रसो वै स। रस ह्येवाय लब्ध्वानन्दी भवति। अर्थात् वह रसरूप है। इसलिये रस को पाकर, जहाँ कही रस मिलता है उसे प्राप्त कर, मनुष्य आन दमग्न हो जाता है।[3] परमात्मा रस है और रस चिदानन्द रूप है—'रस सार चिदानन्द प्रकाश।' सस्कृत काव्यशास्त्र म रस को काव्य की आत्मा माना गया। 'काव्य मीमासा' में राजशेखर ने रस को काव्य पुरुष की आत्मा माना है– शब्दार्थो ते शरीर सस्कृत मुख, प्राकृत बाहु उक्ति चरण, ... त वच रस आत्मा, रोमाणि छन्दासि।[4] ध्वनि के विरोधी

---

१ ग्वाल ने अपने साहित्यानन्द के षोडस स्कन्ध मे अलकार भ्रम भजन' शीर्षक से ४२६ दोहों म अलकार निरूपण किया। यह कोई पृथक ग्रन्थ नहीं है। विशेष परिचय इस प्रबन्ध के षष्ठ प्रकरण मे है।
२ साहित्यानन्द— १२।४, ग्वाल।
३ रस सिद्धान्त—डा० नगेन्द्र, पृ० ६।
४ हिन्दी साहित्य—द्वितीय खड, स० डा० धीरेन्द्र वर्मा पृ० ५४२।

आचार्यों ने भट्टलोल्लट, भट्टनायक, धनंजय, धनिक आदि ने भी रस को काव्य की आत्मा मान कर उसका महत्त्व प्रतिपादित किया। भोजराज की दृष्टि में रस-काव्य ही सर्वोपरि है। सरस्वती कण्ठाभरण में—

> वक्रोक्तिश्च रसोक्तिश्च स्वभावोक्तिश्च वाङ्मयम्।
> सर्वासु ग्राहिणी तासु रसोक्तिम् प्रति जानते॥[1]

लिखकर शृङ्गार प्रकाश में रस का दार्शनिक विवेचन प्रस्तुत करते हुए शृङ्गार को पूर्ण रस के रूप में स्वीकार किया है। 'शृङ्गार उत्कर्ष की ओर ले जाने वाला है—यत शृङ्गरीयते।'[2] आचार्य विश्वनाथ के अनुसार तो रसात्मक वाक्यम् काव्यम् ही है। संक्षेप में संस्कृत साहित्य में रस को परमात्मारूप, ब्रह्मानन्द सहोदर निज स्वरूपानन्द आदि कह कर उस को सर्वमान्यता प्रदान की गई। रसात्मक काव्य को सर्वोत्कृष्ट काव्य के रूप में प्रतिष्ठा हुई और हिन्दी के रस ग्रन्थों में इसका प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित हुआ।

रीति कवियों ने रस की निष्पत्ति के निरूपण में भरत के नाट्य शास्त्र के रस लक्षण को ही अनेक रूपों में परिभाषित किया। भरत का रस लक्षण है— तत्र विभावानुभाव व्यभिचारि संयोगाद्रस निष्पत्तिः।[3] साहित्य दर्पणकार ने भी इसी लक्षण को स्वीकार किया।[4]

आलोच्य काल के कवियों ने इन्हीं रस सिद्धान्तों का न्यूनाधिक अनुसरण करते हुए कहा —

> "कहि विभाव अनुभाव अरु सात्विक पुनि विचार।
> इन करि थिति की पूर्णता, सो रस भरत उचार॥
> चिदानन्द घन ब्रह्म सम, श्रुति हू करत उचार।
> सो रस द्वै विधि लौकिक-कछु, बहुरि अलौकिक धार॥
> —साहित्यानन्द, ग्वाल ४।९-४
>
> 'रस आनन्द स्वरूप है लिख्यो सुकवि सब धप।
> वही ४। १७।

---

१ सरस्वती कण्ठाभरण—भोजराज ५ ८।
२ हिन्दी साहित्य, द्वितीय खण्ड, डा० धीरेन्द्र सम्पादित पृ० ४४२।
३ नाट्य शास्त्र काव्य माला, ४२ पृ० [illegible] ४।
४ विभावे ना [illegible]

"लहि विभाव अनुभाव अरु संचारिन के संग।
वतमान थिरभाव जो, सो रस जान अभंग॥"
—रसिक विनोद चन्द्रशेखर वाजपेयी, ३८७।

संस्कृत के 'शृङ्ग हि मन्मथोद्भेद,'[1] के अनुसार हिन्दी में भी इसकी व्याख्या की गई।

शृङ्ग कहत प्राधान्य को, समतात आकार।
कहत रकार मनोज को, अक्षराथ उरधार॥३५॥
शृङ्ग, आर को संधि करि, होत सब्द शृङ्गार।
है प्रधानता असो विधि, जिहि मनोज को धार॥३६॥
—साहित्यानन्द ग्वाल, ४।३५-३६

यही नहीं संस्कृत की भाँति हिन्दी में भी शृङ्गार रसराज बना।

रसनि सार सिंगार रस, प्रेम सार सिंगार। —शब्द रसायन, देव।
भूलि कहत नव रस सुकवि, सकल मूल शृङ्गार॥
—भवानी विलास, ११० देव।

रस सिंगार के विष्णु प्रभु, याते प्रथम सिंगार॥३३॥
जसे विष्नु विख्यात है, सब देवन सिरताज।
तसे विष्नु प्रताप ते, है सिंगार रसराज॥३४॥
—वही ४।३३-३४।

ताहि कहत सिंगार हैं, सकल रसन को राव।
—बनी प्रवीन, नवरस तरंग।

नवरस में सिंगार रस, सिरे कहत सब कोइ।
—पद्माकर, जगत विनोद।

अलंकार सिद्धान्त का प्रभाव —अलंकार वादी संस्कृत आचार्यों की कुछ उक्तियाँ इस प्रकार हैं

अंगीकरोति य काव्यं शब्दार्थावनलंकृती।
असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलंकृती॥ —चन्द्रालोक, जयदेव।
काव्य शोभा करान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते।'—दण्डी काव्यादर्श।
काव्यशोभायाः कर्तारो धर्माः गुणाः। तदतिशयहेतवस्त्वलंकाराः।'
—काव्यालंकार, वामन।

अलंकारवादी बिना अलंकार के काव्य को अकल्पनीय समझते हैं। यही धारणा हिन्दी में भी है। देखिये—

---

१ साहित्य दर्पण—विश्वनाथ।

कविता वनिता रसभरी सुदर होइ सुलाख।
बिन भूषन नहिं भूषहीं यहै जगत की साख॥

—अलकार आशय, उत्तम चन्द भडारी।

सस्कृत म १०८ अलकार लिखे गये हैं। हिन्दी मे उन्हीं का अनुसरण किया गया।

ध्वनि सिद्धान्त का प्रभाव— ध्वनि को काव्य की आत्मा मानने वाले सम्प्रदाय के पृष्ठ पोषक और प्रवर्तक आनन्दवर्द्धन हुए जिन्होंने 'ध्वन्यालोक' मे लिखा

काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधय समाम्नातपूर्व
स्तस्याभाव जगदुरपरे भक्तिमाहुस्तमन्ये।
केचिद्वाचा स्थिति विषये तत्त्वमूचुस्तदीय
तेन ब्रूम सहृदयमन प्रीतये तत्स्वरूपम्॥
काव्यस्यात्मा स एवार्थ तथा चादि कवेपुरा।
क्रौंच द्वन्द्व वियोगोत्थ श्लोकत्वमागत॥[1]

हिन्दी मे भी ध्वनि काव्य की आत्मा मानी गई।

ध्यग जीव है कवित मे, शब्द अर्थ गति अग।
सोई उत्तम काव्य है, बरन ध्यग प्रसग॥[2]
ध्यग होय या होइ धुनि जामे भरौ प्रधान।
छद सु उत्तम काव्य को बरनत कवि गुनखान॥[3]

ध्वनि और ध्वनि के अगोपागो का प्राय ज्यो का त्यो सस्कृत के आधार पर हिन्दी म ग्रहण किया गया।

कहने की आवश्यकता नहीं कि नायिका भेदोपभेद रसभेद आदि के क्षेत्र म भी हिन्दी कवियो ने सस्कृत साहित्य का ही अनुसरण किया।

फारसी तथा उर्दू साहित्य का प्रभाव— सस्कृत के उपरान्त फारसी और उर्दू का हिन्दी रीति काव्य पर प्रभाव हुआ। रीति कविता का जन्म राज्य दरबारो म हुआ। अरबी और फारसी तत्कालीन शासको की भाषा थी और उर्दू लश्कर की भाषा बनी। उर्दू भाषा का जन्म हिन्दू और मुसलमानो सस्कृति म हुआ। यह जन्मी तो भारत म, पर इसका पोषण फारसी प्राय

१ ध्वन्यालोक, १।५।
२ ध्यगार्थ कौमुदी, प्रतापसाहि।
३ साहित्यानन्द, ग्वाल १२।१२।

द्वारा हुआ। वास्तव में यह पश्चिमी हिन्दी है, जिसमें फारसी के शब्दों की बहुलता है। प० अम्बिका प्रसाद बाजपेयी के अनुसार हिन्दी या हिन्दवी इसका प्राचीन नाम था। दक्खिनी भी इसी को कहते थे।[1] शनैः शनैः उर्दू का रूप फारसी से परिपुष्ट होता गया और यह पृथक भाषा बन गई। अब फारसी, हिन्दी और उर्दू तीनों भाषाओं में परस्पर विनिमय होने लगा। उर्दू एक प्रकार से फारसी लिपि में लिखी जाने वाली फारसी शब्द सम्पत्ति प्रधान हिन्दी ही थी।

शासकों की भाषा को हिन्दुओं द्वारा ग्रहण करना एक व्यावसायिक अनिवार्यता थी। मुसलमानी दरबारों में फारसी अरबी का ही बोलबाला था। अतः आजीविका के लिये हिन्दी कवियों को उस भाषा के बहिरंग गुणों को अंगीकृत करना आवश्यक था। हिन्दुओं ने इन विदेशी भाषाओं को पढ़ा भी और सम्पर्क से अपनाया भी। हिन्दी की अन्तरंग विशेषताओं—व्याकरण, लिपि आदि पर तो अरबी फारसी और उर्दू का कोई प्रभाव न पड़ सका, परन्तु उसके स्वभाव और चेतना में इनके साहित्यों ने अपनी स्थिति बनाली। यह समन्वय की ही प्रवृत्ति कही जायगी।

हिन्दी स्वभाव और चेतना पर प्रभाव—फारसी उच्छृंखल मनोभाव की भाषा है। इसमें अलंकरण की प्रवृत्ति का प्राधान्य है। बहिरंग जीवन के अधिकाधिक चित्रण में ही इसकी विशेषता निहित रही है। फारसी के ऐन्द्रिय तत्वों को अपना कर उर्दू परिपुष्ट हो गई। उसमें गुलो बुलबुल, शमा और परवाना, साकी और मयखाना इश्क और पैमाना आदि प्रतीकात्मक व्यंजनाएँ ऐन्द्रिय आधार पर घर कर चुकी थीं। मध्ययुगीन सूफी कवियों ने फारसी लिपि को अपना कर उर्दू में अपना साहित्य लिखकर एक परम्परा की ही स्थापना करदी थी। ये प्रेम गाथाकार कवि अपने 'माशूक' के सम्बन्ध में दूर की कौड़ी लाने के लिये जमीन और आसमान के कुलाबे मिलाते हुए

---

१ रिसाला उर्दू — अप्रेल १९२९, डा० शिवलाल जोशी द्वारा रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में पृ० २८२ पर 'हिन्दी या हिन्दवी इसी का कदीम तरीन नाम था। उर्दू और दक्खनी के लिये यह लफ्ज बिला तकल्लुफ इस्तेमाल होता था। गोया उर्दू, हिन्दी और दखनी एक ही जुबान के मुख्तलिफ नाम थे। इस जबान की शायरी रेख्ता कहलाती थी।' प० अम्बिका प्रसाद बाजपेयी द्वारा 'मीर अम्मन' की 'बागो-बहार' के दीबाचे से उद्धृत।

ग्वाल कवि' जिसने चलाया आफताब तिस
गोपिया सिखाती रफ्तार हरचद है।
चार सिर वाले के करिंदे है जिसी के
वही ब दे प महरबान नजरबुलन्द है ॥[1]
—ग्वाल।

इश्क चमन महबूब का वहा न जाव कोय।
जाव सो जीव नही, जिय सो बौरा होय ॥[2] —नागरीदास।
बाल बिथुरे परो प आ पडे हैं।
मानो अगर सो लटे लपेटे भुजग अडे हैं॥
अक्षर अतर सो तर है जिनसे सुमन झडे हैं।
मस्तूल के छके है जिय म रहे अडे हैं॥[3] —ब्रजनिधि।
जुगल वर अजीकी सबा कस कसे। फबे नील पीले पटा कसे कम॥
खुमारी न समझो है बीमार चश्म। झुक पडत हैं नातवा कस कस॥
पलक अबरओं से ही मरत हैं घायल। बनाय हैं तीरो कमा कैसे कसे ॥८॥[4]
—ललित किशोरी।

उन्नीसवी शताब्दी के हिंदी कवि हफीजुल्ला खा हाफिज (सवत् १९३६) का एक अरबी फारसी मिश्रित ब्रजभाषा का सवैया प्रस्तुत है—
काश्ता कहो मन को ये जिया, कछू अपने तन आप जराने परौ।
लखो बुजुग अकारिब राह मे देखि अत्यन्त लजाने परौ॥
तरी मुहब्बतो उल्फत मे हमे 'हाफिज हाथ बिकाने परौ।
दिल रफ्त जिदस्त न मुन्द बदस्त[5] अफसोस महापछितान परौ॥
—(हाफिज—नवीन सग्रह हफीजुल्ला खा। सन् १९२३ ई०

सूफियो के अद्वैतवाद की झलक उर्दू फारसी मिश्रित ग्वाल के निम्नाकित कवित्त म स्पष्टत दीखती है।
मक्का भी तिहारा सभी ठाकुर दुआरे तेरे,
दोजख क्या बहिश्त सब तराही सहारा है।
जिसे चाहे दोजख दे जिसे चाहे बहिश्त देवे,
मालिक मुलुक दोन दुनी का तू मारा है॥

---

१ कृष्णाष्टक ग्वाल (हस्तलिखित) छद स० २।
२ रो० का० साहित्य की पृष्ठभूमि पृ०, २८४।
३ वही २८४।
४ चतन्य मत और ब्रज साहित्य प्रभुदयाल मीतल पृ० ३२७।
५ मन हाथ से गया।

आसमान औ जमीन कब्जे मे तेरे सदा,
तू तो बेनमूद को नमूद करनहारा है।
बधे हुए दिलों का तुही खोल देने वाला,
तेरी दृष्टि ही ते दग सबके उज्यारा है॥
तेरी ही सु बात पर कहना औ सुनना है
नूर यह तेरा ही सभी मे झमकत है।
तेरे ही सु जेर का बना है चाद आफताब
तेरे तें न खाली कोई चीज चमकत है॥
तू सौं है न कोई चीज जिसका म नाम धरू
तू हो हर चीज मे सदा दमकत है।
मोती मे न है तू औ न है तू पत्थरो मे कहू
ज म हर रतन मे तू ही चमकत है॥[1]

रीति काल क अतिम चरण मे फारसी और उर्दू की शब्दावली तो हिन्दी ने ग्रहण की ही, इन भाषाओं के साहित्य म वर्णित एकातिक प्रेम व्यजना के स्वरूप की छाया भी इस युग के कवियों ने न्यूनाधिक रूप म ग्रहण की। यह दूसरी बात है कि फारसी उर्दू का कुछ स्वरूप हिन्दी रीति काव्य म कुछ वक्तव्य के साथ प्रस्तुत हुआ, परन्तु रीतिमुक्त कवियो—बोधा, ठाकुर आदि म उस प्रेम की पीर को पहचानने—पहचनवाने के प्रयत्न पाये जाते हैं। उर्दू काव्य धारा के सामयिक शायरो म स मीर तकी जौक, हातिम के कुछ शेरो की बानगी देना यहाँ उचित जान पड़ता है—

मीर— मग इक भाद की का वका है,
मानो आगे चलेंगे दम लेकर।
जौक— कहा पतग ने ये दारे शमअ पर चढ़कर,
अजब मजा है जो जीले किसी क सर चढ़कर।
हातिम— फकीरों से सुना है हमने हातिम,
मजा जीने का मरजाने मे देखा।
हिज्र की जिंदगी से मौत भली,
कि जिसे सब कहें विसाल हुआ।

फारसी शैली का प्रभाव रीति काल के काव्य पर फारसी और उर्दू की शैलियो का भी प्रभाव निर्विवाद रूप से पड़ा। केवल एक ही उदाहरण

---

१ इश्कसहर दरयाव ग्वाल, पहली दास्तान ५४–५५।

अनुवाद का एक दृष्टान्त यहाँ पर देना अप्रासंगिक न होगा।

मीर हसन का छंद—

'फकीरी जो कीजे तो दुनिया के साथ।
नहीं पूछ जाना उधर खाली हाथ॥
करो सल्तनत करो ऐमाल नेक।
कि ताजो जहाँ में रहे हाल नेक॥
जो आकिल हो वह सबके में लगा रहे।
जो ऐसा न होवे कि फिर सब कहे॥
तु कार जिमोरा निको मारवती।
कि बर आसमानी जि पर दावती।'

ग्वाल का छंद—

"जो प फकीरो आप करनी विचारियत,
तो प करो दुनिया के साथ खुदा बंदगी।
खाली हाथ ऊपर का जाना नहीं बहतर।
करो बादशाही अमल अच्छे होय चंदगी॥
जिमस होव दानो ही जहान माहि नेकनामी,
ये ही फिकर रख अकलमंद तज गंदगी।
याते नेक नेक काम करने मुनासिब हैं।
खुदा की पसन्नगी स होगी सफल जिंदगी॥"

सुमन विलास' का एक अनूदित छन्द उदाहरणार्थ निम्नोक्त है —

'गोरी बमनलित सुगोरी गरवीली चाह सोहत गरे में गज मोतिन क हार है।
उनहत उरोज, औप मजुल कपोलन की, मलिन करै है दुति मुकर सुचारु हैं॥
यमी कवि खजन, कमल, मृग मीन हू को कोरदार दीरघ दगन पर वार हैं।
दूवी सी लगत इन्दु आभा अति ऊभी चाह आनन अजूबी खूबी रति की निवार है॥

उपयुक्त विवचन स स्पष्ट होता है कि आलोच्यकाल क रीति काव्य पर फारसी और उर्दू साहित्य का यथेष्ट प्रभाव पड़ा है।

पजाबी साहित्य का प्रभाव पजाबी एक स्वतन्त्र भाषा है। यहाँ हिन्दी को शास्त्र कहते हैं।[1] ऐतिहासिक खोज से प्रमाणित होता है कि पजाबी को आस पास की भाषाए सीचती रही है और इसम दिल्ली आगरा के दीर्घकालीन प्रभाव के कारण हिन्दी ने इसे पश्चिम की ओर ढकेल दिया है।[2] इसकी लिपि गुरुमुखी है। पुरान हिन्दी साहित्य म पजाब अपना योगदान करता रहा और उसम ब्रजभाषा का प्राधान्य रहा है। पजाब म राजभक्ति की प्रमुखता रही। अत हिन्दी को लोकप्रिय बनाने का श्रेय वहाँ राम साहित्य को ही देना चाहिए। परन्तु यहा सबसे बडी कठिनाई लिपि की है। पजाब का सम्पूर्ण साहित्य गुरुमुखी लिपि म सुरक्षित है। लिपि की कठिनाई के कारण अभी वह हिन्दी से दूर है।

हिन्दी और पजाबी दोना ही दो विशाल जनसमूहो की जीवित विकासोन्मुखी भाषाएँ हैं। इनमे परस्पर विनिमय भी होता रहा है। पजाब म लिखे गये हिन्दी साहित्य म पजाबी शब्दावली के साथ साथ पजाबी क्रियापद और कारक चिह्न भी प्रयुक्त होते रहे हैं। पजाबी हिन्दी साहित्यकार ही नही, पूर्व से गये कवियो ने भी पजाब म रहकर पजाबी भाषा साहित्य की विशेष ताओ को अगीकार किया। इन कवियो म चन्द्रशेखर वाजपेयी ग्वाल, गोपालसिंह नवीन, गोपालराय आदि रीतिकालीन कवि प्रमुख हैं। 'पजाबी मिश्रित ब्रजभाषा की रचनाएँ' भी एक शैली विशेष का रूप ले गई थी। इसे 'ब्रजी' कहते थे। ब्रजी की स्थिति पजाब म वही थी, जो बगाल म ब्रजबुली की थी बगाल मे ब्रजबुली कृष्ण भक्ति का स्रोत थी तो पजाब म 'ब्रजी' गुरुभक्ति का। गुरुभक्ति का अर्थ था उन दिनो मुसलिम शासन के आक्रोश से स्वत्व की रक्षा।[3] परिणामत यह विप्लव की भाषा बन गई। भारत का शासक वर्ग फारसी का पक्षपाती था। गुरुओ के शौर्य पराक्रम और बलिदान के गीत हिन्दी न ही गाये, जो गुरुमुखी म लिखे गये। पजाब के जिन हिन्दी कवियो ने उन्नीसवी शताब्दी मे रीति साहित्य की रचना की, उनम लाहौर दरबार के पजनेश ग्वाल, बुधसिंह हाशम, गणेश आदि पटियाला दरबार के शताधिक कवि जिनम निहाल, चन्द्रशेखर वाजपेयी, बसन्तसिंह 'ऋतुराज', वशी पण्डित कान्हसिंह आदि नाभा दरबार के गोपालसिंह नवीन, ग्वाल,

१ पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास

—प० चन्द्रकान्त बाली पृ० ३७।

२ हिन्दी साहित्य द्वितीय खण्ड—स० डा० धीरेन्द्र, पृ० ६०८।

३ सप्तसिन्धु वर्ष १४, अङ्क १० अक्टूबर १९६७ ई०।

लालसिंह दास, भाई हजूरासिंह, आदि जींद के साहबसिंह 'मगेन्द्र' आदि और कपूरथला के कविराम हरिनाम, ज्ञानी सन्तसिंह तोष हरि आदि प्रधान हैं।

पंजाबी की अपनी कुछ पारस्परिक विशेषतायें हैं। पंजाब का हिन्दी साहित्य पंजाबी साहित्य की गुरुभक्ति से प्रभावित है। सिखों के दस गुरु पंजाब ही नहीं, समस्त हिन्दू जाति के त्राता और उन्नायकों में से हैं। अतः पंजाब में इस शताब्दी का शायद ही कोई कवि बचा हो, जिसने गुरु-भक्ति को अपनी कविता का विषय न बनाया हो। पंजाब के राजघराने समग्रत गुरुभक्त, रामभक्त और कृष्णभक्त रहे हैं। यही कारण है कि इन दरबारी कवियों ने यद्यपि रीति कविता की परन्तु कुछ अपवादों को छोड़कर जिन पर मुसलमानी दरबारों का रंग चढ़ा था किसी ने अश्लील शृंगारिक चित्रण नहीं किये। राज्य प्रशस्ति, नगर प्रशस्ति राजा के शौर्य-वंश पराक्रमादि के वर्णन गुरुभक्ति वर्णनों के पश्चात आवश्यक थे। अन्तःपुरों में इन कवियों की पहुंच नहीं थी अतः अश्लील चित्रणों की गुंजायश ही नहीं थी। फिर सिख राजा सर्वांगत विलासमग्न नहीं थे। पंजाब में वैलासिकता कम ही थी।

पंजाब की गुरुभक्ति परम्परा में गुरुपचासा, गुरुशतक आदि प्रत्येक हिन्दी कवि ने लिखे। ग्वाल और चन्द्रशेखर बाजपेयी ने दो हम्मीर हठ नामक वीर काव्य लिखे। भक्ति नीति और वैराग की प्रचुर रचनाएं हुईं। लक्षण ग्रन्थों में नृप प्रशस्ति को जोड़ा जाता था। अनेक बारहमासे और षटऋतु वर्णन भी लिखे गये।

पंजाबी मिश्रित हिन्दी के कुछ प्रेम व भक्ति सम्बन्धी प्रसिद्ध बारहमासा की तालिका[१] निम्नोक्त है—

लेखक	ग्रन्थ
भवानीदास	रामचन्द्र की बारहमासी
लालदास	भरत ,,
देवीसिंह	कौशल्या जी ,,
	श्री युगलकिशोर की बारहमासी
कवि किंकर प्रभु	गोविन्द बलदाऊ ,,
	राधा जी की ,,

१ यह तालिका पं० चन्द्रकान्त बाली के पंजाब प्रान्तीय हि० सा० इतिहास के आधार पर प्रस्तुत की गई है। साथ ही सप्तसिंधु द्वितीय वर्ष, अंक ७ जुलाई ५५ में प्रकाशित श्री शमशेरसिंह अशोक के तद्विषयक लेख का भी प्रमाण लिया गया है।

बाल मुकुन्द	बारहमासी
सुंदर	"
खरेशाह	"
उमादास	बारह माहा
टहलसिंह	"
बाबा रामदास	"
सफुल्ला कवि	बारहमास चन्द्र बदन माहियार
भानसिंह	बारह माहा देवी जी का

पजाबी प्रभाव-युक्त ग्वाल का एक कवित्त इस सन्दर्भ मे देखना समीचीन होगा—

शेरन प जाने शमशेर घालियां है वही,
रणजीत सिंघ जू की फोज आवें घालियां ।
कालिया अकालियां की पति दूर बीस कत
जायगी सम्हालिया न फेर ततकालियां ।।
'ग्वाल कवि' चाहत खुशालियां बिसालिया जो,
राखनी है मुन पर लालियां बहालिया ।
मेवन की डालिया तुरगन की पालिया ले,
मिलो मुक्तालिया द नजर उतालिया ।।[1]

पजाबी साहित्य पर रीति काव्य का प्रभाव पजाबी और हिन्दी साहित्य म परस्पर आदान प्रदान हुआ। पजाबी रीतिकालीन काव्य की भाषा पर भी हिन्दी का पर्याप्त प्रभाव पडा। यह भाई कान्हसिंह (१६ वी शताब्दी) के दशमेश गुरु पर लिखे निम्नोक्त कवित्त म स्पष्ट परिलक्षित है। इसम श्री दशमेश की तेग का वणन है

देखि साधु प्रजा दुखी ध्यान तों प्रगट होंदी,
प्रलय दे करन लई मूरतो महेश की ।
इस्त्रियां दे सत अरु पुरखां दी रक्खे पत,
ज्ञान भ्यान मान तान रच्छक स्वदेश दी ।।
जालिम अन्यायी शाहा दिन विच्च रक करे,
देंवदी कगालां ताई पदवी नरेश दी ।

१ विजय विनोद—ग्वाल कवि छ० स० १४ ।

मौत अने मुक्ती नू इक्को वार देण वाली,
तेग सच्चे पातसाह स्वामी दसमेस दी ॥[1]

पंजाबी के छन्दों में हिंदी के पद, दोहा, कवित्त सोरठा, सवैया आदि का प्रयोग है। पंजाबी में वीर काव्य आध्यात्मिक काव्य उपदेश काव्य नीति काव्य सूफी काव्यादि की परम्परा रही है और इन प्रवृत्तियों में प्रभूत साहित्य की रचना हुई है। शृङ्गारिक प्रवृत्तियों का इसमें रीति काव्य से पूर्व अभाव रहा है। नायिका भेद नखशिख वर्णन, षट्ऋतु वर्णन आदि प्रमुख रीति प्रवृत्तियों का प्रचलन पंजाबी में हिन्दी के अनुसरण पर ही हुआ प्रतीत होता है। डा० हरन्द्र जाहरी का इस विषय में कथन इस प्रकार है—

श्रम और परिस्थितियों से जूझते रहने के कारण अथवा राज्य और अधिकार के लिए लड़ने वाले दलों के बीच में घुटते पिसते रहने के कारण पंजाबी को साहित्य, कला और दर्शन की सूक्ष्म और गम्भीर चर्चाओं का अवसर भी कम मिल पाया। चम्बा और कांगड़ा की दूरस्थ घाटियों में चित्रकला भले ही सुरक्षित रह गई पर मैदानों में मूर्तिकला वास्तु कला अथवा साहित्य और धर्म के जो केन्द्र थे वे कई बार बने और कई बार विध्वस्त हुए। पंजाब की सांस्कृतिक चेतना प्रायः कुण्ठित रही।[2]

इस से प्रकट होता है कि कलात्मक काव्य का श्रीगणेश पंजाबी में हिन्दी के प्रभाव से हुआ। पंजाबी में रीति के प्रतिपादन का श्रीगणेश करने वाले पंजाबीतर प्रान्त के ही कवि रहे होंगे ऐसा अनुमान है जो ग्वाल के निम्नांकित कवित्त से पुष्ट होता है—

जेही थबाडे चित विच्च भाउंदी है आउंदी है,
ओहो तुस्सां करनाधि गाणे कानू कस्स दे।
साडी खुसी एहो आप आराधी खुसी दे विच्च,
जेही चाहो तेही करो मे ही कानूनस्स दे॥
ग्वाल कवि होऊ फरमादा लिख्या लेख जेडा,
साकी बल्ल नना नू वियोर रख्यो हस्स दे।
छल्ल रल्लो गल्लां थवाडो सोहणी न हुंदी स्याम,
सिद्धो गल साड्डे नाल क्यू करन दस्स दे॥[3]

---

१ मन्न सिन्धु—चतुर्थ वर्ष अंक ६, जून १९५७ पृ० ६५ ६६।
२ हिन्दी साहित्य—द्वितीय खंड स०—डा० धीरेन्द्र वर्मा।
—पंजाबी साहित्य पृ० ६०८।
३. कवि हृदय विनोद— स० लाला हरप्रसाद १८८८ ई० छ० स० ३५।

इस युग का काव्य जिस प्रकार परम्परागत था, उसी प्रकार अन्य कलायें भी रूढ़िबद्ध थीं। मौलिकता का अभाव था। कवियों और कलाकारों को आश्रयदाता की रुचि और इच्छा पर अपनी कला का निदर्शन करना अनिवार्य था। तत्कालीन राज दरबार शृङ्गार विलास के केन्द्र थे। फलत तत्कालीन काव्य और कलाओं म शृङ्गार की ही प्रवृत्ति प्रधानत पाई जाती है। कलाओं म चमत्कार की प्रवृत्ति मिलती है। कलाकारों की प्रतियोगिता प्रवृत्ति ही इसका मुख्य कारण थी।

कवि और कलाकार लौकिक सौन्दय की अवतारणा कर रहे थे। नारी का स्थूल सौन्दय प्रदशन उनका उद्देश्य था। यह अलकरण की अतिशयता पर निभर था। विशेष अलकृत रचनायें ही प्रशसनीय मानी जाती थीं।

रीति काव्य तथा सगीत ललित कलाओं म सगीत सर्वोपरि कला है। यह अपने मे नृत्य, वादन और गायन को अन्तभू त कर लेती है। काव्य भी सगीत के क्षेत्र म प्रवेश पा सता है। काव्य और सगीत दोनो ही मानव जीवन म मिश्री की भाति घुले हुए हैं। रस की अनुभूति ही दोनो का लक्ष्य है। दोनों के ही सूक्ष्म सवेदन म ब्रह्मानन्द सहोदर' रस की परिव्याप्ति निर्विवाद रूप से निहित है। 'कविता शब्दों मे सगीत और सगीत स्वरो म कविता है। यदि दोनो म कोई अन्तर है तो वह मूलाधार की सूक्ष्मता क्षेत्र विस्तार और प्रभावोत्पादकता का ही है।'[1] सगीत काव्य का अविभाज्य अग है और काव्य सगीत का। अन्तर्सम्बन्धित होते हुए भी दोनों का अस्तित्व पृथक ही माना गया है। पर दोनो म समन्वय के तत्वों का अभाव नहीं। वदिक ऋचाओं के साथ ही दोनो का जन्म माना गया है। तब से आज तक ये दोनो शब्द' और 'अर्थ की भाँति परस्पर मिले जुले रहे हैं।

रीति काव्य मे सगीत के तत्वों का समावेश प्रभूत मात्रा म पाया जाता है। काव्य म अनेक ऐसे उदाहरण हैं जिनको यदि सगीत ज्ञान के साथ मनन किया जाय तो काव्य और सगीत का पारस्परिक निकट सम्बन्ध सहज ही उद्घाटित होने लगें। रीति काव्य म सगीत के साथ वादन और नृत्य का भी मार्मिक वणन हुआ है। रास मे सगीत और नृत्य साथ साथ चलते हैं। रास की भी अपनी एक अक्षुण्ण परम्परा है। निम्नोद्धृत छन्दों म सगीत, वादन नृत्य और काव्य चारो की चर्चा दृष्टिगोचर है

१ काव्य और सगीत का पारस्परिक सम्बन्ध
—डा० उषा मिश्र, १९६२ ई०, पृ० ४१।

'बाजत मृदङ्ग, मुर चग बीन और उपग,
तातथेई, तातथेई करत उमग मे ।
गेलि के भुजान को सुजान नत्य कला काहृ,
बीच बीच नाचैं मिलि गोपिन के सग मे ॥
भृकुटी मटक, पटपटि की चटक चारु,
कुण्डल झलक छज छवि के तरग मे ।
पद की पटक, पानि झटक सु मुसकानि,
ग्रीवा की लटक सज सोमा अग अ ग में ॥'[1]

उक्त कविता सगीतमय है। वाद्यवृदा का नत्य के साथ बजना अगावयवो का सचालन, नृत्य मुद्राएँ आदि पाठक के सामने मानो सशरीर खडे हो जाते हैं।

शब्द सगीत और नत्य समन्वित काव्य के ऐसे अनेक उदाहरण[2] काव्य म भरे पडे हैं। काव्य म मृन्दङ्ग जमी घोषगमक अनुभव करनी हो तो घनानन्द के निम्नाकित कविता का आस्वादन पर्याप्त होगा

---

१ हफीजुल्ला खा का हजारा-प्रथम भाग—पचमावृत्ति १९१५ ई०, पृ०१८६

२ क-गावत जो दस अष्ट सदा, घट चारन पावत पार मनी के ।
वही, पृ० १८६।

ख-बाजत बीन मृदग निच धुनि पूरि रही नभ तौ अवनी के ॥
वही, पृ० १९०।

ग-बाजत घु घ मजीर विमजु सुनाचत कु ज कलानिधि नीके ।
वही, पृ० १९०।

घ-नाचत मडल मडित प्रताप बज कल पायल पाय तनी के ॥
वही, पृ० १९१।

ङ-भूपन सकल अग बसन सोहै सुरग, नत्य को करत छमछम छवि छायी ह।
वही, पृ० १९१।

च-त्रिविध समीर मद सीतल सुगध वह
निरतत ब्रजबाल नदलाल साथ हैं ।
कुडल झलक काहू मुखसों अलाप
तान नय को हसन औ चमक बेंदी माथ हैं ॥
नूपुर झनक कर किंकिन खनक धन
ताल की झनक कौलि करें यदुनाथ हैं ॥ वही

ए रे बीर पौन तेरो सब ओर गौन
बीरी तोसों और कौन मन ढरकौंहीं बानि द ।
जगत के प्रान ओछे बडो ओ समान घन
आनदनिधान सुखदान दुखियानी द ॥
जान उजियारे गुन भारे अत मोही प्यारे
अब ह्व अमोही बठे पीठि पहिचानि द ।
बिरह बिथाहि मूरि आखिन मे राखो पूरि
धूरि तिन पायनि की हाहा नकु आनि द ॥[२]

रसिक गोविन्द आदि रीतिमुक्त कवियो ने तो समय प्रबन्ध' आदि ग्रन्थो म राग ही राग लिख हैं, जिनम उनके रीतिबद्ध काव्य का भावसाम्य भी है। इससे लगता है कि काव्य सगीत का सर्वाधिक ऋणी है और सगीत काव्य का। अलक्जेंडर पाप क शब्दो म सगीत काव्य सदृश है।'[३] काव्य पर *'सबसे अधिक प्रभाव तो सगीत का ही है।*[४]

रीति काव्य और सांगीतिक प्रवत्तियों की तुलना काव्य की प्रवृत्तिया के समानान्तर ही सागीतिक प्रवृत्तियो का भी विकास हुआ। इन प्रवत्तिया की दृष्टि स इस युग मे काव्य और सगीत की विकास यात्रा म 'अद्भुत साम्य' क दशन होते हैं। का य क आचार्यों की भांति ही सगीत क क्षत्र म भी अनेक सगीतज्ञ आचाय हुए जिन्होने सगीत के शास्त्रीय पक्ष को लेकर मार्गी देशी सगीत भेद, स्वर, श्रुति मेल, राग इत्यादि की सागोपाग व्याख्या की। पर काव्याचार्यों की तुलना म इनकी सख्या न्यून दिखाई देती है। इसका कारण अपनी अपनी उपयोगिता है। काव्य की भाति सगीत कभी शास्त्रीय ऊहापोह का विषय नही रहा। आश्रयदाता और उनके दरबारी गायक की कठमाधुरी और कला माधुय से मुग्ध होने तक ही सगीत मे अनुरक्ति रखते थ। सगीत के कलात्मक उद्दीपक रूप मात्र तक उनकी गति थी। काव्य म भी *आचार्यों की अपेक्षा छन्द गायक कवियो को अच्छा मान मिलता था।* सगीताचार्यों ने भरत के 'नाट्यशास्त्र या शाङग देव कृत 'सगीत रत्नाकर' आदि को आधार बनाकर सगीत रचनाए' प्रस्तुत की। अहोबल ने

२ घनानन्द कवित्त—प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ० ४२, स० २००७ वि०।
३ Music resembles poetry— Alexandar Pope, Essays on criticism, page 65
४ काव्य और सगीत का पारिस्परिक सम्बन्ध

—डा० उमा मिश्र, पृ० २०६ २०७।

'सगीत पारिजात' म इस तथ्य को स्वीकार किया है। आलोच्य शताब्दी के कतिपय आचाय और उनके ग्रथो के नाम निम्नांकित हैं—

सगीताचाय	ग्रथ	रचनाकाल
मुहम्मद रजा	नगमाते आसफी (उदू)	स० १८७० वि०
प्रताप सिंह देव	सगीत सार	स० १८६१ वि०
कृष्णानन्द व्यास	सगीत राग कल्पद्रुम	स० १८९९ वि०
कृष्ण बनर्जी	गीत सूत्रकार	लगभग स० १९०० वि०
त्यागराज	स्वराणव	,, स० १८५७–१९०७ वि०
?	राग रत्नाकर	अज्ञात
पन्नालाल	नाद विनोद	,,
श्रीनिवास	रागतत्व बोध	,,

पन्नालाल रीति युगीन सगीत के अत और आधुनिक युग की सधि क सगीतकार माने जाते हैं। सगीतशास्त्र सम्बन्धी सभी ग्रथो में प्राचीन सगीतशास्त्रो की सक्षिप्त रूपरेखा तो आ गई है, परन्तु इन ग्रन्थो क लेखक अपने पूववर्ती क्रियात्मक सगीत के विवचनात्मक सामजस्य के आधार पर अपन युग के सगीत शास्त्र का स्पष्ट आधार प्रस्तुत नहीं कर सके।[1] इस युग क अधिकाश सगीतकार प्राय क्रियात्मक सगीत की साधना में ही तल्लीन रहते थ, सिद्धा तों मे उनकी रुचि न थी। मिया रसूल शक्करखा मक्खनखा, मिया शोरी सदारङ्ग, अदारङ्ग, मुहम्मदशाह रगील नवाब सालारजग, नवाब वाजिद अली खा प्रभति सगीतज्ञ इसी कोटि के माने जाते हैं। वे सगीत शास्त्र के सिद्धान्ता से सवथा अनभिज्ञ थे यह कहना अन्याय ही होगा। परन्तु ये विशुद्ध कलाकार थ, आचाय नहीं। इनको रीति कवियों की उस कोटि मे रखना चाहिए जो लक्षणा के चक्कर म न पडकर स्वतन्त्र काव्य रचना करते रहते थे।

रीतिमुक्त कवियो के समानान्तर हम उन्नीसवीं शताब्दी के ठुमरी और भजन गायको को रख सकते हैं। इस शताब्दी म बोधा और ठाकुर परम्परा मुक्त कवियो म प्रमुख हैं। स्वतन्त्र परम्परा मुक्त गायको म इस युग के सदारङ्ग, अदारङ्ग नूरखा नाद खा, प्यारखा, जानी, गुलाम रसूल, शकूर मक्खू ठट्ठ, मीट्ठू मुहम्मदखा, छज्जूखा और टप्पा प्रवत्तक शोरी मियाँ के नाम लिये

[1] काव्य और सगीत का पारस्परिक सम्बन्ध—डा० उमा मिश्र पृ०

जा सकते हैं।'[1] इन कवियों और गायकों को शास्त्र का ज्ञान अधिक नहीं था परन्तु इन की कला शास्त्रनों से कहीं बनी हुई थी। जनता के होठों पर ठुमरी ऐसे ही थिरकती थी, जैसे ठाकुर बोधा पद्माकर आदि कवियों के कवित्त और सवैया। बहादुरशाह जफर अंतिम मुगल सम्राट स्वयं अच्छा शायर और संगीत प्रेमी था। लावनीकारों में रूपकिशोर, यमहगिरि, पन्ना लाल, भैरों सिंह द्वारिका प्रसाद, नत्था सिंह वाम्ल, मौलवी आशिक अब बरावादी इस शती के प्रमुख गायक थे।[2] इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वतन्त्र संगीतकारों की नामावली भी पर्याप्त बड़ी है। इन दोनों में ही शृङ्गारिकता अत्यधिक है। ठुमरी शैली की शृङ्गारिकता संगीत को रीति काव्य के और भी निकट पहुंचा देती है। रीति कवियों ने वीर-रस वर्णन में भी रतिक्रीड़ा को स्थान दिया था। संगीतकारों ने भी इसी प्रकार शङ्करा, मालकोस, हमीर, अड़ाना जैसे वीररस उपयुक्त रागों में विषय औचित्य का ध्यान छोड़कर शृङ्गार गीत ही गाये।

ऋतु वर्णन और संगीत 'संगीत दर्पणकार ने छहों ऋतुओं का सम्बन्ध छः प्रमुख रागों से जोड़ दिया।[3] वर्षा ऋतु का वर्णन राग नटमल्लार (विलम्बित) में यहाँ उद्धृत किया जाता है—

स्थायी— पियू लिखना पठावे मके। पतिया रे मोरा रे॥
अन्तरा— आवत बीती बरखा रुत आई री
कागद बाचत माई री ना बाचत
लिखवया भागीला करक रही ये
धीरज छतिया रे मोरा रे॥[4]

रीति काव्य और संगीत में राधाकृष्ण का रूप रीति काव्य में कवि राधाकृष्ण के माध्यम से लौकिक शृङ्गार रचना में तल्लीन थे, उसी प्रकार संगीतकार भी आश्रितिकाओं में यही प्रवृत्ति अपना रहे थे। 'सहचरि सुख का यह पद इस की पुष्टि के लिये पर्याप्त है—

१ भारतीय संगीत का इतिहास—उमेश जोशी, १९५७ ई० पृ० ३५३।
२ वही पृ० ३७१-३७२।
३ 'संगीत दर्पण में एक स्थल पर श्री राग को शिशिर ऋतु का, बसन्त को बसन्त ऋतु का, भरव को ग्रीष्म का, मेघ को वर्षा ऋतु का और नट्ट नारायण को हेमन्त ऋतु का राग बताया है।' काव्य और संगीत का पारस्परिक सम्बन्ध—डा० उमा मिश्र पृ० २४५।
४ वही पृष्ठ २४६।

'रूप बावरी नन्द महर की बहुरि बन्यो होरी की छैल।
रोकतटोकत घूंघट खोलत भरिपिचकारी तकत
उरोजनि गोकुल की भाई चलत न गल॥
छल सों मसल गुलाल मुठी भरि निरख रहत
पुनि लाज न आवत हिये भरत होरी के फन्द॥
कहिये कहा और सहचरि सुख मदन मवास रहत,
ब्रज जाके अग अग छु कटीली सैल॥'[1]

उन्नीसवीं शताब्दी में रामपुर दरबार के गायक फीरोजखां 'अदारग' ने होली के धमारों में रीति कवियों के विषयों को शब्दबद्ध और स्वरबद्ध किया। अदारग अपने चचा और श्वसुर प्रसिद्ध गायक सदारंग की धमार परम्परा को ही आगे बढा रहे थे। इन के कुछ धमार 'इस्तरवाने यादगार' में सग्रहीत मिलते हैं। एक धमार रचना यहां दी जाती है।

'एरी नेंक सुध हमसों बोलि नारि।
होरी में गुमान काम नहि अब तू तो मुगध गवारि॥
कहू रग कहू अबीर गुलाल कहू कुमकुमा कहू पिचकारि।
ऐसी ही फगुआ मांगिय मुखते 'अदारग' अचरा डारि॥'[2]

उक्त धमार के बोल से ग्वाल की निम्नांकित पंक्ति का भाव मिलाकर देखिये—

रेलिय न रग ओ न खेलिय दगा की खेल।
मेलिय गुलाल सूधें दीजियें न गालियां॥[3]

गायक 'मनरग' की एक धमार के भावों को रीति कवियों के होली वर्णन के भावों से मिला कर देखिये—

'कछु ऐसो मन्त्र पढि रग छिरको री होरी के दिनति में इन मन मोहन बनवारी।
सकल त्रियनि में कौनें सिखाई हो न जानो ऐसो कौन है बारी नारी॥
मोहि जानि वृषभान दुलारी मन हरि लीनों नन्द के विहारी।
'मनरग' सहसगारो व भई मतवारी बजाय तारी॥'[4]

---

१ वही, पृष्ठ ३२६।

२ साप्ताहिक हिन्दुस्तान—१७ मार्च ६८, आचार्य कैलाश चन्द्र देव बृहस्पति का लेख धमार—गायकी पृ० २३ पर उद्धृत।

३ षट्ऋतु वर्णन—ग्वाल छ० स० ८३।

४ साप्ताहिक हिन्दुस्तान—१७ मार्च ६८, पृ० २३ पर उद्धृत

काव्य में नायिका भेद के उदाहरण शब्द-चित्र हैं। इन्हीं भावों को जब मूर्तिकी चित्र फलक पर उतारने लगता है तो वे चित्र बन जाते हैं। इस प्रकार दोनों कलाएँ परस्पर अन्योन्याश्रित हैं।

चाहे जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर, किशनगढ़, बूंदी की राजपूत शैली को, चाहे जम्मू, चम्बा, कांगड़ा, बसोली, गुलेर और गढ़वाल की पहाड़ी शैली को और चाहे आगरा, दिल्ली की मुगल शैली को निहारा जाय, इन सभी के चित्रों में रीतिकालीन काव्य की भांति रूढ़िबद्धता, बाह्य चमत्कार और शृंगारिकता के दर्शन होते हैं। कुछ विद्वानों ने मुगल चित्रकला को विशिष्ट नियमबद्ध और राजपूत कला को तत्कालीन लोक कला बताया है। इस युग की कोई भी कला स्वान्तः सुखाय नहीं थी। इस युग की चित्रकला में चार प्रकार के चित्र उपलब्ध होते हैं—(१) नायक तथा नायिका भेद के परम्पराबद्ध चित्र (२) पौराणिक उपाख्यानों पर आधारित चित्र, (३) राग रागिनियों के प्रतीक चित्र तथा (४) व्यक्तियों के चित्र।

रीतिकाव्य की भांति ही उस युग के चित्रों में भी कलाकार की आत्मा के दर्शन नहीं होते। जहाँगीर के पश्चात ही कला से प्राणवत्ता तिरोहित हो गई थी। उसका स्थान तड़कीले भड़कीले रंगों, पच्चीकारी, नक्काशी, वस्त्राभूषणों, रत्नालंकारों और आडम्बरपूर्ण सजधज ने ग्रहण कर लिया था। चित्रांकन में उन्नत प्राविधिक कौशल, कमनीयता और रंगों की उत्तमता के होते हुए भी इस युग में बने शाही दरबार की शान शौकत, समृद्धिशाही और अमीर स्त्री पुरुषों की छवियों, सन्तों दरवेशों आदि के चित्रों में कला के पूर्ववर्ती मानदण्ड का ह्रास पाया जाता है।[1]

राजपूत शैली — इस शैली को पौराणिक शैली के नाम से अभिहित किया जा सकता है।[2] इसमें प्रायः मुगल शैली के चित्रों की समसामयिक कृतियाँ पाई जाती हैं। राजपूत शैली के चित्रों में रामायण, महाभारत की घटनाओं और गीत गोविन्द जैसी कृतियों के वर्णनों पर आधृत चित्रकारी का प्राधान्य पाया जाता है। भारतीय संगीत के छहों रागों एवं छत्तीसों रागिनियों के चित्र भी 'रागमाला' नाम की चित्र मालाओं में मिलते हैं। गायक चित्रांकित छवि को संगीत की लय में परिणत करके विशिष्ट राग या रागिनी की सृष्टि करता था और चित्रकार उक्त राग रागिनियों की लय को छवि में परिणत करता था।[3]

---

१ वही पृ० २८९७। २ वही, पृ० २८८८।

३ वही, पृ० २८९०।

पहाड़ी शैली मुगल दरबार के संरक्षण से वंचित और राजनीतिक अशान्ति से ऊबकर कुछ कलाकार हिमालय की छोटी पहाड़ी रियासतों में जा बसे थे। इन्होंने रामायण महाभारत की कथाओं, कृष्ण बलराम के अद्भुत पराक्रमों, नायक नायिका भेद सम्बन्धी प्रकरणों, दुर्गा सप्तशती आदि ग्रंथों, शाही नर नारियों के समूहों, जलूसों आदि से सम्बन्धित चित्रों के ढेर लगा दिये। इन पहाड़ी चित्रकारों ने रागरागिनियां भी चित्रबद्ध कीं। परन्तु कला के ललित भावों के दर्शन इन चित्रों में भी कहीं नहीं होते।[1] तत्कालीन सामन्त सरदारों और सेठ साहूकारों की शृंगारी रुचि यहां भी अपना काम कर रही थी। मुर्शिदाबाद, हैदराबाद, लखनऊ इस शैली के प्रमुख केन्द्र थे। शैली के रूप में इसका जीवन १८६० ई० तक माना जा सकता है।[2]

कांगड़ा शैली यह पहाड़ी चित्रकला शैली की ही एक शाखा है। इस का विकास कांगड़ा नरेश संसार चन्द्र (१७७४ ई०-१८२३ ई०) के समय में हुआ। इस समय यह अपने गौरव के चरमबिन्दु पर पहुंच गई थी। कांगड़ा शैली की विशेषताएं वही रहीं जो राजपूत चित्रकारी की अन्य शैलियों में पाई जाती हैं। डा० कुमार स्वामी के शब्दों में 'इस शैली की सबसे बड़ी देन एक ऐसी कमनीय नारी मूर्ति की सृष्टि है, जो उसकी ही अपनी वस्तु है और जिसके आकर्षण की कोई सीमा नहीं।' यह नारी प्रतिमा राजस्थानी नमूनों जैसी भारी भरकम नहीं, वरन् एक अनुपम कमनीयता से युक्त है। उसकी गति में जो अदा है उसके सामने कोई ठहर नहीं पाता। उसकी पोशाक की लहराती हुई रेखायें लालित्य को बढ़ाने के लिये जानबूझकर खींची गई हैं। उसका जादू विवश करने वाला है। उसमें एक ऐसे वैयक्तिक भाव का समावेश है जैसा कि रमणी की अपनी अदा में पाया जाता है।'[3] रीति काव्य में नारी शृंगार वर्णन का एक मात्र केन्द्र स्थल रही है। १८५० ई० के लगभग इस शैली का अन्त हो गया।[4]

गढ़वाल-शैली पहाड़ी शैली की गढ़वाल शाखा का प्रादुर्भाव भी १८ वीं शताब्दी ईसवी में हुआ। इस शैली की विशेषताएँ कांगड़ा शैली जैसी ही मानी गई हैं। परन्तु यह उससे अपेक्षाकृत निम्न कोटि की है।

सिख शैली इस शैली का प्रादुर्भाव सन् १७७५ ई० से १८५० ई०

---

१ हिन्दी विश्व भारती—पृष्ठ २८६० ।
२ भारत की चित्रकला—रायकृष्णदास २००७ वि०, पृ० १०२
३ हिन्दी विश्व भारती—पृ० २८९१ ।
४ भारत की चित्रकला— रायकृष्णदास, पृ० १०० ।

के बीच म हुआ।[1] इस शली के चित्रो म सिखों के स्ता गुरुओ नासकों और उनके मुसाहिबो के एकाकी अथवा सामूहिक चित्रांकन पाये जाते हैं। सिख शली का अन्त सन् १८५० के आस पास हो गया।[2]

मुगल शली यह शली मूलत फारसी है। परन्तु इस पर तत्कालीन भारतीय शली का पूर्ण प्रभाव था। इस काल के बाहरो में और रचना दोनो की अपनी विशेषता है। इस प्रकार की डिजाइनें आगरे के ताज महल और दिल्ली के लाल किले की मुगल इमारतो म मिलती हैं। लाहौर के शाही कारखान के कालीनो पर भी एसी भव्य डिजायनें मिलती हैं। इस युग का दौलत नामक दरबारी चित्रकार सुनहले बाहरो और आलंकारिक पाडुलिपियो का विशेषज्ञ था।[3] वास्तव म यह चित्रकारी यथ साध्य और श्रमसाध्य थी इसम पौराणिक ऐतिहासिक और व्यक्तियो के चित्रो के माध्यम से तत्कालीन प्रवृत्तियो का ही चित्रांकन रहता था। सम्राटो शाहजादो शहजादियो महफिलो, जुलूसो, भवनो, राजप्रासादो राजदरबारो, आखेटो नायिकाओ आदि के चित्रो म प्राकृतिक उद्दीपक वातावरण का ही प्राधान्य रहता था। इस काल के चित्र मुगल सम्राटो के वभव विलास के परिचायक हैं। इस शली का अन्त डा० रायकृष्णदास सन् १८६० ई० तक मानते हैं।[4] कवियो और चित्रकारो की रचना-कल्पना म एक आश्चर्यजनक साम्य का तारतम्य दिखाई देता है। या तो कवियो के शब्द चित्र पहल प्रस्तुत होते थ। अथवा फिर पहल चित्र उपस्थित होते थे जिनके आधार पर चित्रकार या कविगण रेखाओ या शब्दो म उस छवि को आकते थे। राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली म रख इस शली के चित्रकार मोहिउद्दीन के महलो की होली के एक से अधिक चित्र भी इसके साक्षी हैं।

कम्पनी शली उन्नीसवी शताब्दी म कम्पनी शली का प्रादुर्भाव हुआ। बनारस के राजा ईश्वरी नारायणसिंह (१८ ५ १८८९ ई०) का दरबार इसका आश्रयदाता रहा। काशी के दल्लूलाल लालचन्द और गोपालचन्द तीन अच्छे चित्रकार थे। उन्होंने जो चित्र अंकित किये[5] उनम शृङ्गारिकता को स्थान नही मिला। अत यह परम्परामुक्त है।

---

१ विश्वभारती-पृष्ठ २८९२।

२ भारत की चित्रकला-रायकृष्णदास, पृ० १००।

६ विश्वभारती-पृ० २८६६।

४ भारत की चित्रकला-रायकृष्णदास पृ० १०२।

५ वही, १०३।

पंजाब की सिख शैली और काशी की कम्पनी शैली को छोडकर शेष सभी शैलियों की चित्रकला में शृंगार की अमर्यादा दृष्टिगोचर होती है। कवियों की भाँति चित्रकारों को भी अपने आश्रयदाता की रुचि का ध्यान रखना पडता था। इन चित्रों द्वारा स्त्री के नग्न सौन्दर्य के चित्रण की रुचि का आविर्भाव हुआ। इन शृंगारिक शैली में उत्कंठिता वासकसज्जा अभिसारिका आदि नायिकाओं का परम्परामुक्त वातावरण में चित्रण हुआ। नायिकाओं के चित्र अधिकतर नायिका भेद के काव्य के आधार पर बनाये गये। 'संकेत स्थल पर पुष्पशैया बनाकर प्रियतम से मिलन के लिये उत्कंठिता नायिका, विषम प्रकृति की चुनौती स्वीकार करके आगे बढ़ती हुई अभिसारिका इत्यादि शृंगार नायिकाओं के परम्पराबद्ध रूप हैं। शृंगार की विभिन्न परिस्थितियों का चित्रण इन रचनाओं का ध्येय है और शृंगार उनकी आत्मा।'[1] कृष्ण और राधा के नायक-नायिका रूप में तथा पौराणिक आख्यानों पर आधृत चित्रों में शिव पार्वती के चित्रों में शृंगार चित्रण इस युग की विशेषता है। तत्कालीन राजनायकों और राज नायिकाओं के चित्रों की तो संख्या अपार है।

रीति कवियों के ऋतु वर्णन और बारहमासा के समानान्तर बने चित्रों में प्रकृति को मात्र उद्दीपक रूप में चित्रित किया गया। बसन्त और वर्षा के उद्दीपक रूप के कई चित्र मिलते हैं। राधा के नग्न सौन्दर्य के प्रदर्शक चित्रों में स्नान सम्बन्धी चित्रांकन सजीव रूप में हुए हैं। गढ़वाल शैली में रूपमती के सिन्धुर वदन की प्रतियोगिता में वृक्षों की वक्र टहनियाँ, बिजली की चमक उद्दीपक रूप में ही चित्रित हुई है। बिजली की कौंध, मूसलाधार वर्षा, मेघ, तूफान आदि का प्रयोग प्रतीकों के रूप में किया गया है।

जहाँ चित्रों में शृंगारिकता प्रधान है वहीं चमत्कार के विकृत रूप के भी दर्शन होते हैं। अश्वनारी, गजनारी आदि ऐसे ही चित्र हैं। 'अनेक नारियों के बहुरंगी वस्त्रों तथा उसके विविध अंगों के संयोजन द्वारा ये चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। स्त्रियों के अंग प्रत्यंगों को सुविधानुसार तोडमरोड कर हाथी और घोडे के चित्र बनाये गये हैं। जिन पर कहीं कृष्ण आरोहित हैं तो कहीं कोई मुगल सम्राट।'[2] प्रेरणा स्वरूप कवियों द्वारा 'गजगामिनी', 'अश्वगामिनी' आदि उपमाएँ ही ढूँढी जा सकती हैं। कवियों में भी इस प्रकार की नारी-सौन्दर्य विकृति के उदाहरण सरलता से खोजे जा सकते हैं।

---

१ हि० सा० का बृहत् इतिहास षष्ठ भाग, पृ० २०।
२ वही, पृ० २२।

वैयक्तिक चित्रों में नर प्रशस्ति काव्य के दर्शन मिलते हैं। कवियों ने आश्रयदाता के प्रशस्ति गायन में राजदरबार, दरबारों, नगर वर्णन, शौर्य-वर्णन, वैभव वर्णन आदि के ऊहात्मक वर्णन किये हैं। चित्रों में भी इन्हीं सब काव्य प्रतिपादों का चित्रांकन हुआ। मुगल और राजपूत राजाओं ने वैयक्तिक घटनाओं के चित्र बनवाकर अपने दरबारों में टाँगे।

मौलिकता का अभाव आलोच्यकाल का काव्य और चित्रकला दोनों ही रूढ़ि से बाहर न निकल सकी। नये विषय और नई चेतना इनमें नहीं रही। राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली में मोईनुद्दीन आदि तत्कालीन चित्रकारों के चित्र प्रमाणस्वरूप देखे जा सकते हैं। ये चित्र पद्माकर आदि कवियों की कविताओं के आधार पर बने हैं।

रीति काव्य और स्थापत्य कला रीति साहित्य में संगीत और चित्र कला की भाँति स्थापत्य कला के तत्व भी समान रूप से घुले मिले हैं। साहित्य का इनसे निकट का सम्बन्ध है। मुगल राजप्रासादों के वर्णन रीतिकाल में यत्रतत्र बिखरे मिलते हैं।[1] 'ग्वाल कवि' ने आदर्श घर का एक नक्शा सा दिया है—

---

१ (अ) मंजुल अखण्ड खण्ड सातयें महल महा,
मंडल चौवारी चन्द्र मण्डल के चोटहीं।
भीतर हूँ लालन के जालन विलास जोति
बाहर जुन्हाई जगी जोतिन की ओट हीं॥
बसन बानी चौंर ढारत भवानी कर,
ओर रमारानी ठाढ़ी रमन के ओट हीं।
देव दिगपालन की देवी सुखदाइन तें
राधा ठकुराइनि के पायन पलोट हीं॥
— देव भवानी विलास।

(ब) बड़ी सीस मन्दिर में सुन्दरि सवारही तें॥
देव भवानी विलास।

(स) फटिक सिलान सों सुधारयो सुधा मन्दिर॥
देव भवानी विलास।

(द) कहै पद्माकर सु पौन कौन-भौन जहाँ,ऐसे मौन उमगि उमग छाकियतु है।
—जगत विनोद।

गेह अति ऊँचे होंय, खुले होंय ढके होंय
दरें होंय, गोखें होंय रोस होंय, रस सी।
बन होंय बाग होंय, बीन होंय, बक होंय
केकी होंय मेकी होय पवन अमग सी॥
—षट ऋतु वर्णन छन्द सख्या ३४।

स्पष्टत ऐसे भवन की कल्पना स्थापत्यकला विशारद के समक्ष रखी गई होगी। नायक नायिका के रति विलास प्रसंगो म स्फटिक सिलाओ के मन्दिर', 'विशाल आगन', 'झरोखा', आदि के वर्णन पुन पुन हुए हैं। महला बुर्जो, कगूरों, गुम्बजो बारहदरियो आदि के सन्दभ प्रचुर मात्रा मे पाये जाते हैं। निश्चय ही मुगलकालीन स्थापत्य कला के आदश कवियों के सामने रहे होंगे। नाभा नरेश भरपूर सिंह के यश वर्णन प्रसग म ग्वाल कवि ने वहा के भवनादि का वणन भी किया है।[1] उत्तर रीति कालीन युग के इस कवि ने पजाब म बने इन राज भवनो म वास्तव म मुगल शिल्प की ही कल्पना की है।

मुगलकालीन स्थापत्य कला की विशेषताएँ बडे सहन, बडे बरामदे, पदावदार महराब गालादार गुम्बद गोखें, छज्जे, बारहदरी, जालियाँ, झरोखे, ऊँचे मुख्य द्वार, कगूरे, विशाल कक्ष आदि ऐसी विशेषताएँ हैं, जो मुगलकालीन वास्तुकला म आद्यन्त पाई जाती हैं। मुगला ने भवन लाल और सफेद पत्थर के बनवाये, सुन्दर पच्चीकारी के नमूने आकीण कराये। पत्थर म सूक्ष्म कला के साथ सुन्दर चित्र मूर्तियो की रचना, कमनीयता, मनोरमता और आलकारिकता इस युग के स्थापत्य की विशेषताएँ हैं जो तत्कालीन काव्य, सगीत और चित्रकला म स्पष्ट दिखायी पडती हैं।

शाहजहा न स्थापत्य से सर्वाधिक प्रेम किया। अत इस का उत्कष चरमबिन्दु पर पहुच गया था। दिल्ली की जामा मसजिद लाल किला, रग महल, दीवाने खास, दीवाने आम, खास महल शीश महल मुसम्मन बुज, मच्छी भवन तथा विश्व का विशिष्ट आश्चय ताजमहल शाहजहाँ द्वारा निर्मित प्रसिद्ध इमारतें हैं। ये सभी निर्माण उन्नत शिल्प विधान, कलापूण सुरुचि एव अनोखी सादगी म भी उच्चकोटि की कलात्मकता की देन है।[2] पजाब मे हुआ महाभारत का हिन्दी अनुवाद इस युग की सबसे बडी कृति है, जो ८२

---

१ इश्क लहर दरयाव—ग्वाल कवि ग्रन्थ कारण वणन, छ०स० ३ से १८।
१ हिन्दी विश्व भारती—पृ० २८७६।

महल दोनो की योजना हुमायू के मकबरे के अनुकरण पर हुई जो मुगल स्थापत्य परम्परा की प्रथम इमारत है।[1]

स्थापत्य की ह्रासावस्था औरगजेब के शासन काल से ही काव्य, सगीत, चित्र और स्थापत्य कला का ह्रास आरम्भ होगया था। उसके पश्चात् की इमारतो में शाहजहाँ कालीन आवेग दिखाई देता है। दिल्ली, लखनऊ, फैजाबाद, मसूर आदि में बनी वणसकरी इमारतें विविध शैलियो के बमल सम्मिश्रित अनुकरण पर बनी। लखनऊ की छत्तर मजिल और छोटे इमाम बाडे की तुलना मोती मसजिद आदि से कम की जा सकती है। ठीक इसी ह्रास युग में बने काव्य ग्रन्थो को पुराने ग्रन्थो की परम्परानुकृति ही कहा जा सकता है। उन्नीसवी शताब्दी के मध्य तक न तो रीति काव्य का कोई बड़ा सरक्षक शेष रहा और न सगीत, चित्र आदि कलाओ का। रीति काव्य के साथ साथ कलायें भी ह्रासोन्मुखी बन गई।

1. हि० सा० ब० इतिहास—षष्ठ भाग, पृ० ७५।

पंचम अध्याय

ग्वाल कवि का जीवन-वृत्त

महल दोनों की योजना हुमायू के मकबरे के अनुकरण पर हुई जो मुगल स्थापत्य परम्परा की प्रथम इमारत है।[1]

स्थापत्य की ह्रासावस्था औरंगजेब के शासन काल से ही काव्य, संगीत चित्र और स्थापत्य कला का ह्रास आरम्भ होगया था। उसके पश्चात् की इमारतों में शाहजहाँ कालीन आवेग दिखाई देता है। दिल्ली, लखनऊ, फैजाबाद, मसूर आदि में बनी वर्णसंकरी इमारतें विविध शैलियों के बेमेल सम्मिश्रित अनुकरण पर बनी। लखनऊ की छत्तर मंजिल और छोटे इमामबाड़े की तुलना मोती मसजिद आदि से कैसे की जा सकती है। ठीक इसी ह्रास युग में बने काव्य ग्रंथों को पुराने ग्रंथों की परम्परानुकृति ही कहा जा सकता है। उन्नीसवी शताब्दी के मध्य तक न तो रीति काव्य का कोई बड़ा संरक्षक शेष रहा और न संगीत, चित्र आदि कलाओं का। रीति काव्य के साथ साथ कलायें भी ह्रासोन्मुखी बन गई।

---

[1] ० सा० वृ० इतिहास—षष्ठ भाग, पृ० २५।

पचम अध्याय

ग्वाल कवि का जीवन-वृत्त

५। ग्वाल कवि का जीवन वृत्त

ग्वाल सज्ञक दो कवि हिन्दी साहित्य में ग्वाल नाम के दो कवियो का उल्लेख है—एक 'ग्वाल प्राचीन और दूसरा ग्वाल कवि बन्दीजन मथुरा वासी।'

१ ग्वाल प्राचीन शिवसिंह सेंगर, डा० ग्रियसन और मिश्रबन्धुओ के अनुसार 'ग्वाल प्राचीन' के छन्द कालिदास त्रिवेदी के हजारा' म मिलते हैं।[1] कालिदास ने हजारा की रचना स० १७५५ वि० के आस पास हुई मानी जाती है।[2] गोपालसिंह 'नवीन, न अपने 'सुधासर' म मथुरा वाले ग्वाल के अतिरिक्त ग्वाल प्राचीन का नाम 'एक नाम रासी कवियो की सूची' म अ कित किया है।[3] मिश्र बन्धुओ ने ग्वाल प्राचीन का जन्म स० १७१५ वि० और इनका कविता काल स० १७४० वि माना है।[4] डा० ग्रियसन भी इनका जन्म स० १७१५ वि० ही मानते है।[5] प्रभुदयाल मीत्तल के अनुसार यह कवि विक्रम की अठारहवी शताब्दी म हुए थे।[6] उक्त आधारो पर सिद्ध होता है कि ग्वाल प्राचीन ईसा की सत्रहवी शताब्दी मे हुए थ। शिवसिंह सरोज म इनका केवल एक कवित्त ही उदाहृत मिलता है जिसके प्रथम चरण म 'ग्वाल कवि' की छाप है।[7] कालिदास का हजारा सम्प्रति अनुपलब्ध है।

---

१ (अ) शिवसिंह सरोज—सस्करण स० १९३४ वि०, पृ० ३७३।

(ब) हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास—अनुवादक डा० किशोरी लाल गुप्त, प्रथम सस्करण, पृ० १८९।

(स) मिश्र बन्धु विनोद द्वि० भाग—तृतीय सस्करण स० १९८४ वि० पृ० ५११।

२ (अ) देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र, पृ० १।

(ब) सरोज सर्वेक्षण—डा० किशोरीलाल गुप्त, स० सन् १९६७ ई० पृ० ६५।

३ सरोज सर्वेक्षण—वही, पृ० ६५।

४ मिश्र बन्धु विनोद—वही, पृ० ५११।

५ हि० सा० का प्रथम इतिहास—पृ०१८८।

६ ग्वाल कवि—प्रभुदयाल मीत्तल, सस्करण स० २०१७ वि० पृ० १।

७ शिवसिंह सरोज—सस्करण स० १९३४ वि०, पृ० ६८।

इससे नहीं कहा जा सकता कि इस म इस कवि के कितन छन्द सग्रहीत हैं। साहित्य म ग्वाल प्राचीन का अधिक परिचय उपलब्ध नहीं होता।

२ ग्वाल कवि बन्दीजन दूसरे ग्वाल कवि वन्दीजन मथुरावासी प्रसिद्ध हैं। इन का उल्लेख गार्सा द तासी, ग्रियसन शिवसिंह सेंगर, मिश्र बन्धु, आचाय रामचन्द्र शुक्ल आदि प्रसिद्ध विद्वानो ने इतिहासो स लेकर वत मान कालीन सभी साहित्य-ग्रन्थो की रिपोट पजाब, राजस्थान और उत्तर प्रदेश की खोज विवरणिकाओं म उल्लिखित हैं। इनके हस्तलिखित और प्रकाशित काव्य-ग्रन्थ उत्तर प्रदेश, राजस्थान और पजाब के कई प्राचीन ग्रन्थागारो मे सुरक्षित हैं। इनका कविता काल स० १८७६ वि० से स० १६१६ वि० माना गया है।[1] अत ये उन्नीसवी शताब्दी ईस्वी के कवि हैं। इनकी लोकप्रियता का अनुमान इस बात से सहज ही हो सकता है कि इनक छन्दों को प्राचीन और अर्वाचीन अनेक प्रसिद्ध काव्य सग्रहो म सम्मानपूण स्थान मिला। इन म से कुछ काव्य सग्रह ये हैं—नख शिख हजारा (परमा नन्द सुहाने) स० १८८३ वि० शृङ्गार सग्रह (सरदार कवि) स० १६०५ वि०, कुसुम वाटिका (वशी पडित—गुरुमुखी म) स० १६१६ वि० के आसपास दिग्विजय भूषण (गोकुल प्रसाद बिसग्रामी ब्रज कवि') स० १६ १६ वि०, सुन्दरी तिलक (म नालाल द्विज कवि') स १०१६ वि०, इ तर वाने यादगार (अमीर लखनवी—उदू म) स० १६३० वि०, उक्ति युक्ति रस कौमुदी (कृष्ण चैतन्य गोस्वामी) स० १६२५ ३१ वि० काय कानन (राजा चक्रधर सिंह रायगढ) स० १६३३ वि० शृङ्गार तिलक (मन्ना लाल द्विज कवि) स० १६३७ वि०, नवीन सग्रह (हफीजुल्ला खा) स० १६१८ ईस्वी सुन्दरी तिलक (भारतदु हरिश्चन्द्र), हफीजुल्ला खा का हजारा स० १६४३ वि०, सुन्दरी सवस्व (मन्नालाल 'द्विज कवि') शृङ्गार सरोज (म नालाल द्विज कवि') स० १६४६ वि०, विजय हजारा (मौलवी अब्दुलहक, राजस्थान) स० १६७१ वि०, रीति शृङ्गार (डा० नगेन्द्र) सन् १६५४ ई०, ब्रजभाषा साहित्य का ऋतु सौन्दय (प्रभु दयाल मीतल) स० २०१८ वि०, निम्बाक माधुरी (ब्रह्मचारी बिहारी शरण) स० १८६३ वि० गोपी-प्रेम पीयूष प्रवाह (कवि प० नवनीत चतुर्वेदी) आदि। इसके अतिरिक्त सेठ कन्हैयालाल पोद्दार ने 'काव्य कल्पद्रुम' मे और डा० हरिशकर शर्मा ने रस रत्नाकर' मे प्रभुदयाल मीतल ने ब्रजभाषा साहित्य के नायिका भेद निरूपण म ग्वाल कवि के छन्दो को उदाहृत किया है। इस प्रकार यह

---

[1] दी साहित्य का इतिहास—आचाय रामचन्द्र शुक्ल।

कवि उत्तर रीतिकालीन आचार्यों की शृंखला की अंतिम कड़ी के रूप मे प्रसिद्ध और ग्वाल प्राचीन से लगभग १५० वर्ष परवर्ती सिद्ध होते हैं। रीति के आचार्य यही कवि ग्वाल हमारे अध्ययन का विषय है।

आधार सामग्री आलोच्य कवि के जीवन वृत्त और कृतित्व पर कोई प्रामाणिक और विशद विवरण एकत्र उपलब्ध नही होता। जो कुछ प्रयास इस विषय म हुए हैं, वे अत्यल्प हैं और अधिकांश खोज की सामग्री ही प्रस्तुत करते हैं। विषय पर संक्षिप्त प्रकाश डालने वाला पहला महत्त्वपूर्ण संस्मरणात्मक उर्दू-ग्रन्थ मुंशी अमीर अहमद मीनाई 'अमीर' लखनवी कृत 'इंतख़ाबे-यादगार' है। 'अमीर' रामपुर स्टेट (उत्तर प्रदेश) के दीवान थे। इन्होंने रामपुर दरबार से सम्बन्धित उर्दू और हिन्दी के ३०० शायरों और कवियों के परिचय संग्रहीत कर के इस ग्रन्थ का प्रकाशन १२६० हिजरी (स० १९३० वि०) म रामपुर से किया था। ग्वाल अपने जीवन के अन्तिम दिनों में रामपुर दरबार म रहे और यही दिवंगत भी हुए थे। अत इस दृष्टि से 'अमीर' के इस ग्रन्थ का पर्याप्त महत्त्व है। इसकी ग्वाल विषयक जीवन और कृतित्व सम्बन्धी सामग्री के निम्नांकित निष्कर्ष हैं—

१ ग्वालराय वल्द सेवाराम राय वृन्दावन के मूल निवासी और मथुरा के सुखवासी थे।

२ बरेली के कवि खुशहाल राय से कवि ने काव्य दीक्षा ली थी।

३ खुशहाल राय के सान्निध्य मे एक मस्त फकीर के आशीर्वाद स्वरूप कवि म आश्चर्यजनक काव्य प्रतिभा का स्फुरण हुआ।

४ बरेली से कवि सीधा लाहौर के महाराजा रणजीतसिंह के दरबार म पहुंचा जहाँ उसके काव्य से महाराजा प्रसन्न हुए।

५ रामपुर के शाहजादा असदादुल्ला खा 'ताब' कवि के शिष्य थे।

६ अकबर शाहजादा सयदुल्ला खा 'इल्म' के आग्रह से नवाब रामपुर ने कवि को मथुरा से रामपुर बुलाया था जहाँ कवि सात महीने रह कर मथुरा लौट गया।

७ दूसरी बार पुन कवि को रामपुर बुलवाया गया, जहाँ वह एक वर्ष और नौ महीने रहकर ६५ वर्ष की आयु मे जिमादी उल अव्वल की नौ तारीख को १२८४ हिजरी मे स्वर्गवासी हो गया।

८ कवि ने बड़े चौदह काव्य ग्रंथ लिखे थे।[1]

---

१ इंतख़ाबे यादगार—मु अमीर अहमद मीनाई 'अमीर', प्राप्ति स्थान सौलत लायब्रेरी तथा रजा लायब्रेरी, रामपुर, पृ० ३२० से ३३२।

इसके एक वर्ष पश्चात् फ्रांसीसी भाषा में लिखे गये फ्रांसीसी विद्वान् गार्सां द तासी के इतिहास ग्रंथ "इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदूई ऐ ऐंदूस्तानी' में कवि विषयक केवल इतना उल्लेख मिलता है कि ग्वाल ने पद्माकर कृत 'गंगा लहरी' के क्रम में जमुना लहरी' लिखी जिसका प्रकाशन बनारस से सन् १८६५ ई० में २० २० पंक्तियों के ३६ अठपेजी पृष्ठों में हुआ।[1]

तासी के प्रायः ६ वर्ष उपरान्त सन् १८७७ ई० में शिवसिंह सेंगर द्वारा लिखित शिवसिंह सरोज' नामक प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ में ग्वाल विषयक परिचय किंचित् विस्तार से है। इसमें कवि के ७ कवित्त और ३ दोहे भी संग्रहीत हैं जिनमें कवि के निवास स्थान, पिता, यमुना लहरी के रचनाकाल का भी उल्लेख मिलता है।[2] इस के कवि विषयक निष्कर्ष निम्नांकित हैं—

१ ग्वाल कवि वृन्दाबन के मूल निवासी और मथुरा के सुखवासी थे।

२ इनके पिता का नाम सेवाराम था।

३ इनको काव्य प्रतिभा जगदम्बा की कृपा से प्राप्त हुई।

४ यमुना लहरी की रचना कातिक पूणमासी संवत् १८७६ वि० को हुई थी।

५ इनके दो बड़े संग्रहीत ग्रन्थ सेंगर जी के पास थे और नखशिख गोपी पच्चीसी, यमुना लहरी साहित्य दूषण साहित्य दर्पण, भक्ति भाव शृंगार दोहा शृंगार कवित्त बहुत सुन्दर ग्रन्थ हैं।[3]

डा० सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने दि माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान नामक इतिहास लिखा है। इसमें कवि विषयक कोई नवीन सूचना नहीं मिलती। ग्रियर्सन ने सेंगर जी की ही सामग्री की कुछ उलट फेर से पुनरावृत्ति की है।[4]

मिश्रबन्धु विनोद में कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व पर कुछ और विस्तार से विचार किया गया है। इसमें हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की

---

१ हिन्दुई साहित्य का इतिहास—अनुवादक—डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण सन् १९५३ ई०, पृ० ६७ व ६८।

२ शिवसिंह सरोज, श्री शिवसिंह सेंगर संस्करण संवत १८३४ वि०, पृष्ठ ६१ व ६२।

३ वही पृ० ३७१ व ३७२।

४ हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास—अनुवादक—डा० किशोरी लाल गुप्त, संस्करण १९५७ ई०, पृ० २३३ व २३४।

खोज रिपोर्टों का भी उपयोग किया गया है। कवि विषयक नवीन सूचनायें कुछ और अधिक हैं। मिश्र बन्धुओं ने कवि की अन्य रचनाओं—रसरंग, हम्मीर हठ, कवि हृदय विनोद, षट् ऋतु रसिकानन्द, राधामाधव मिलन, अलंकार भ्रम भंजन, बंशी बीसा और कवि दर्पण की भी चर्चा की।[1]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में इस कवि की प्रामाणिक रचनाओं में यमुना लहरी, भक्त भावन, रसिकानन्द, रस रंग, कृष्ण जू को नखशिख, दूषण दर्पण, हम्मीर हठ और गोपी पच्चीसी को मान्यता प्रदान करते हुए इनका कविता काल संवत् १६१८ वि० निर्धारित किया। शुक्ल जी ने कवि के काव्य की संक्षिप्त आलोचना भी लिखी[2]

आलोच्य कवि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विशदरूप से विवरण प्रस्तुत करने वाले विद्वानों में कविरत्न श्री नवनीत चतुर्वेदी सबसे पहले लेखक हैं। विशाल भारत के अप्रेल तथा मई सन् १९२६ ई० के दो अंकों में समाप्य ग्वाल कवि शीर्षक लेख में चतुर्वेदी जी ने अपने स्मरण से तथा तत्कालीन स्थानीय विद्वानों से ज्ञान प्राप्त करके ग्वाल विषयक मूल्यवान् सामग्री प्रस्तुत की। वस्तुतः इस कवि पर वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करने वाले अध्येताओं के लिये यह लेख एक मात्र मूलाधार है। इस लेख के निष्कर्ष निम्नांकित हैं—

१ ग्वाल का जन्म माघ शीर्ष शुक्ला द्वितीया संवत् १८४८ वि० को हुआ।

२ कवि के पिता सेवाराम की मृत्यु इनके बाल्यकाल में ही हो गई थी अतः इनकी शिक्षा का प्रबन्ध इनकी निराश्रिता माता के कन्धों पर आ पड़ा।

३ कवि ने वृन्दावन में दयानिधि, काशी में एक विद्वान पंडित, मथुरा में दण्डी विरजानन्द और बरेली में खुशहाल राय कवि से शिक्षा ग्रहण की।

४ कवि देशाटन प्रिय था। उसने नाभा, लाहौर सुकेत मंडी, टोंक और रामपुर राज्यों में राज्याश्रय प्राप्त किया। पंजाब की पहाड़ी रियासतों और राजस्थान के रजवाड़ों में भी घूमे थे।

५ नाभा नरेश जसवन्त सिंह, लाहौराधिपति रणजीत सिंह, शेरसिंह

---

१ मिश्र बन्धु विनोद—द्वितीय भाग, संस्करण सं० १९८४ वि० पृ० ६१ से ६१५।

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, संस्करण २०१५ वि०, पृ० २९८ से ३००।

टोंक और रामपुर के नवाब कवि के प्रशसक थे, जिनसे कवि ने धन और यश अर्जित किया।

६ उरदाम चौबे हरदेव, आदि ग्वाल के प्रतिद्वन्दी और साधूराम, खड्ग किशोर, सुखदेव घटवारिया, इम्दादुल्ला खा 'ताब' आदि शिष्य-कवि थे।

७ खेमचन्द और खूबचन्द ग्वाल के दो पुत्र थे जिनमे से खूबचन्द कवि के जीवनकाल मे और खेमचन्द उसके मरणोपरान्त दिवगत हुआ। ग्वाल का वश न चल सका।

८ ग्वाल ने अपने जीवन के अन्तिम वर्षों मे मथुरा मे एक पक्की हवेली और ग्वालेश्वर महादेव का मन्दिर बनवाया था, जिस पर उसकी मृत्युपरान्त नाथूलाल शाह नामक उनके मित्र ने अधिकार कर लिया था।

९ ग्वाल ने काव्य प्रतिभा से अपार सम्पत्ति अर्जित कर के राजसी ठाठ का जीवन बिताया था। परन्तु उनके अन्तिम दिन कष्ट म व्यतीत हुए।

चतुर्वेदी जी ने श्री रामनरेश त्रिपाठी की रचना कविता कौमुदी भाग १ मे वर्णित ग्वाल की ७० ७५ पुस्तकों का सन्दर्भ देते हुए अपने पूर्ववर्ती लेखको की ग्वाल साहित्य सूची मे साहित्यानन्द तथा 'नेह निवाह नामक दो ग्रन्थ और बढा दिये।[1]

ब्रह्मचारी बिहारी शरण ने 'निम्बार्क माधुरी म ग्वाल को निम्बार्क मतावलम्बी मानकर इनका जन्म स्थान मथुरा और निवास स्थान वृन्दावन बतलाया। इससे पहली बार कवि के जन्म स्थान के विषय म मतभेद खडा हुआ।

उपर्युक्त सामग्री का पूर्ण उपयोग करते हुए आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने 'हिन्दी अनुशीलन' के 'धीरेन्द्र वर्मा विशेषाक' म इस कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व पर अपना वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया, जिसकी विशिष्ट मान्यतायें इस प्रकार हैं—

१ ग्वाल कवि का जन्म स० १८५८ वि० और मृत्यु स० १८२४ वि० मे हुई।

---

१ विशाल भारत —भाग १ खण्ड १ और २, अप्रैल तथा मई १९२९ ई० पृ० ३३६ ३७२।

२ संस्कृत साहित्य शास्त्र का सर्वाधिक आलोडन करने वाले सम्भवत ये प्रथम रीति-कवि थे।[1]

आगे चलकर यह लेख मिश्र जी के 'हिन्दी साहित्य का अतीत' द्वितीय भाग का अंग बन गया।

श्री प्रभु दयाल मीतल ने 'ब्रज भारती'[2] मे ग्वाल के जीवन वृत्तान्त पर विस्तृत विवेचनात्मक लेख लिखे, जिनमे नवनीत चतुर्वेदी की मान्यताओं की उन्होने पुष्टि की। तत्पश्चात् मीतल ने 'ग्वाल कवि' नामक स्वतन्त्र पुस्तक की रचना भी की जिसमे उन्होने अद्यावधि प्रकाशित प्राय समस्त साहित्य सामग्री का पूर्ण उपयोग किया है। श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी द्वारा खोजे गये दो नवीन ग्रन्थों–(१) विजय विनोद तथा (२) इश्क लहर दरयाव–के विवरणों को भी मीतल ने इस ग्रन्थ मे स्थान दिया है।[3] यह पर्याप्त महत्वपूर्ण है।

कवि किंकर की 'ग्वाल रत्नावली'[4] में कवि का जन्म स० १८५१ वि० बताया गया है। 'दिग्विजय भूषण' मे कवि का निधन स० १९२८ वि० बताया गया है।[5] डा० व्रज नारायण सिंह का शोध प्रबन्ध 'कविवर पद्माकर और उनका युग' इस प्रसंग में पर्याप्त महत्वपूर्ण है। इसमे कवि का जन्म काल स० १८५६ वि० और निधन तिथि स० १८२५ वि० मानी गयी है।[6]

कवि पर पत्र पत्रिकाओं मे कई छोटे लेख भी प्रकाशित हुए।[7] प्रस्तुत प्रसंग मे विविध खोज रिपोर्टों का विशिष्ट महत्व है। कवि की उपलब्ध काव्य रचनायें अन्त साक्ष्य के रूप मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं।

अन्त साक्ष्य और बहि साक्ष्य के आधार पर ग्वाल कवि के जीवन की झाँकी यहाँ प्रस्तुत की जा रही है।

---

१ हिन्दी अनुशीलन—धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, वर्ष १३ अंक १–२, जनवरी जून १९६० ई० पृ० ३३१ व ३३६।
२ ब्रज भारती—वर्ष ९ अंक ४ तथा वर्ष ११ अंक ४।
३ ग्वाल कवि—प्रभुदयाल मीतल स० २०१७ पृष्ठ
४ ग्वाल रत्नावली—कवि किंकर, १९४५ ई० भूमिका भाग।
५ दिग्विजय भूषण—सम्पादक–डा० भगवती प्रसाद सिंह, स० २०१६ वि० भूमिका भाग।
६ कविवर पदमाकर और उनका युग—डा० व्रजनारायण सिंह, सन् १९६१ ई० ग्वाल कवि।
७ सरस्वती जनवरी १९५६, वेन बन्धु जनवरी १९५६ आदि।

वश परम्परा और पूवज कवि ने यमुना लहरी, रसिकान द नख शिख कवि दपण रसरङ्ग, बलवीर विनोद, साहित्यान , दगशतक और भक्त भावन म अपने वश, पिता वासस्थान, गुरु आ दि का उल्लेख करके हमारी समस्या को बहुत-कुछ सुलझा दिया है।[1] रसिकान द म कवि ने २१ दोहा म अपने वश-कुल, वश-परम्परा एव पूवजो का इतिहास वणन किया है। कवि ब दी विप्र वश म उत्पन्न था। इस प्रसग म उसने ब दी के समा नार्थी सूत और मागध शब्दो की व्याकरणिक व्युत्पत्ति भी की है। बन्दी को 'व द' धातु स व्युत्पन्न बता कर अपने वश का इतिहास कवि ने निम्नाकित रूप म प्रस्तुत किया है—

> कहत स्तुति वहि धातु यह, सोला मे विदिमान।
> सो बदी कहिये कवि यह निरुक्ति जिय जान ॥५५॥
> ता बदी के बस मे, प्रगटे माथुर राय।
> पडित परम सुजान मति, सज्जन सुमति सुभाय ॥५६॥
> जग नाथ जू प्रघट हुए, तिनके तनय प्रसस।
> विद्या बोध उदार मति, जिन जीते बुधबस ॥५७॥
> तिनके प्रगटे सुखद सुत, श्रीमन राय मुकद।
> मुरलीधर जू तिन तनय, रक्षक श्री ब्रजचद ॥५८॥
> श्री मुरलीधर राय जू, काव्य छद लवलीन।
> राजा सूरज मल्ल की सभा जाय बस कीन ॥५६॥
> भये अस्व कच्छी ति ह, हिमत बहादुर भूप।
> राजमान अति ही भये, सुहृद उदार अनूप ॥६०॥
> श्रीमन सेवा राय जू, तिनके सुत अवतस।
> काव्य गान रस मे भये, सुहृद उदार प्रसस ॥६१॥
> ग्वाल राय तिनकी तनय, श्री ब दावन बास।
> देख्यौ कछु साहित्तमत, ग्र थ पथ रसरास ॥६२॥[2]

---

१ यमुना लहरी छ द सख्या २–३, रसिकान द, प्रथम प्रकरण छ द सख्या ४२ से ६२, नखशिख छ द सख्या ९ कवि दपण, प्रथम क्राति छ द सख्या ३, रसरग, प्रथम उमग छ द सख्या ५, साहित्यान द प्रथम स्क ध छ द सख्या २, दगशतक छ द स० २।

२ रसिकान द (हस्तलिखित) ग्वाल कवि प्रथम प्रकरण, कवि वश वणन।

मुरलीधर राय प्रतीत होते हैं। कवि द्वारा वर्णित राजा सूरजमल भरतपुर का राज्यकाल संवत १८१२ १८२० वि० है।[1] राजा हिम्मत बहादुर ने रजधान जिला बांदा में संवत १८०७ वि० से १८५२ वि० तक राज्य किया।[2] पद्माकर इन्हीं के आश्रित (संवत् १८३५-१८५२ वि०) रहे, मुरलीधर राय इस प्रकार सूरजमल और हिम्मत बहादुर दोनों के समसामयिक सिद्ध होते हैं। कवि के पिता सेवाराम भी कवि थे। बा श्याम सुन्दर दास ने इनको मथुरा निवासी ब्रह्मभट्ट ब्राह्मण बताया है।[3] श्री जवाहरलाल चतुर्वेदी ने इनके लिख 'भवरगीत' नामक काव्य ग्रन्थ की चर्चा की है तथा इनको मथुरा निवासी प्रसिद्ध कवि ग्वाल का पिता माना है।[4] बाबू श्याम सुन्दर दास एवं श्री चतुर्वेदी दोनों ही संवत १८७६ वि० में इनकी उपस्थिति स्वीकार करते हैं। अत अन्तसाक्ष्य और बहिसाक्ष्य से सिद्ध होता है कि कवि के पिता और पितामह दोनों ही कवि थे। श्री नवनीत चतुर्वेदी एवं प्रभुदयाल मीतल को इन दोनों के कवि होने का कोई प्रामाण्य-साक्ष्य नहीं मिला।[5]

नवनीत जी को कवि के पिता के नाम में भ्रान्ति हुई है। वे लिखते हैं कि 'ग्वाल ने अपने को इन्हीं मुरलीधर का पुत्र लिखा है। अब यहाँ पर यह प्रश्न होता है कि ग्वाल के पिता का नाम मुरलीधर था अथवा सेवाराम? यमुना लहरी के प्रमाण से, मिश्रबन्धु विनोद, कविता कौमुदी सब में सेवाराम ही लिखा है। हमने भी बड़े लोगों के मुंह से ऐसा ही सुना है। पर न मालूम रसिकानन्द में ग्वाल जी ने सेवाराम न लिखकर मुरलीधर क्या लिखा है हमारा तो ऐसा अनुमान है कि या तो सेवाराम और मुरलीधर एक ही व्यक्ति के दो नाम हैं अथवा इन दोनों में से ग्वाल एक के औरस और दूसरे के दत्तक पुत्र होंगे। अब तक ग्वाल जी के पिता का नाम निश्चित था पर रसिकानन्द के कारण यह विषय भी विवादग्रस्त होगया है।'[6] इस सम्बन्ध में

---

१ वही। २ दि फाल आफ दि मुगल एम्पायर— सर जदुनाथ सरकार भाग ३, १९३८ ई० पृ०, ३१२ ३१३।

३ हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों की खोज का संक्षिप्त विवरण—प्रथम भाग स० बा० श्यामसुन्दर दास पृ० १८८ खो०रि० १९ १–कवि संख्या १० १९०५ कवि संख्या १४।

४ राष्ट्रभाषा परिषद पत्रिका, पटना—हिन्दी का भवर गीत साहित्य एक परिचय, ले० प० जवाहरलाल चतुर्वेदी, पृ० १८।

५ विशाल भारत–वर्ष २ अंक १, पृ० ४३८, ग्वाल कवि–प्रभुदयाल मीतल पृ० ७ और ८।

६ विशाल भारत, वर्ष २ अंक १, पृ० ४३८।

मे हमने नवनीतजी के पुस्तकालय में प्राप्त रसिकानन्द की यह प्रति देखी। इसके लिपिकार श्री रामलाल शर्मा, मुहल्ला सतघड़ा, मथुरा निवासी,[1] से एक अनुलिपि सम्बन्धी भूल हुई है, जिससे यह बखेड़ा उठा। उसमे दोहा संख्या ६० के पश्चात् ६१ वां दोहा लिपिबद्ध होने से छूट गया है जो रसिकानन्द की जोधपुर वाली दोनों प्रतियां एवं राजा श्री प्रकाशसिंह मन्नापुर (सीतापुर) की प्रतियो मे उपलब्ध है। दोहा यह है—

श्रीमन सेवाराम जू, तिनके सुत अयसर।
काव्य गान रस मे भये, सुहृद उदार प्रसन्न ॥६१॥[2]

तत्पश्चात निम्नांकित दोहा के पढ़ने से सन्देह का यह बखेड़ा स्वयं ही समाप्त हो जाता है—

ग्वाल राय तिनको तनय, श्री वृन्दावन बास।
देख्यौ कछु साहित्य मत ग्रन्थ पथ रसरास ॥६२॥[3]

लिपिकार की एक दूसरी भूल से डा० ब्रजनारायण सिंह सेवाराम के स्थान पर सेवाराय नाम अधिक उपयुक्त समझते हैं। उनका कथन है—'कवि ने अपने पिता का नाम सेवाराय लिखा है। मिश्र बन्धु तथा प० रामचन्द्र शुक्ल ने इन्हे सेवाराम का पुत्र माना है। 'इन्तखाब यादगार' मे भी इनके पिता का नाम सेवाराम तथा सेवा राय दोनों वर्णित हैं। यमुना लहरी के अन्तगत कवि ने अपने पिता का नाम सेवाराम लिखा है। उक्त विवरण से ज्ञात हो जाता है कि कवि सेवाराय का पुत्र था। यमुना लहरी मे कवि ने किस प्रकार सेवाराम लिखा कहा नही जा सकता। सम्भव है किसी लिपिकार की भूल के कारण ऐसा हो गया हो। क्योंकि वंश के पूर्वजों के नाम को देखने से भी पता चलता है कि इन मे पूर्व पुरुष माथुर राव, मुकुन्दराव, मुरलीधर राय आदि थे। इसलिए 'राव' या 'राय' इन के नाम मे परम्परागत ही जुड़ा था। इस दृष्टि से इनके पिता का नाम सेवाराय ही मानना अधिक उपयुक्त जान पड़ता है।"[4]

---

१ श्री नवनीत पुस्तकालय की रसिकानन्द की हस्तलिपि की पुष्पिका के अन्त मे लिपिकार ने लिखा है। 'सं० १९५० भाद्रपद कृष्ण ४ गुरौ लिखित श्री मथुरायाम् सतघड़ा मध्ये रामलाल शर्मणा।

२ ३ रसिकानन्द की जोधपुर वाली प्रतियाँ—प्रथम प्रकरण, कविवंश वर्णन।

४ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० ब्रजनारायण सिंह, १९६६ ई० पृष्ठ १८२।

डाक्टर साहब के इस कथन से हम पूर्ण सहमत हैं कि 'राव' या 'राय' इनके पूर्वजों के नाम में परम्परागत ही जुड़ा था। हमारा नम्र निवेदन है कि यह सेवाराम में भी जुड़ सकता है जैसा कि मुरलीधर में जुड़ा है। वास्तव में कवि के पिता का नाम सेवाराम ही है, जो कवि ने यमुना लहरी (१८७८ वि०) व भक्त भावन (संग्रह काल १९१८ वि०) तक में लिखा है। वंश की अल्ल 'राय' इसमें जुड़ती है। कवि के ग्रन्थों की हमें ऐसी कोई प्रतिलिपि नहीं मिली जिसमें कवि के पिता का नाम सेवाराय लिखा हो। मिश्र बन्धु विनोद से लेकर अद्यतन हिन्दी साहित्य के प्रत्येक प्रकाशित इतिहास में 'सेवाराम' ही लिखा मिलता है। यमुना लहरी की प्रकाशित प्रति में भी 'सेवाराम' मुद्रित है।[1] डा० सिंह द्वारा सन्दर्भित 'तज्किरये यादगार' में भी अमीर साहब लिखते हैं—'ग्वाल राय कविशर वल्द राय सेवाराम कदीम वृन्दावन के रहने वाले थे।'[2] इस में सेवाराय कहीं भी नहीं लिखा है। ऐसा प्रतीत होता है कि डा० सिंह को प्राप्त 'रसिकानन्द' की प्रति में 'सेवाराम' के स्थान पर सम्भवतः 'सेवाराय' लिखा है। 'म और य' की लिपि बनावट में सूक्ष्म सा ही अन्तर तो है अतः यह लिपि की भूल सहज ही सम्भाव्य हो सकती है। वास्तव में कवि के पिता का नाम सेवाराम राय था, जो संक्षेप में सेवाराम लिखा जाता है।

जन्म स्थान : कवि के जन्म स्थान के विषय में अधिक विवाद नहीं है। डा० शिवसिंह सेंगर,[3] डा० जी ए ग्रियर्सन,[4] पं० रामचन्द्र शुक्ल,[5] पं० रामनरेश त्रिपाठी,[6] डा० रसाल,[7] डा० राम कुमार वर्मा,[8]

---

१ प्रकाशक नवलकिशोर प्रेस लखनऊ, तृतीय संस्करण सं० १९४५ वि०।
२ तज्किरये यादगार—पृष्ठ ३२०।
३ शिवसिंह सरोज—श्री शिवसिंह सेंगर संस्करण १९३४ वि० पृ० ३७१।
४ हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास अनुवादक—डा० किशोरी लाल गुप्त पृष्ठ २३३।
५ हिन्दी साहित्य का इतिहास—पं० रामचन्द्र शुक्ल, पृ० २९८ सं० २०१८ वि०, पं० २९८।
६ कविता कौमुदी—सप्तम संस्करण पं० रामनरेश त्रिपाठी १९९७ वि०, पृष्ठ ४०४।
७ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० रमाशंकर शुक्ल रसाल पृ० ४८०।
८ हिन्दी साहित्य का ऐतिहासिक अनुशीलन—डा० रामकुमार वर्मा पृ० ३६४।

डा० भगीरथ मिश्र,[१] प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र,[२] डा० किशोरी लाल गुप्त,[३] डा० महेन्द्र कुमार,[४] प० सूयकान्त शास्त्री,[५] आचाय चतुरसेन,[६] डा० सत्येन्द्र,[७] डा० गुलाबराय,[८] प० अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध,[९] प्रभृति अधिकारी विद्वानो ने ग्वाल को मथुरा निवासी माना है। जो अन्त साक्ष्य से भी प्रमाणित होता है। अमीर साहब ग्वाल को कदीम वृन्दावन के रहने वाले' मानते हुए लिखते हैं—'बाद अजा मथुरा मे आकर अकामत अख्त्यार की,[१०] प० नवनीत चतुर्वेदी,[११] प्रभुदयाल मीतल,[१२] श्रीकृष्ण दत्त बाजपेयी,[१३] राम नारायण अग्रवाल,[१४] डा० व्रज नारायण सिंह,[१५] प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र,[१६] डा० महेन्द्र कुमार,[१७] इत्यादि सम्भाव

---

१ हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास–डा० भगीरथ मिश्र पृष्ठ १८१।

२ हिन्दी साहित्य का अतीत—तृतीय भाग, शृंगारकाल, स० २०२३, प० वि० ना० प्र० मिश्र पृष्ठ ६०३।

३ सरोज सर्वेक्षण–डा० किशोरीलाल गुप्त, १९६७ ई० पृष्ठ २५८।

४ हि० सा० का बृहत इतिहास–सम्पादक डा० महेन्द्र पृ० ३७८ ३७९।

५ हि० सा० का इतिहास–प० सूयकान्त शास्त्री, ग्वाल कवि।

६ हिन्दी भाषा तथा साहित्य का विकास–आचाय चतुरसेन पृष्ठ ३५८ सन १९४९ ई० सस्करण।

७ व्रज सा० का इतिहास–डा० सत्येन्द्र, प० ४३२–४३३।

८ हि० सा० का सुबोध इतिहास–डा० गुलाबराय, पृ० २३३।

९ हि० भा० तथा साहित्य का विकास–हरिऔध, पृ० ४७२ स० १९९७ वि० सस्करण।

१० इन्तख्वाबे यादगार–अमीर अहमद मीनाई अमीर, (उर्दू) पृ० ३२०।

११ विशाल भारत—वष २ अक १ अप्रल १९२९ ई०।

१२ ग्वाल कवि–प्रभुदयाल मीतल, २०१७ वि० प० ६ ८।

१३ सरस्वती—वष ५७ खड १ स० १ जनवरी १९५६ ई० प० ४७ ४८।

१४ देशबन्धु, जनवरी १८५६ ई०।

१५ कविवर पद्माकर और उनका युग–डा० व्रजनारायण सिंह, १९६६ ई० पृ० १८२।

१६ हिन्दी साहित्य का अतीत—द्वि० भाग, शृंगार काल, प० ६०३–६०४।

१७ हि०सा० का बृहत इतिहास षष्ठ भाग प्रधान सम्पादक—डा० नगेन्द्र प० ३७८।

विद्वानो ने भी कवि का जन्म स्थान वृन्दाबन और निवास स्थान मथुरा माना है। यह भी अन्त साक्ष्य से प्रमाणित होता है।

कवि ने अपने ग्रन्थो मे अपने को वृन्दाबन बासी लिखकर अपने मथुरा सुखवास का उल्लेख किया है।

बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखवास।
श्री जगम्ब दई हम कविता विमल विलास॥[१]
ग्वालराय तिनको तनय, श्री वृन्दावन बास।
देख्यो कछु साहित्त मत, ग्रन्थ पथ रस रास॥[२]
वृन्दावन से मधुपुरी किय सुखवास प्रमानि।
विदित विप्र वन्दी विसद, नाम ग्वाल कवि जानि॥[३]
श्री जगदम्बा की कृपा ताकरि भयो प्रकास।
बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखवास॥[४]
बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखवास।
वन्दी विप्र सुग्वाल कवि करत सुग्रन्थ प्रकास॥[५]
श्री जगदम्बा की कृपा, ताकरि भयो प्रकास।
बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखवास॥[६]
बदी विप्र सुग्वाल कवि श्री मथुरा सुखधाम।
प्रगट कियो या ग्रन्थ कों, कवि दर्पन यह नाम॥[७]

उक्त प्रबल प्रमाणो के आधार पर कवि वृन्दावन का (आदि) वासी और मथुरा का सुखवासी सिद्ध हो जाता है। रसरङ्ग के दोहे मे स्वयं कवि ने वृन्दाबन से मधुपुरी (मथुरा) आकर रहने की बात प्रमाणित की है। फिर भी ब्र० बिहारी शरण लिखते है कि ग्वाल मथुरा मे जन्मे और वृन्दावन मे रहे।

वन्दी विप्र सुवंश, जन्म मथुरा पुरि पावन।
विपिन राज बसि कीन्ह भक्ति श्री जुगल रिझावन॥[८]

---

१ यमुना लहरी—नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, १६४५ वि०, प० १ छ० २।
२ रसिकानन्द—(१८७६) प्रथम प्रकरण छ० स० ६२।
३ रसरग—ग्वाल कवि (१६०४ वि०) प्रथम उमग छ० ५।
४ नख शिख—ग्वाल कवि १६१९ वि० छ० स० ६।
५ साहित्यानन्द—ग्वाल कवि १६०५ प्रथम स्कध छ० २।
६ भक्त भावन—ग्वाल कवि १६१६ वि० छन्द।
७ कवि दर्पण—ग्वाल कवि १८८१ छ० ३ प्रथम क्रांति।
८ निम्बार्क माधुरी—ब्र० बिहारी शरण स० १९८७ वि०, पष्ठ ५४८।

कदाचित ग्वाल का उक्त कोई ग्रंथ उनके देखने में तब तक न आया था, अन्यथा वे ऐसा न लिखते।

जन्म संवत निधन संवत ग्वाल के जन्म और निधन की तिथियाँ अब तक सर्वाधिक विवाद ग्रस्त रही हैं। 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास, षष्ठ भाग' से पूर्व लिखे गये सभी इतिहास इस विषय में मौन हैं। कवि के जन्म और निधन सम्बन्धी चार तिथियाँ अब तक मान्य चली आरही हैं—जन्म तिथि—(१) संवत् १८४८ विक्रम (२) संवत् १८५१ विक्रम, (३) संवत १८५६ विक्रम, (४) संवत १८८० विक्रम।

निधन तिथि (१) सं० १९२४ वि० (२) सं० १९२५ वि० एवं (३) सं० १९२८ वि०।

निम्नांकित तिथि तालिका के अवलोकन से विभिन्न विद्वानों के मत-मतान्तर एक ही दृष्टि में स्पष्ट हो जाते हैं—

लेखक का नाम	जन्म तिथि	निधन तिथि
अमीर अहमद मीनाई 'अमीर'[१]	सं० १८५६ वि०	सं० १९२४ वि०
पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र[२]	सं० १८५६ वि०	सं० १९२४ वि०
डा० ब्रजनारायण सिंह[३]	सं० १८५६ वि०	सं० १९२४ वि०
डा० किशोरी लाल गुप्त[४]	सं० १८५८ वि०	सं० १९२४ वि०
कवि किंकर[५]	सं० १८५१ वि०	—
पं० नवनीत चतुर्वेदी[६]	मार्गशीर्ष शुक्ला २ सं० १८४८ वि०	सं० १९२५ वि०
श्री प्रभुदयाल मीतल[७]	मार्गशीर्ष शुक्ला २ सं० १८४८ वि०	१६ अगस्त १८६७ ई० (सं० १९२४ वि०)
पं० श्रीकृष्ण दत्त बाजपेयी[८]	सं० १८४८ वि०	१६ अगस्त १८६७ ई० (सं० १८२४ वि०)

---

१ इन्तखाबे यादगार—पृ० ३२३।

२ हि० सा० का अतीत—द्वितीय भाग, श्रृंगार काल, पृ० ६०३-६०४ सं० २०२३ संस्करण।

३ कविवर पद्माकर और उनका युग—पृ० १८३ व १८४।

४ सरोज सर्वेक्षण—पृ० २६८।

५ ग्वाल रत्नावली—भूमिका पृ० १

६ विशाल भारती—वर्ष २, अंक १, ग्वाल कवि।

७ ग्वाल कवि—पृ० ७ तथा ३७।

८ सरस्वती—जनवरी [illegible] पृ० ४७ ४८।

श्री रामनारायण अग्रवाल[१]	सं० १८४८ वि०	सं० १८२४ वि०
डा० महेन्द्र कुमार[२]	सं० १८४८ वि०	सं० १८२५ वि०
डा० नगेन्द्र[३]	सं० १८४८ वि०	सं० १८२८ वि०
डा० भगवती प्रसाद सिंह[४]	सं० १८४८ वि०	सं० १८२८ वि०
डा० गणपति चन्द्र गुप्त[५] मार्गशीर्ष शुक्ला ७	सं० १८४८ वि०	सं० १८२८ वि०
डा० शिव लाल जोशी[६]	सं० १८८० वि०	—

कवि की जन्म तिथि सं० १८४८ वि० और निधन तिथि सं० १८२५ वि० मानने वालों में पं० नवनीत चतुर्वेदी सर्वाधिक प्राचीन लेखक हैं। चतुर्वेदी जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि उन्होंने जो कुछ लिखा है, वह अपनी जानकारी और बड़े-बूढ़ों से सुना हुआ लिखा है।[७] उनका कोई ठोस और पुष्ट प्रमाण नहीं है। अतः उन की मान्यता प्रमाणित सिद्ध नहीं होती है। उनके मत के अनुगामी विद्वानों द्वारा अनुमानित जन्म एवं निधन तिथियाँ भी मान्य नहीं ठहरतीं। कवि किंकर[८] तथा डा० जोशी ने भी अपने मतों के कोई पुष्ट आधार नहीं दिये, अतः यह भी तिथियाँ मान्य नहीं कही जा सकतीं।

सर्वाधिक प्राचीन लेख अमीर साहब का मिलता है, वे अपने युग के ख्यातनामा शायर और रियासत रामपुर में ४० वर्ष पर्यन्त राज्याश्रित रहे। ग्वाल भी इसी दरबार में लगभग ढाई वर्ष राज्याश्रित रहे। अमीर साहब उनके समसामयिक अभिन्न मित्र कहे जाते हैं।[९] अमीर साहब का कथन है—

---

१ देशबन्धु मथुरा—जनवरी १९५६ ग्वाल कवि श्री रामनारायण अग्रवाल।
२ हि० सा० का बृहत इतिहास—षष्ठ भाग, पृ० ३७८ ३७८।
३ ब्रज साहित्य का इतिहास—सत्येन्द्र, २०२४ वि० पृ० ४०२ ४३३।
४ दिग्विजय भूषण—सम्पादक डा० भगवती प्रसाद सिंह, सं० २०१६ वि० भूमिका पृ० २८।
५ हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास—डा० गणपति चन्द्र गुप्त सन् १९६५ ई०, पृ० ५०७।
६ रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृ० भूमि-शिवलाल जोशी १८६२ ई० पृ० २६३।
७ विशाल भारत—वर्ष २ अंक १ अप्रैल १८२९ ई० ग्वाल कवि श्री नवनीत चतुर्वेदी।
८ ग्वाल रत्नावली—कवि किंकर, भूमिका पृ० १।
९ ग्वाल कवि—श्री मोनल पृ० ३४।

उम्र पसठ साल थी। जिमादी उल अव्वल की नौवी तारीख बारासौ चौरासी हिजरी म राहिए मुल्के अदम हुए।'[1] हिन्दू पचाग के अनुसार यह अरबी तिथि भाद्र पद शुक्ला एकादशी स० १८१४ वि० और अग्रेजी सन् के अनुसार १० सितम्बर सन् १८६८ ई० को पडती है।[2] अमीर साहब की सूचना का आधार स्वय कवि था जो उनके साथ ही उसी दरबार म रहता था दूसरे अमीर साहब की विशाल पुस्तक की रचना निश्चय ही ग्वाल के जीवन काल म हो गई होगी इतना न भी हुआ हो, तब भी इसके लिखने की तैयारियाँ तो कवि की मृत्यु तक पूण हो ही चुकी होगी। पुस्तक लीथो मे १२९० हिजरी सन्[3] म छप कर प्रकाशित हुई थी और इसी वृहत् आकार की पुस्तक साल छै महीने मे लिखना और प्रकाशित कराना असम्भव है। स्वय लेखक जिसकी निधन तिथि का द्रष्टा और साक्षी हो, वह एक पुष्ट तथ्य है। अमीर साहब द्वारा प्राप्त मृत्यु तिथि को ही प्रामाणिक मानना सर्वाधिक तक सम्मत है। निधन तिथि म से ६५ वष घटाने पर कवि की जन्म तिथि स १८५९ वि० निकलती है। इसी तिथि को प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र डा० किशोरी लाल गुप्त तथा डा० ब्रज नारायण सिंह ने भी ठीक माना है।

श्री मीतल ने इस जन्म तिथि का नोटिस लेकर इस मत का निम्नाकित तर्कों के आधार पर खडन करते हुए नवनीत चतुर्वेदी के मत की पुष्टि की है—

(१) कवि ने रसिकानन्द की रचना स० १८७८ वि० म की थी। मीनाई साहब के कवि की जन्म तिथि मानी जाय तो रसिकानन्द की रचना के समय कवि की आयु २० वष के लगभग होनी है। बीस वष की आयु म इस प्रौढ ग्रथ की रचना सम्भव नही है। नवनीत जी के मतानुसार आयु ३१ वष की रही होगी। इस आयु म रचना सम्भावित है[4] मीतलजी नवनीत जी के मत को ही मानने के पक्ष मे हैं।

पर मीतल जी का यह तक अति शिथिल एव तथ्यो के विपरीत है। रीतिकाल म ही देव ने केवल १६ वष की अल्पायु म भाव विलास' और

---

१ इन्तखाबे यादगार—पृ० ३२२।

२ देखिये काशी का हिन्दू प्रेस—पचाग सख्या १८२४वि० पृ० १५ पक्ति ११ स्तम्भ स १, ११ १५ और १७।

३ तदनुसार स० १९३० वि०, अर्थात ग्वाल की मृत्यु के लगभग ६ वष पश्चात।

४ ग्वाल कवि—श्री मीतल, पृ० ६ और ७।

'अष्टयाम' जैसे प्रथम कोटि के उत्कृष्ट ग्रन्थों की रचना कर डाली थी।[1] बाबा दीनदयाल गिरि ने २० वर्ष की अवस्था में ही 'दृष्टान्त तरङ्गिणी' की रचना पूर्ण की थी।[2] ऐसे अन्य दृष्टान्त भी मिलते हैं। दूसरे यदि गहराई से देखा जाय तो इस कवि के ग्रन्थों में रसिकानन्द उसके रीति के अन्य ग्रन्थों से निम्न स्तर का ही ग्रन्थ सिद्ध होता है। आगे चलकर कवि दर्पण, रस रङ्ग साहित्यानन्द आदि ग्रन्थ क्रमशः प्रौढ़ से प्रौढ़तर होते चले गये हैं। डा० ब्रजनारायण सिंह का भी मत है कि कवि का जन्म संवत् १८४८ वि० न होकर संवत् १८५९ वि० मानना अधिक उपयुक्त है।[3] अब रही कवि के निधन संवत् की बात वह अधिक विवादास्पद नहीं है। अमीर साहब के उल्लेख—प्रामाण्य के विपक्ष में कोई अन्य प्रमाण उपलब्ध नहीं है। अतः कवि की मृत्यु तिथि भाद्रपद शुक्ला एकादशी सं० १९२४ वि० तदनुसार १० सितम्बर १८६७ ई० अखण्डित और अतक्य रूप से प्रामाणिक और मान्य तिथि है।

आरम्भिक जीवन और शिक्षा दीक्षा सेवाराम का परिवार संक्षिप्त था—स्वयं, पत्नी और बालक ग्वाल। सेवाराम कवि वृन्दावन के राधारमणीय और राधा वल्लभीय गोस्वामियों के राव थे। ये वृन्दावन में ही अपनी जीविका चलाते थे, आर्थिक दृष्टि से ये अधिक सम्पन्न नहीं प्रतीत होते। इनका मकान कोलिया घाट पर यमुना किनारे वृन्दावन में था। पर आजकल इन राव लोगों का वहाँ कोई परिवार नहीं रहता। नवनीत जी के जीवनकाल तक यहाँ ब्रह्मभट्टों के मकान अवश्य रहे होंगे।[4] नवनीत जी के अनुसार जब ग्वाल केवल ८ वर्ष के थे तभी इनके पिता की मृत्यु हो गई थी। बालक ग्वाल के पालन पोषण और शिक्षा दीक्षा का भार इनकी निराश्रित माता के कन्धों पर आगया। रावों के कुल धर्मानुसार ग्वाल को किसी योग्य शिक्षक से शिक्षा दिलाने को कवि की माँ व्यग्र रही।[5] उन दिनों वृन्दावन में दयानिधि आचार्य अपनी पाठशाला में कवियों को शिक्षा देते थे। इनका प्रकृत नाम दयालाल गोस्वामी और कवि नाम दयानिधि था। ये वृन्दावन के राधा वल्लभीय गोस्वामियों के परिवार में हुए। श्री राधाचरण गोस्वामी ने इनका जन्म काल सं० १९०० वि० बताया है और इनको अन्योक्ति पच्चीसी, उद्धव पच्चीसी

१ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र, पृ० ३६ और ४४।

२ हिं० सा० का इतिहास—आचार्य शुक्ल, पृ० ३७१ व ३७२।

३ कविवर पदमाकर और उनका युग पृ० १८३।

४ विशाल भारत—वर्ष २ अंक १ अप्रैल १९२९ पृ० ४३७। ५ वही।

तथा नसिंह चरित्र नामक काय ग्रथो का कर्त्ता लिखा है।[1] इनक छद विजय हजारा, षडऋतुहजारा आदि मे सग्रहीत मिलते हैं। मिश्रबधु विनोद म भी इस कवि का वणन है।[2] ग्वाल की माता ने पुत्र को दयानिधि के चरणो म डाल दिया। इसी पाठशाला म प्रसिद्ध कवि गोपालसिंह नवीन भी पढ़े थे।[3] कवि हरदेव[4] भी ग्वाल क सहपाठी थे। ग्वाल की शिक्षा यहा अधिक दिन तक न चल सकी।[5] ग्वाल की माता ग्वाल को लेकर अपने पितृगृह काशी चली गई, जहाँ कवि ने लगभग ४ ५ वष तक मनोयोग पूवक सस्कृत क नाटयशास्त्र, कुवलयानन्द, वृत्तरत्नाकर, रसतरगिणी, रस मजरी काव्य प्रकाश, साहित्य दपण, चन्द्रालोक आदि का अध्ययन किया। अमीर साहब का कथन है—'आगाजि सिने शऊर म बहरवउलूम बनारस गये।'[6] अर्थात् समझदार होने पर वे बनारस गये।

नवनीत जी के अनुसार कवि ने काशी से मथुरा आकर दडी विरजानन्द से 'काय प्रकाश पढा।[7] इस विषय म नवनीत जी का आधार क्या रहा कहा नहीं जा सकता। दडी विरजानन्द जी क जिन १८ शिष्यो का महाशय लेखराम ने उल्लेख किया है उनम ग्वाल का नाम नहीं है। दूसरे दडी जी याकरण मातड कहलाते थे और अष्टाध्यायी महाभाष्य निरुक्त, निघटु एव वदिक साहित्य की शिक्षा दत थे,[8] काय की नहीं। तीसर कवि ने दडी जी का अपने ग्रथो म कही भी स्मरण नहीं किया। चौथे दडी जी ग्वाल के समवयस्क थ। उनका जन्म पजाब म स० १८५४ वि० म हुआ[9] और ग्वाल का स० १८५८ मे। ग्वाल ने १६ १७ वष की आयु तक मथुरा काशी, बरेली म शिक्षा समाप्त करके १८ वें वष म राज्याश्रय प्राप्त कर लिया था। पाचव जब दडी जी का मथुरा आगमन स० १८८३ वि० म हुआ[10] तब व ३६ वष के थे और कवि की आयु ३४ वष थी। इस समय तक कवि राज्याश्रय

---

१ मोहन चन्द्रिका—कला ८ किरण ३ ज्येष्ठ स० १९३८ वि०, पृ० ४८ ५०।

२ मि ब वि १९८४ सस्करण पृ० ६६३।

३ मोहन चन्द्रिका—पृ० ५०।

४ विशाल भारत—वष २ अक १ अप्रल १८२६ ई०, पृ० ४३६। ५ वही।

६ इतरवावे यादगार—पृ० ३२०।

७ विशाल भारत—वष २ अक १ पृ० ४३९।

८ आर्येन्द्र धम जीवन—रामविलास वैदिक यन्त्रालय, अजमेर स० १९६१ वि० विरजानद दडी का जीवन चरित्र ले० लेखराम पृ० ३७७।

९ वही, पृ० ३६७। १० वही, पृ० ३७१।

के १४ सुखद वर्ष भोग चुका था और लाहौर दरबार से सम्बद्ध था। अत ग्वाल द्वारा दडी जी से मथुरा में रहकर काव्य प्रकाश पढ़ने की परिस्थिति ही नही बनती। दडी विरजानन्द कवि की गुरुपरम्परा म नही आते। यह सम्भव हो सकता है कि कवि ने दडी जी से कभी काव्यशास्त्र चर्चा मथुरा में की हो। दडी यहाँ पर्याप्त समय तक रहे थे और ग्वाल भी मथुरा आते रहते थे।

काशी से लौटकर कवि ने बरेली के खुशहाल राय नामक कवि को काव्य गुरु बनाया। दयानिधि को सम्भवत वह गुरुरूप म स्वीकार नही कर सके थे। कवि ने गुरुरूप म दयानिधि का कही भी स्मरण नही किया जब कि खुशहाल राय को कवि मुकुट मणि विशेषण के साथ स्पष्टत गुरु घोषित किया है।[1] अमीर साहब इस विषय मे लिखते हैं—खुशहाल राय कदीशर बरेली के यहाँ वारिद थे मुलाकात हुई। बाज किताबें उनसे पढी और हुस्न खिदमत से उस्ताद को अपनी तरफ ऐसा मुतवज्जह कर लिया कि उनको बहुत मुहब्बत हो गई।[2] श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा ने भी बरेली निवासी खुशहाल राय की जीवनी मे ग्वाल को उनका शिष्य लिखा है।[3] बरेली म इनकी एक पाठशाला चलती थी जिसमे कविगण शिक्षा पाते थे। शर्माजी खुशहाल राय का जन्म सवत १८८५ वि० मानते हैं।[4] ग्वाल ने इनको सर्वत्र सम्मान सहित स्मरण किया है।

कवि ने दयाल नामक एक और गुरु का एक कवित्त म गुणगान किया है—

> कामदेव श्री गुरु दयाल महाराज जून,
> कियो उपदेश जामे नेकना धड़क है।
> रसिक समाज ज्ञान सुनि सुख पाव भारी
> प्रीति की समाधि लागी चाहे मा धड़क है॥
> ग्वाल कवि वासा रूप ब्रह्म मे मगन है यो,
> हाव भाव साधे होत ज्ञानिन धड़क है।
> नीबी गहि मन की गरीबी सो मुकति कर्यो,
> जीवन मुकति की बया सूधी सड़क है॥[5]

---

१ श्री खुशाल कवि मुकटमनि तासरि सिष्य विकास।
वासी बृन्दाविपिन के श्री मथुरा सुखवास॥ नखसिख छन्द सख्या ८।

२ इन्तखाबे यादगार—पृ० ३२० ३२१।

३ महाकवि ग्वाल भी आपके ही शिष्य थे।' ब्रह्मभट्ट कवि सरोज २०५५ वि० पृ० २२३ छ० स० १६६। ४ वही, पृ० २२३।

५ कवि हृदय विनोद स० मु० हरिप्रसाद, कान्ती समान प्रेस मथुरा १८८८ ई०।

प० रामनरेश त्रिपाठी तथा सठ कन्हैयालाल पाद्दार ने दयाल गुरु को दयानिधि का ही दूसरा नाम बताया है।[1] परन्तु सम्भवत दयालकवि काशी निवासी गुजराती ब्राह्मण है, जिनके 'दया दीपक' का पता खोज म लगा है, जिसकी रचना स० १८८७ वि० म हुई थी।[2] कुछ गहराई से विचार करने पर निष्कष निकलता है कि दयानिधि और ग्याल दो पृथक कवि है। ग्वाल ने दयानिधि के छ दो को दयालाल गोस्वामी और दयानिधि नाम से उदाहृत किया है और दयाल का नाम दयाल ही पृथक लिखा है। दयालाल गोस्वामी का उपनाम दयानिधि है, दयाल नही। श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा ने 'ब्रह्मभट्ट कवि सरोज' म ग्वाल के आठ गुरुआ का उल्लेख किया है, जिनमे दयानिधि से पृथक काशी के एक अनाम महामहोपाध्याय की भी चर्चा हुई है[3] ऐसा प्रतीत होता है कि वे अनाम गुरु काशी निवासी यही दयाल कवि रहे होग, जि होने दया दीपक' लिखा है। ग्वाल की गुरु परम्परा म दयानिधि दयाल कवि और खुशहालराय के ही नाम प्रामाणिक मानना युक्तियुक्त प्रतीत होता है।

कविता काल आचाय रामच द्र शुक्ल ने स० १८७९ वि० से स० १९१८ वि० तक ग्वाल का कविता काल माना है।[4] अधिकाश विद्वान् इसी मत के पोषक हैं परन्तु यह मत युक्तियुक्त और समीचीन नही है। ग्वाल के दो आरम्भिक ग्रन्थो—१ निम्बाक स्वाम्यष्टक और २ नेह निवाह तथा दृग शतक के उपल ध होने के पश्चात् य दोनो ही तिथियाँ परिवर्तित हो जाती हैं। 'निम्बाक स्वाम्यष्टक' एव नेह निवाह दोनो ही लघु ग्रन्थ भाव भाषा और शली के देखते हुए कवि क आरम्भिक काव्याभ्यास काल की अत्य त सामा य कोटि की कृतियाँ स्थिर होती है। भले ही इनम रचना काल का उल्लेख नही हैं परन्तु य प्रत्येक दशा म यमुना लहरी (स० १८७८ वि०) और रसिकान द (स० १८७८ वि०) जसे प्रौढ ग्रन्थो से पर्याप्त पहले लिखी गई थी। श्री नवनीत चतुर्वेदी का कथन है कि अध्ययनोपरान्त कवि स० १८७५ वि० के लगभग नाभा की ओर रवाना हुआ था।[5] हमारे मत म य रचनाएँ इसी तिथि के आसपास कुछ ही पहले की हैं। अत इनका कविता काल १८७९ वि० से पूव

१ कविता कौमुदी–पृ० ४०७ ब्रजभारती–वष १ अक १ पृ० १३।
२ हि० स० रिपोट १९०४—१५३ पृ० ४०७।
३ ब्रह्मभट्ट कवि सरोज–श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा पृ० १६६।
४ हि दी साहित्य का इतिहास–आचाय रामच द्र शुक्ल, पृ० २६८।
५ विशाल भारत वर्ष १ अक १ अप्रल १९२८ ई०।

ही मानना उचित है। जहाँ तक कविता काल की अंतिम तिथि (स० १६१८ वि०) के निर्धारण का प्रश्न है, दृगशतक का रचना काल स० १६१९ वि० है।

६ १ ६ १

सवत् निधि ससि निधि ससो, फागु पाख उजियार।

द्वितीया रवि आरभ किय, द्रग सत सुख को सार ॥३॥ दगशतक।

भक्त भावन का सग्रह काल भी स० १८१८ वि० है।

६ १ ९ १

सवत् निधि ससि निधि ससी, मास असाढ़ बखान।

सित पराछ द्वितिया रवि विषै प्रगट्यो ग्रन्थ सुजान ॥४॥ भक्तभावन।

इस प्रकार इनका कविता काल स० १८७८ वि० के पूर्व से स० १६१६ वि० तक है।

राज्याश्रय मु० अमीर अहमदमीनाई 'अमीर' ने कवि के राज्याश्रय के विषय में इतना लिखा है—

बाद चन्द रोज पजाब जाकर महाराजा रनजीतसिंह के दरबार मे नौकर हुए बीस रुपये रोज मुकरर हुए। जब रनजीतसिंह ने इस जहान से कूच किया महाराज शेरसिंह के पास रह जागीर पाई और आबरू हासिल की। महाराज के सामने उनके खास अशखास के साथ बराबर कुर्सी पर बैठते थे। जब राजा शेरसिंह मारे गये ग्वालराय अपने वतन को आये और मरफुल हाल बसर करते रहे।[१]

अमीर साहब के उक्त कथन से न तो अन्तर्साक्ष्य पूर्णत सहमत है और न बहिर्साक्ष्य। कवि का महाराजा रणजीतसिंह के दरबारी कवियो की सूची में नाम है।[३] इससे यह निश्चित है कि कवि लाहौर मे रणजीतसिंह के समय से शेरसिंह के राज्यकाल तक रहा।[४] सत्यपाल गुप्त राजा दलीपसिंह के समय तक लाहौर मे उपस्थित मानते हैं।[५] इससे अमीर साहब के कथन की अशत सम्पुष्टि होती है। कवि सर्वप्रथम लाहौर पहुचा यही यह विवादग्रस्त विषय है। कवि को वहाँ २० रु० नित्य वृत्ति मिलती रही, इसका बहुत खोज करने पर भी कोई आलेख्य प्रमाण नही मिला।

---

१ इन्तखावे यादगार—पृ० ३२३।

२ पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास—प० चन्द्रकान्त बाली १९६२ ई०, पृ० २००। ३ वही, पृ० १९६।

४ पजाब का हिन्दी साहित्य—श्री सत्यपाल गुप्त १८५६ ई०, पृ० १०३।

५ रसिकानन्द—ग्वाल कवि, प्रथम प्रकरण, छन्द सख्या २७ से ३३ तक।

नाभा दरबार मे यदि हम कवि के ग्रथो के रचना काल एव रचना स्थान उल्लेख का अतर्साक्ष्य के आधार पर अध्ययन करते हैं तो कवि का नाभा दरबार म राज्याश्रित होना सिद्ध होता है लाहौर म उसके पश्चात्। कवि ने रसिकानन्द की रचना स० १८७८ वि० मे नाभा नरेश की आज्ञा के परिपालन म नाभा म की।[1] नाभा राजवश वणन, नगर वणन, हय तुरग राजसभा वणन[2] प्रसग एव ग्रथ की पुष्पिका कवि के नाभा निवास को प्रमाणित करने को पर्याप्त हैं। नवनीत जी का मत है कि ग्वाल वृन्दावन से स० १८७५ के लगभग नाभा पहुचे और वहाँ १८७८ वि० म रसिकानन्द की रचना की[3] ठीक प्रतीत होता है।

अमृतसर म कवि ने नाभा कब छोडा इसका उल्लेख नही मिलता। पर ग्वाल ने स० १८८३ वि० म अमृतसर म 'हम्मीरहठ' की रचना की, यह तथ्य ग्रथ के निम्नांकित दोहे से प्रमाणित है—

३ ८ ८ १

सवत गुन निधि सिधि ससी कातिक कुहू बखान।

श्री हम्मीर हठ प्रगटयो, अमृतसर सुभ थान॥ (छ० स० १००)

अमृतसर मे ही स० १८८१ वि० म कवि ने कवि दपण की रचना की, जसा कि ग्रथ की प्रतियो के अन्त मे उल्लेखो और इतिहास के तारतम्य से सिद्ध होता है। जो इस प्रकार है—

इति श्री सब गुन गाहक असि वाहक परम उदार रिझवार श्री सरदार साहिब श्री मल्लहना सिह जी कृत ग्वाल कवि विरचित दूषण-दपणे।'

इससे सिद्ध है कि कवि सरदार लहना सिह का आश्रित था। इतिहासकार सयद मुहम्मद लतीफ के अनुसार सरदार लहनासिंह मजीठिया, देश राज सिंह मजीठिया का पुत्र था, जो महाराजा रणजीत सिंह द्वारा पहाडी राज्य का शासक नियुक्त किया गया था परन्तु वह अमृतसर मे ही रह कर राजकाज करता था।[4] डा० दशराज लिखते हैं कि लहनासिंह ने अपने पिता देसासिंह की मृत्यु (स० १८८६ वि०) के उपरान्त स० १९०० वि० तक सफलतापूवक शासन काय किया। लहना सिंह की मृत्यु काशी यात्रा म स० १९०१ वि० म हुई।[5]

---

१ रसिकानन्द—ग्वालकवि प्रथम प्रकरण छद सख्या ४ से २६ तक।

२ हिमाल भारत वर्ष २ अक ७ न६ १९२९ ई०।

३ हिस्ट्री आफ दि पजाब—सयद मुहम्मद लतीफ पृ० ४५८।

४ सिख इतिहास—डा पृ० ४८५।

उपयुक्त ऐतिहासिक प्रमाणो के आधार पर सिद्ध होता है कि कवि ने कवि दपण की रचना अमृतसर म इसी सरदार लहनासिह के आश्रय मे की तथा हम्मीर हठ उसने देसासिह क समय म लिखा। यद्यपि कवि ने देसासिह का नाम ग्रथ मे नही दिया तथापि इतिहास प्रमाण है कि देसासिह स १८६६ से १८८६ वि० तक पहाडी राज्यो के सूबेदार रहे थे।[1] लहना सिंह कई भाषाओ के ज्ञाता और ज्योतिष के अच्छे जानकार थे।

लाहौर दरबार मे महाराजा रणजीतसिंह (स० १८३७ १८६६ वि०) ने अल्पावस्था में ही स० १८४७ वि० म राजकाज सभाला था और १८५८ वि० म महाराजा की उपाधि धारण की। इनकी मृत्यु १८६६ ई० की २७ जून को हुई।[2] कवि ने *विजय विनोद म इनकी मृत्यु की तिथि इस प्रकार दी है—*

अट्ठारा सौ छयानवें, सवत मानो जान।
मास असाढ सु किसन पख, पडवा भयो पयान।। छ स ९५

विजय विनोद की रचना स० १६०१ वि० म पूर्ण हुई।[3] महाराज शेरसिंह की मृत्यु गोली से स० १६०३ वि० म हुई।[4] अत विजय विनोद की रचना शेरसिंह के समय की सिद्ध होती है। विजय विनोद म महाराजा रणजीत सिंह के राज्य स शेरसिंह के काल तक का लाहौर दरबार क षड यन्त्रो और युद्धों का कवि ने ऐसा सजीव चित्रण किया है कि कवि ने जसे स्वय सब कुछ आँखो से देखा हो। ये जीते जागते चित्र रणजीत सिंह के दरबार मे कवि की उपस्थिति क प्रबल उद्घोषक हैं। परन्तु कवि लाहौर

---

१ वही, पृ० ४८५   २ रणजीत सिंह के जन्म की तिथि स० १८३७ के माघ मास बताई जाती है (पृ० २८७) जिस समय उनके पिता महासिंह की मृत्यु हुई थी, रणजीत सिंह की उम्र १० साल की थी इनकी माँ ने दीवान लखपतराय को इनके सलाहाकार के तौर पर नियुक्त किया (पृ० ३०५) लाहौर मे सन १८०१ में उन्होंने एक बडा दरबार किया और महाराजा की उपाधि धारण की (पृ० ३०८) सन् १८३९ ई० की २७ वीं जून को महाराज इस ससार से प्रस्थान कर गये (पृ० ३२७)'— सिख इतिहास डा० देशराज।

३ सवत ससि नभ निधि ससी सावन सुकल समोद।
तिथि जु अष्टमी भौम को प्रगटयो विजय विनोद ।।   छ० स० ७

४ सिख इतिहास—डा० देशराज, पृ० ३१०।

दरबार म किस सवत म उपस्थित हुआ, इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। यह तो निश्चित ही है कि रणजीत सिंह का दरबार हाशम, गणेश, शिवदयाल, जय सिंह, बुध सिंह, ग्वाल जैसे कवियो से अलकृत था।[1] कवि १८८३ वि० तक अमृतसर था, जैसा कि पीछे उल्लेख किया जा चुका है। इसके पश्चात ही कभी वह रणजीत सिंह की मृत्यु (स० १८८६ वि०) से पूव लाहौर आया होगा जहाँ पर स० १६०१ वि० तक उसका रहना सिद्ध होता है।

पटियाला मे बाली जी का कथन है कि 'लाहौर से चलकर ग्वाल पटियाला आये तथा जीवन के अन्तिम दिनों म नाभा रहे।[2] ग्वाल का नाम पटियाला राज्य की कवि सूची मे नही मिलता और न वहाँ उनका कोई ग्रथ ही उपलब्ध है। इसमे कवि का पटियाला मे राज्याश्रित रहना सिद्ध नही होता भ्रमणाथ ही गय होंगे।

पुन नाभा मे बाली जी का मत है कवि लाहौर दरबार छोड कर पुन नाभा पहुचा था।[3] राजा जसवन्त सिंह की मृत्यु (स० १८६७ वि०) के उपरान्त उनके १८ वर्षीय पुत्र देवेन्द्र सिंह नाभा के शासक हुए जो सवत १८०४ वि० म अग्रेजो द्वारा अपदस्थ कर दिये गय। इसके पश्चात उनके पुत्र भरपूर सिंह ८ वष की वय म राजा बनाये गये।[4] कवि भरपूर सिंह के आश्रित रह और यही कवि ने गुरुपचासा (मौलिक काव्य) तथा मीरहसन की प्रसिद्ध मसनवी 'सिहर उल बयान' का 'इश्कलहर दरयाव' नाम से स० १६१७ वि० म काव्यानुवाद प्रस्तुत किया।[5] जो स० १६२० वि० म मुद्रित और प्रकाशित भी हुआ।[6] यह ग्रन्थ राजा की आज्ञा से ही लिखा गया था।[7] अत नाभा म कवि दूसरी बार भी आश्रित रहा प्रमाणित हो जाती है।

श्री नवनीत चतुर्वेदी लिखते हैं कि 'ग्वाल ने लाहौर से चलकर पजाब

---

१ पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास—बाली, पृ० १९९।
२ वही पृ० १९६। ३ वही, पृ० १९६।
४ हिस्ट्री इतिहास—डा० देशराज, पृ० ४०६ ४०७।

७ १ ९ १
५ सवत रिसि ससि निधि ससी, माघ चाँदनी चाव।
तेरस ससि कों प्रगट हुआ, इश्कलहर दरयाव॥

पहली दास्तान, छ० स० ४७

६ सप्तसिधु—पटियाला वष ३ अक १२ दिसम्बर १९५६ ई०, पृ० ५६।
७ इश्कलहर दरयाव—पहली दास्तान, गुरुपचासा छ० सं० ५ से ७ तक।

उपयु क्त ऐतिहासिक प्रमाणो के आधार पर सिद्ध होता है कि कवि ने कवि दर्पण की रचना अमृतसर के इसी सरदार लहनासिंह के आश्रय मे की तथा हम्मीर हठ उसने देसासिंह के समय मे लिखा। यद्यपि कवि ने देसासिंह का नाम ग्रन्थ मे नही दिया, तथापि इतिहास प्रमाण है कि देसासिंह स १८६६ से १८८६ वि० तक पहाडी राज्यो के सूबेदार रहे थे।[1] लहना सिंह कई भाषाओ के ज्ञाता और ज्योतिष के अच्छे जानकार थे।

लाहौर दरबार मे महाराजा रणजीतसिंह (स० १८३७ १८६६ वि०) ने अल्पावस्था मे ही स० १८४७ वि० मे राजकाज सभाला था और १८५८ वि० मे महाराजा की उपाधि धारण की। इनकी मृत्यु १८६६ ई० की २७ जून को हुई।[2] कवि ने विजय विनोद मे इनकी मृत्यु की तिथि इस प्रकार दी है—

अट्ठारा सौ छयानवें, सवत मानो जान।
मास असाढ सु किसन पख पडवा भयो पयान॥ छ स ९५

विजय विनोद की रचना स० १६०१ वि० मे पूर्ण हुई।[3] महाराज शेरसिंह की मृत्यु गोली से स० १६०३ वि० मे हुई।[4] अत विजय विनोद की रचना शेरसिंह के समय की सिद्ध होती है। विजय विनोद मे महाराजा रणजीत सिंह के राज्य से शेरसिंह के काल तक का लाहौर दरबार के षड यन्त्रो और युद्धो का कवि ने ऐसा सजीव चित्रण किया है कि कवि ने जसे स्वय सब कुछ आँखो से देखा हो। ये जीते जागते चित्र रणजीत सिंह के दरबार मे कवि की उपस्थिति के प्रबल उद्घोषक हैं। परन्तु कवि लाहौर

---

१ वही, पृ० ४८२ २ रणजीत सिंह के जन्म की तिथि स० १८३७ के माघ मास बताई जाती है (पृ० २८७) जिस समय उनके पिता महासिंह की मृत्यु हुई थी रणजीत सिंह की उम्र १० साल की थी इनकी माँ ने दीवान लखपतराय को इनके सलाहकार के तौर पर नियुक्त किया (पृ० ३०५) लाहौर मे सन १८०१ मे उन्होने एक बड़ा दरबार किया और महाराजा की उपाधि धारण की (पृ० ३०८) सन १८३९ ई० की २७ वीं जून को *महाराज इस ससार से प्रस्थान कर गये* (*पृ० ३२७*) — सिख इतिहास डा० देशराज।

३ सवत ससि नम निधि ससी सावन सुकल समोद।
तिथि जु अष्टमी भौम को प्रगटयो विजय विनोद॥ छ० स० ७

४ सिख इतिहास—डा० देशराज पृ० ,१०।

दरबार में किस सवत मे उपस्थित हुआ, इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। यह तो निश्चित ही है कि रणजीत सिंह का दरबार हाशम, गणेश, शिवदयाल, जय सिंह, बुध सिंह, ग्वाल जैसे कवियो से अलकृत था।[1] कवि १८६३ वि० तक अमृतसर था, जैसा कि पीछे उल्लेख किया जा चुका है। इसके पश्चात ही कभी वह रणजीत सिंह की मृत्यु (स० १८६६ वि०) से पूव लाहौर आया होगा जहाँ पर स० १६०१ वि० तक उसका रहना सिद्ध होता है।

पटियाला मे बाली जी का कथन है कि 'लाहौर से चलकर ग्वाल पटियाला आये तथा जीवन के अन्तिम दिनों मे नाभा रहे।[2] ग्वाल का नाम पटियाला राज्य की कवि सूची म नही मिलता और न वहाँ उनका कोई ग्रथ ही उपलब्ध है। इससे कवि का पटियाला म राज्याश्रित रहना सिद्ध नही होता, भ्रमणाथ ही गये होंगे।

पुन नाभा में बाली जी का मत है कवि लाहौर दरबार छोड कर पुन नाभा पहुचा था।[3] राजा जसवन्त सिंह की मृत्यु (स० १८६७ वि०) के उपरान्त उनके १८ वर्षीय पुत्र देवेन्द्र सिंह नाभा के शासक हुए जो सवत १६०४ वि० मे अग्रेजो द्वारा अपदस्थ कर दिये गये। इसके पश्चात उनके पुत्र भरपूर सिंह ८ वष की वय मे राजा बनाये गये।[4] कवि भरपूर सिंह के आश्रित रहे और यहीं कवि ने गुरुपचासा (मौलिक काव्य) तथा मीरहसन की प्रसिद्ध मसनवी 'सिहर उल बयान' का 'इश्कलहर दरयाव' नाम से स० १६१७ वि० म काव्यानुवाद प्रस्तुत किया।[5] जो स० १६२० वि० म मुद्रित और प्रकाशित भी हुआ।[6] यह ग्रथ राजा की आज्ञा से ही लिखा गया था।[7] अत नाभा म कवि दूसरी बार भी आश्रित रहा प्रमाणित हो जाती है।

श्री नवनीत चतुर्वेदी लिखते हैं कि ग्वाल ने लाहौर से चलकर पजाब

---

१ पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास—बाली, पृ० १६६।
२ वही पृ० १६६। ३ वही, पृ० १६६।
४ सिख इतिहास—डा० देशराज पृ० ४०६ ४०७।

७ १ ९ १

५ सवत रिसि ससि निधि ससी, माघ चाँदनी चाव।
चौदस ससि को प्रगट हुआ, इश्कलहर दरयाव॥

पहली दास्तान, छ० स० ४७

६ सप्तसिधु—पटियाला वष ३ अक १२ दिसम्बर १६५६ ई०, पृ० ५६।
७ इश्कलहर दरयाब—पहली दास्तान, गुरुपचासा छ० स० ५ से ७ तक।

की सुरेत मण्डी में अपना डेरा डाला। वहाँ के शासक ने उनका स्वागत किया, ग्वाल वहीं रहने लगे और अपने दोनों लड़का, खूबचन्द और रामचन्द, को भी वहीं बुला लिया। यहाँ ग्वाल को जीविका के लिये एक गाँव भी मिला था। कुछ समय पश्चात् ग्वाल खूबचन्द के साथ मथुरा आगये और रामचन्द को वहीं मण्डी में गाँव आदि के प्रबन्ध के लिये छोड़ दिया। मथुरा आकर ग्वाल जी कभी-कभी राजपूताने की रियासतों में भी दौरा लगा आते थे। टोंक के नवाब के लिये उन्होने खड़ी बोली में कृष्णाष्टक बनाकर सुनाया जिसे उन्होंने खूब पसन्द किया।[1] यह प्रमाणित नहीं होता।

मण्डी मे ग्वाल का सुकेत मण्डी मे रहना प्राय निश्चित है। यहा के शासक बलबीर दयाल की आज्ञा से कवि ने बलबीर विनोद ग्रन्थ की रचना की थी, यहाँ कवि को एक गाँव मिलने की भी चर्चा साहित्य में हुई है। परन्तु इस तथ्य के प्रामाण्य मान्य नही मिलते।

टोंक मे कृष्णाष्टक मे न तो इस ग्रन्थ का रचना काल है और न शासक का नाम सकेत ही है। कृष्णाष्टक की भाषा अरबी फारसी मिश्रित खड़ी बोली है। इससे स्पष्ट है कि किसी उर्दू फारसी के ज्ञाता को सुनाने को कवि ने ये छन्द लिखे थे जो हिन्दू भी हो सकता है और मुसलमान भी। टोंक का नवाब भी हो सकता है और रामपुर का भी कवि रामपुर में भी राज्याश्रित रहा था। टोंक में इसका कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता अत नवनीत जी के इस कथन की नही की जा सकती।

अलवर मे कवि का अलवर के दरबारी कवि पूर्णसिंह ब्रह्मभट्ट के साथ शास्त्रार्थ हुआ था। डा० मोतीलाल गुप्त इस विषय मे लिखते है—

'पूर्णमल्ल जी अलवर नरेश महाराज विनय सिंह जी के राजकवि थे। इन का जन्म स० १८८७ वि० मे हुआ। हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि ग्वाल से इनका काव्य विवाद हुआ था। अपनी पराजय स्वीकार करते हुए ग्वाल कवि ने कहा था—इस समय सरस्वती आप पर ही प्रसन्न हैं।'[2] इस विषय में हम कोई मूल आलेख प्रमाण नही मिल पाया।

रामपुर मे ग्वाल का अन्तिम जीवन रामपुर में व्यतीत हुआ वहाँ के शासक विद्या व्यसनी हिन्दी उर्दू के ज्ञाता और साहित्यकार थे। उर्दू के

---

१ विशाल भारत—वर्ष २ अक २ ग्वाल कवि श्री नवनीत चतुर्वेदी।

२ मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन—डा० मोतीलाल गुप्त स०२०१९ वि० परिशिष्ट ३, पृ० २८७।

प्रसिद्ध विद्वान और शायर 'अमीर लखनवी' ४० वर्ष तक रामपुर मे रहे।[1] नवाबजादा इस्मादुल्ला खां 'ताब' ग्वाल के शिष्य हो गये थे।[2] यही कवि का न्हा'त हुआ, अमीर साहब ने अपने ग्वाल विषयक संस्मरणों में निम्नांकित उ'लेख किया है—

'शाहजादा इस्मादुल्ला खां 'ताब' जिनका जिक्र खुश हरफ ताय दरश्त में गुजरा उनके शागिर्द थे। एक जमाने में शाहजादा मौसूफ मथुरा गये हुए थे कि उनके साथ अक्सर शाहजादा सयदुल्ला खां 'रुस्तम' अपने वालिद के पास गये। ग्वाल राय से मुलाकात हुई। शाहजादा सैयदुल्ला खां ने उसी माफक साबिका के ऐतबार से नवाब फिर दौस मकान नासिब मराह के हुजूर में उनका जिक्र किया। नवाब ममदूह ने उनकी मारफत उनको बुलाया। बहुकुम महमान नवाजी मदारात से मौरूफ इनायत फरमाया। नौकरी उन्होंने मंजूर न की। सात महीने के बाद रुखसत हुए। जब बन्दगाने आलीशान अक्बालहू ने सन्द पर जलूस फरमाया तो रहमियत अरबाब कमाल आया फिर ग्वाल राय को तलब फरमाया। हरचन्द कमारत से होसला नक्ल ओ हरकत का बाकी तनहा मगर शहरी कदर अफजाई बन्दगान हुजूर का जो सुना बिला ताम्मुल आये और कदर दानिया के मजे उठाये। सौ रुपये माहवारी करार पाया। एक साल नौ महीने यह ताल्लुक रहा। पैंसठ बर्ष की उम्र थी कि जमादी उल अव्वल की नवीं तारीख बारा सौ चौरासी हिजरी में राहिय मुल्के अदम हुए।'[3]

मकान निर्माण—कवि ने अपने जीवन के अंतिम दिनों में मथुरा में यमुना किनारे एक पक्का मकान भी बनवाया जो ग्वाल की हवेली के नाम से आज भी प्रसिद्ध है। यह मुगल स्थापत्य कला का एक सामान्य प्रतीक है।[4] यह तीन मंजिल का १८ कमरा, तिदरिया और चौड़े सहन वाला पक्का मकान है। भूमिगत तहखाने भी बड़े हैं। मकान से संलग्न एक शिवालय भी है जो कवि ने सं० १८२१ वि० में अपनी भजन पूजा के लिये निर्माण कराया था। मंदिर में शिव जगदम्बा की मूर्तियां हैं।[5] इस पर एक छोटा सा लाल पत्थर

---

१ उर्दू साहित्य का परिचय—प० हरिशंकर शर्मा, पृ० २३१ २३२।

२ इंतखाबे यादगार—अमीर अहमद मीनाई, पृ० ३२३।

३ इंतखाबे यादगार—पृ० ३२४। इनकी निधन तिथि हिंदू पंचांग के अनुसार भाद्रपद शुक्ला ११ सं० १९२४ वि० है।

४ देखिये परिशिष्ठ। ५ वही।

भी लगा है। जिस पर हि ी म मन्दिर मे मूर्तियाँ पधराने की तिथि इस प्रकार उत्कीर्ण है—

उनइस सत इक बीस धरि शिवराती भृगुवार ।
पधराये प्रभु ग्वाल कवि, गवरि सभु सुखसार ॥

यह पटिया काली हो रही है इसस इसका छाया चित्र नही बन सका। परन्तु इस का लेख पठनीय है। यह मन्दिर ग्वालेश्वर के नाम से विख्यात है और मन्दिर वाला चबूतरा ग्वाल चबूतरा कहलाता है। चबूतरा और मन्दिर सावजनिक सम्पत्ति है और हवली एक स्थानीय जौहरी के अधिकार म है।

ग्वाल इस स्थावर सम्पत्ति का उपयोग कम ही कर पाये। मकान निर्माण के लगभग ४ वष उपरा त वे दिवगत ही हो गये थे और उसस पूव लगभग २ वष तक व रामपुर म रहे थ।

सन्तान कवि के दो पुत्र थे। खूबच द और छोटे खेमचन्द थे दोनो ही विवाहित थे। कविता करने की प्रतिभा दोना ही म थी। नवनीत जी के अनुसार निस्सन्तान खूबचन्द की मृत्यु युवावस्था म ही हो गई थी। खेमचन्द कवि के साथ मण्डी म रहने लगा था, जहाँ से वह लौट कर पुन मथुरा नहीं आया। न जाने उसका क्या हुआ? उसकी पत्नी कवि की मृत्यु तक हवेली मे रही। हवेली को कवि के एक विश्वासघाती मित्र नाथूलाल शाह ने छीन कर उसे निकाल दिया जिससे वह उन्मादावस्था म जीवन पयन्त घूमती रही और मथुरा मे ही कही मर गई। श्री नवनीत जी ने उसे देखा था, वह भी निस्सन्तान थी। कवि का कोई वशधर शेष नहीं रहा। खूबचन्द की मृत्यु के उपरान्त कवि को *मिला गाँव भी राज्य ने छीन लिया था।*[1] हवली और ग्वालेश्वर मन्दिर का छोड कर और कोई अचल सम्पत्ति कवि के स्मृति रूप म शेष नहीं।

मित्र और प्रशसक मथुरा म कवि का प्रमुख मित्र नाथूलाल शाह था, जिसका मकान कवि के पास ही था। कवि अपने मकानादि को इसी की देख रेख म छोड जाया करते थे। कवि की पुत्रवधू यही रहा करती थी। कवि की मृत्यु के पश्चात शाह ने कवि क हवली स्थित विशाल पुस्तकागार म आग लगा दी, जिसम सस्कृत और हिन्दी के अपार ग्रन्थ और कवि का पर्याप्त हस्त लिखित साहित्य विलुप्त हो गया। शाह कवि का विश्वासघाती मित्र सिद्ध

---

1 विशाल भारत—वष १ अक १ अप्रल १९२९ ई०।

हुआ। स्वामी शिवान ?, गोस्वामी पुरुषोत्तमलाल के बगानी घाट स्थित मन्दिर पर कवि बैठकर कवितायें सुनाया करता था। गो० पुरुषोत्तमलाल जी ने कवि का काव्य प्रशंसा में एक स्वर्ण की अंगूठी पुरस्कार स्वरूप दी थी।[1] मथुरा के उरदाम चावे ग्वाल के प्रतिद्वन्द्वी थे। दोनों में बड़ी लागडाट रहती थी।[2] बाहरी कवियों में नाभा के वंशी पंडित और बीरसिंह 'बल' ग्वाल के अभिन्न सखा कहे जाते हैं। प० चन्द्रशेखर वालों के शब्दों में 'ग्वाल की वंशी पंडित के साथ गहरी छनती थी। दोनों का काव्यास्वादन एक दूसरे का पूरक बन गया था।'[3] चन्दौसी के प० मधुसूदनदास कवि के मित्र थे, जिनसे कवि लाहौर से लौटते समय अन्तिम बार मिला था।[4] रामपुर के अमीर अहमद मीनाई और लाहौर के काश्मीरी जल्हा पंडित कवि के अन्य प्रशंसकों में से थे। राजाओं और नवाबों में पंजाब केशरी महाराजा रणजीतसिंह, नाभा के राजा जसवन्तसिंह, देवेन्द्रसिंह, भरपूरसिंह, मंडी के बलवीर दयाल, अमृतसर के देसासिंह और लहनासिंह, रामपुर के नवाब कल्बे अली खां, इम्दादुल्ला खां 'ताब', सयदुल्ला खां 'इलम' और टोंक के नवाब कवि के अनन्य प्रशंसक रहे थे। दयानिधि तथा खुशहालराय का तो आशीर्वाद ही इनको प्राप्त था।

शिष्य— कवि के पांडित्य और काव्य प्रतिभा का लोहा इसके प्रतिद्वन्द्वी कवि भी मानते थे। दूर दूर के साहित्यकार ग्वाल से काव्य की शिक्षा लेने को आते थे। इनके शिष्यों की तालिका पर्याप्त बड़ी बनती है। सर्वश्री खड्ग किशोर, साधूराम, मोहन, सुखदेव और इम्दादुल्ला खां 'ताब' ने मथुरा में ही कवि का शिष्यत्व ग्रहण किया था।[5] पंजाब में सरदार देसासिंह, लहनासिंह और काहनसिंह कवि के शिष्यों में प्रमुख हैं।[6] इनमें से खड्ग किशोर और साधूराम प्रसिद्ध कवि हुए हैं।

प्रतिद्वन्द्वी कवि— समसामयिक प्रतिभ कवियों में परस्पर प्रतिद्वन्द्विता होना स्वाभाविक है। कविवर पद्माकर और चन्द्रशेखर वाजपेयी ग्वाल के प्रमुख

---

१ नवनीत चतुर्वेदी–ग्वाल कवि विशाल भारत वर्ष २ अंक १।

२ ग्वाल कवि–प्रभुदयाल मीतल पृ० ४२।

३ प० प्रा० हि० सा० का इतिहास, पृ० ३५२।

४ ग्वाल कवि–प्रभुदयाल मीतल, पृ० ३६।

५ वही पृ० ३८ से ४०।

६ लेखक द्वारा सम्पादित 'महाकवि ग्वाल स्मृति ग्रन्थ' (१९६८ ई०) में शमशेरसिंह अशोक का लेख महाकवि ग्वाल और उनकी काव्य साधना, पृष्ठ ४३।

ईश्वर का विश्वास करने वाला हो तो भी यदि पास में धन है तो निश्चिन्त बना रहेगा।

कवि गौडेश्वरों की भक्ति उपासना पद्धति से प्रभावित था, उसने स्वकीया के रूप मे ही राधाजी के श्रृंगार का वर्णन किया है। परन्तु परकीया प्रेम को भी उन्होंने गम्भीरता के साथ मान्यता प्रदान की है, परन्तु इस क्षेत्र में वे प्रेम निर्वाह को अनिवार्य मानते हैं। मानव का धर्म है कि जिसे एक बार प्रेम किया, उसे फिर त्यागना कैसा ?

ग्वाल जहाँ जीवन मे चार्वाक के 'यावज्जीवेत् सुखं जीवेद् ऋणं कृत्वा घृतं पीवेद्', सिद्धान्त के अनुयायी थे, वहाँ मानवता के सात्विक गुणों के समाहार करने के भी पक्षपाती थे। मानवता की कसौटी लोक जीवन है। जिसकी लोकप्रियता यहाँ है, उसकी चाह परलोक मे भी होती है। जो इस लोक मे बदनाम है उसकी सर्वत्र ही निन्दा होती है।

अनुश्रुति है कि कवि का ज्येष्ठ पुत्र खूबचन्द अल्पायु मे ही काल कवलित हो गया था। इसके जन्म पर कवि ने भारी हर्षोल्लास मनाया था। 'दिया है खुदा ने खूब खुसी करो ग्वाल कवि' वाला कवित्त कवि ने इसी के जन्म पर लिखा था। खूबचन्द होनहार था और उसमें अच्छी काव्य प्रतिभा थी।[1] उसके निधन ने कवि को आहत कर दिया और शोक में कवि की करुणा फूट पड़ी। इससे कवि के अन्तर्मन की झांकी मिलती है।

ग्वाल के काव्य से प्रकट होता है कि उनके जीवन मे हास्य का अभाव था यद्यपि वे श्रृंगारी थे और श्रृंगार तथा हास्य दोनो मित्र रस हैं। हाँ, ग्वाल मे व्यंग्य के दर्शन पर्याप्त मात्रा में होते हैं।

मानव स्वभाव का ग्वाल को गम्भीर अनुभव था। संघर्षों ने कवि को जीवन के कटुतिक्त अनुभवो का अच्छा ज्ञान करा दिया था। इससे कवि के कथनो मे एक तीखापन आ गया है जो कवि की स्पष्टवादिता और स्वभाव की रूक्षता को मार्मिक बनाता है। कवि ने पर्याप्त पर्यटन और ज्ञान के आधार पर कलियुगी विडम्बनाओं को मार्मिकता से वर्णित किया। कवि को दानी और सूम दाताओं के कटु मधुर अनुभव हुए थे। जो उनके काव्य मे स्पष्ट हैं।

ग्वाल भाग्यवाद के सिद्धान्त मे विश्वास करते हैं। जो ईश्वर की इच्छा है उसी के अनुसार मनुष्य को चलना पडता है। इसी में उसे सन्तोष करना चाहिये। ईश्वर में उनका अनन्य विश्वास था।

---

१ ग्वाल कवि—प्रभुदयाल मीतल, पृ० २८।

ग्वाल के घुमक्कड़ी स्वभाव 'देस देस घूम घूम दिल बहलाना है' पंक्ति से ज्ञात होता है। जीवन मे वे पर्याप्त घूमे थे, जिसके कारण वे कई भाषाओ के ज्ञाता और अनुभवी हो गय थे। अपने ज्ञान और पांडित्य पर उनको इतना विश्वास था कि अपने ग्रंथो मे उन्होने कई दर्पोक्तिया भी लिखी हैं। इनके साहित्य को देखकर ये विश्वासोक्तिया लगने लगती हैं।

कहने की आवश्यकता नही कि कवि का आत्म विश्वास उनके ग्रंथो म झलका है और वह इन दर्पोक्तियों का अधिकारी भी है। ये ग्रन्थ कवि को स्पष्टवादी, साहसी और सक्षम सिद्ध करने को पर्याप्त हैं। ग्वाल मे कवि सुलभ भावुकता, आक्रोश और भरसना आदि के दर्शन भी दुलभ नही हैं। विद्रोही अतरसिंह, लहनासिंह तथा अजीतसिंह द्वारा लाहौर नरेश शेरसिंह, उनके मन्त्री ध्यानसिंह और कुवर प्रतापसिंह की विश्वासघातपूर्ण हत्या पर कवि की भावुकता सहसा आक्रोश म परिणत होकर तीव्र भरसना के रूप म प्रस्फुटित होती है। कवि की अन्तमचेतना अन्याय, विद्रोह, विश्वासघात और हत्या को सहन नहीं कर सकती। वह घातको को 'नीच' और 'महानीच' तक कहने में नही चूकता।

प्रतिभा ग्वाल ने एक सामान्य स्थिति के परिवार मे जन्म लिया परन्तु अपनी प्रतिभा और अध्यवसाय के बल पर उसने प्रभूत सम्पत्ति और प्रचुर यश गौरव अर्जित किया। स्वय वह कुकुरमुत्ता ने शाही उद्यानों मे उगे गुलाबो की सी सुरभि दिगन्तों मे विकीर्ण की, यह अध्ययन का विषय है। कवि के आत्म निर्माण की पृष्ठभूमि म महानता की आकाक्षा का एक कठोरव्रत छिपा हुआ है। जाति और निधनता की हीन भावना-ग्रंथि ने रचनात्मक क्षेत्र में कमाल कर दिखाया। कवि में जन्मजात प्रतिभा तो थी ही, परन्तु महत्वाकांक्षा ने उस पर शाण रखी। मनोयोग, ध्येय की एकाग्रता, कर्मनिष्ठा और सबसे ऊपर कठोर अध्यवसाय ने कवि म असामान्य चमक उत्पन्न कर दी। यह महत्वाकाक्षा ही थी जिसने कवि को शिक्षा के लिये काशी और बरेली तथा राज्याश्रय को लाहौर, नाभा, टोंक और रामपुर तक पहुचाया। मनोयोग ने कवि को संस्कृत शास्त्र का पंडित, ध्येय की एक निष्ठा ने सफल कवि, कर्मनिष्ठा ने साहित्यानन्द जसे महाग्रन्थ का रचयिता और महत्वाकाक्षा ने प्रचुर धन सम्पत्ति का स्वामी बनाया था।

जनश्रुतियाँ ग्वाल के विषय म अनेक जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं, अधिकांश उसकी काव्य प्रतिभा के उद्भव तेज, विद्वता, गौरव और ख्याति से

तदुपरान्त कवियों द्वारा हिंदू धम ग्रथो—रामायण, महाभारत, भागवत आदि पर निरतर कई पीढियों तक लिखा जाता रहा।[1] इन्ही विशेपताओ ने ग्वाल को सवधम समन्वयक दृष्टिकोण प्रदान किया। हिंदुओ का बहुदेववाद इसके मूल में था।

कवि ने अपने विस्तत देशाटन के अनुभवो से व्यवहार कुशलता, वाग्विदग्धता और प्रत्युत्पन्नमति को पैना किया था। यही कारण था कि हिन्दू होते हुए भी वह मुसलमान और सिखो द्वारा प्रशसित और पुरस्कृत हुआ। राय होकर भी उसने उच्च वण के चतुर्वेदी ब्राह्मण और वश्यों को शिष्यत्व प्रदान किया। उसके काव्य में न तो ऊल-जलूल नाराशसा के प्रति आग्रह है और न स्वाभिमान का बहिष्कार। उसके आश्रयदाताओ मे प्राय सभी उच्चकोटि के साहित्य प्रेमी, गुणग्र और कवि शासक थे। उनकी प्रशसा मे भी कतिपय छन्द ही कवि ने लिखे। इनम तिल का ताड प्राय कही भी नही बनने पाया है। अपने पूववर्ती और समसामयिक विद्वान् और आचार्यों के काव्यगत दोपो को उसने लक्ष्य किया, उनकी आलोचना की परन्तु शालीनता के साथ। यहाँ भत्सना प्राय दृष्टव्य नही। कवि मे आचाय सुलभ स्वाभिमान था, अभिमान हम शायद ही कही देखने को मिले।

कुल मिलाकर ग्वाल का व्यक्तित्व प्राय असाधारण कहा जायगा। ●

---

१ पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास—चन्द्रकान्त बाली, पृ० २०१।

षष्ठम् अध्याय

ग्वाल कवि के ग्रन्थ

साहित्येतिहासिक अनुशीलन — ग्वाल कृत ग्रन्थों के विषय में विद्वानों में पर्याप्त वैमत्य रहा है। कहीं कहीं तो इनकी संख्या ६०-७० तक पहुँच गई है।[1] एक एक ग्रन्थ के यत्र तत्र दो दो, तीन तीन नाम भी हो गये हैं।[2] कवि के निजी तथा उनके छन्दों के अन्य संग्रहों को इस ग्रन्थ सूची में सम्मिलित करने की प्रवृत्ति भी इस ग्रन्थ संख्या को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई है।[3] गार्सां द तासी ने कवि की केवल 'यमुना लहरी' का उल्लेख किया,[4] डा० शिव सिंह सेंगर और डा० सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन दोनों ने कवि के (१) नखशिख (२) गोपी पच्चीसी (३) यमुना लहरी, (४) साहित्य दूषण (५) भक्ति भाव, (६) दोहा शृङ्गार और (७) शृङ्गार कवित्त के नाम लिये हैं।[5] मिश्र बन्धुओं ने (१) कवि हृदय विनोद, (२) रसरङ्ग (३) रसिकानन्द (४) राधा माधव मिलन, (५) राधाष्टक, (६) हमीर हठ, (७) भक्त भावन, (८) अलंकार भ्रम भंजन, (९) बंसी बीसा और (१०) कवि दर्पण नामक ग्रन्थों को इस सूची में और जोड़ा, जिनमें क्रमांक ४ व ५ को छोड़ कर शेष खोज रिपोर्टों के विवरणों के आधार पर थे।[6] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसमें से (१) यमुना लहरी, (२) भक्त भावन, (३) रसिका

---

१ पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध—हिन्दी भाषा तथा साहित्य का विकास, संवत १९९७ वि०, ग्वाल कवि, पृष्ठ ४७२। पं० रामनरेश त्रिपाठी—कविता-कौमुदी प्रथम भाग सं० १९९० वि०, पृ० ४९०।

२ यथा, कवि दर्पण को दूषण दर्पण, साहित्य दर्पण एवं साहित्य भूषण नाम दिये गये हैं।

३ यथा, भक्त भावन और कवि हृदय विनोद नामक संग्रह।

४ गार्सां द तासी—हिन्दुई साहित्य का इतिहास, अनुवादक—डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय १९५३ ई० पृ० ६३।

५ डा० शिवसिंह सेंगर—शिवसिंह सरोज, सप्तम संस्करण कवि संख्या ४१ पृ० ४०८। डा० सर ए० जा० ग्रियर्सन—हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास अनुवादक डा० किशोरीलाल गुप्त कवि सं० ५०? पृ०

६ मिश्रबन्धु—मिश्रबन्धु विनोद द्वितीय संस्करण ग्वाल कवि पृ० ९१३।

न * (४) रसरङ्ग, (५) कृष्ण जू की नखशिख, (६) दूषण-दर्पण (७) हम्मीर हठ, (८) गोपी पच्चीसी एवं (९) कवि हृदय विनोद को प्रामाणिक माना। दो अन्य ग्रन्थों का नामोल्लेख करते हुए वे लिखते हैं कि 'और भी दो ग्रन्थ इनके लिखे कहे जाते हैं'—राधामाधव मिलन और राधा अष्टक।[1] श्री रामनरेश त्रिपाठी ने शुक्ल जी द्वारा गिनाये ग्रन्थों के अतिरिक्त १ नेह निबाहन, २ कुब्जाष्टक, ३ कृष्णाष्टक, ४ गणेशाष्टक, ५ गणेशाष्टक दूसरा, ६ राधिकाष्टक ७ दृगशतक, ८ साहित्यानन्द, ९ कवित्त ग्रन्थ माला, सनक नौ नये ग्रन्थों का उल्लेख करके कहा है कि इनके १५ ग्रन्थ कहीं न कहीं से छप भी गये हैं।[2] श्री नवनीत चतुर्वेदी ने पूर्ववर्ती विद्वानों के उल्लेखों के आधार पर कवि के समस्त चर्चित ग्रन्थों की विवेचना प्रस्तुत की, उन के निष्कर्ष निम्नलिखित थे—

(१) साहित्य दूषण और साहित्य दर्पण इनके कवि दर्पण के ही अलग अलग दो नाम हैं।

(२) नखशिख, गोपी पच्चीसी यमुना लहरी राधाष्टक, कृष्णाष्टक रामाष्टक, गणेशाष्टक आदि पुस्तकों के संग्रह का नाम ही भक्त भावन है।[3]

डा० रमाशंकर शुक्ल रसाल,[4] डा० राम कुमार वर्मा[5] अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध',[6] डा० भगीरथ मिश्र,[7] प० सूर्यकान्त शास्त्री,[8]

---

१ प० रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं० २०१८ वि० ग्वाल कवि, सं० ५५, पृ० २९८।

२ प० रामनरेश त्रिपाठी—कविता कौमुदी, (प्रथम भाग) छठा संस्करण पृ० ४९०।

३ प० नवनीत चतुर्वेदी—ग्वाल कवि विशाल भारत, वर्ष २ अंक १ व २, अप्रैल मई १९२९ ई०।

४ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० रमाशंकर शुक्ल रसाल, १९३१ ई० ग्वाल कवि, पृ० ४८० ४८२।

५ डा० रामकुमार वर्मा—हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास, ग्वाल कवि, पृ० ३६९।

६ हिन्दी भाषा तथा साहित्य का विकास—प० अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, द्वि० संस्करण ग्वाल कवि पृ० ४७२ ४७३।

७ डा० भगीरथ मिश्र—हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, सं० २०२५ वि० ग्वाल कवि, पृ० १८१ से १८४।

८ प० सूर्यकान्त शास्त्री—हिन्दी साहित्य का इतिहास ग्वाल कवि।

आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र,[1] डा० ब्रज नारायण सिंह,[2] डा० महेन्द्र कुमार,[3] डा० किशोरी लाल गुप्त,[4] श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी[5] प० सुरेन्द्र मोहन मिश्र[6] श्री वेद प्रकाश गर्ग[7] श्री प्रभुदयाल मीतल[8] आदि विद्वानो द्वारा इस विषय पर अनुषंगिक और स्वतन्त्र लेखो के रूप म विस्तृत प्रकाश डाला गया। साहित्येतिहासकारो ने इस विषय मे नागरी प्रचारिणी सभा काशी की 'हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थो की खोज रिपोर्टों की सामग्री का पूरा उपयोग करने की चेष्टा की है। इनमे से डा० किशोरी लाल गुप्त का नाम विशेष रूप स उल्लेखनीय है, जिन्होने राजस्थान और पंजाब की खोज रिपोर्टों पर भी दृष्टिपात किया है। श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी ने 'सप्त सिन्धु' के माध्यम से कवि के दो नवोपलब्ध ग्रन्थो— १ विजय विनोद और २ इश्क लहर दरयाव का परिचय हिन्दी जगत को दिया था। मैंने अपनी खोज म श्री विद्यार्थी और श्री व्रज वल्लभ शरण, से क्रमश १ गुरु पचासा और २ निम्बार्क स्वाम्यष्टक नामक दो अचर्चित दुर्लभ ग्रन्थ प्राप्त किये। ग्वाल के समस्त चर्चित और अचर्चित, हस्तलिखित और मुद्रित ग्रन्थो और संग्रहो का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करने पर निम्नांकित निष्कर्ष निकलते हैं—

१ आलोच्य कवि की रचनाओ की अद्यावधि कोई सुपरीक्षित और प्रामाणिक एकत्र तालिका उपलब्ध नही होती।

२ अन्तःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य के तुलनात्मक अनुशीलन के आधार पर निर्मित ग्रन्थ सूची सदोष और अति आवृत्तिमूलक है।

३ प्राय देखने म आया है कि कवि दर्पण सदृश कोई कोई ग्रन्थ कई-कई नामो से कवि की ग्रन्थ सूची को विस्तार दे रहा है।

---

१ प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र—ग्वाल कवि हिन्दी अनुशीलन वर्ष १३ अंक ४, अक्टूबर दिसम्बर ६० पृ० ५७ ६३।

२ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० व्रजनारायण सिंह १९६६ ई० कवि ग्वालराय पृ० १८० २११।

३ डा० महेन्द्र कुमार—हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास, षष्ठ भाग ग्वाल कवि पृ० ३७८-३८४।

४ डा० किशोरी लाल गुप्त—सरोज सर्वेक्षण १९६७ ई० पृ० २५८ २६०।

५ श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी—सप्त सिन्धु, वर्ष , अंक १२, पृ० ४४ ५३।

६ वीणा—जुलाई १९५८ ई०।

७ ब्रजभारती—वर्ष १४ अंक १ पृ० ९।

८ श्री प्रभुदयाल मीतल—ग्वाल कवि, स० २०१७ वि०।

४ कवि के 'साहित्यानन्द' जसे ग्रन्थ के कुछ अध्याय स्वत त्र ग्रन्थो के रूप मे जाने माने जा रहे है। उदाहरणाथ साहित्यान द का षोडश स्कन्ध अलकार भ्रम भजन' अलकारो का स्वतन्त्र ग्र थ माना जाने लगा जिसका सालोचना प्रकाशन सेठ क हैया लाल पोद्दार ने 'ब्रजभारती' पत्रिका मे धारा वाहिक रूप स कराया था।

५ कवि के कुछ ग्र थो के नाम अशुद्ध लिख जाते रहे हैं, यथा भक्त भावन को 'भक्ति भाव' या 'भक्ति भावना आदि।

एसी परिस्थिति मे उक्त समस्त प्रमाण समूह को समक्ष रखते हुए कवि के नाम से चर्चित समस्त कृतिया का एक सूक्ष्म वज्ञानिक परीक्षण अत्यन्त आवश्यक है। इन परीक्षणीय ग्रन्थो मे स्थूल रूप से तीन प्रकार के नाम अव लोकनीय हैं—१ कवि के स्वत त्र ग्रन्थ २ कवि के अपने हाथ के किये गये सग्रह ग्र थ और ३ कवि के समसामयिक एव परवर्ती साहित्य प्रेमियो द्वारा किये गये सग्रह ग्रन्थ जिनके नाम उ होने इच्छानुसार रख। दूसरे और तीसरे वग क सग्रह ग्र थो का कोई स्वत त्र अस्तित्व नही है। इस दृष्टि से इन सग्रहो पर विचार करके पहले इ ही का निरसन करके स्वतन्त्र ग्रन्थो की तालिका प्रस्तुत करना युक्तियुक्त और समीचीन होगा।

(अ) कवि कृत सग्रह ग्रन्थ

भक्तभावन[1] यह ग्वाल के फुटकर ग्रन्थो का एक वृहत्काय सग्रह है जिसे कवि ने स्वय अपनी लेखनी स स० १९१९ वि० मे किया था। ग्रन्थ मे रचना हतु और सग्रहकाल इस प्रकार दिया है—

तिनके चरनाबुजन कौं, करि साष्टांग प्रनाम।
ग्रन्थ फुटकरन कौंकरत एक ग्रन्थ अभिराम॥
८ १ ९ १
सवत निधि ससि निधि ससी मास असाढ़बखान।
सितपख तुतिया रविदिवस प्रगट्यो ग्रन्थ सुजान॥[2]

---

१ खोज रिपोर्ट—न गरी प्रचारिणी सभा काशी, १९०५–१४ १९१७–६५ बी पृ० १६३।
ब्रजभाषा रीति शास्त्र ग्रन्थ कोश—प० जवाहरलाल चतुर्वेदी हि० सा० सम्मेलन प्रयाग १९६५ ई०, पृ० ४५।
हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० रामचद्र शुक्ल स० २०१५ वि०, पृ० २९८।
प्राप्ति स्थान—१ श्री नवनीत पुस्तकालय मथुरा दो प्रतियाँ स० ४४। २५ तथा ५३।१०।
२ देखिये परिशिष्ट —१ भक्तभावन के प्रथम पृ० का छायाचित्र स० ४।

इस संग्रह की पुष्पिका इस प्रकार लिखित है—'इति श्री भक्तभावन ग्रन्थ सम्पूर्णम ॥ संवत् १६ ॥'[१]

ग्रन्थ पर लिपिकर्त्ता का नाम नहीं है। यह संग्रह बड़ी साखी के ११८ पत्रों में पूर्ण हुआ है। इसका एक कोना थोड़ा सा दग्ध भी है। यह ग्वाल की हवेली के उनके दग्ध पुस्तकालय की प्रति बताई जाती है। इसका देशी कागज और हस्तलेख इसकी प्राचीनता के साक्षी हैं। इस प्रति को कवि के हाथ से लिखी हुई मानने में कोई अड़चन दिखाई नहीं देती। इसमें निम्नांकित १६ छोटे ग्रन्थ नामोल्लेख सहित संग्रहीत हैं। प्रत्येक ग्रन्थ की छन्द क्रम संख्या १ से आरम्भ की गई है। इससे इनके पृथक्करण की समस्या भली भांति समाधान पा जाती है। संग्रहीत ग्रन्थ निम्नांकित हैं—

१ यमुना लहरी [खोज रिपोर्ट १६०१ ८८, १६२०-५८ बी पृ० ६८], छन्द सं० १ से १०६ तक सम्पूर्ण-पत्र सं० १ से २५ तक।

२ श्री कृष्ण जू कौ नखशिख [खो० रि० ना० प्र० सभा काशी १६०१ ८६, १६२०-५८ डी पृ० २४१, १६२३ १४६ बी पृ० ६०२, १६२६ १६१ सी पृ० २७८, १६२८ १३५ सी पृ० २६२], छन्द सं० १ से ६६ तक सम्पूर्ण-पत्र संख्या २५ से ४२ तक।

३ गोपी पच्चीसी [खो० रि० १६०१ ६०, १६२० ५८ ए पृ० ६८ १६२३ १४६ सी पृ० ६०२ १६२६ १६१ ए, पृ० २७६, १६२६-१३५ ए पृ० २६२, १६३२-७३ एफ पृ० १५४] छन्द संख्या १ से २५ तक सम्पूर्ण-पत्र सं० ४२ से ४७ तक।

४ राधाष्टक छन्द संख्या १ से ८ तक सम्पूर्ण-पत्र संख्या ४७ से ४८ तक।

५ कृष्णाष्टक छन्द संख्या १ से ८ तक सम्पूर्ण-पत्र संख्या ४८ से ५० तक।

६ रामाष्टक छन्द संख्या १ से ८ तक सम्पूर्ण-पत्र संख्या ५० से ५२ तक।

७ गंगा स्तुति छन्द संख्या १ से १५ तक सम्पूर्ण-पत्र संख्या ५२ से ५५ तक।

८ महाविद्या स्तुति छन्द संख्या १ से १५ तक सम्पूर्ण-पत्र संख्या ५, से ५७ तक।

१ देखिये परिशिष्ट १—भक्तभावन के अंतिम पृ० का छायाचित्र संख्या ५।

९ उमानाष्टक छ ” सख्या १ से २० त सम्पूण—पत्र सख्या ५७ से ६० तक।

१० प्रथम गणेशाष्टक छन्द सख्या १ से ८ तक सम्पूण—पत्र सख्या ६० से ६१ तक।

११ द्वितीय गणेशाष्टक छन्द सख्या १ से ८ तक सम्पूण—पत्र सख्या ६२ स ६३ तक।

१२ शिवादि स्तुति छन्द सख्या १ स २३ तक सम्पूण—पत्र सख्या ६४ से ७२ तक।

१३ षड्ऋतु वणन तथा अन्योक्ति (खो० रि० १६३५ ३३ ए बी सी प० ३१, १६३८ ५५ बी प० १८४), छन्द सख्या १ से १२४ तक सम्पूण—पत्र सख्या ७२ से १०४ तक।

१४ प्रस्तावक कवित्त—(खो रि १६३८ ५५ डी पृष्ठ १८५) छन्द १ से ४० तक सम्पूण—पत्र सख्या १०४ से ११० तक।

१५ दमशतक छन्द सख्या १ से १०३ तक सम्पूण—पत्र सख्या ११० स ११४ तक।

१६ भक्ति और शान्त रस कवित्त—(खो रि १६३५ ३३ जी पृष्ठ ३१) क्रम सख्या १ स २२ तक सम्पूण—पत्र सख्या ११४ से ११८ तक।

उक्त ग्रन्थ स्वतन्त्र हैं, जिनम स कुछ म रचनाकाल का भी निर्देश है। अत भरतभावन का स्वतन्त्र अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

(आ) इतर सग्रहकारो के सकलन

१ कवि हृदय विनोद—(खो रि १८२० ५८ सी पृष्ठ ६८ १८२३ १४६ ए पष्ठ ६०२ १८२८ १३५ बी पष्ठ २८२) छन्द सख्या २३८, मुन्शी हरप्रसाद द्वारा सकलित सम्पादित तथा सन् १८८८ ई०[१] म काशी समाज प्रेस मथुरा से प्रकाशित पष्ठ सख्या ६२ पक्ति प्रति पष्ठ १३ आकार $5\frac{1}{2}'' \times 4\frac{1}{2}$। क्रम सख्या २१२ स २३८ तक केशव, आलम, ऊधौराम, नारायण कालीदीन, दयानिधि देवीराम तथा इतर अज्ञात कवियो के २७ छन्द भी सकलित हैं। क्रम स या १८६ से २११ तक सम्पूण गोपी पच्चीसी क २५ छन्द और शेष १६६ छ द कवि क अन्य स्वतन्त्र ग्रन्थों स सकलित है। नीचे कवि हृदय विनोद के छन्द क्रम क कोष्ठक म स्वतन्त्र ग्रन्थो की छन्द सख्या दी गई है जिनसे वे लिए गए हैं। कोष्ठक म खडी पाई से पूव ग्रन्थ क प्रकरण या अध्याय दिये हैं। रसरग के अध्यायो का नाम उमग और रसिकानन्द के प्रकरण हैं—

१ देखिये परिशिष्ट १ कवि हृदय विनोद के अन्तिम पृष्ठ का छाया चित्र सख्या ६।

क—'रसरंग' में—३(८।६८), ४(१२।६१), ५(१०४), ६(८।७१), ११(८।७३), १८(८।६३), १६ ८।६४) २०(८।६१), २१(८।६७), २२(८।६६), २५(८।५४), २६(८।५३), ३०(८।५६), ३६(७।८४), ३७(७।७६), ३८(७।८०), ४०(७।६७), ४१(७।८८), ४३(७।६८), ४४(७।८८), ४५(६।३८), ४८(७।८४), ४६(७।८३), ५०(६।३२) ५२(२।१०८), ५५(७।१०४), ५६(७।१०३), ५७(७।१०७, ५६(७।११०), ६०(७।१०८) ६१(७।११२) ६२(७।११७), ६३(७।१११) ६४(७।११५), ६५(७।११६), ६६(७।१२२), ६७(७।१२३) ६६(७।१२१), ७०(७।१२४), ७१(७।१२७), ७२(७।१२८' ७३(७।१२२) ७४(७।१३०) ७५(७।१२६), ७६(७।७५) ७७(७।७३), ७६(७।७६), ८०(७।७७), १०१(५।१२), १०२(७।८), १०३(६ ४२), १०५(२।१०४। १०७(२।५२), १०८(२।५३), ११३(६।३७), ११७(१।५६२), ११८(५।१६) ११८(४।४२), १२५(३।५१), १२६(२।४३), १२८(२।१०३), १२६(२।८२) १३०(६।४८), १३१(१।१५२), १३२(१।६६) १३३(३।७५), १३६(३।४१), १३५(५।१४), १३६(५।१५), १३ (२।५४), १३६(४।४१) १४०(४।४३), १४१(८।४३) १४२(४।७१), १४३(२।४४) १४४(३।७३), १४५(३।७४), १४६(३।७६), १४७(५।१८), १४८(५।१७), १४६(५ १६), १५१(६ ४५), १५२(५।२४), १५३(६।२८), १५४(२।६३), १५५(६।४६), १५६(५।२०), १५७(४।१२) १६०(१।१८७), १६१(२।६०), १६२(७।८), १६३(५।७), १६४(२।१०६) योग ६३ छंद।

ख—रसिकानंद में—७(३ १३८) २७(११।३१), २८(११।३२), २६(११।३४), ५३(१०।१४) ५४(१०।१६) ८१(१०।२१), ८२(७।१०), ११६(५।११) १२१(३।६६), १५८(५।४४), १५६(३।५०), १६६(३।६८), १६७(४।१०८), १६८(८।५५), १६६(६।८५), १७०(६।७६), १७१(६।७५), १७२(६।७७), १७३(३।६०) १७४(३।६४) १७५(३।७०), १७६(३।७६), १७७(३।६८), १७८(३।२६) १७६(३।३४), १८०(३।३८), १८१(३।३२), १८२(।७२), १८३(३ ७४), १८४(५।३४), १८५(३।१४२), १८६(६।४६), योग ३३ छंद।

ग—षट्ऋतु वर्णन में—३६(६), ३७(१), ३८(२) ३६(१३), ४०(१८), ४१(१६), ४२(२१) ४३(३४) ४४(३५) ४५(३७), ४८(३१) ४६(३०), ५०(४१), ५१(४०), ५२(३८) ५४(४६) ५६(४७), ५७(५०) ५६(५४) ६०(५१) ६१(६२), ६२(५८) ६३(५५), ६४(६०), ६५(५६), ६७(६२) ६६(६४), ७०(८१), ७१(८२), ७२(७६), ७४(८३), ७६(६७), ७७(११०), ७६(६८), ८०(६६), ८१(१०२) ८२(१०६), ६६(११ (११६) योग ३५ छंद।

११ होरी आदि के कवित्त (खो० रि० ३८ ५५ सी)
१२ ग्वाल कवि के कवित्त (३२ सी, ३५ ३३ ई)
१३ श्रृगार कवित्त तथा १४ श्रृगार दोहा।

अध्ययन के परिणाम अन्तर्साक्ष्य और बहिर्साक्ष्य के सूक्ष्म वैज्ञानिक अध्ययन परीक्षणोपरान्त ग्वाल के स्वतन्त्र ग्रन्थों की एकत्र वर्गीकृत तालिका एक विहगम दृष्टि में निम्नलिखित रूप में अवलोकनीय है—

ग्वाल की कृतिया

- रीतिग्रन्थ
  - लक्षणग्रन्थ
    - १–रसिकानन्द (रस)
    - २–कवि दर्पण (दोष)
    - –रसरग (रस)
    - ४–बलवीर विनोद (रस)
    - ५–साहित्यानन्द (सर्वांग)
    - ६–प्रस्तार प्रकाश (पिंगल)
  - रीतिबद्ध ग्रन्थ
    - १–श्रीकृष्ण जू को नखशिख वर्णन*
    - २–षट्ऋतु वर्णन*
    - ३–दृगशतक
- रीतिमुक्त ग्रन्थ
  - नेह निबाह
- भक्ति ग्रन्थ
  - देव भक्ति विषयक
    - १–राधाष्टक
    - २–कृष्णाष्टक
    - ३–रामाष्टक
    - ४–ज्वालाष्टक
    - ५–गणेशाष्टक प्रथम
    - ६–गणेशाष्टक द्वितीय
    - ७–कुजाष्टक*
    - ८–गोपी पच्चीसी
    - ९–वशी बीसा
    - १०–यमुना लहरी*
    - ११–गगा स्तुति
    - १२–महा विद्या स्तुति
    - १३–शिवादि देवतान के कवित्त
    - १४–भक्ति शान्त रस के कवित्त
    - १५–इतर भाषाओं के कवित्त
  - नर भक्ति विषयक
    - १–निम्बार्क स्वाम्यष्टक
    - २–गुरुपचासा
- नीति ग्रन्थ
  - प्रस्तावक
- प्रबन्ध काव्य
  - १–हम्मीर हठ
  - २–विजय विनोद*
- अनुवाद ग्रन्थ
  - इश्क लहर दरयाव*

---

* ये ग्रन्थ प्रकाशित हैं।

ग्वाल के ग्रन्थों की प्रामाणिकता (१) नेह निवाह (२) रसिकानन्द, (३) नखशिख (४) कवि दर्पण, (५) रसरङ्ग (६) बलवीर विनोद, (७) यमुना लहरी तथा (८) साहित्यानन्द—ये आठ ग्रन्थ—अन्तःसाक्ष्य के आधार पर इस प्रकार प्रमाणित होते हैं—

१ 'नेह निवाह' का उल्लेख 'रसिकानन्द' के पंचम प्रकरण के २४ वें सवैया में हुआ है और यही सवैया 'नेह निवाह' का दसवां छन्द है।

२ 'साहित्यानन्द' का उल्लेख 'रस रङ्ग' की द्वितीय उमंग के ६५ वें छन्द में हुआ है :

'परकिय में नहिं मान जिमि, तिन हेतु नविस्तार।
ग्रन्थ साहित्यानन्द में, लखि रीझैंरिझवार'॥

३ 'साहित्यानन्द' के प्रथम स्कन्ध के दोहा संख्या ९ व १० में रसिकानन्द, नखशिख, कवि दर्पण, रसरंग बलवीर विनोद और यमुना लहरी इस भांति प्रमाणित होते हैं—

जिन जिन निज निज ग्रन्थ के, लिखिहौ कछु कछु लक्ष।
तिनतिनके नामनु कहौ लखिय हृदय प्रतक्ष॥ ८॥
रसिकानन्द सु नखसिख द कवि दरपन रसरंग।
पुनि बलवीर विनोद है जमुनालहर प्रसंग॥१०॥'

उपर्युक्त आठों ग्रन्थ साहित्य में बहुचर्चित और प्रसिद्ध हैं। ग्वाल की विशिष्ट सानुप्रासिक भाषा और सार्वेतिक संगीतात्मक शैली तो इनमें देखने को मिलती ही है कवि के नाम की छाप भी सवैया कवित्त और दोहों में अंकित है। इस प्रकार उक्त ८ ग्रन्थों की प्रामाणिकता असंदिग्ध है।

'भक्त भावन' का पर्यवेक्षण पिछले पृष्ठों में किया जा चुका है। यह ग्वाल का अत्यन्त सुपरिचित और बहुचर्चित ग्रन्थ है, जिसको कवि ने स्वयं सं० १९१९ वि० में संग्रह किया था। इसकी प्रामाणिकता में कोई सन्देह नहीं है अतः इसमें संग्रहीत १६ ग्रन्थ स्वयं ही प्रामाणिकता की कसौटी पर खरे उतरते हैं। यमुना लहरी की यहाँ पुनरावृत्ति हुई है। इस प्रकार उक्त २३ ग्रन्थ प्रामाणिक सिद्ध होते हैं।

ग्वाल कृत 'हम्मीर हठ' को आचार्य शुक्ल ने प्रामाणिक माना है।[१] श्री सुरेन्द्र मोहन मिश्र, श्री प्रभुदयाल मीतल एवं पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने भी इस ग्वाल के ग्रन्थों में माना गया है। ग्वाल चूंकि शृङ्गार के कवि हैं,

१ हि० सा० का इतिहास पृष्ठ २९८।

इस कारण यह धारणा, कि उन्होंने कोई वीर काव्य नहीं लिखा, उनके दूसरे वीर काव्य विजय विनोद की खोज म प्राप्ति से निमूल हो जाती है। भाषा शैली छाप, ■ * विधान आदि ग्वाल की सभी विशेषताओं के कारण इसकी प्रामाणिकता म कोई स देह नहीं रहता है। विजय विनोद' इनका दूसरा वीर काव्य है, जिसका प्रकाशन अमृतसर से ग्वाल के पौत्र शिष्य श्री शमशेर सिंह 'अशोक' ने 'जगनामा' नाम से सन् १६५० ई० में किया है। श्री अशोक और श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी इस ग्वाल की प्रामाणिक रचना मानते हैं। गुरुमुखी लिपि म होने के कारण यह हिन्दी के विद्वानों की दृष्टि से ओझल रहा था। ग्वाल की शिष्य परम्परा में होने के कारण अशोक जी[1] की मान्यता भी पर्याप्त वजन रखती है। इस ग्रन्थ की भाषा शैली कवि और राजवंश वर्णन रचना काल, ग्रन्थ हेतु-वर्णन आदि सभी अन्तर्साक्ष्य ग्रन्थ के ग्वाल रचित होने की स्पष्ट घोषणा करते हैं। अत विजय विनोद' की प्रामाणिकता म लेशमात्र भी सन्देह नहीं रह जाता।

इश्क लहर दरयाव ग्वाल की उर्दू से अनूदित रचना है। इसकी रचना नाभा नरेश भरपूर सिंह की आज्ञा से हुई। ग्वाल के जीवन काल म स० १६२० वि० म नाभा दरबार से इस ग्रन्थ का लीथो ■ मुद्रण हुआ था जिसकी एक प्रति श्री विद्यार्थी जी के पास सुरक्षित है। वे इसे ग्वाल की प्रामाणिक रचना मानते हैं।[2] ग्रन्थ की भाषा, शैली छाप ग्रन्थ हेतु वर्णन भरपूरसिंह का यश वर्णन, नाभा नगर वर्णन ग्रन्थ का मगलाचरण रचना काल इसकी पुष्पिका आदि सभी इसके ग्वाल रचित होने की साक्षी देते हैं। निस्सन्देह यह ग्वाल की प्रामाणिक रचना है।

गुरु पचासा जिसे कुछ विद्वान् दश अवतार भी कहते हैं[3] पंजाब की गुरु पचासिका परम्परा म ग्वाल रचित एक ऐसा ग्रन्थ है जो गुरुमुखी म हस्तलिखित है और जिसकी चर्चा हिन्दी साहित्य म अभी तक नहीं हुई। इसकी एक प्रति श्री विद्यार्थी जी को सरदार गडासिंह से प्राप्त हुई थी। गुरु पचासा म कवि के दो अन्य ग्रन्थों के दो छन्द उदाहृत हुए हैं। गुरु पचासा का ५० वां छन्द—वेद व्यास वाक्य तें अद्वैतता प्रगट कीन्ही' और विजय

---

१ 'लेखक द्वारा सम्पादित' ग्वाल स्मृति ग्रन्थ मे अशोक जी का लेख—महाकवि ग्वाल की काव्य साधना पृष्ठ ४३।

२ सप्तसिन्धु—वर्ष ३ अक १२, पृष्ठ ४४।

३ ग्वाल स्मृति ग्रन्थ—पृष्ठ ४३।

विनोद' का तृतीय छद दोनो न्‍श एक हैं। इस ग्रथ का प्रथम छद—'ठाली मत वठ वनजा री वुद्धिवाली यहा' ग्वाल के स्वरचित ज्वालाष्टक' का १७ वा छद है। इससे 'पचासा' एक प्रामाणिक रचना सिद्ध होती है। इस ग्रथ मे ५० कवित्त हैं जिनम से प्रत्यक के तृतीय चरण म 'ग्वाल कवि' की छाप उसकी प्रामाणिक रचना होने की साक्षी दती है। ग्वाल ने अपनी छाप सवत्र ही एक नियम से अकित की है। उनक सवैया और कवित्त के तृतीय चरण म और दोहे की द्वितीय पक्ति मे 'ग्वाल' नाम आता है। इस नियम का कही भी उल्लघन नहीं हुआ है। इस रूप म भी गुरु पचासा भी प्रामाणिक है।

प्रस्तार प्रकाश[1] ग्वाल का पिंगल निरूपक ग्रथ है। इसका प्रथम दोहा—श्री गुरुवानी मम जू ति हे अनि सहुलास। बदी विप्र सु ग्वाल कवि किय प्रस्तार प्रकास', इसकी प्रामाणिकता सिद्ध करन को पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त इसके छद स० ३ ५, ७, १६ १९, २०, २१ के प्रस्तार क स्वरूप ज्यो के त्यो साहित्यानन्द क पृष्ठ ६, १८ २० ६८, ६६ ७१ और ७२ पर उदाहृत हुए हैं। वास्तव म यह लघु पिंगल ग्र थ साहित्यानन्द क प्रथम स्कन्ध का साररूप है। अत यह निरसन्देह ग्वाल की प्रामाणिक रचना है।

वशी बीसा (खो० रि० १९१७ ६५ डी, १९३२ ७३ ई०) एक दोहा और उन्नीस कवित्तो म श्री कृष्ण की मुरली के प्रभाव को प्रस्तुत करने वाली कवि की यह एक और प्रौढ रचना है। ग्रन्थ म रचना काल नही दिया गया है। प्राप्त प्रति पर किन्ही नारायण मिश्र के हस्ताक्षर अकित हैं। इसक अधिकाश छन्द कवि ने सम्भवत अपने अतिम जीवनकाल म रचे प्रतीत होते हैं क्योकि केवल एक कवित्त—'मोधन को पूजिवे का गोपी चली जात हुती' को छोडकर जो रसिकानन्द म स्थान पा गया है, अन्य कोई छन्द ग्वाल कवि क ग्र थो म उदाहृत नही मिलता। स्पष्ट है कि इसक छन्दो की रचना एक समय म नही हुई। भाषा और भावो की परिष्कृति तथा शली की प्रौढता स यही अनुमान होता है कि इस की रचना स० १९१९ वि० के पश्चात् की है, अन्यथा यह भक्त भावन' के सग्रह म स्थान अवश्य पाता। ऊपर उदाहृत छन्द रसिकानन्द क अतिरिक्त मीनाई साहब क 'इतखाब यादगार म भी ग्वाल क अन्य छन्दो क साथ स्थान पा गया है। इससे इसकी प्रामाणिकता की पुष्टि होती है तथा इसकी पुष्पिका भी इस ग्वाल की कृति घोषित करती है जो इस प्रकार है—'इति श्री ग्वाल कवि विरचित वशी बीसा समाप्तम

---

१ खोज रिपोर्ट—ना० प्र० सभा, काशी १९३८ ५५ ए।

(हस्ताक्षर नारायण मिश्र क) भाषा शली, छन्द एव छाप, 'बंशी बीसा' को कवि की प्रामाणिक रचना सिद्ध करने को पर्याप्त साक्ष्य हैं।

निम्बार्क स्वाम्यष्टक महात्मा निम्बार्काचार्य की यशोगाथा म ८ कवित्त प्रस्तुत करने वाला लघु ग्रन्थ है। कवित्तो म ग्वाल कवि की छाप शली तथा भाषा छन्द विधान इसके ग्वाल कृत होने की साक्षी देते हैं। निम्बार्क मत म ग्वाल नामक कोई दूसरा कवि नही हुआ। इस से यह ग्वाल की ही प्रामाणिक रचना सिद्ध होती है।

सक्षेप म ग्वाल के उक्त विवेचित सोलो ग्रन्थो की प्रामाणिकता स देह से परे है। अब आग के पृष्ठो म इनके वर्ण्य विषयो का सक्षिप्त परिचय इनके रचनाकाल क्रमानुसार प्रस्तुत किया जाता है।

१ निम्बार्क स्वाम्यष्टक इसका रचना काल उल्लिखित नही है। परन्तु भाषा और शली की दृष्टि स यह ग्वाल के व दावन वास क समय की आरम्भिक कृति प्रतीत होती है। इसमे अत्यानुप्रास के अतिरिक्त भाषा और भाव का अन्य कोई सौन्दय नही मिलता, जो बाद म ग्वाल की लखनी का विशिष्ट गुण बना। छ दो म भी यति भग और गति भग दोष सुलभ है। भक के वजन पर खडक को खक', कडक को कक, आदि बना कर भाषा को विकृत कर दिया है। यही नही इस तुक के अन्य शब्दो—नक फक, आदि को भी दो कवित्तो म चमत्कार क लिये बलात ठूस दिया गया है। यही प्रवत्ति इनके 'नेह निबाह म भी परिलक्षित है। लगता है जस ग्वाल का भावी कवि उदय होने का कवित्तो स जूझ सा रहा है। स्वामी जी का यश-वणन भी स्वच्छतापूवक नही हो पाया।

ग्वाल की मत सम्ब धी मान्यता की इस लघु पुस्तिका से यही सम्भावना बनती है कि आरम्भिक जीवन मे वे निम्बार्क मत स प्रभावित थे। रचना का अ त इस प्रकार है —'इति श्री ग्वाल कवि कृत निम्बार्क स्वाम्यष्टक (सपूण)। शुभमस्तु ॥'

२ नेह निबाह यह घनान द बोधा और ठाकुर आदि रीतिमुक्त कवियो की विशुद्ध प्रेम की परिपाटी पर लिखा गया ३२ छन्दो का कवि का दूसरा आरम्भिक मुक्तक है। इस क छन्दो की भाषा, शली, अनुभूति और काव्य सौष्ठव अति सामान्य स्तर के हैं। छन्दो म एक ही भाव और भाषा की पुन पुन आवत्ति कवि के आरम्भिक अभ्यास प्रयास की साक्षी है।

रचना काल—पुस्तक म उसका रचना काल नही दिया गया है। पर

इसे स० १८७८ वि० के पूर्वार्ध अथवा उससे पहले की रचना मानने म कोई अड़चन नहीं दिखाई देती। परन्तु यह निम्बार्क 'स्वाम्यष्टक' की परवर्ती रचना है, क्योंकि अष्टक की भाषा और शैली से इसकी भाषा और शैली म कुछ कोमलता मिलती है। पुस्तक की जो प्रति नवनीत पुस्तकालय मथुरा म उपलब्ध है उस पर लिपि काल इस प्रकार उल्लिखित है 'शुभ सवत् १६१४ वि० चैत्र शुक्ला १२, रविवासरे।' जनश्रुति के अनुसार कवि उरदाम के भ्रातृज गणेश चतुर्वेदी ने कवि के जीवनकाल मे ही इसे लिपिबद्ध किया था। प्रति के साथ ग्वाल के ८ उत्कृष्ट छन्द और लिपिबद्ध हैं।

वर्ण्य— पुस्तक मे ७ दोहो १४ सवयो और ११ कवित्तो में विशुद्ध प्रेम के निर्वाह इसकी उत्पत्ति और आधार, कारण, त्याग, नेह दशा और उसे निभाने की रीतियो का वर्णन किया गया है। ग्रन्थारम्भ म कवि ग्रथ नाम का उल्लेख करता है।

अथ ग्रन्थ गुन वर्णन—

सुखदायक साचे सुजन, रसनायक विरहीन।
घायक है कपटीन कों नेह निवाह नवीन॥३॥
नाम धरयो या ग्रन्थ को, नेह निवाह अछेह।

यहा कवि ने प्रश्न उठाये हैं—

उपजि कहां अरु है कहा, करत कहा यह नेह॥४॥

क्रमानुसार इन्ही प्रश्नों के उत्तर शेष ग्रन्थ के वर्ण्य विषय हैं। पुस्तक का समापन इस प्रकार होता है—'इति श्री नेह निवाह ग्रथ सम्पूर्णम्।'

३ यमुना लहरी[1]—कवि का यह तृतीय ग्रथ है। इसे लिखने की प्रेरणा पण्डितराज जगन्नाथ की संस्कृत रचना गगा लहरी' से मिली पद्माकर की गगा लहरी से नही। पद्माकर की वास्तव मे ग्वाल की यमुना लहरी के ४ ५ वर्ष उपरान्त की रचना है।[2]

रचनाकाल—ग्रन्थ के अन्त म इसका रचनाकाल कार्तिक पूर्णमासी सवत् १८७६ वि० दिया हुआ है—

---

१ यमुना लहरी का प्रथम प्रकाशन कवि के जीवनकाल मे ही सन् १८६५ मे काशी से हुआ। तत्पश्चात् नवलकिशोर प्रेस लखनऊ से छपी। लेखक के पास इसी का तृतीय सस्करण स० १६४५ का है। निम्बार्क माधुरी मे भी यह ग्रन्थ सग्रहीत है।

२ देखिये इस शोध प्रबन्ध का दशम अध्याय।

६ ॥ ८ १

संवत निधि रिसि सिद्धि ससि, कातिक मास सुजान ।
पूरनमासी परमप्रिय राधा हरिको ध्यान ॥१०८॥
भयो प्रगट वाही सुदिन, यमुनालहरी ग्रंथ ।
षट गुन आनंद मिलं जानि पर सब पंथ ॥१०९॥

वण्य विषय—ग्रंथ के नाम से ही इसके प्रतिपाद्य का स्पष्ट संकेत मिल जाता है। यमुना की पावनता, नाम महिमा, स्नान-माहात्म्य दर्शन-फल कीर्ति, लोकव्यापी ख्याति यमुना जल, इसका श्यामरंग, धार्मिक सामाजिक और नैतिक महत्व, पौराणिक प्रसिद्धि आदि पक्षों पर कवि ने काव्यमय विवरण प्रस्तुत किया है। इसमें नवरस और षड्ऋतु वर्णन भी है जो भक्ति के इतर काव्यों में बहुधा दृष्टव्य नहीं होता। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कवि की इस प्रवृत्ति को रीति की सनक संज्ञा दी है।[1] इसके १४ कवित्त नवरस और ८ षड्ऋतु वर्णन को अर्पित है, आरंभ के चार दोहे मंगला चरण और कवि परिचय के हैं।

४ रसिकानन्द[2] खोज रिपोर्ट १९००-८४, १६२६-१६१ वी पृष्ठ २७६।

रीति परम्परा का प्रथम ग्रन्थ—कवि कृत ग्रंथों में यह चतुर्थ और रीति परम्परा में कवि की प्रथम विज्ञप्त है। यह इस कारण भी महत्वपूर्ण है कि राज्याश्रय में लिखी गई यह कवि की प्रथम रचना है। नवनीत पुस्तकालय की अनुलिपि हमारा आधार है। ग्रन्थ में ६२४ छन्द हैं जिनमें ५७३ दोहे ३३४ कवित्त १४ सवैया २ छप्पै १ अमृतध्वनि और १ सोरठा है। लक्षण दोहा और उदाहरण कवित्त सवयों में हैं, जो कवि के स्वनिर्मित हैं। कठिन स्थलों को कवि ने गद्य और वार्ताओं द्वारा स्पष्ट किया है। ग्रन्थ में १२ प्रकरण हैं। कामसूत्र, रति रहस्य रसमंजरी भक्ति रसामृत सिंधु उज्ज्वल नीलमणि रस तरंगिणी, काव्य प्रकाश, ध्वन्यालोक आदि संस्कृत ग्रन्थों का इसमें आधार लिया गया है। केशव, बिहारी, कुलपति मिश्र, पद्माकर आदि

१ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हि० सा० का इतिहास, पृ० २९९।

२ हस्तलिखित प्राप्ति स्थान—१ नवनीत पुस्तकालय मथुरा १९५० वि० का लिपिबद्ध, २ राजा श्री प्रकाशसिंह मल्लापुर सीतापुर का पुस्तकालय १९४२ वि० ३ भुवनेश्वरी-पीठ पुस्तकालय, गोंडल सौराष्ट्र १९३१ वि० का लिपिबद्ध ४ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर २ प्रतियां ५ आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद का निजी पुस्तकालय, वाराणसी।

के उदाहरणों को भी ग्रन्थ म स्थान दिया गया है और उनके मतों का खडन करके कवि ने अपने स्वतन्त्र मता की स्थापना की है। रीति निरूपण पर कवि की यह प्रौढ रचना है इसम कवि के कवित्व, वदुष्य और बहुश्रुत होने के प्रमाण मिलते हैं।

रचना का कारण, स्थान तथा समय—ग्रन्थ के प्रथम प्रकरण म इसकी रचना का हेतु आश्रयदाता नाभानरेश महाराजा जसवन्तसिंह की आज्ञा, रचना स्थान नाभा, एव लेखन काल चत्र कृष्णा द्वादशी रविवार स० १८७६ वि० उल्लिखित है, जो दोहा क्रम २८, २६, ३१, ३२ एव ३८ स स्पष्ट है।

वर्ण्य विषय—नायिका भेद मतान्तर भ्रम भजन हेतु रस निणय ही ग्रन्थ का प्रमुख वण्य है। इसम शृङ्गार रस का प्रधानत एव अन्य रसो का गौण निरूपण प्रस्तुत किया गया है। नायिका भेद का वणन विशदतापूवक और रसों के मित्र शत्रु भी सम्मिलित वर्णित हैं। ग्रन्थ निम्नलिखित १२ प्रकरणों मे लिपिबद्ध है।

प्रथम प्रकरण के ६० छन्दों म कारण करण वणन है। आरभिक छन्दो म गुरु और जगदीश्वरी देवी का मगलाचरण पितृ स्मरण, नाभा नगर की शोभा, राजकीय गज, अश्व और दरबार का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता हुआ कवि ग्रन्थ के महत्व पर इस प्रकार प्रकाश डालता है—

> कूर कुमुद्गन कों कहीं, होवे नहीं अभेद।
> मान भयो जगभान सम, ग्रन्थ सु रसिकानन्द ॥३६॥

कवि की यह गर्वोक्ति उसके पाण्डित्य की परिचायक है।

> जो चरचा करि कविन म भयोबहुत है बाद।
> तौ चित द कविग्वाल को, पढ सु रसिकानद ॥

शेष प्रकरण कवि के वण गोत्र उपगोत्र वश और पूवजो के सविस्तार विवरण को अर्पित हैं।

द्वितीय प्रकरण के २८ छन्द काव्य लक्षण काव्य स्वर, स्वर सिद्धान्त व्यग्य ध्वनि लक्षण, काव्य भेद काव्य कारण कविभेद, काव्य काय-वणन आदि को समर्पित है। लक्षण लक्ष्य कवि के स्वनिर्मित है कुलपति मिश्र के रस रहस्य का लक्षण देकर विमश करके अपना लक्षण इस विधि मे बनाया है—

> जगत अद्भुत सुख सदन, सब्दरु अथ कवित्त। —कुलपति।

कवि की शका— या सु लोक मे उत्तरहि चमत्कार जह होय।

> जातें अद्भुत सुख कह्यो असमजस ये होय

कवि ने कुलपति के 'जग तें' पद के स्थान पर 'जग मे' पद बनाकर लक्षण से सहमति प्रकट की है। अपना लक्षण इस भांति लिखा है—

सब्द अर्थ सगम सहित भरे चमत्कृत भाय।
जग अद्भुत मे अद्भुतहिं, सुखदा काव्य बनाय ॥११॥

कवि ने टीका द्वारा इसे स्पष्ट किया है—'सब्द अर्थ को सगम होय सो कैस सब्द अर्थ मिले होय। सहित कहो जो सुने ताके हिय ही लग और भरे होइ चमत्कारी भाव जाम वह जग जो यह अद्भुत है ताम अद्भुत सुखदायक होय सो काव्य कहिये।'

काव्य तथा कवि के १ उत्तम २ मध्यम और ३ अवर के तीन-तीन भेद परम्परानुसार किय गये हैं।

तृतीय प्रकरण का नीपक भाव वणन है जिसम १६६ छन्द हैं। कवि *ने रस का कारण भाव माना है अत रस से पूव वह भाव का निरूपण करना* उचित समझता है। वह लिखता है—'आगे रस को निरूपन करेंग तातें रस को कारन भाव है, सो प्रथम भाव और भाव भेद लच्छन कहियत है। सस्कृत के अमरकोश के सूत्र 'विकारो मानसो भाव' के अनुसार कवि की मान्यता है कि मन का विकार ही भाव है।[१] कवि ने चार प्रकार के भाव माने हैं १-विभाव २-अनुभाव ३-सचारी और ४-स्थायी। सचारी के दो उपभेद और किये हैं १-तनज और २-मनज। तनज सचारियो के आठ और मनज क चौतीस उपभेद किये गये हैं। तनज सचारी आठ सात्विक भावो के पर्याय है। कवि ने कुलपति मिश्र के मत का खडन करके मतिराम के अनुसार रस बोध कराने वाले अनुभावो का ही सात्विक भावो के अन्तगत माना है। सचारियो के वणन प्रसग म ही कतिपय काव्य दोषो की चर्चा की गई है। भाव अनुभाव सचारी और सात्विक भावो के विशद विवेचन के उपरान्त कवि ने रस की परिभाषा इस प्रकार की है—

कारन कह्यो विभाव है थिति बिन कारन नाहि।
थितिन भाव क मिलत ही रस ही होत सुचाहि ॥१५९॥

रस निष्पत्ति म कवि भरतमुनि का अनुगामी है।[२]

---

१ बस वासना अचल हिय रहे होय के सग।
मन विकार सो भाव है, लहियत पाय प्रसग ॥ रसिकानन्द तृतीय प्रकरण छन्द स० १।

२ विभावानुभाव व्यभिचारि सयोगाद्रस निष्पत्ति'—(नाट्यशास्त्र)

कवि ने नायिकाओ के जातिगत विभाजन मे रति रहस्यानुसार १ पद्मिनी, २ चित्रिणी, ३ शखिनी और ४ हस्तिनी चार भेद[1] कामसूत्र के आधार पर १ मृगी २ बडवी और ३ हस्तिनी तीन भेद मानकर उनके लक्षण लक्ष्य दोहे और कवित्त दोनो म ही दिये हैं।[2] गुणगत भेदों म १ उत्तमा २ मध्यमा, ३ अधमा। उत्तमा के (१) दिव्या (२) अदिव्या और (३) दिव्यादिव्या तीन उपभेद। धर्मानुसार १ स्वकीया २ परकीया और सामान्या तीन भेद और अवस्थागत ८ भेद १–प्रोषित पतिका २–खडिता, ३–अधमा ४–विप्रलब्धा, ५–वासक सज्जा ६–स्वाधीन पतिका ७–अभिसारिका और ८–कलहातरिता माने गये है। गुणादि के आधार पर वर्गीकृत नायिकाओ की गणना कवि ने भानुदत्त मिश्र की रसतरगिणी के नायिका भेद के अनुसार की है।[3]

कवि द्वारा प्रोषित पतिका के दस भेद माने गये हैं जो अवस्था के अनुसार हैं। अभिसारिका के परम्परागत भेदो के अतिरिक्त कामा, प्रेमा, मत्ता इन तीन भेदो को कवि ने प्रौढा के उपभेदो के अन्तगत माना है। इस सम्बन्ध म कवि का कथन है कि 'कामा अभिसारिका, प्रेमाभिसारिका, ये तीन भेद कोऊ और हू कहत हैं सो प्रौढा ही म लीन होत है। काम की प्रेम हू की आधिक्यता प्रौढा मे होत है। परकीया हू मे होत है ताते जुदी जुदी न कही।[4]'

कवि ने ४६०८ नायिका भेदो की गणना इस प्रकार की है–मध्या प्रौढा स ६ धीरादिक, ज्येष्ठा-कनिष्ठा स दूने करके १२, तेरहवीं 'मुग्धा' य स्वकीया के १३ भेद हुए। परकीया म ऊढा, अनूढा और सामान्या मिलाकर १६ भेद होत है। आठ नायिकाओ म ये १२८ बने। उत्तमादि म तिगुने किये जा ३८४ हुए। पुन ३८४ के दिव्यादिक म तिगुन किये तो ११५२ हुए इनके पद्मिनी आदिक म चौगुने करके कुल ४६०८ भेद हुए।[5]

१ पद्मिनी तदनु चित्रिणी तत, शखिनी तदनु हस्तिनी विदु।
उत्तमा प्रथमा भाविता, ततो हीयते युवतिरुत्तरोत्तरम्। —कोकोक— रति रहस्य, श्लोक स० १० प्रथम अध्याय।

२ नायिका पुनर्मृगी बडवा हस्तिनो वति। —वात्सायन—कामसूत्र, द्वितीय अधिकरण श्लोक सख्या १।

३ भानुदत्त ने जो लिख्यो रसतरगिनी माहि।
सो लच्छन हम लिखत हैं हमे दोस कछु नाहि॥—रसिकानन्द, ४।६८।

४ ग्वाल कवि—रसिकानन्द, षष्ठ प्रकरण छद स० ८२ की टीका।

५ वही छद स० ८८ से ९४।

सप्तम प्रकरण शीर्षक—सखी लक्षण, छन्द संख्या ४३। कवि ने सखियों के (१) मंडन, (२) उपालम्भ, (३) शिक्षा और (४) परिहास ये चार कर्माचार माने हैं और दूतियों के दो (१) संघटना, (२) विरहनिवेदना। कवि ने परम्परानुसार दूतियाँ १६ प्रकार की और मिलन स्थल १० प्रकार के गिनाए हैं।

अष्टम प्रकरण में शृङ्गार रस का १११ छन्दों में निरूपण है। शृङ्गार के भेद (१) संयोग, (२) वियोग, बता कर हाव के (१) लीला, (२) विलास, (३) विछित्ति, (४) विभ्रम, (५) किलकिंचित, (६) मोट्टायित, (७) कुट्टमित, (८) बिब्बोक, (९) सुललित और (१०) विहित—ये दस नाम लिखे हैं। कवि ने इनके अतिरिक्त (१) हेला, (२) मद, (३) बोधक, (४) मदन (५) अभिनयन, (६) चतुर, (७) छोभ और (८) गुन ये आठ और मानकर हावों की संख्या १८ करदी है। वियोग पक्ष में (१) पूर्वानुराग (२) करुणा, (३) मान और (४) प्रवास—ये चार भेद और उनके लक्षण लिखे हैं। विरह की दस अवस्थाओं का वर्णन भी इसी प्रसंग में किया गया है।

(१) अभिलाषा, (२) चिन्ता, (३) स्मृति, (४) गुण कीर्तन, (५) उद्वेग, (६) प्रण, (७) प्रलाप, (८) उन्माद, (९) व्याधि और (१०) जड़ता। विरह में चार प्रकार के दर्शनों का वर्णन है। (१) श्रवण, (२) स्वप्न, (३) चित्र और (४) साक्षात् दर्शन।

नवम प्रकरण शीर्षक—विषयालम्बन विभाव, नायक निरूपण, छन्द संख्या ७७। इस प्रकरण में नायक के चार जातिगत भेद लिखे हैं और इस विषय में पांचाल दत्त, कुचमार और भद्र विद्वानों के नाम सन्दर्भ में दिये हैं। नायक भेद (१) पति, (२) उपपति (३) वैशिक। पति के भेद (१) धीर ललित, (२) धीरशान्त, (३) धीरोदात्त और (४) धीरोद्धत। कवि ने परम्परानुसार पति के ४ और भेद लिखे हैं—(१) अनुकूल, (२) दक्षिण, (३) धृष्ट और (४) शठ। तत्पश्चात् (१) उत्तम, (२) मध्यम, (३) अधम, (१) दिव्य, (२) अदिव्य (३) दिव्यादिव्यादि के अनुसार कवि ने नायक पति के ५७६ भेद गिनाये हैं।[1] कवि ने उप पति भी चार प्रकार के माने हैं जिनमें—(१) मानी और (२) चतुर प्रमुख हैं चतुर भी दो प्रकार के हैं—(१) वाक्य चतुर और (२) क्रिया चतुर। वैशिक नायक को भी उत्तम मध्यम, अधम श्रेणियों में विभाजित किया गया है। कामसूत्र के आधार पर

१ वही—अष्टम प्रकरण, छन्द संख्या २९ से ३२ तक।

(१) नायक, (२) वृषभ तथा (३) अश्व तीन नायको का भी वर्णन कवि ने कर डाला है। नायक के सचिव ४ है जो इस प्रकार वर्णित हैं—

पीठ मर्दे, विट, चेटकहि, बहुरि विदूषक मान।
चारि भाति के सचिव ये नायक पास सुजान ॥६८॥

दशम प्रकरण का शीर्षक—उद्दीपन विभाव वर्णन है, छन्द संख्या ३२ है। कवि ने उद्दीपन विभाव के अ तर्गत रीति परम्परानुसार निम्नलिखित उपकरण गिनाये हैं—

"चोवासार, घनसार, च दन, अगरसार
चन्द्रमा, चिराक चित्रसाला, सेज मानिय।
कोकिला पपीहा मोर हस चगवस और
कोजुरी, घनावली गरज पहिचानिय॥
'ग्वाल कवि भूषन, बसन षडरितु देखौ
गायक, गुनीजन, सुमन तरु आनिय।
रस की कहानी अतरादिक, सुकाव्यबानी
त्रिविधि समीर ये उद्दीपन बखानिय ॥१॥

परम्परा के अनुरोध म कवि ने षटऋतु के जो छन्द लिखे हैं, य उच्च कोटि के हैं।

एकादश प्रकरण के ३८ छन्दों म शृङ्गारेतर हास्यादि रसो के लक्षण लक्ष्यो का कवि ने परम्परागत ही वर्णन किया है जो विस्तृत नही है।

द्वादश प्रकरण के ४८ छन्दो मे कवि ने रीति कवियो की परम्परा को नकार कर गौडीय सम्प्रदाय के लक्षण ग्रन्थ 'भक्ति रसामृत सिन्धु' की उपासना पद्धति के अनुसार मधुर रस का भी वर्णन किया है। इससे कवि के ज्ञान की विशिष्टता और बहुज्ञता का परिचय मिलता है। श्री रूप गोस्वामी के अनुसार कवि ने (१) दास्य (२) सख्य और (३) वात्सल्य इन तीन रसो के लक्षण लिखकर अपने उदाहरण बनाये हैं। सख्य के (१) समता और (२) विश्वास दो उपभेद और किये गये हैं। इसी प्रकरण म कवि ने रस के मिश्र और अमिश्र रसो को गिनकर उनके उदाहरण लिये हैं। मिश्रामिश्र रसो का वर्णन रीति के एक या दो आचार्य ही कर पाये हैं।

ग्रन्थ के अन्त म आश्रयदाता का आशीर्वाद देकर कवि ने ग्रन्थ का समापन कर दिया है। पुष्पिका इस प्रकार है—इति श्री म महाराजाधिराज सुषमा समाज बलवत छितिकत श्री जसवतसिंह जी हेतवे ग्वाल कवि विरचित

ग्र थे तीन रस, रमन के मित्र सत्रु नाम द्वादसो प्रकरा ॥१३॥ सवत १६५० भाद्रप्र कृष्णा ४ गुरौ लिखित श्री मथुराया सतघडा मध्ये रामलाल शमणा।

५ हम्मीर हठ खो० रि० १६०५-१३, १८४१ ८६१।

वीर काव्य यह एक छोटा सा प्रब ध काव्य है जो १०१ दोह, ३० कवित्त और १०८ छन्दो म पूण हुआ है। च दौसी निवासी प० सुरन्द्र मोहन मिश्र के अनुसार इसकी एक प्रति मथुरा क बा० श्याम चरण क पास वगा धरो म थी, जिसका देवनागरी लिप्य तर मथुरा क मुव् उल उलूम प्रेस स लीथो म मुद्रित होकर प्रकाश म आया था, यह प्रति हमार दखने म नही आई मिश्र जी न भी इस प्रति को दुलभ ही लिखा है।[1] हम इसकी एक प्रति श्री विद्यार्थी से प्राप्त हुई है जो कि ही लाला नरायन दास साकिन पिकरपुर मुकाम छत्तरपुर द्वारा स० १९५७ वि० म लिपिबद्ध की गई थी जसा कि प्रति की पुष्पिका से विग्नित होता है।[2] इसकी एक प्रति बिसौली (वदायू) निवासी प० लक्ष्मणाचाय उपाध्याय के सग्रह म होने का उल्लख भी मिलता है पर यह सम्प्रति उपलब्ध नही होती। हम्मीर हठ की एक दुलभ मुद्रित प्रति हम मथुरा क म० श्यामलाल हीरालाल श्यामकाशी प्रेस के श्री महेशचन्द्र अग्रवाल एम० ए० क प्राचीन ग्र थ सग्रह स उपलब्ध हुई है। यह प्रति इसी प्रेस म मुद्रित हुई थी। इस मुद्रित प्रति एव श्री विद्यार्थी द्वारा गुरमुखी स लिप्य तरित प्रति म छन्द सख्या व छदानुक्रम एक ही है। किन्तु पाठ मे कही कही भेद है। यह प्रति भी अत्य त भ्रष्ट पाठ म सम्पादित हुई है। फिर भी इस मुद्रित प्रति का अपना महत्त्व है। हमन अपना अध्ययन इन्ही दोनो प्रतिया के आधार पर दिया है।

रचना काल कवि न 'हम्मीर हठ' स० १८८३ वि० को कार्तिक कृष्णा अमावस्या को अमृतसर म पूण किया। जसा कि ग्र थ के अ त क इस उल्लेख स विग्नित होता है—

३ ८ ८ १

"सवत गुन सिधि सिधि ससी, कात्तिक कुहू बयान।
श्री हमीर हठ प्रगट्यो अमतसर सुमथान ॥१००॥

---

१ वीणा—नवम्बर १९५८ ई० ग्वाल कवि का हम्मीर हठ—श्री सुरेन्द्र मोहन मिश्र।

२ पुष्पिका—"इति श्री हम्मीर हठ सम्पूरणम् शुभमस्तु। पौषवदी स० १९५७ दिसम्बर १९०० ई० मु० छत्तरपुर, लिखित ला० नरायन दास साकिन सिकरेपुर॥

कुछ विद्वानो ने 'गुन' के स्थान पर 'गुनि' मानकर इसका रचनाकाल १८८१ वि० ही मानने के पक्ष मे हैं। हमारी प्रति मे 'गुन' शब्द है।

वर्ण्य विषय—ग्रन्थारम्भ इस प्रकार है—

"श्री गणेशायनम" अथ हमीर हठ लिख्यते।

'मेघवरन तन रतन गम, चदभाल भुज चार।
प्रनपालो कालो सदा, श्री कालो रिसवार ॥१॥
तिन पद पकज को करत बहु वदन कवि ग्वाल।
रचि हमीरहठ कीजिये, पूरन करो खुसाल ॥२॥

ग्रन्थ मे जोधराज कृत हम्मीर रासो की इतिहास प्रसिद्ध अलाउद्दीन खिलजी और रणथमौर के वीर शासक हम्मीर देव के बीच हुए युद्ध की कथा का वर्णन है। काव्य मे ऊहात्मक वर्णनों का आधिक्य है। बेगम मरहट्ठी और मीर महिमा मगोल के रति वर्णन म कवि शालीनता की रक्षा नही कर सका। कथोपकथनो मे मूलकथा प्रवाह टूट जाता है। नारी आभूषण, हाथी, घोडे, रथ, शस्त्रास्त्रादि के वर्णनो मे रीति परम्परा के ही अधिक दर्शन होते हैं वीर रस का तो आभास ही मिलता है। फिर भी रीति के आचार्य के हाथो की यह रचना सामान्यत सन्तोषजनक कही जा सकती है।

६ श्रीकृष्ण जू को नखशिख[1] खो० रि० १९०१ ८८, १९२० ८८ डी, पृष्ठ २४१, १९२३ १४६ बी, पृष्ठ ६०३, १९२६ १६१ सी, पृष्ठ २६१ १९२९ १३५ सी, पृष्ठ २६२।

शृंगार ग्रन्थ—५६ कवित्त ६ दोहे और १ सवैया कुल ६६ छन्दो का यह लघु ग्रन्थ ग्वाल को एक प्रसिद्ध शृङ्गार रचना है। मुरादाबाद से प्रकाशित और भक्त भावन मे सग्रहीत 'ग्रन्थ' का हमने मिलान किया है। दोनों अक्षरश एक है। नखशिख के पर्याप्त छन्द कवि के रसिकानन्द रसरग बलवीर विनोद और साहित्यानन्द म उदाहृत हैं। भक्त भावन म कवि ने इसे अविकल रूप म सग्रहीत किया है।

रचना काल—कवि के ग्रन्थगत निम्नाकित दोहे से नखशिख कार्तिक शुक्ला दशमी स० १८८४ वि० को पूर्ण हुआ था—

वेदि सिद्धि अहि रनिकर सबत आसिवन मास।
भयो दसहरा को प्रगट नखशिख सरस प्रकास' ॥२॥

---

१ लक्ष्मीनारायण प्रेस मुरादाबाद से नखशिख' नाम से प्रकाशित सवत १९०३ वि० द्वितीय सस्करण के सम्पादक—श्री गोवर्धन लाल, वृन्दावन स० १९६० वि०।

वेद=४, सिद्धि=८, अहि=८, रजिकर (चन्द्रमा)=१। गणना से सं० १८८४ वि० निकलता है। यही तिथि सर्वमान्य है।[1]

वर्ण्य विषय—कवि ने श्रीकृष्ण को आलम्बन बनाकर उनके चरण, चरण भूषण, जंघा, नितम्ब, लंक, काछनी, लंक भूषण, नाभि, त्रिवली, रोमराजि, उदर, हृदय, भृगुलता, वक्षस्थल, बनमाल, पाणि, लकुट, बांसुरी, भुजा कंठ, कंठ भूषण, पीठ, चोटी, चिबुक, अधर, दशन, रसना, मुख सुबास, हास्य, नासिका, कपोल, कान, कर्णाभूषण, नेत्र चितवन, भ्रकुटी, भाल, खौरि, श्रीमुख, केश, मोर मुकुट, गति और पीत पट का विशद काव्यमय वर्णन प्रस्तुत किया है। मंगला चरण में कवि ने राधा और सरस्वती की श्लेष से सुन्दर वन्दना प्रस्तुत की है। तत्पश्चात गुरु जगदम्बा पिता, कृष्णचन्द्र, महेश, गणेश का भी स्मरण किया है।[2] ग्रन्थ की समाप्ति निम्नांकित रूप में होती है—'इति श्री महाराजाधिराज श्री कृष्णचन्द जू को नषसिष सम्पूर्ण।'

७ विजय विनोद

वीर काव्य-ग्वाल के ग्रन्थों की शृंखला में यह एक नवीन कड़ी है, जिसे गुरुमुखी से हिन्दी जगत में लाने का श्रेय श्री देवेन्द्रसिंह विद्यार्थी नाभा निवासी को है। सवत् १९२० वि० में इस ग्रन्थ का लीथो में गुरुमुखी में प्रथम प्रकाशन हुआ, तब कवि भी जीवित था। इसकी एक हस्तलिखित प्रति भाई बागड़िया जी के पास थी। दूसरी हस्तलिपि श्री शमशेरसिंह 'अशोक' के निजी पुस्तकालय में थी। अशोक जी ने श्री शिरोमणि गुरु द्वारा प्रबन्धक समिति अमृतसर से एक प्राचीन जंगनामे नामक पुस्तक का गुरुमुखी सम्पादन व प्रकाशन सन् १९५० ई० में किया था, इसके पृष्ठ १०७ से १६९ तक विजय विनोद छपा है। इसकी मुद्रित प्रति हमने विद्यार्थी जी के पास देखी है, जिसका हिन्दी लिप्यन्तर भी हमको उन्हीं से उपलब्ध हुआ है। विजय विनोद कवि की वीररस की प्रथम कृति हम्मीर हठ की परम्परा में दूसरी मूल्यवान कृति है, जो कवि के वीर रस लेखक होने की साक्षी पर एक और छाप लगाती है।

रचना काल—इसकी रचना के कारण और समय के विषय में कवि ने लिखा है कि राजा हीरासिंह की इच्छा से उनके विश्वासपात्र सभासद काश्मीरी पंडित जल्हा के आदेश से उसने श्रावण शुक्ला अष्टमी भौमवार

---

१ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हि० सा० का इतिहास, पृष्ठ २९८ आदि। डा० किशोरीलाल गुप्त—सरोज सर्वेक्षण, पृ० २५९। डा० महेन्द्रकुमार—हि० सा० का वृहत् इतिहास, षष्ठ भाग पृ० ३७९ आदि।

२ श्रीकृष्ण जू को नखशिख—ग्वाल, छन्द सं० १ से ३ तक।

स० १६०१ वि० म विजय विनोद की रचना सभी इतिहास वृत्त की जांच परख कर की। कवि कथन इस प्रकार है—

हीरासिंह महाराज की, लखि इच्छा अनूप।
श्री ल्हा महाराज न कियो विचार अनूप ॥४॥
श्री जल्हामहाराज ने हुक्म दियो खुशहाल।
जे लहौर लोला भई त बरनो कवियाल ॥५॥
श्री पंडित को हुक्म सुनि माच्यो हिय मे मोद।
सब हवाल जांच्यो सकल राच्यो विजय विनोद ॥६॥

१ ० ६ १
सक्त ससि नभ निधि ससी सदन मुकुल सुमोद।
तिथि सुमष्टमी भौम कों प्रगटयो विजय विनोद ॥७॥

इस प्रकार इसकी रचना तिथि कवि क प्रथम वीर काव्य हम्मीर हठ (स० १८८३ वि०) के १८ वर्ष उपरान्त और पटियाला पति के आश्रित कवि चन्द्रशेखर वाजपेयी क हम्मीर हठ (स० १६०२) से एक वर्ष पूर्व हुई थी।

वर्ण्य विषय—४८७ विविध छन्दों म वर्णित इस प्रबन्ध काव्य के इतिवृत्त म लाहौर लीला का यथातथ्य चित्रण ही अभिप्रेत विषय रहा है। कवि ने अपने आश्रयदाता लाहौर दरबार क प्रधान मंत्री राजा ध्यानसिंह के पुत्र राजा हीरासिंह की इच्छा पूर्ति के हेतु महाराजा रणजीतसिंह (मृत्यु स० १८६६ वि०) से लेकर महाराजा दलीपसिंह तक लाहौर राज्य सिंहासन से सम्बन्धित समस्त इतिहास को कथा काव्य म उभारने का सफल प्रयत्न किया है। कवि इस दरबार म स० १८६१ वि० के लगभग प्रविष्ट हुआ और स० १६०१ वि० तक इस दरबार की घटनाओं का वह प्रत्यक्ष द्रष्टा रहा। महाराजा रणजीतसिंह खड्गसिंह नौनिहालसिंह शेरसिंह और तदुपरान्त महाराजा दलीपसिंह स सम्बन्धित तिथियों और घटनाओं के उल्लेख एवं औचित्यपूर्ण विवरण एतद्विषयक इतिहास के तथ्यों से इतने पुष्ट होते हैं कि यह आभासित जसे लेखक स्वयं इनम समीप मे कहीं सम्मिलित रहा है। मंगला चरण होता है कि उपरान्त कवि गुरु गोविन्दसिंह जी की स्तुति के साथ महाराजा की यशोगाथा आरम्भ करके उनकी दानशीलता, कर्मनिष्ठा शौर्य बल पराक्रम, शान शौकत आतंक, गुणग्राहकता गो द्विज वेद रक्षा व्रत आदि का विशद वर्णन करता है। इनकी मृत्यु क सम्बन्ध म कवि लिखता है—

अट्ठारह सौ छ्यानवे समत जानो मान।
मास आषाढ सु किसन पख पडवा भयो पयान ॥१५॥[1]

---

१ सन् १८३९ ई० को २७ जून को महाराज इस ससार से प्रस्थान कर गये डा० देशराज सिख इतिहास, पृ० ३२७।

कवि ने महाराजा खड्गसिंह और कुंवर नौनिहालसिंह की मृत्यु की तिथियां इस प्रकार लिखी है—

बीते सोलह मास अरु चौबिस दिन सुभसाज ।
तब पयान हरिपुरकियो खडगसिंह महाराज ॥१२४॥

महाराजा रणजीतसिंह के पश्चात् खड्गसिंह १६ माह चौबीस दिन ही राज्य कर पाये थे कि परलोक वासी बने और उसी दिन पिता की दाह क्रिया करके जस ही कुंवर नौनिहालसिंह लौटे कि दव दुर्विपाक से सिंह पौर के एक छज्जे ने टूटकर उनके भी प्राण ले लिये। कवि ने इन दोनों की मृत्यु तिथि कार्तिक शुक्ला एकादशी सवत् १८८७ वि० लिखी है।

उनीस सत सों सैंतालि सवत कातिक मास ।
सुकुल इकादसि को करयौ पितसुत हरिपुर वास ॥१२९॥[1]

इस दुघटना म पीछे इतिहासकारों ने किसी षडयन्त्र की दुर्गन्ध पाई है।[2] पर कवि ने अपने बुद्धि कौशल से इस दूसरे प्रकार से ही चित्रित किया है। काव्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि डोगरा राजा ध्यानसिंह म० खडग सिंह का प्रधान मन्त्री था, जो उनके पिता के काल से ही राज्य का प्रभाव शाली व्यक्ति था। उधर अतरसिंह लहनासिंह और अजीतसिंह सन्धावालिया ध्यानसिंह की इच्छा के विरुद्ध विधवा रानी चन्दरकौर को शासक बनाना चाहते थे जब कि राजा साहब म० रणजीतसिंह के द्वितीय पुत्र शेरसिंह का सिंहासनारूढ देखना चाहते थे। सरदार गुलाबसिंह डोगरा भी इसी मत का था। भारी सघर्षों के पश्चात् शेरसिंह सिंहासनस्थ होता है। पर राजनीतिक षडयन्त्रों की विनाशकारी शृंखला कुछ ऐसी चलती है कि पर्याप्त गुणवान बलवान, नीतिज्ञ और प्रजावत्सल होते हुए भी शेरसिंह को लाहौर का तख्त शूल) को सेज सिद्ध हुआ। सन्धावालिया के सघर्षों म शेरसिंह भी सवत् १९०० वि० म वीरगति को प्राप्त हुए। तत्पश्चात् रणजीतसिंह के तृतीय अल्प वयस्क पुत्र दलीपसिंह अपनी माता के अभिभावकत्व म महाराजा घोषित हुए। इनके प्रधान मन्त्री राजा हीरासिंह थे, जो राजा ध्यानसिंह के सुयोग्य पुत्र थे। यही तक काव्य की कथा चलती है। वर्णनों म कवि ने जहाँ घटना चक्र ऐतिहासिक दिया है, वहाँ नाराचसा अतिरंजनापूर्ण की है। अनेकानेक अस्त्रशस्त्रों की गिनती, भोजना के सैकडों नाम, वस्त्रालकारों के विविध वर्णन,

---

१ जिस दिन महाराज खडगसिंह जी का देहान्त हुआ वह सन् १८४० ई० को ५ वीं नौम्बर थी।'—डा० देसराज–सिख इतिहास, पृ० ३४१।

२ वही, पृ० ३४० ३४१।

युद्धो का अतिशयोक्तिपूर्ण विवरण रीति परम्परा का स्मरण दिलाते हैं। पर काव्य में इतिहास पक्ष का निर्वाह कवि ने पूर्ण सिद्ध हस्तता के साथ निभाया है, यह मानना पड़ता है।

८ गोपी पच्चीसी—खो० रि० १६०१ ६०, १८२० /८ए पृ० २४०, १६२३ १४६ सी पृ० ६०८, १६२६ १६१ ए पृ० २७८, १६२६ १३५ ए पृ० २६१, १८३२-७३ एफ पृ० १८४ (हस्तलिखित)।

उपालम्भ काव्य—जैसा कि ग्रन्थ के नाम से सुस्पष्ट है यह साहित्य की पच्चीसी परम्परा म २५ कवित्त सवयो का कृष्ण भक्ति परक एक उपालम्भ काव्य है।

वर्ण्य विषय—श्रीकृष्ण गोपियो के आराध्य देव हैं। उद्धव व्रज म गोपियो को योग की ज्ञान दीक्षा प्रदान करने आये हैं। साक्षात् रस रूप कन्हैया की रसिक लीलाओ को छोड़कर गोपिया उद्धव क शुष्क ज्ञान उपदेश को कैसे ग्रहण कर सकेंगी। ग्रहण करना तो दूर की बात है, वे उद्धव की व्रज म उपस्थिति से ही प्राणान्तक पीड़ा से छटपटा उठती हैं।

जैसे कान्ह जान तसे ऊधो सुजान आये, हैं तौ महमान पर प्रानन निकारे लेत।
साध वर अजम अजाये इन हाथन सौं तिनकों निरजन कहत मूठ धारे लेत॥
ग्वाल कवि हाल ही तमालन मे बालम म
ग्वालन मे खेले हैं कलोल किलकारे लेत।
हमां न परचेरी परचेरी सग पर चेरी
जोग परच हयां भेजि परचे हमारे लेत॥१॥

९ कुब्जाष्टक—८ छदो की उपालम्भ सम्बन्धी इस रचना का रचनाकाल कवि ने नहीं दिया। यह अक्क भावन में सग्रहीत है। इसका कोई छद कवि के किसी ग्रन्थ म उदाहृत नहीं हुआ। अत यह कवि के जीवन के अन्तिम दिनो की ही हो सकती है।

वर्ण्य विषय—इसमे गोपिया क प्रति कुब्जा की उपालम्भ भरी कटूक्तिया लिखी गई हैं। गोपियो को कुब्जा से शिकायत रही है कि उसने उनके प्रिय कृष्ण को मोह लिया है। गोपी उद्धव प्रसग मे गोपियो के कुब्जा के प्रति अनेक उलाहने मिलते हैं। कुब्जा ने इन्ही के प्रत्युत्तर म गोपियो के प्रति कुछ खरी खरी बातें पहली बार यहां कही हैं। कुब्जा की उक्तिया कुछ तीखापन तो लिये हुए हैं हीं, कही-कही बाजारू भी हो गई हैं। रचना की कुछ पंक्तिया यहां उद्धृत की जाती हैं—

'ग्वाल कवि' कहै एक घाटो तो जरुर,
मोमें गोबर न थाप्यो औ न खोयो म उकर है।
घर घर द्वार द्वार गली गली फिरवया,
भोर तें घसत साम जिनको कहादर है ।।४।।
आपने न औगुन गनत पर पति पानी ऐसी बेशरम करे मोही सो ठिठोली वे ।
'ग्वाल कवि' छिप छिप अधियारी रातिन मे,
सोवे पति त्यागि कें किवारें मुदी खोली वे ।
बनन मे बागन मे जमुना किनारेन मे,
खेतन खवान मे खराब होत डोली वे ।।६।

कहने की आवश्यकता नही कि ग्वाल इसमें शालीनता का निर्वाह नही कर पाये। इसीलिये उनको आचार्य शुक्ल[1] और आचार्य पदमसिंह शर्मा[2] की फन्कारें खानी पडी हैं। इसी भांति विविध युक्ति उक्तियों के दर्शन इस काव्य म मिलते हैं। ग्रंथ का समापन निम्नलिखित रूप मे होता है—
'इति श्री गोपी पच्चीसी सपूर्ण शुभमस्तु ।'

६ राधाष्टक[3]—(हस्तलिखित) यह लघु ग्रन्थ कवि ने स्वय सग्रह 'भक्तभावन' मे अविकल रूप म सम्मिलित किया है।

रचना काल—ग्रन्थ म कोई रचनाकाल नहीं दिया गया। भक्त भावन म सकलित ग्रन्थों के क्रम से इसकी रचना का स० १८८४ वि० के नखशिख के पश्चात् होने का अनुमान लगाया जा सकता है।

वर्ण्य विषय—राधा महारानी की स्तुति ही यहाँ कवि का वर्ण्य विषय है। ग्रन्थ का समापन इस प्रकार है—'इति श्री राधाष्टक सम्पूर्ण शुभमस्तु।

१० ग्वालाष्टक[4]—(हस्तलिखित)

---

१ 'इनकी बहुत सी कविता बाजारी है।'—हि० सा० का इतिहास पृ० २९९।

२ उस समय कुब्जा पक्षपाती महाराज को और गोपी भक्त नवनीत जी को मालूम न था कि बहुत पहले कुब्जा के पडोसी ग्वाल कवि हवके हम सायको अदा कर गये हैं। कुब्जा की ओर से गोपियों को वह चुना चुनी को सुना गये हैं कि सुनकर लखनऊ वालिया भी शरमा जाय। ग्वाल कवि की कुब्जा की कटूक्तियां सुनकर बेचारी गोपियां कट कर रह गई होंगी। पदमसिंह शर्मा, माधुरी वर्ष ६ खड २, सख्या ४, पृ० ४५७।

३ आचार्य प० रामचन्द्र शुक्ल—हि० सा० का इतिहास, पृ० २९८ एव डा० महेन्द्रकुमार—हि० सा० का वृहत् इतिहास षष्ठ भाग, पृ० ३७९।

४ भक्त भावन—ग्वाल कवि, पत्र स० ५७ से ५९।

वर्ण्य विषय—जैसा कि ग्रन्थ के नाम से ही प्रकट है इसमें ग्रीष्म पावस, शरद, हेमन्त, शिशिर और बसन्त पर क्रमश २१, २३, ४, ६, ४७ १५ छन्द उपलब्ध होते हैं। ग्रन्थ के अन्त में १४ छन्दों में तोता, गुलाब, मालती सिरस, कदम्ब, बागवान, भौंरा हाथी, उलूक, कौआ, हंस, कमल गोवत्स आदि पर अन्योक्तियाँ हैं। अधिकतर वर्णन उद्दीपन रूप में आये है, पर स्वतन्त्र प्रकृति चित्रण भी यत्र-तत्र द्रष्टव्य है।

१३ प्रस्तावक[1]

रचना काल—कवि ने स्वयं सं० १९१९ वि० में इस ग्रन्थ को 'भक्त भावन' में सम्मिलित किया है। ग्रन्थ में रचनाकाल का उल्लेख न होने से 'भक्तभावन' के रचनाकाल को ही इसका रचनाकाल मान लेना युक्तियुक्त होगा। कवि के इस समय तक के किसी भी ग्रन्थ में प्रस्तावक के कवित्त अवतरित नहीं हुए।

वर्ण्य विषय—कवि ने अपने जीवन के कटुतिक्त अनुभवों को काव्य भाषा में लिपि बद्ध कर दिया है। सांसारिक संघर्षों ने कवि को जो परिपक्व विचार दिये, उनमें मानवता, मैत्री सज्जनता, प्रेम निर्वाह, कवि कर्म, कवियों के प्रति अकृतज्ञता आदि विषयों पर कवि ने अपने निजी विचार प्रस्तुत किये हैं।

१४ कवि दर्पण[2] खोज रिपोर्ट १९०६ १०२, पृष्ठ २२ १९१७-६५ सी पृष्ठ १६३, १९३५-३३ पृष्ठ ३१ राजस्थान खोज रिपोर्ट भाग ३ पृष्ठ ११२।

तत्कालीन आलोचना का यह एक अभिनव ग्रन्थ है। साहित्य में इसकी चर्चा भी बहुत हुई है। परन्तु इससे पूर्व इसकी कोई भी सम्पूर्ण प्रति उपलब्ध नहीं हो सकी थी। डा० ब्रजनारायण सिंह ने 'दूषण दर्पण नाम से कवि के जिस ग्रन्थ का परिचय पद्माकर और उनका युग' में दिया है, वह यही ग्रन्थ है और उसमें इसके केवल चार अध्यायों—द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और पंचम क्रान्तियों—का ही परिचय मिलता है। इसकी एक खंडित प्रति आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने भी अपने पास बताई है। इसकी प्रथम, द्वितीय और तृतीय क्रान्तियों की एक पुरानी प्रतिलिपि हमारे निजी संग्रह में है। और केवल प्रथम क्रान्ति की एक पुरानी प्रति थी नवनीत पुस्तकालय में

१ भक्त भावन—ग्वाल कवि, पत्रसंख्या १०० से १०८ तक।

२ कवि दर्पण के प्रथम पृष्ठ का छायाचित्र देखिये परिशिष्ट चित्र ७।

लेखक न देखी है। सिख रिफरेंस लाइब्रेरी, अमृतसर म गुरुमुखी लिपि मे इसकी एक पूण प्रति—साता क्रातिया, सुरक्षित है। श्री विद्यार्थी जी की कृपा स इसका हिन्दी लिप्य तर लेखक को प्राप्त हुआ है। प्रति म रचनाकाल और लिपिकाल नही लिखा, जबकि मथुरा वाली दोनो प्रतिया की प्रथम क्राति के आरम्भ म रचनाकाल लिखा हुआ मिलता है। शेष विषय इन प्रतियो म अक्षरश ज्यो के त्यो एक ही है। कवि राव मोहनसिंह उदयपुर के यहाँ इसकी एक पूण प्रति बताई जाती थी पर अब यह वहा उपलब्ध नही होती।

रचना काल—अ त साक्ष्य के अनुसार इसकी रचना आश्विन शुक्ला दशमी, रविवार स० १८९१ वि० म हुई थी। देखिये ग्रथ का यह दोहा—

१ ६ ८ १

'सवत ससि निधि सिद्धि ससि आस्विन उत्तम मास।
बिजदसमि रवि प्रगट्यो कविदरपन प्रकास" ॥४॥

आचाय रामचन्द्र शुक्ल, डा० व्रजनारायण सिंह आदि विद्वानो ने भी कवि दपण का रचना काल यही लिखा है।[1] इस ग्रथ की रचना दूषण दपण नाम स अमृतसर के सरदार लहनासिंह के लिये की गई थी, जसा कि ग्रथ की क्रान्तियो के अ त म लिखा मिलता है—'इति श्री सवगुन गाहक असि बाहक परम उदार रिझवार श्री सरदार साहिब श्री मल्लहनासिंह जी कृते ग्वाल कवि विरचिते दूषण दपण पद पदास दोष निणय प्रथमो क्रान्ति।" डा० सिंह के अनुसार ग्रथ की प्रत्यक क्राति के आरम्भ मे जो दोहे वर्णित है, उनम लहनासिंह का नाम इस प्रकार आया है—

श्री लहना सिंह बीर को अदल तेज अति तीख।
तसकर ठग बटमार सब मागिखात हैं भीख ॥[2]

लेखक की देखी प्रतियो मे यह दोहा नही मिलता। अमृतसर वाली प्रति स्वत त्र रूप स लिखी गई प्रतीत होती है, क्योकि इसमे लहनासिंह का नाम न किसी दोहे म है और न क्राति क अन्त म। इसकी क्रातियाँ इस प्रकार समाप्त हाती हैं—इति श्री कवि दरपने ग्वाल कवि विरचिते वाक्य दोप निरनये नाम द्वितीयो क्राति।' सम्भवत बाद म कवि ने इस ग्रथ को उसका नाम डाल कर लहनासिंह को भेंट कर दिया होगा।

---

१ हि० सा० का इतिहास—आ० रामचन्द्र शुक्ल २०१५ वि० सस्करण, पृष्ठ २९८। एव पद्माकर और उनका युग—डा० व्रजनारायण सिंह, स० १९६६ ई०, पृष्ठ २०१।

२ पद्माकर और उनका युग—पृष्ठ १८९।

वर्ण्य विषय—ग्रन्थ को सात कीर्तियो मे बाटा गया है जिनमे काव्य शास्त्र की दृष्टि से क्रमश १–पद पदाश दोष, २–वाक्य दोष ३–अर्थ दोष, ४–रस दोष, ५–दोषेक्ताकरण ६–दोषोद्धार वणन और ७–प्रश्नावली गुण वणन के विषय मे विस्तारपूर्वक विमर्श प्रस्तुत किये गये हैं। सातो कीर्तियो म कुल छन्द स० ४८६ हैं। दोष निणय के लिये हिन्दी के प्रसिद्ध कवि केशव बिहारी, पद्माकर आदि के छन्दो को उदाहरणो म स्थान दिया गया है। आलोचना म कवि का दृष्टिकोण शास्त्रीय रहा है। उदाहरणो म दोषो को सिद्ध करके उनको निदुष्ट बनाकर दिखाया गया है। एक एक उदाहरण कवि ने अपना भी दिया है। दोषो के लक्षण गद्य पद्य दोनो मे है। दोषो क भेदो की चर्चा मे कवि का आधार मम्मटाचार्य रहे हैं।

ग्रन्थ के आरम्भ म मगलाचरण, ग्रन्थ नाम, रचनाकाल, ग्रन्थ के गुण और दोषो के सम्बन्ध मे कवि की मान्यता आदि का वणन मिलता है। कवि बडे आत्म विश्वास के साथ ग्रन्थ की विशेषता के विषय म लिखता है—

> बहिक नीति प्रमान करि, करियतु काव्य नवीन।
> दोस हरन खलमुख कुलक लखि रीझें परवीन॥
> जो कवि दरपन सम सदा निरखें याहि बनाय।
> कविता आनन माहितिहि दोस न दरस आय॥
> लिखत चले आये सब अगिल सुकवि अपार।
> भूलचूक जो होयसो लीजो सुकवि सुधार॥
> कवित्त पुराने धरन को कारन यह विस्तार।
> दोस सहाय बनाय पद दहीं ताहि सुधार॥[1]

कौन सा कवि और कौन सी कविता दोषी होता है इसक लिय कवि ने निणय का एक अपना मानदण्ड बनाया है जो मनोविक न होते हुए भी उसकी सूझ का परिचायक है। यह निम्नांकित है—

> जाके सिगरे ग्रन्थ मे आधे दोस कवित्त।
> ताके सिगरे कवित अरु कवि हू दूसित नित्त॥
> जो कहु सिगरे ग्रन्थ में परें पांच मे दोस।
> तौ तिनही मे जानिये, कविको मिनो अदोस॥
> जो वरनन बहु करत हैं, ते काहू इक ठौर।
> चूकि गये तो चूक वहि, सबमे चूक न दौर॥[2]

---

१ कवि दपरण—१।५ से ७।
२ कवि दपरण—१।१० से १२।

तत्कालीन काव्यालोचन का मापदंड क्या था, इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है।

इसके अनन्तर कवि लक्षण का लक्षण और लक्ष्य का लक्षण देकर कवि दोष की परिभाषा इस प्रकार करता है—'सुनत और समुझत सम, नियमवान आनन्द। ताको जो रोकै दुखद, सो दूसन बुधि वृन्द॥'[1] पद और वाक्य के सुनने और रस के समझने में नियामक आनन्द को जो रोके वही दोष है। कवि ने शब्दगत, अर्थगत और रसगत—ये तीन प्रकार के दोष गिनाये हैं। पद दोषों में (१) श्रुति कटु (२) च्युत संस्कृति, (३) अप्रयुक्त, (४) असमर्थ, (५) निहितार्थ, (६) अनुचितार्थ, (७) निरर्थक, (८) अवाचक (९) अश्लील, (१०) ग्राम्य, (११) सन्दिग्ध, (१२) अप्रतीतत्व, (१३) नेयार्थ (१४) क्लिष्ट, (१५) अविमृष्ट विधेयांश और (१६) विरुद्धमतिकृत का वर्णन किया है। पदांश दोषों में भी इन्हीं की पुनरावृत्ति हुई है।

वाक्य दोषों में (१) प्रतिकूल वर्ण, (२) हतवृत्त, (३) न्यूनपद, (४) मात्रा हतव्रत, (५) रसानुकूल हतवृत्त, (६) अधिक पद, (७) कथित पद, (८) पतत्प्रकर्ष, (९) समाप्त पुनरात्त, (१०) अर्धान्तर एकवाचक, (११) अभवन्मत योग, सम्बन्ध, (१२) अपदस्थ, (१३) अमतपरार्थ, (१४) भग्न प्रक्रम, (१५) अनभिहित वाच्य, (१६) प्रसिद्धहत, (१७) अक्रम और (१८) अपदस्थ समास वर्णित किये हैं।

अर्थ दोषों में (१) अपुष्टार्थ (२) कष्टार्थ, (३) व्याहत (४) अर्थ पुनरुक्त, (५) दुष्क्रम, (६) ग्राम्यार्थ, (७) सदिग्धार्थ, (८) निर्हेतुक, (९) अप्रसिद्ध, (१०) विद्या विरुद्ध, (११) अनवीकृत, (१२) सनियम परिवृत, (१३) अनियम परिवृत, (१४) विशेष परिवृत (१५) अविशेष परिवृत, (१६) साकांक्ष (१८) अपद प्रयुक्त (१८) सहचरभिन्न, (१९) प्रकाश विरुद्ध, (२०) विधि अयुक्त (२१) अनुवाद अयुक्त, (२२) त्यक्त पुनः स्वीकृत और (२३) अश्लीलत्व दोषों के लक्षण लक्ष्य देकर उनको निदुष्ट बनाकर दिखाया है। थोड़े बहुत नामों के परिवर्तन एवं कुछ उपभेदों को छोड़कर कवि मम्मट से पूर्ण प्रभावित है।

इसी प्रकार चतुर्थ क्रान्ति में रस दोषों में मम्मटानुसार (१) संचारी नाम, (२) रसशब्द कथन, (३) स्थायी कथन, (४) विभाव व्यक्ति कष्ट, (५) अनुभाव व्यक्ति कष्ट, (६) विभाव प्रतिकूल कष्ट, (७) अनुभाव प्रतिकूल, (८)

[1] कवि दर्पण—१।२०।

दीप्त पुन पुन (९) अकाड प्रकथन, (१०) अकाड छेद, (११) अग विस्तार, (१२) अगिमानुसधान, (१३) प्रकृति विपयय, और अमगाभिधान दोषो का वणन मिलता है।

पचम क्राति म दोषों के साकयर्याभास का वणन है। एक दोष दूसरे दोष से मिलता हुआ आभासित होता है। कवि ने श्रुतिकटु और वण प्रतिकूल, असमथ और निहिताथ, अनुचिताथ और विरुद्ध मतिक्रम, सन्दिग्ध पद और सदिग्धाथ, पद ग्राम्य और अथ ग्राम्य, क्लिष्ट और कष्टाथ न्यून पद और साकाक्ष, लोक विरुद्ध और कवि नेम विरुद्ध, पतत्प्रकय और भग्न प्रक्रम त्यक्त और स्वीकृत प्रथम समाप्त पुनराप्त और पुनराप्त और अपदमुक्त न्यून पद और अनभिहित, अक्रम और विधि अयुक्त दोषा म दिखने वाले साक्य के आभास को शास्त्रीय रीति से समझाकर इनके लक्षणो की विशेषताओ को स्पष्ट किया है। इसके अन तर कवि ने केशव की कविप्रिया क १७ दोषा के साथ अपने वर्णित १७ दोषो को रखकर केवल नामो का ही भेद मात्र लिखा है। कवि लिखता है—

नाम भेद करि ही जुवे दोखत हैं ये जान।
इन ही मे सब मिलत हैं सो अब करौं बखान ॥१०॥

षष्ठ क्राति म दूपणोद्धार का वणन है। श्रुति कटु दोप रौद्र वीर बीभत्स, शा त रसा म गुण है। नीरस वणन म श्रुति कटु न दोष है, न गुण। जिसका दूसरा नही हो, वहाँ भी श्रुति कटु दोष नही होता। अप्रयुक्त व निहिताथ यमक और श्लेष म गुण बन जाते हैं। काम क्रीडादि म लज्जा श्लील दोप गुण हैं। ग्लानिदोष शान्त औ वाभत्स म ग्राम्य दोष ग्रामीण की उक्ति म या ग्रामीण के प्रति उक्ति म न्यून दाष दुख और मोह म, अविश पद दोष भीत और उत्साही वक्ता म अप्रतीतत्व दोष शास्त्र क ज्ञाता म कथित दोष (१) विहित कथन म, (२) विषाद म, (३) लाटानुप्रास म, (४) विस्मय म, (५) क्रोध म, (६) दीनता म (७) विधि अलकार म (८) भय म, (९) प्रसादन म (१०) मोद म, (११) निश्चय म (१२) आदर म, (१३) यमक म, (१४) दया म दोष नही कहाते। इसी प्रकार कवि न अन्य दोषों के गुण स्थानों का काव्य प्रकाश, कविप्रिया बिहारी सतसई, सप्तम क्राति म दोष सम्बन्धी शकायें उठाकर उनका निराकरण किया है। कवि ने कुलपति मिश्र के रस रहस्य के प्रश्न को आरम म इस प्रकार उठाया है—

इस रहस्य मे प्रश्न ये नयारथ है शुद्ध।
न्यून भग्नप्रक्रम लखो अधिक पद जु अविरुद्ध ॥२॥

हतव्रत टीका आदि मे कहत कनकटू दोस ।
मात्रा हतव्रत जो लिख्यो सो वह जानि अदोख ॥३॥
अभव मत मत टीका विष न्यून दोस पहिचान ।
अफल दूजो जो लिख्यो विधि अजुक्तसो मान ॥४॥
विधि अनुवाद अजुक्त के लक्षन लिखे उक्त ।
उदाहरन विधि कौन दिय दिय अनुवाद अजुक्त ॥५॥

कुलपति के उदाहरण—

बल सो ननन की झलक मीन किये मदहीन ।
वदन कमल तेरे अली चन्द कमी नाकीन ॥

की ग्वाल न इस प्रकार आलोचना की है—या के आगे लिख्यो चन्द को कभी ना करिबो नाही समवत तब लक्षणा करिके जीतिबो जानो तो कछु प्रयोजन नाही । ऐसे लिख्यो सो या दोहा म नयारथ होई नही । यहाँ खासी लक्षणा है औ अर्थ की रीति ही तीन है अभिधा लक्षना, व्यजना । सो यह लक्षना स खासी अर्थ होय है ।' इसी प्रकार कवि ने केशव आदि कवियो के दोषो की आलोचना की है । काव्य प्रकाश आदि के सदर्भ देकर मत की पुष्टि भी की गई है । यह प्रकरण पर्याप्त महत्वपूर्ण है । इसी क्रान्ति म कवि ने माधुर्य, ओज और प्रसाद गुणो का विशद विवेचन भी किया है । शुद्ध माधुर्य, शुद्ध ओज मधुरनिष्ठ प्रसाद, ओजनिष्ठ प्रसाद और उभयनिष्ठ प्रसाद के कवि ने बडे स्पष्ट और स्वच्छ उदाहरण दिये है । गुण सम्बन्धी सभी सम्भव शकाओ का कवि ने समाधान प्रस्तुत किया है ।

सक्षेप म यह यह ग्रन्थ अपने प्रकार का अनूठा ग्रन्थ है जिससे कवि का शास्त्र ज्ञान, बहुज्ञता, और आलोचना शक्ति का परिचय मिलता है ।

१५ रसरग[1]—खोज रिपोट १९०५ ११, १९३२ ७३ की पृष्ठ १५४ ब्रज भाषा रीतिग्रन्थ कोश—(हस्तलिखित) पृ० ६३ ।

रीति ग्रन्थ—कवि की यह एक और प्रौढ लक्षण रचना है । हमने सेठ कन्हैयालाल पोद्दार मथुरा की प्रति से अध्ययन प्रस्तुत किया है । यह प्रतिपूर्ण है और स्वय सेठ जी द्वारा स० १९२२ वि० की प्रति म स० १९९० वि० म अनुप्रलिपि की हुई है । इसम आठ उमग (अध्याय) हैं जिनम ३८० दोहा, ३७० कवित्त, ६० सवया—कुल ८१० छन्द लिये है ।

---

१ प्राप्ति स्थान—१–नवनीत पुस्तकालय मथुरा । २–कासी नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी । ३–सेठ कन्हैयालाल पोद्दार पुस्तकालय मथुरा स० १९२२ की प्रति । ४–केप्टेन शूरवीरसिंह एम० डी० एम० अलीगढ का निजी सग्रह। प्रथम पृ० का छायाचित्र देखिये परिशिष्ट चित्र सं० ८ ।

का भेदो सहित विविधि मान वणन प्रस्तुत किया है। इस वणन म रसिकानन्द का नायिका वणन शैली से कुछ अधिक प्राजलता दृष्टिगोचर होती है। भेदो म कोई भिन्नता नहीं है। अपने अन्तिम ग्रथ 'साहित्यानन्द' का म दभ देते हुए कवि परकीया म मान की विद्यमानता नहीं मानता—

परकिय मे नहि मान जिमि, तिन हेतु न विस्तार।
ग्रन्थ साहितानन्द मे लखि रिझिहैं रिझवार ॥९४॥

ततीय उमग—परकीया लक्षण छन्द सख्या ७४। परकीयाओ के अ तगत कवि न ऊढा, अनूढा सुखसाध्या, दुखसाध्या असाध्यासाध्या, बहु कुटुम्बिका, बहु रक्षिता, विदग्धा अनिका त्वा भूत गुप्ता भविष्य गुप्ता वत्तमान गुप्ता, वाक विदग्धा स्वयदूतिका क्रिया विदग्धा लक्षिता अनुसना मुदिता, गणिकादि के विस्तृत लक्षण और लक्ष्य लिख कर इन के भेदो की स्थूल गणना इस भाति कराई है—

परकीया के भेद गनि ऊढ अनूढा होय।
सुख साध्यादिक तिहून म तिगुने करि षठ होय ॥६७॥
सभया पाचन म मिल, अभया द्व बिन मूल।
सात जुरे षट प्रथम के तेरह बिधि ये भूल ॥६८॥

चतुथ उमग—नायिका भेद म स्वकीया के व्यापक भेद अवस्था करि (छ०स० १११) कवि ने स्वकीया म अ य सुरति दुखितादि १८ भेदों क नामोल्लेख[1] करके विस्तारपूवक इन के लक्षण लक्ष्यो का निदशन कराया है। आगे अ य सभाग दु खिता वक्रोक्ति गर्विता के तीन तीन प्रभिष्यत्पतिका गच्छत्पतिका प्रोषितपतिका खण्डिता, कलहान्तरिता विप्रलब्धा उत्कण्ठिता वासकसज्जा स्वाधीन पतिका, आगमिष्यतपतिका, आगच्छतपतिका आगत पतिका के चार चार तथा अभिसारिका के ८ भेद और किये गये हैं।

पचम उमग—सखी दूती दशन वणन, छ द सख्या ३२। इस छोटे स अध्याय म कवि ने अपने पूव ग्रन्थ रसिकानन्द के समान ही सखी दूती कर्म चार बताकर (१) सघट्टना और (२) विरह निवदिता के लक्ष्य सहित लक्षण प्रस्तुत किय हैं। भानुदत्त के अनुसार दशन तीन प्रकार के हैं—(१) स्वप्न, (२) चित्र और (३) साक्षात। पर भाषा म श्रवण दशन भी कवि ने परम्परा स चौथा दशन भेद गिना है।[2]

षष्ठ उमग—दीपक—सयोग शृङ्गार भेद, छन्द सख्या ८१। इसम

१ रसरग—४।१ से ४। २ वही, ५।२८।

संयोग और वियोग अथवा विप्रलम्भ दो भेद बताकर संयोग के लीलादिक दस हावों का विस्तृत वर्णन किया गया है।[1] वियोग शृङ्गार पक्ष में प्रवास, पूर्वानुराग (श्रुत्वा और दृष्ट्वा) मान विरह, दवयोगात विरह आदि के साथ निम्नांकित दसों वियोग दशाओं का वर्णन है—

> दसामुदस बरनन करत, सुकवि वियोग मझार ।
> अभिलाषा चिंता समृति पुनि गुनिकथन उचार ॥५९॥
> कहि उद्वग प्रलाप पुनि है उनमाद जु व्याधि ।
> जडता मान बखानहीं, जिनकी बुद्धि, अगाधि ॥६०॥

सप्तम उमग—नायक, सखा एव उद्दीपन वर्णन, छन्द संख्या १३४। नायक और सखाओं के भेद उपभेद कवि ने अपने पूर्व रचित ग्रन्थ रसिकानन्द के समान ही गिनाये हैं।[2] षड्ऋतु वर्णन में क्रमश बसन्त, ग्रीष्म, पावस शरद हेमन्त और शिशिर के ६३ कवित्त सवैया दिये गये हैं। उद्दीपन के उपकरण वही प्राचीन हैं। उदाहरण विशद हैं।

अष्टम उमग—हास्यादि अष्ट रस वर्णन, छन्द संख्या ७५। शृंगार रस का कवि पीछे विशद वर्णन कर ही चुका है। यहाँ शेष आठों रसों का विवेचन मिलता है। स्वनिष्ठ परनिष्ठ केवल ६ रसों में ही मिलता है शेष दो म परनिष्ठ होत हैं—

> हास्य आदि षमु रसन में, षट स्वनिष्ठ परनिष्ठ ।
> रौद्र वीररस में दुहू हैं केवल परनिष्ठ ॥१॥

ग्वाल ने यहाँ परम्परा का ही अधिक निर्वाह किया है। रसिकानन्द के हास्य, भयादि के वर्णन को छोड दिया गया है। वीर रस के यहाँ ४ ही उपभेद मिलते हैं। साहित्यानन्द म बढकर य ६ हो गय हैं।

१७ साहित्यानन्द

ग्वाल का अन्तिम रीति ग्रन्थ—यह ग्रन्थ कवि का अन्तिम और सबसे प्रौढ रीति शास्त्रीय साहित्य ग्रन्थ है, इसम किसी विवाद को स्थान नहीं है। इसमे कवि के प्रगाढ पाण्डित्य का परिचय मिलता है। कवि न संस्कृत और भाषा के प्रमुख आधार ग्रन्थो का गूढ अध्ययन और मनन किया था। रसिकानन्द म इसकी प्रारम्भिक झाँकी मिलती है। तत्पश्चात् नखशिख, कवि दर्पण, रसरग और बलवीर विनोद म उसकी प्रतिभा क्रमश प्रौढ से प्रौढतर होती चली गई है। साहित्यानन्द के निर्माण तक उसके ज्ञान की परिधि म पर्याप्त

---

१ रसरग—६।६ ७।   २ वही, ७।२ ३।

विस्तार-वृद्धि हुई है। भाषा और शैली में परिपक्वता, विचारों में स्थिरता और अभिव्यंजना शिल्प में स्पष्टता एवं गूढ़ता परिलक्षित हुई है। विषय विवेचन गत आलोचना में भी गाम्भीर्य दृष्टव्य होता है। ग्रन्थ के विषय में पंडित ओंकार नाथ मिश्र की मान्यता है कि 'यह हिन्दी साहित्य के रीति ग्रन्थों में सबसे बड़ा है।'[1] हमने भी ग्रन्थ के अध्ययन से यही मत स्थिर किया है कि यह तत्कालीन साहित्यशास्त्र का सबसे बड़ा और प्रामाणिक ग्रन्थ है।

कलेवर—ग्रन्थ कलेवर विशाल है। इसको सोलह स्कन्धों में विभाजित किया गया है। जिन में से ग्यारह स्कन्ध ही उपलब्ध होते हैं। पंचम से नवम स्कन्ध तक बहुत खोज करने पर भी उपलब्ध नहीं हुए। प्राप्त प्रति में कुल मिलाकर २४४३ छन्द, ५६७ गद्य टीका और वार्ताएँ तथा ३९२ मानचित्र (Diagrams) हैं। छन्दों में २१३७ दोहे १३० वर्ण वृत्त, ८६ कवित्त और १३ सवैया सम्मिलित हैं। वृत्ति विनोद, लक्षणा व्यंजना और अलंकार भ्रम भंजन नामक तीन ग्रन्थ जो पृथक् पृथक् मिलते हैं और अब तक जिनका स्वतन्त्र अस्तित्व माना जाता रहा है साहित्यानन्द के ही क्रमश: प्रथम, एकादश और षोडश स्कन्ध हैं। ग्रन्थ में भरत मुनि कृत नाट्य शास्त्र, राजशेखर कृत काव्य मीमांसा, मम्मट कृत काव्य प्रकाश, विश्वनाथ कृत साहित्य दर्पण, जयदेव कृत चन्द्रालोक, भानुदत्त कृत रस तरंगिणी और रस मंजरी, रूप गोस्वामी कृत भक्ति रसामृत सिन्धु और उज्ज्वलनीलमणि, अप्पय दीक्षित कृत कुवलयानन्द, वात्सायन कृत कामसूत्र, कोकोक कृत रति रहस्य आदि रीति के प्रसिद्ध आधार ग्रन्थों को आधार मानकर लक्षण विवेचन किया गया है। लक्षणों में कवि ने सर्वत्र अपने रचित छन्द ही रखे हैं पर आधार ग्रन्थों की छाया से भी कहीं-कहीं वह बच नहीं पाया है। लक्षण कथन में दोहा शैली अपनाई गई है। अधिकांश उदाहरण कवि ने अपने पूर्वरचित ग्रन्थों से अथवा नये बनाकर रखे हैं। पर अपने पूर्ववर्ती केशव, बिहारी, मतिराम, देव, कुलपति मिश्र, कवीन्द्र, जसवंतसिंह, भूषण, दास, दूलह, पद्माकर आदि के भी प्रसिद्ध ग्रन्थों के कतिपय लक्ष्यों को सादर उदाहृत किया है। संस्कृत के कुमार सम्भव, कर्पूर मंजरी, सवत नाटक, वीर चरित्र नाटक, रत्नावली आदि की भी प्रासंगिक चर्चा है। शब्द व्युत्पत्ति में अमरकोश और अनेकार्थ मंजरी का आधार लिया गया है।

---

1 ओंकारनाथ मिश्र—ग्वाल कवि [illegible], सम्मेलन, भाग २१, २००१ वि०

प्राप्ति स्थान—यह ग्रन्थ अति दुष्प्राप्य रहा है। इसकी एक प्रति मथुरा के सुखदेव घटवारिया के पास कविवर श्री नवनीत चतुर्वेदी ने देखी था। पर उसका पता आज तक नहीं चला कि कहां गई। एक प्रति श्री शंकर नाथ मिश्र ने राजा श्रीप्रकाश सिंह, मल्लापुर बिसवा (सीतापुर) के निजी पुस्तकालय में देखी थी, जो अब वहां उपलब्ध नहीं है। एक प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के पोथीखाने में है, जिसे हमने देखा है। इसमें पंचम से नवम स्कन्ध तक के पृष्ठ नहीं हैं। चतुर्थ स्कन्ध में केवल ३८ छन्द हैं। इसकी एक अति प्राचीन जीर्णशीर्ण प्रति वाराणसीस्थ आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के निजी पुस्तकालय में है। इस अन्तिम प्रति से ही हम ने अध्ययन प्रस्तुत किया है। खोज में इस ग्रन्थ की कोई अन्य पूर्ण प्रति हमारे देखन सुनन में नहीं आई।

रचनाकाल—ग्रन्थ में इसका रचनाकाल क्वार शुक्ला १५ स० १९०५ वि० दिया है।

५ ० ९ १ ५ १
संवत् सर नभ निधि ससी क्वार सुकुल सर चंद।
सादिन प्रगट भयो सु यह ग्रन्थ साहितानन्द ॥७॥

सर=५, नभ=०, निधि=९, ससी=१ सर=५ चन्द=१ अंकानाम वामतो गति नियम से, उक्त तिथि निष्पन्न होती है। इसकी रचना का आरंभ स० १९०४ वि० से पूर्व ही हो गया था, जैसा कि रसरंग ग्रन्थ की द्वितीय उमंग के मान वर्णन प्रसंग में इसके नामोल्लेख सन्दर्भ से ध्वनित होता है।[1] रसरंग का रचनाकाल वैशाख शुक्ला पंचमी स० १९०४ वि० है। दोनों ग्रन्थों के निर्माण काल का मध्यान्तर १ वर्ष ५ माह १० दिन है। परकीया मान-वर्णन साहित्यानन्द के चतुर्थ स्कन्ध तक नहीं आता। इससे निष्कर्ष निकलता है कि रसरंग पूर्ण होने तक साहित्यानन्द के कम से कम ४ से अधिक अध्याय लिखे जा चुके थे। इससे हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि इस वृहत् ग्रन्थ को पूर्ण करने में कवि को कम से कम २ वर्ष का समय लगा होगा।

वर्ण्य विषय प्रथम स्कन्ध—"श्री गणेशाय नमः। अथ साहितानन्द लिख्यते। मंगलाचरण कवित्त" के उल्लेख के साथ कवि राधिका और जगदीश्वरी देवी की स्तुति में एक श्लिष्ट कवित्त आशीर्वादात्मक मंगलाचरण के रूप में देकर ग्रन्थ का श्रीगणेश करता है।[2] मंगलाचरण की शास्त्रीय गद्य टीका

१ ग्रन्थ साहितानन्द मे लखि, गिनिहैं रिसवार—रसरंग, २।१५।
२ देखिये परिशिष्ट भाग—चित्र संख्या ९।

के उपरान्त कवि अपना संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करके ग्रंथ के नाम और महत्व का वर्णन प्रस्तुत करता है—

> या साहित्यानन्द को, सुरतरु के सम हेर।
> और ग्रंथ के पढ़न को चाह रहै नहि फेर ॥४॥
> पढ़ साहितानंद के फल द्वै मिलत सुभुक्ति।
> साहितानंद मिल सब, हरिगुन तें ह्वै मुक्ति ॥५॥

कवि की इस गर्वोक्ति में उसके आत्म विश्वास का आभास मिलता है।

अन्य रीति कवियों की भांति ग्वाल ने भी राधा कृष्ण का गुणगान करने का दावा किया है। अनुचित वर्णनों के लिये उसका कहना है कि उनमें अन्य संसारी नायक नायिकाओं को माना जाय।

पिंगल मतानुसार वृत्ति निरूपण इस स्कन्ध का वर्ण्य विषय है। लक्षण और लक्ष्य से पूर्व कवि दर्पण की भांति कवि ने लक्षण के लक्षण और लक्ष्य के लक्षण लिखे हैं। पिंगल की परिभाषा इस प्रकार दी गई है—

> प्रथम वरन तें पिड है गन तें गुरु लघु रासि।
> तातें तिनको जोरिकर, तातें पिंगल भासि ॥११॥

छन्द के बिना कविता नहीं बनती और प्रस्तार के बिना छन्द सम्भव नहीं। अतः छन्द लक्षण लिखकर प्रस्तार का विस्तृत परिचय लिखा गया है। छन्द वेद के षडगों में से एक है। यह मात्रिक और वर्ण वृत्त दो प्रकार के होते हैं। इन दोनों में षट प्रत्यय ही प्रधानता रखते हैं।

> छंद विचार जु विविध विधि, जाते जाने जाय।
> प्रत्यय सो प्रस्तारि लखि कविविदित हरसाय ॥२२॥

कवि ने प्रमुख प्रत्ययों की संख्या ६ ही मानी है—(१) प्रस्तार, (२) उद्दिष्ट (३) नष्ट (४) मेरु, (५) पताका और (६) मर्कटी। इन्हीं में (१) सूची (२) पाताल और ( ) मेरु सम्मिलित कर लिए जाय तो प्रत्ययों की संख्या नौ हो जाती है। कवि ने सूची का उद्दिष्ट और नष्ट का और पाताल को मर्कटी का अंग माना है।

> ये नौ हैं अरु पिंडज सु, दसहू होत सुभाव ॥१।२७।

पर पिंडज वास्तव में कोई स्वतन्त्र प्रत्यय नहीं है, बल्कि मर्कटी का ही एक अंग है—

---

१ निन्दा कस्यो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिष मिति षडङ्गानि'—साहित्यानन्द में उद्धृत।

पिंड क्रम ते पिंड ही, मालुम होत न और ।१।२८ ।
छ्वै न सकत प्रत्यत जु यों लखिये कवि सिरमौर ।।१।२९ ।
है मर्कटि को अंग यह, ताते जुदो नहिं होय ।
या प्रकार स मुख्यता षट प्रत्यय ही जोय ।।३०।।

इस विषय म कवि की द्वितीय युक्ति यह है कि वेद के ६ अंग हैं और छन्द भी वेदांग हैं अत उसके भी ६ उद्योत है। अत कारण कार्य सम्बन्ध स ६ ही प्रत्यय मानना उचित है।[1] इसके पश्चात् जिन शीर्षकों का विवेचन इस स्कन्ध म प्रतिपादित है व क्रमश इस प्रकार हैं—मात्रा, नाम, लघु और गुरु के लक्षण और लक्ष्यरूप, मात्रा प्रस्तार विधान, मात्रा प्रस्तार उद्धावन विधि, सूची लक्षण पटमात्रा सम और मत्त मात्रा प्रस्तार स्वरूप मात्रा पाताल स्वरूप मात्रा मेरु लक्षण पटमात्रा स्वरूप, एकावली मेरु लक्षण और स्वरूप मात्रा मेरु नाम प्रयोजन कथन पटमात्रा का पट मेरु स्वरूप, मात्रा पताका लक्षण, पटमात्रा पताका स्वरूप, मर्कटी लक्षण, मात्रा गुण, अकरादि क्रम स अरिल्ल से लेकर हनूफाल तक के ७७ मात्रिक छन्दों और उनके विविध रूपों का वर्णन और प्रस्तार विधि। लक्षण कथन दोहा शैली म दिये है। दोहे की प्रथम पंक्ति म लक्षण और दूसरी म उदाहरण हैं। ग्रन्थ मे कुल ३८० छन्द हैं जिनम दोहों की संख्या २६७ कवित्त और सवैयो की संख्या क्रमश ७ व २ है। ४४ गद्य टीका वार्ताओं और २३ मानचित्रो द्वारा विषय को सरल और बोधगम्य बनाने की चेष्टा की गई है। आर्या के प्रस्ताररूप ८० और दोहा के १६०, ५५५६२५ पस्तार लिखे गये है। छप्पय क ७१ दोहा क २३ और सुमति दोहा के २, ६२ ४८, ४६४ भेद गिनाये गय हैं। स्कन्ध की समाप्ति इस प्रकार होती है—

इति श्री साहितानंद ग्वाल कवि विरचित पिंगल मतांतर मात्रा छन्द वनन प्रथम स्कन्ध ।।१।।"

द्वितीय स्कन्ध—रसिक बिहारीलाल श्रीकृष्ण की स्तुति म एक दोहा देकर कवि गणो का वर्णन प्रस्तुत करता है क्योंकि वर्णवृत्तो के लिये गण विचार अनिवार्य है।[2] गण तीन वर्ण का होता है। एक कवित्त द्वारा गणो क

१ द्वितिय जुक्ति यह जानिय वेद अंगषट् होत ।
छन्दहु है वेदांग यह, याते षट् उद्योत ।।१।३१ ।
कारन को कारज विस कछु न कछु गुन होत ।
हेतु काल सबधते षट् प्रत्यय कविगोत ।।१।३२ ।

२ साहित्यानन्द २।२ ।

लक्षण लक्ष्य बताये गये हैं। एक मानचित्र बनाकर आठों गणों के नाम, स्वामी, फल, मास, पक्ष, तिथि, वार नक्षत्र, वर्ण वस्त्र, रंग भूषण, कुल माता, पिता, और लोकों के नामोल्लेख किये गये हैं। ग्वाल ने १७ दग्धाक्षरों का उल्लेख किया है, जिनका कविता में प्रयोग करना अशुभ फलदायक बताया गया है। शास्त्र देवता भगवान और भद्र रसों के प्रसंग में दग्धाक्षरों के प्रयोग की स्वीकृति देता है। सुर हरि भद्र रसादि में इनको कछु न विवाद।' सुभरों का काव्य में प्रयोग सुखदायक और विविध शुभ फलदायक है। कवि का मत है कि छन्दों के नियमों में बधकर गुरु लघु और लघु गुरु भी हो जाते हैं—

लघु गुरु गुरु लघु होत है छन्द नियम बस मान।
पिंगल मत यह है सही पन अवाचक आन ॥२।१७।

वर्ण वृत्त तीन प्रकार के बताये गये हैं १–सम, २–अर्द्ध सम और ३–विषम।[1] तीनों प्रकार के भेदों के लक्षण लक्ष्य लिखकर कवि इनकी संख्याओं के लक्षण लक्ष्य लिखता है। सम और विषम वर्णों की प्रस्तार विधि और प्रस्तार स्वरूप पर विस्तारपूर्वक विचारपूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इस स्कन्ध के वर्ण्य विषय के अन्य शीर्षक क्रमशः निम्नलिखित हैं—समवर्तिक संख्या विधि, विषम वर्तिक संख्या विधि, प्रत्यय वर्णन, वर्ण प्रस्तार विधान, वर्ण सूची और उसका स्वरूप, वर्ण पताका लक्षण, वर्णोदिष्ट का विचार लक्षण और स्वरूप, वर्ण नष्ट विधि लक्षण और स्वरूप वर्ण मेरु विधि, लक्षण और स्वरूप एकावली मेरु विधि लक्षण और स्वरूप मेरु प्रयोजन षट वर्ण मेरु एकावली स्वरूप, षट वर्ण मेरु प्रयोजन स्वरूप, षटवर्ण खंड मेरु स्वरूप, वर्ण पताका विधि लक्षण एवं स्वरूप वर्ण मर्कटी की विधि लक्षण एवं स्वरूप, विविध वर्ण प्रस्तार की सब जोड़ विधि।

तत्पश्चात् एक वर्ण की उक्ता संज्ञा और श्री छन्द से आरंभ करके बत्तीस वर्णों की जलहरण संज्ञा तक का दोहों में वर्णन किया है। प्रत्येक संज्ञा के छन्द लक्षण और उदाहरण भी दिये गये हैं। वृत्ति अनुसार १३० वर्णवृत्तों के लक्षण और उदाहरण देकर इस स्कन्ध का समापन किया गया है।

तृतीय स्कन्ध—कृष्ण की स्तुति में एक दोहा लिखकर कवि अपनी शैली को गद्य में स्पष्ट करता है। (वार्ता) ग्रन्थ में लक्षन लक्ष दोहान में करेंगे वारवार दोहा सब्द न लिखिवे हेत ग्रन्थ में जनायो है और कहूँ कहूँ और छन्द होयगो ताको वस ही नाम लिखेंगे।

---

१ साहित्यानन्द २।१८।

स्कन्ध का वर्ण्य विषय रस का जनक है भाव। अतः कवि पहले भाव का लक्षण इस प्रकार लिखता है—

'मन तें होत विकार जो सो कहियत है भाव।' ३।३।

'भाव का सम्बन्ध तन से है' यह प्रश्न उठाकर कवि कहता है कि चक्षु, कान, रसना, नाक और त्वचादि इन्द्रियाँ तो जड़ हैं पर ये मन के संयोग से ही चेतन बनती हैं तथा अपने अपने स्वाद प्राप्त करती हैं। दूसरा प्रश्न एक और उठा कि जब भाव मन मूलक है तो शरीर के आठ सात्विक भाव क्यों कहे गये हैं? इस शंका का समाधान कवि ने इस प्रकार किया है—

उत्तर याको है जु यों मन में हो सचार।
ते तैतीस मन के कहे, सुकविनु कर सुविचार ॥३।८
मन सजोग करि तन विस, जे सचरत सुभाव।
ते तन सचारी कहे सात्विक आठ गनाव ॥३।६

इन सचारियों से सिद्ध होता है कि मन के विकार ही भाव हैं। भाव का दूसरा प्रसिद्ध लक्षण इस प्रकार दिया गया है—

रसहि करें अनकूल जो यसे हैं जु विकार।
भाव कहत तासो सुकवि, बुधजन करो विचार ॥

रस के प्रतिकूल विकारों को कवि भाव नहीं मानता।[1] उत्साह, शोक, क्रोध, निर्वेद आदि मनोविकारों की प्रस्फुरण प्रक्रिया का विस्तारपूर्वक विवेचन करके कवि अपना मत स्थिर करता है कि कोई भी विकार वास्तव में रस प्रतिकूल नहीं होता। जो विकार अवसर पाकर अपनी परिस्थिति में उत्पन्न होता है वह उसी प्रकार के रस के अनुकूल बन जाता है। अतः रस प्रतिकूलक भाव का अस्तित्व ही नहीं है।[2] भावों में रसानुकूलता की ही व्याप्ति है।

भाव के ५ भेदों का ग्वाल ने इस प्रकार क्रम रखा है १–विभाव, २–स्थायी भाव, ३–सात्विक भाव, ४–सचारी भाव तथा ५–अनुभाव।

विभाव शब्द की परिभाषा करते हुए आलम्बन और उद्दीपन, इसके दो भेद किये गये हैं। रति, हँसी, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, ग्लानि, विस्मय और निर्वेद स्थायी भावों के इन ६ भेदों के लक्षण और लक्ष्य श्रवण कर और देखकर दो-दो उपभेदों के साथ लिखे गये हैं। उत्साह के युद्ध, दान और दया नामक तीन उपभेद किये हैं। आठ सात्विक भावों के पाँच कर्मेन्द्रियों के सम्बन्ध, व्यवधान और प्रत्यक्ष इन तीन प्रकार से किये गये २४ भेदों को अमान्य घोषित,—

१ साहित्यानन्द—३।१२। २ वही, ३।२३-२४। ३ वही, ;

किया है क्योंकि वह व्यवधान और प्रत्यक्ष को भी सम्बन्ध ही मानता है।[1] ग्वाल ने रस तरंगिणी के आधार पर 'जम्भा' नामक नवा सात्विक भाव भी माना है[2] जिसका लक्षण इस प्रकार किया है —

मुख छिनेक लौ खुलि रहै, मुहँ जु मिटै विकार।
जृम्भा सात्विक भाव सो कविजन करत उचार। ३।१३२।

संचारी की परिभाषा कवि इस प्रकार बताता है —

मन सजोग करि तन बिस, जो संचरत सुभाव।
ते तन संचारी कहैं सात्विक आठ गनाव ॥३।७।

भरत मुनि के अनुसार कवि ने ३३ संचारी और रसतरंगिणी के आधार पर छल को भी चौंतीसवां संचारी माना है—

विभिचारी तैतीस ये, भाखें भरत प्रधान।
चौंतिसवें को भेद जो, सो अब करत बखान ॥३।३०६
और कह्यौ नूतन सु इक छल संचारी जोइ।
रस तरंगिनी कारन, थापित कीजै सोइ ॥३।३०७

स्मृति संचारी के दो भेद १-प्रतिभिज्ञा और २-सुमिरन ज्ञान के आधार पर और किये है।

संस्कार ते जनित जो ज्ञान जु स्मृति द्वै रीति।
प्रतिभिज्ञा इक जानिय सुमिरन बहुरि सुनीति ॥३।२९४

इनका लक्षण इस प्रकार किया गया है—

है अद्रिष्ट ते ज्ञानजो, सो प्रतिभिज्ञानाम।
द्रिष्टित की करिये जु सुधि सुमिरन सो बुधिधाम ॥३।२९५।

ग्वाल ने वितर्क के चार और भेद किये हैं —

प्रथम विचारात्मक कहैं, संसयात्मक केर।
अध्यवसायात्मक त्रितिय विप्रति प्रत्यात्मक हेर ॥३।२९६।

संचारी भावों की २० प्रकार की दृष्टि हैं। ३४ संचारियों की २० दृष्टियां क्यों मानी इसका कवि कोई समाधान नहीं कर सका है।[3]

भाव ध्वनि में देवरति और राजरति दो भेद माने हैं। विरूप संधि के चार भेद स्थापित किए हैं—भावोन्य भावसंधि स्वरूप विरूप संधि

---

१ साहित्यानन्द—३।९३। २ वही ३।१३१।
३ संचारी चौंतीस की चौंतिस चहिय द्रिष्टि।
किहि कारन बीसहि लिखीसो न लख्यौ कछु इष्ट ॥३।३१८।

भावशवलता, भावशान्ति, भावाभास। विवेचन स्पष्ट और सुलझा हुआ है। कवि ने स्थायी भाव शोक मद रूप आवेग, जडता, विषाद और निद्रा के लक्षणो को उनके पूरा रूप में ग्रहण करने म अपनी असहमति प्रकट की है और सूक्ष्म परीक्षण के उपरान्त उनके नवीन लक्षण निर्माण किये हैं। कवि ने अपने पूर्व रचित लक्षण ग्रन्थ रसिकानन्द, रसरग, बलवीर विनोद के अतिरिक्त बिहारी के लक्षणो को भी उदाहृत किया है। यह उपयोग कवि ने अपने नवीन बनाये ग्रन्थो की सम्पुष्टि म किया है।

चतुर्थ स्कन्ध—रस की परिभाषा भरतमुनि के नाट्यशास्त्र के आधार पर प्रस्तुत की गई है।[1]

करि विभाव अनुभाव अरु, सात्विक पुन विचार।
इम करि इनकी पूर्णता सोरस भरत उचार ॥४।२।

ग्वाल ने वेद की उक्ति रसो वै स' के अनुसार रस को ब्रह्म के समान माना है। रस के लौकिक और पारलौकिक दो भेद मानकर अलौकिक के तीन भेद किय हैं—

हु जु अलौकिक रसत्रिधा, स्वाप्निक प्रथमहिं हेर।
मानोरथिक बखानिय, औपनायिकहिं फेर ॥४।६।

औपनायिक रस काव्य, पदार्थ और चमत्कार म होता है। पूर्ण रस को कवि ने धर्म अर्थ काम और मोक्ष का हेतु माना है।[2] ग्वाल की मान्यता है कि शृङ्गार से गोपियो, की मधुर स सूपनखा की, रौद्र से रावण की, युद्ध वीर रस से मधु कटभ की और भयानक रस से कंस की मुक्ति हुई। यहा प्रश्न होता है कि धर्म के अनुसार ज्ञान के बिना मुक्ति नही हो सकती।[3] इसका समाधान कवि इस प्रकार करता है।

अन्य ज्ञान के ब्याज तें वृत्ति सु एकाकार।
सोइ ज्ञान स्वरूप है, इक मे ह्वै बहुसार ॥४।१४
यैकाकार सुवृत्ति कौं ह्वै करि का हूँ मांहि।
सब मे व्यापक ब्रह्म है ब्रह्म मुक्ति दो नांहि ॥४।१६

सर्व खिल्विदं ब्रह्म 'इति श्रुति'

---

1 तत्र विभावानुभाव व्यभिचारि संयोगाद्रस' निष्पत्ति —नाट्यशास्त्र काव्य माला ४२, सन् १९४३ ई०, पृष्ठ ९३।

2 पूरन रस जा होत है, जानहु बुद्धि निकेत।
धर्म अर्थ अरु काम पुनि मोक्षसहित सब हेत ॥४।९।

3 'ऋते ज्ञानान्न मुक्ति' इति श्रुति—वही ४।१३।

कवि ने औपनायिक रस के नाटक मे आठ रस और काव्य मे एक नवा और शात रस माना है। इन रसो मे शृङ्गार सवप्रथम वणनीय है क्योंकि इसके स्वामी भगवान विष्णु और अन्य के अधिपति अन्य देवता है। विष्णु से ही सब देवताओ की उत्पत्ति है। अत प्रथम शृङ्गार ही आता है शृङ्गार को रसराज कहा जाता है क्योकि विष्णु सब देवताओ के राजाधिराज हैं।

'शृङ्गार' शब्द को व्युत्पत्ति करते कवि ने इसकी परिभाषा दी है—

'श्र ग कहत प्राधान्य कों सम ताते आकार।
कहत 'रकार' मनोज कों, असराध उर धार ॥४।३५
'श्र ग' 'आर' की संधि करि, होत तब शृ गार।
है प्रधानता भलीविधि, जिहि मनोज की धार ॥४।३६

अपने कथन के प्रमाण म कवि ने एकाक्षरी कोश का प्रमाण दिया है।

शृङ्गार रस के लक्षण उदाहरण, नायक, नायिका भेद, उनके गुण कम आदि का वणन सविस्तार किया गया है। यह स्कन्ध २२४ छन्द के पश्चात् समाप्त हो गया है। अत कहा नही जा सकता कि शेष स्कन्ध मे और विषय क्या क्या हैं।

स्कन्ध सख्या ५ से ६ तक ग्रन्थ की प्रति म अनुपलब्ध हैं।

दशम स्कन्ध—भगवान कृष्ण के प्रति श्रद्धा व्यक्त करके कवि इस स्कन्ध का वण्य विषय 'हास्यादि रस का निरूपण' आरम्भ करता है। शृङ्गार रस को छोडकर शेष रस यहाँ वर्णित हैं। रौद्र और रस को छोडकर शेष छहो रसो म स्वनिष्ठ और परनिष्ठ दो भेद अवश्यमेव किये गये हैं। भक्ति रसामृत सिन्धु के आधार पर सख्य दास्य और वात्सल्य रसो का वणन भी यहाँ किया गया है। पूरे ग्रन्थ म लक्षण और लक्ष्य कवि के अपने हैं। पूरे स्कन्ध म १७६ दोहे और ६ कवित्त लक्षण म ही दिये गये हैं।

हास्य रस के स्वनिष्ट परनिष्ठ उत्तम मध्यम और अधम भेदो के आधार पर बारह उपभेद और किये गये है। (१) स्मित (२) हसित, (३) विहसित (४) उपहसित (५) अपहसित और (६) अतिहसित को स्वनिष्ठ और परनिष्ठ म विभक्त करके लक्षण और लक्ष्य किये गये हैं। करुण रस के स्वनिष्ठ और परनिष्ठ केवल दो लक्षण हैं वीर रस को विस्तारपूवक लिया गया है। इसके युद्धवीर, विद्यावीर दानवीर, दयावीर और धमवीर पाच भेद और युद्धवीर के दो और उपभेद विद्वानो ने किए हैं (१) शस्त्र और (२) शास्त्र का व्यवहार करने वाले। ग्वाल कवि शास्त्रवीर को विद्यावीर ही मानने के पक्ष म हैं—

लिखित है। तात्पर्याख्या वृत्ति से दो लक्षणाएँ कही गई हैं। कवि की मान्यता है कि लोगो ने यो लक्षणा के ८० तक भेद खींचतान कर गिना दिये हैं, परन्तु प्रमुखतया लक्षणा चार ही हैं।

ग्यारह ज बावन किये जसे नारी भेद।
तसे असी लच्छना गनती करत कुरेद॥
उपादान त आदि व साध्यवसाना अंत।
चार लच्छना मुख्य मे जानि लेहु बुधवन्त॥
गौनी सुद्धा होत सो इनके आश्रित होत।
इतनो जुदो न हैं सके वसु ये साफ उदोत॥ ११।४४ से ४६।

ग्वाल ने यहाँ स्वतन्त्रता-पूर्वक अपना मत प्रतिष्ठापित किया है। या उसने लक्षणा के ८० भेदों की गणना भी करादी है।

व्यंजना (१) अभिधामूलक तथा (२) लक्षणामूलक दो प्रकार की प्रथमत कही गई है। अभिधामूलक व्यंजना के तेरह भेद वर्णित हैं। लक्षणामूलक व्यंजना (१) गूढ़ और (२) अगूढ दो प्रकार की मानी है। शाब्दी व्यंजना का वर्णन बड़ा विशद है।

आर्थी व्यंजना दस प्रकार की लिखित हैं—(१) वक्ता के प्रभाव से व्यंग (२) बोधव्य वशिष्टय (३) काकु वशिष्टय, (४) वचन वशिष्ट्य, (५) वाच्य वशिष्ट्य (६) अन्य सन्निधि, (७) प्रस्तावन, (८) देश (९) काल और (१०) चेष्टा। इस विषय में भी कवि ने पांडित्यपूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया है।

द्वादश स्कन्ध—ग्वाल ने काव्य का लक्षण इस प्रकार दिया है—

शब्द अर्थ सुन्दर सुमिलि नमिक धन विचार।
छन्दबन्ध बहुचमत्कृत, ताकों काव्य उचार॥ १२।१३।

काव्य पुरुष का शारीरिक निर्माण यह है—

सब्द अर्थ हैं सरीर, सब्द अग्रभाग जाको,
अर्थप्रिष्ट भाग बडभाग पहिचानिय।
व्यंग ध्वनि जीव अतिस ज व्यंग सोई ध्वनि
कहूँ व्यंग कहूँ ध्वनि यस जीवन जानिय॥
ग्वाल कवि अद्भुत जुक्ति ते वसन वेस,
माधुरज आदि गुन गुन सनमानिय।
भूषन ते भूषन यो काव्य रूप कहियत,
अंध व्याधि व्रण कफ दोष दुषदानिय॥ १२।४।

काय रचना का कारण सुचित सुचित का कारण शक्ति है, जो तीन प्रकार की होती है– (१) सत्सग बल, (२) शास्त्र ज्ञान और (३) देव वरदान। काव्य के उत्तम, मध्यम और अधम तीन भेद किये गय हैं। कवि ने यग्य या ध्वनि प्रधान रचना को उत्तम काव्य माना है। उत्तम काव्य लक्षण, व्यग्य लक्षण, ध्वनि लक्षण पर विस्तारपूवक विचार प्रस्तुत किये हैं। ध्वनि दो प्रकार की है—(१) अविक्षित वाच्य और (२) विक्षित वाच्य। अविक्षित वाच्य के दो भेद किये हैं—(१) अर्थान्तर सक्रमित और (२) अत्यन्त तिरस्कृत। विक्षित वाच्य के भी दो भेद हैं—(१) असलक्ष्यक्रम और (२) सलक्ष्य क्रम। इनका वणन शब्द शक्ति और अथशक्ति दोनो के सम्बन्ध म किया गया है। एक तीसरे प्रकार की ध्वनि शब्दाथ शक्ति है। शब्द शक्ति से वस्तु और अलकार ध्वनि बनती है।

अथशक्त्युद्भव प्रसग म अथ शक्ति पहले तीन और फिर बारह प्रकार की कही गई है। पहले प्रकार की (१) स्वत सभवी (२) कवि प्रौढोक्ति और (३) कवि निबन्ध वक्ता प्रौढोक्ति हैं। इन तीनो के फिर चार चार भेद किये गये है—(१) वस्तु से वस्तु, (२) वस्तु से अलकार, (३) अलकार से वस्तु और (४) अलकार से अलकार।

विद्वानो ने ध्वनि गिनती का विस्तार १०,४५५ भेदो तक किया है। इस विषय मे ग्वाल का मत है कि यह कथन मात्र ही है। इसमे व्यावहारिकता नहीं है।

सूक्ष्म विवेचन के उपरान्त कवि ने ध्वनि के भेदोपभेद निश्चय रूप म इस प्रकार दिये हैं—अविक्षित वाच्य के दो, विक्षित वाच्य के पन्द्रह, शब्द शक्ति के दो, अथशक्ति के पन्द्रह—इस प्रकार कुल १७ भेद हुए। मौ रसो म इनकी सख्या १५३ होती है।

स्कन्ध म कुल ८६ छद ३० टीका वार्ताएँ हैं। इसमे १ कवित्त, १० सवैया और ३ छप्पय सम्मिलित हैं।

त्रयोदश स्कन्ध—मध्यम काव्य अप्रधान और अचमत्कृत व्यग्य लिये हुए होता है। इसके आठ भेद हैं। (१) अगूढ (२) इतराग, (३) तुल्यप्रधान, (४) वाच्य व्यग्य, (५) अस्फुट व्यग्य, (६) सदिग्ध व्यग, (७) काकु और (८) असु दर। पुरा पडितों ने ये आठ भेद किये हैं परन्तु ग्वाल प्रथम छ भेदो को ही प्रामाणिक मानते हैं—

> जद्यपि पूरब पडितनु लिये आठ हो भेद।
> तद्यपि उनें प्रनाम करि, लिखियत [illegible] ॥ १३।१४।

अधम का लक्षण इस प्रकार है—

सब्द चित्र या अर्थ को, किंचित ब्यंगहु होय।
अधम काव्य तासों कहैं, बहुविधि कीज सोय॥ १३।३६।

शब्द चित्र के अनेक भेद हैं जिनमे से अनुप्रास निष्ठ यमकनिष्ठ, बहिर्लापिका, आद्याक्षरी मध्याक्षरी अन्त्याक्षरी, अन्तर्लापिका मुक्तावणग्राही जलभिन्नार्थ, श्लेषोत्तर, गतागत बंधरचना, मात्रा रहित द्वासरी, एकाक्षरी अग्नि। अश्वगति, गोमूत्रिका, पदगुप्त कपाटबंध हारबंध, कमलबंध, अष्टदल कमल, त्रिपदी सर्वतोभद्र गतागत छत्रबंध सवया, चौबीस ■ वृक्षबंध समुद्रबंध, चक्रबंध, कामधेनु आदि छन्दों के स्वरूप को मानचित्रों द्वारा भी समझाया गया है। अर्थचित्र के अन्तर्गत उपमा चार विधान और नौ विधान के लक्ष्य लिखकर ६५ वें छन्दों ४८ वार्ताओं २५ मानचित्रों सहित स्कन्ध समाप्त होता है।

चतुर्दश स्कन्ध—गुण रस उत्कर्ष का हेतु है। काव्य में इसका वही महत्व है जो मुख का मनुष्यादि में है।

मुख्य जु रस उत्कर्स कौ हेतु स्वरूपा होय।
सूरतादि जो जीव मे त्यों गुन काव्य सु जोय॥ १४।२।

माधुर्य ओज और प्रसाद गुण के ये तीन भेद कहे गये हैं। ओज की स्थिति वीर रौद्र और वीभत्स रसो में होती है। ग्वाल ने गुण के छ और भेद किये है—(१) शुद्ध माधुर्य (२) शुद्ध ओज, (३) शुद्ध प्रसाद (४) माधुर्य निष्ठ प्रसाद, (५) ओजनिष्ठ प्रसाद और (६) उभयनिष्ठ प्रसाद।

गौड़ी, वदर्भी पांचाली और लाटी चारो रीतियो का ग्वाल ने आनुषंगिक हुआ वर्णन करके अपने नवीन लक्षण लक्ष्य लिखे हैं। कवि शुद्ध प्रसाद और ओज को गौड़ी में शुद्ध माधुर्य को वदर्भी में उभयनिष्ठ प्रसाद को पांचाली में माधुर्य और प्रसाद की स्थिति लाटी रीति मे मानने के पक्ष में है।

परुषा, उपनागरी और कोमल वृत्तियों को क्रमशः गौड़ी, वदर्भी और लाटी रीतियाँ कही हैं। परुषा नागरिका मिलकर पांचाली रीति बनाती हैं।

५४ वें छन्द के पश्चात यह स्कन्ध समाप्त हो गया है।

पञ्चम स्कन्ध—मम्मटाचार्य ने काव्य दोष की परिभाषा इस प्रकार की है—

। सूत्र ७१। मुख्यार्थ हतिर्दोषो रसश्च मुख्यस्तदाश्रयाद्वाच्य।
उभयोपयोगिन स्यु शब्दार्थास्तेन तेष्वसि स।[1]

---

१ मम्मटाचार्य—काव्य प्रकाश, प० हरिमंगल मिश्र, काशी सं० १९८३ वि०, सप्तम उल्लास, श्लोक ४९, पृष्ठ १६८।

वाच्य (पद और वाक्य) को सुनने तथा अर्थ और रस को समझने से जो हर्ष होता है उसे जो रोके उसे दोष कहते हैं। मम्मट की परिभाषा को ग्वाल ने सरल करके इस प्रकार लिखा है—

सुनिवे मे जो समुज में, नमिय हर्ष प्रधान।
तिहि कों जो रोक दुपद, सो दूषन पहिचान ॥ १५।३।

कवि ने स्थूल रूप से दोषो के पाच भेद किये हैं—(१) पदगत, (२) पदांश गत, (३) वाक्यगत (४) अर्थगत और (५) रसगत। ग्वाल ने पद दोष के १३ भेद माने है—(१) श्रुति कटु (२) च्युत सस्कृति, (३) अप्रयुक्त (४) असमर्थ (५) निहिताथ, (६) अनुचिताथ, (७) निरर्थक, (८) अवाचक,(९) लज्जा अश्लील, ग्लानि अश्लील, अमगल अश्लील (१०)सदिग्ध, (११) अप्रतीत (१२) ग्राम्य, (१३) नेयार्थ। मम्मट के १४, १५ और १६ वें क्लिष्ट, अविमृष्ट विधेयाश और विरुद्धमति कृत[1] को ग्वाल पद मे न मान कर समास मे ही मानता है और उनका पृथक वणन करता है[2]। दोषो के नाम सख्या और क्रम कुल मिलाकर मम्मट का ही रखा गया है। ग्वाल के लक्षणो मे भी मम्मट की ध्वनि है। वाक्य दोष ग्वाल ने १० माने हैं—(१) श्रुति कटु (२ अप्रयुक्त, (३ निहिताथ (४) अनुचिताथ, (५) अवाचक, (६) तीनो प्रकार के अश्लील, (७) सन्दिग्ध, (८) अप्रतीत (९) ग्रामीण (ग्राम्य), (१०) नेयार्थ। मम्मट ने ये दोष १३ माने है[3]। ग्वाल ने उनके क्लिष्ट अविमृष्ट विधेयाश और विरुद्धमतिकृत को वाक्य दोषो मे स्थान नही दिया।

सस्कृत के २१ वाक्यगत दोषो म से ग्वाल ने केवल १८ ही ग्रहण किये हैं—(१) प्रतिकूल वर्ण (२) हतवृत्त (३) न्यून पद, (४) अधिक पद,

---

१ दुष्ट पद श्रुतिकटु च्युत सस्कृत्य प्रयुक्त मसमर्थमम्।
निहितार्थमनुचितार्थ निरर्थकमवाचक त्रिधाश्लीलम् ॥
सदिग्धमप्रतीत ग्राम्य नेयार्थमथ भवेत्क्लिष्टम्।
अविमृष्टविधेयाश विरुद्धमतिकृत समासगतमवम् ॥
—वही सूत्र ७२ श्लोक ५० व ५१, पृ० १६८।

२ तीन दोष और हू समास गत होत जानौ।
याते सब इन्हें करें जुदे ही उचार हैं॥ १५।१५।

३ अपास्य च्युत सस्कार मसमर्थ निरर्थकम्।
वाक्येपिदोषा सन्त्येत पदस्याशे पि कचन ॥
काव्य प्रकाश—मम्मटाचार्य, टी० प० हरि मगल मिश्र, सप्तम उल्लास, श्लोक ५२, पृ० १८४।

(५) कथित पद (६) पतत्प्रकर्ष, (७) समास पुनरात्त, (८) अर्थान्तरैक वाचक, (६) अभवन्मतयोग, (१०) अनभिहित वाच्य (११) अपदस्थ पद (१२) संकीर्ण, (१३) प्रसिद्धहत, (१४) भग्न प्रक्रम, (१५) अक्रम, (१६) अमतपराथ (१७) सन्दिग्ध १८) अपदस्थ समास। कवि की मान्यता है कि भाषा में संस्कृत के ये तीन दोष नहीं आते—(१) उपहत (२) विसर्ग लुप्त और (३) विसंधि[1]।

मम्मट के अनुसार कवि ने अर्थ-दोष २३ ही माने हैं। अन्तर यह है कि कवि ने मम्मट के सनियम परिवृत्त का नाम बदल कर अनियम चल नियम अनियम परिवृत्त का नाम कवि नियम विरुद्ध विध्ययुक्त का विधि अनुक्त विशेष परिवृत्त का विशेष में अविशेष, अविशेष परिवृत्त का अविशेष में विशेष और प्रसिद्धि विरुद्ध का नाम अप्रसिद्ध कर दिया है[2]। कवि की मौलिक उद्भावना यह है कि अप्रसिद्ध के उसने ६ उपभेद किये हैं—(१) देश विरुद्ध (२) काल विरुद्ध, (३) लोक विरुद्ध, (४) वय विरुद्ध, (५) शील विरुद्ध, और (६) वर्ण विरुद्ध। दूसरी उल्लेख्य बात यह है कि कवि ने प्राय गद्यांशों में संक्षेप में लक्ष्य समझाये हैं।

रस दोषों का निरूपण सात प्रकार से किया गया है—(१) संचारी नाम दोष, (२) रस शब्द कथन, (३) स्थायी नाम कथन, (४) अनुभाव की कष्टसाध्य व्यक्ति (५) विभाव प्रतिकूल, (६) विभाव की कष्टसाध्य व्यक्ति (७) अनुभाव प्रतिकूल। रस दोषों को मम्मट के अनुसार ज्यों का त्यों ग्रहण किया है जिसे उसने ग्रन्थ में स्वीकार भी किया है[3]। प्रबन्ध दोषों का कथन तो कवि ने ज्यों का त्यों अनुवाद कर दिया है।

---

१ आगे तीन दोष हैं न भाषा उपहत लुप्त,
लुपत विसग औ विसंधि ताहि मानिये। १५।२३।

२ अर्थोऽपुष्ट कष्टो व्याहतपुनरुक्तदुष्क्रम ग्राम्या ॥
संदिग्धो निर्हेतुः प्रसिद्धि विद्या विरुद्धश्च।
अनवीकृत सनियमानियम विशेष परिवृत्ता ॥
साकाङ्क्षोऽपदयुक्त सहचरभिन्न प्रकाशित विरुद्ध।
विध्यनुवादा युक्त त्यक्त पुन स्वीकृतोऽश्लील ॥
काव्य प्रकाश—मम्मटाचार्य टी० प० हरि मंगल मिश्र, पृष्ठ २३२, छन्द संख्या ५५ ५६, ५७।

वार तजलक्ष इन कहे लिखे मम्मट जू,
सोई अवज्यों के त्यों सुजनावत है टेर टेर ॥ १५।१८।

ग्वाल ने अलंकार दोष अपने पूर्व कृत रीति ग्रंथ कविदर्पण के आधार पर लिखे हैं। जो कवित्त और दोहा में हैं।

दूषणोद्धार प्रसंग में कवि ने श्रुतिकटु अप्रयुक्त, निहितार्थ, अश्लील, अप्रतीत, ग्राम्य, न्यूनपद अधिकपद, कथितपद, पतत्प्रकर्ष, समाप्तपुनरात्त, अपदस्थसमास, गर्भित, अपुष्टार्थ, व्याहत, संदिग्ध, निर्हेतु आदि गुण दोषों के उदाहरण देकर दूषणों का निरूपण किया है। विषय का उल्लेख विस्तारपूर्वक है। इतर हिन्दी कवियों के छन्दों को भी उदाहृत किया गया है। दोष कहीं-कहीं गुण बन जाता है इसका भी विवेचन है। स्कंध के अन्त में रसों का अविरोधत्व विवेच्य है। अनुकरण में दोषमदोष बन जाते हैं। इस स्कंध में १५६ दोहे और ३१ कवित्त इस प्रकार कुल १८७ छन्द हैं। १४८ टीका वार्ताओं एवं अनेकानेक इतर उदाहरणों से स्कंध का कलेवर बना हुआ है।

षोडश स्कंध—कवि ने इसका शीर्षक 'अलंकार भ्रम भंजन' लिखा है, जिस से लेखक का प्रमुख उद्देश्य स्पष्ट है। अभी तक इस नाम के ग्वाल के एक बहुचर्चित स्वतन्त्र ग्रंथ का हिन्दी साहित्य में पृथक अस्तित्व रहा है। किन्तु ग्वाल कृत 'साहित्यानन्द' की उपलब्धि से अब इसका स्वतन्त्र अस्तित्व समाप्त होगया है, जैसा कि इस स्कंध की परिसमाप्ति की पुष्पिका से स्पष्ट है[1]। स्कंध में ४२५ दोहे और ७५ गद्य टीकाएं हैं। कवि के अलंकार विवेचन का आधार अप्पय दीक्षित के 'कुवलयानन्द' की वैद्यनाथ सूरिकृत चन्द्रिका टीका है। अकारादि क्रम से इन अलंकारों का निरूपण कवि ने किया है—अनन्वय अक्रमातिशयोक्ति, अत्यन्तातिशयोक्ति आवृत दीपक, अप्रस्तुत प्रशंसा, आक्षेप, असंभव असंगति, अधिक, अर्थान्तर न्यास, अविज्ञा, अनुज्ञा, अतद्गुण, अनगुन, अत्युक्ति अनुमाना, अर्थापत्ति, अनुपलब्ध, उल्लेख, उत्प्रेक्षा, उल्लास, उन्मीलित, उदात्त, ऊर्जस्व, उपभाग, एकावली, ऐतिह्य, कैतवापह्नुति, कारण माला, कारकदीपक, काव्यार्थापत्ति, काव्यलिंग, गूढोत्तर गूढोक्ति चित्र, चपलातिशयोक्ति छेकानुप्रास, छेकापह्नुति, छेकोक्ति, यमक युक्ति, तुल्ययोगिता, तद्गुण, दीपक दृष्टान्त, निदर्शना, निरुक्ति, पुनरुक्तवदाभास, पूर्णोपमा, पर्यायोपमा, प्रतीप, परिणाम - पर्यस्तापह्नुति, प्रतिवस्तूपमा, परिकर, परिकरांकुर, प्रस्तुतांकुर, पर्यायोक्ति, पर्याय, प्रत्यनीक, प्रौढोक्ति, प्रहर्षण, पूर्वरूप, पिहित, प्रतिषेध प्रेयस प्रतीक्षा प्रश्नोत्तर, वृत्त्यानुप्रास, व्यतिरेक, विनोक्ति, व्याज स्तुति, व्याजनिन्दा, विरोधाभास, विभावना, विशेषोक्ति, विषम, विचित्र,

---

१ पुष्पिका—इति श्री साहित्यानंदे ग्वाल कवि विरचिते शब्दार्थालंकार वर्नन नाम षोडसो स्कन्द ॥१६॥

विशेष, व्याघात, विकल्प, विकस्वर, विषाद, व्याजोक्ति, विवृत्तोक्ति, विधि, भ्रम, भ्रान्तापन्हुति, भेदकातिशयोक्ति, भाविक, मालोपमा, मालादीपक, मिथ्याध्यवसित, मुद्रा, मीलित, यथासंख्य, रसनोपमा रूपक रूपकातिशयोक्ति, रत्नावली, रसवत, लाटानुप्रास लुप्तोपमा, उल्लास, लेश, लोकोक्ति सुमिरन, सन्देह शुद्धापन्हुति, सम्बन्धातिशयोक्ति सहोक्ति, श्लेष, समासार, समुच्चय, समाधि, सभावना सामान्य सूक्ष्म, स्वभावोक्ति समाहित शब्द, सभव ससृष्ट सकर हेतापन्हुति, हेतु।

आरम्भ मे कवि ने व्रज चन्द की वन्दना के व्याज से भूषण अलकार की वन्दना की है। तदनतर अलकार की महिमा स्वर्णालकारो स कविता कामिनी क अलकारो की विशेषता और फिर अलकार शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए अलकार के शब्द और अथ दो भेदो का सुदर वणन है। उपमान उपमेय की व्याख्या सुन्दर है। समता बोधक, वाचक और धम कारण और काय आधार और आधेय उपमेय को वणनीय वण्य और प्रस्तुत कह कर उपमान को अवणनीय अप्रस्तुत तथा अवण्य भी कहते हैं। प्रधान अलकारो की परिभाषा उदाहरण निरूपण करने का ढग विशद और भाषा एव शली सुबोध है। अलकार का लक्षण इस प्रकार दिया है—

> रस आदिक ते व्यग ते, होय भिन्नता जाय।
> सब्दारथते भिन्न है सब्दारथ के माहि॥ १६।४।
> होय विषय सम्बन्ध करि चमत्कार को कम।
> ताहीकों सब कहत हैं, अलकार इमि मम॥ १६।५।

१८ प्रस्तार प्रकाश खो० रि० १६३८ ४५ ए पृष्ठ ८३।

पिंगल का लघु ग्रन्थ—यह मात्रा प्रस्तार विधान प्रस्तुत करने वाला सक्षिप्त ग्रन्थ है, जो साहित्यानन्द के प्रथम तथा द्वितीय स्कन्ध का सार रूप है। इसकी प्रति हमे प० बाल मुकुन्द चतुर्वेदी मथुरा से उपलब्ध हुई है जो १० × ६½" के आकार का १५ पत्रो की है। कुल छन्द सख्या ४० और प्रस्तार रूप चित्र १७ हैं।

रचना काल—ग्रन्थ म इसका रचना काल नही दिया गया। किन्तु इसमे साहित्यानन्द (सवत् १६०५ विक्रमी) के उद्धरणो का समावेश है[1]

---

१ देखिये साहित्यानन्द का विषमकल सप्त मात्रास्वरूप, पदमात्रामेरु स्वरूप, वर्णन प्रस्तार विधि, वटवण मेरुस्वरूप, वटवण मेरुखडस्वरूप, वसपताका वणमकटी क्रमश छन्द सख्या—१ ७४, १ ११ १ ४० से ४६, २ ८७, २ ९६, २ १०७, ३ २४।

इससे इसकी रचना का समय सं० १८०५ वि० के उपरान्त का ही निश्चित होता है।

वर्ण्य विषय—जैसा कि ग्रन्थ के निम्नलिखित दोहे से स्पष्ट है, इसमें विविध छन्द शाखाओं के मूल प्रस्तार का संक्षिप्त वर्णन है—

छन्द जु सालाविविध है, मूल प्रस्तार विचारि ।
कह्यो ग्वाल कवि अल्पकरि, जगदंबा, उरधारि ॥ ४० ।

ग्रन्थ का आरम्भ निम्नांकित दोहे से होता है—

॥ श्री गणेशायनम ॥ अथ प्रस्तार प्रकाश लिख्यते ।

श्री गुरुवानी सेसजू, तिन्हें वंदि सहुलास ।
बंदी विप्र सुग्वालकवि, किय प्रस्तार प्रकास ॥१॥

तत्पश्चात् मात्रा प्रस्तार स्वरूप और उसके भेदों के संक्षिप्त विवरण उदाहरण सहित वर्णित हैं।

१९ गणेशाष्टक प्रथम और २० गणेशाष्टक द्वितीय[1] (हस्तलिखित)

देव स्तुति ग्रन्थ—ग्वाल ने अपने भक्त भावन में दो गणेशाष्टक लिखे हैं। दोनों में आठ आठ कवित्त हैं।

रचनाकाल—इन दोनों अष्टकों में से कोई भी कवित्त हमें ऐसा नहीं मिला जो ग्वाल के किसी मौलिक ग्रन्थ अथवा इतर संग्रहों में संकलित हुआ हो और इन में भी रचना काल का कोई उल्लेख दृष्टव्य नहीं। ऐसी दशा में इनका काल निर्धारण करना कठिन ही है। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि ने अपने कवि जीवन के आरम्भिक दिनों में आदि पूज्य देवता गणेश की वन्दना में ये १६ कवित्त लिखे होंगे।

वर्ण्य विषय—पहले गणेशाष्टक के आठों कवित्तों में यह पंक्ति अन्त में सबमें आई है—"रीझें बारबार बार लावें नहि, एकी बार, ऐसो को उदार *जग महिमा अपार है।*" दूसरे गणेशाष्टक के आठों छन्दों की अन्तिम पंक्तियाँ इस प्रकार आती हैं—

सुजस सुवासन के दायक हुलासन के, नाम के प्रकासन गनेस महाराज हैं।

दूसरे गणेशाष्टक के आरम्भ में 'अथ दुतिय गनेसाष्टक लिख्यते।" लिख कर अन्त में लिखा है—"इति श्री गनेसाष्टक। दोनों में गणेश की पारम्परिक वन्दना के स्वर हैं।

---

१ भक्त भावन—ग्वाल कवि, पत्र संख्या ६० से ७२।

कवि के प्रौढ़काल की रचना कहने में कोई सकोच नही होना चाहिए। यहाँ एक कवित्त उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है —

सद शका चद के समान दुति दमकत, गौर देह उदभव विजग अधार जान।
घनौ घन नाद घोष वारो घटा सूल तीखो हल अरु सय सुभ्र मूसल सवायमान॥
ग्वाल कवि कहँ यग धनुष जुमायक सौ, जुक्त कर कमल सुशोभियत है बयान।
सु भ आदि दीरघ सु दत्यन दलन वारो, महासरसुनि जू को ए सें करौ नित ध्यान॥

२५ गुरु पचासा—कवि ने ५७ छन्दो के इस काव्य की रचना नाभा नरेश भरपूरसिंह के लिये की थी। इनकी प्रशसा मे इस ग्रन्थ के आरम्भ मे तीन छन्द लिख गये हैं जिनकी एक-एक पक्ति नीचे उद्धृत की जाती है—

नाभ पति भरपूरसिंह मालवे के महाराज॥२॥
याही तें गरीब कौ निवाज रघुराज जू नें,
राख्यौ महाराज भरपूरसिंह नाम है॥३॥
ग्रीषम कौ कठिन कृपान है कि भान है,
कि महाराज भरपूरसिंह बलवान है॥४॥

ग्रन्थ रचना का कारण कवि ने इस प्रकार लिखा है—

ऐसे श्रीमहाराज ने कह्यो एक दिन बात।
सब गुरु को सक्षप ते बरनन करी विख्यात॥५॥
हुकम पाय यों ग्वाल कवि रचन गुरुन गुनग्राम।
या कारन याकों करत गुरुपचासा नाम॥६॥

रचनाकाल—कवि ने इसकी रचना स० १९१७ वि० मे नाभा मे की जसा कि छन्द सख्या ७ से प्रकट है—

७ १ ९ १
सवत् रिसि ससि निधि ससी कातिक कृष्णा पक्ष।
वितिया गुरु को प्रगट हुअ गुरु पचासा स्वच्छ॥

वर्ण्य विषय—कवि ने इस रचना मे सिख धर्म के दसो गुरुओ के यश का वर्णन किया है। ग्रन्थारम्भ मे १ छन्द मगलाचरण का, ३ छन्द राजा भरपूरसिंह की प्रशसा के, ३ छन्द रचना कारण और रचनाकाल के हैं। शेष ५० छन्दो मे गुरु महिमा वर्णित है। प्रथम पादशाही (गुरु नानकदेव) पर ४, द्वितीय पादशाही (गुरु अगददेव) पर २, तृतीय गुरु अमरदास पर २ चतुर्थ गुरु रामदास पर २ पचम गुरु अर्जुन देव पर २, षष्ठ गुरु हरगोविन्द देव पर २ सप्तम गुरु हरिराय पर २, अष्टम गुरु हरेकृष्ण पर २ नवम गुरु तेग बहादुर पर २ और दशम गुरु गोविन्दसिंह पर २६ छन्द लिख गये हैं। दशम गुरु के

अग मडन पोशाक भूपण, कलगी, कणभूपण, उरमाल, दाढी, खडग, कटार बाण, कोप, दान, तुरग, गयन्द, शिकार और सर्वोत्कृप का पृथक पृथक वणन किया गया है। अन्तिम छन्द स० ४७ इस प्रकार है—

वेद व्यास वाक्य ते अद्वतता प्रकट कीन्हीं
मा तो जग जीवन की द्वततांई जटती।
चारिहू बरन कीन्हें एक ब्रह्म दरसाय,
भेद ब्रह्मचय दियो जो न होय घटती॥
ग्वाल कवि कहे पथ खालसा अखड भइयो,
खालसा को पूरन करया ह सु ब्रटती।
होते जो न ऐसे श्री गुविंदसिंह महाराज सो,
म कलिकाल की करालताई कटती॥

काव्य की दृष्टि स रचना सामान्य कोटि की है।

२६ इश्क लहर दरयाव (गुरमुखो लिपि)।

काव्यानुवाद—यह काव्य ग्रथ कवि की मौलिक उद्भावना न होकर उर्दू के प्रसिद्ध कवि मीर हसन की लोक प्रख्यात मसनवी 'सिहरु-ल-बयान' का उर्दू फारसी मिश्रित हिन्दी अनुवाद है। कवि की यह नवीनोपलब्ध रचना है। नाभापति भरपूरसिंह की आज्ञा से[1] कवि ने स० १६१७ वि० म यह रचना की जो राज्य द्वारा स० १६२० वि० मे गुरुमुखी म लीथो में मुद्रित होकर प्रकाशित हुई थी।[2] इसकी एक प्रति श्री विद्यार्थी जी क पास हमने देखी है। इसी के हिन्दी रूपान्तर से यह अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

रचनाकाल—इस ग्रन्थ का प्रकाशन कवि के जीवनकाल मे हो ही गया था। ग्रथ म रचनाकाल माघ शुक्ला त्रयोदशी सोमवार स० १६१७ वि० इस प्रकार दिया हुआ है—

---

१ इश्कलहर दरयाव छ० स० ४२ से ४४—
ऐस श्री महाराज ने कहीं सुनो कवि ग्वाल।
हरदक लोगन कों सहज समझ पड सब ख्याल॥
हसन मसनवी को करो उल्था खूबखुलास।
जसा जसा उन कहा तसा करो प्रकास॥
हुकम पाय यो नृपति को सुरु करत हों ग्रन्य।
भाषा पथ सुधो रह और फारसी पथ॥

२ सप्तसिन्धु–वष ३, अक १२, दिसम्बर १९८६, पृ० ४४, इश्कलहर दरयाव–

७ १ ८ १
संवत् रिसि ससि निधि ससो माघ चाँदनी चाव।
त्रोदसि ससिको प्रगट हुअ इस्कलहर दरयाव॥

वर्ण्य विषय—ग्रंथ में सिहरुल बयान की एक प्रेम गाथा का २८ दास्तानों और ११८८ विविध छन्दों में वर्णन है। मूलकथा का संक्षिप्त निम्नांकित है। किसी देश के एक यशस्वी बादशाह को एक ज्योतिषी की भविष्यवाणी के फलस्वरूप एक पुत्ररत्न प्राप्त हुआ। भविष्यवाणी के अनुसार बालक को १२ वर्ष की आयु तक किसी परी या जिन द्वारा उठाए जाने का भय था। अतः बादशाह ने १२ वर्ष तक उसे सुरक्षित किले में बन्द रखा। परन्तु इस अवधि की समाप्ति की रात को जब शाहजादा महल की छत पर था एक परी उसे उठा ले गई। परी ने शाहजादे से स्वप्न वापिस न जाने और किसी दूसरी स्त्री से प्रेम न करने का वचन लेकर एक घोड़े पर नित्य एक पहर सैर करने की छूट दे दी। एक दिन शाहजादा बेनजीर सैर करता हुआ शाहजादी बदरेमुनीर के बाग में आ पहुँचा जहाँ दोनों प्रेमपाश में बंध गये। यह भेद खुल गया और परी ने शाहजादे को एक कुएं में डाल दिया। बेनजीर के वियोग में बदरे मुनीर तड़पने लगी। मंत्री की बेटी नजमुन्निसा शाहजादे की खोज में निकली। जोगिन रूप में नजमुन्निसा के नृत्य से जिन्नों का राजकुमार फीरोज मुग्ध हो गया। नजमुन्निसा ने उसकी सहायता से शाहजादे को कुएं से निकालकर बदरे मुनीर से मिला दिया। शाहजादी बदरे मुनीर ने फीरोज और नजमुन्निसा की सहायता से धन और फौज एकत्र करके मकान बनवाया और बेनजीर के पिता को विवाह का प्रस्ताव भेजा। प्रस्ताव की स्वीकृति के उपरान्त बेनजीर और बदरे मुनीर दोनों प्रेमियों का विवाह हुआ और वे अपने देश जोड़ा सुखपूर्वक रहने लगा। अन्त में शाहजादा अपनी पत्नी को लेकर ससुराल को चला गया। पिता पुत्र मिले और सुखपूर्वक रहने लगे।

कवि ने मीर हसन की कथावस्तु में कोई परिवर्तन नहीं किया है केवल वार्ता के स्थान पर कवित्त, दोहा, छप्पय, भुजंग प्रयात आदि छंदों में सफलता के साथ उसे प्रस्तुत किया है। आरम्भ में मंगलाचरण, लिपि निरूपण ग्रंथ कारण वर्णन नगर शोभा आश्रयदाता यशगान तथा ग्रंथ रचनाकाल वर्णन के ८७ दोहे देकर मीर हसन की खुदा की तारीफ के १२ छन्द देकर कथा आरम्भ कर दी है। ग्रंथ के अन्त में नामापति के यश के १७ छंद देकर इसे सम्पूर्ण कर दिया गया है।

२७ बशी बीसा[1]—खोज रिपोट १६०१ ई०, १६१७ ६४ डी पृ० १६५, १६३२ ७३ ई पृ० १८४।

अंतिम काव्य—यह लघु ग्रंथ कवि ने अपने जीवन के अंतिम दिनों में लिखा था जिसमें केवल २० छन्द हैं जो अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि के हैं। नारायण मिश्र ने इसे लिपिबद्ध किया है।

रचनाकाल—ग्रन्थ में रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। कवि के निजी काव्य संग्रह भक्तभावन में इसका कोई छन्द नहीं आया, इससे यह अनुमान है कि यह इसके पश्चात् की लिखी गई रचना है। इसके काव्य की प्रौढ़ता भी इस बात की साक्षी है कि यह कवि का अंतिम ग्रन्थ है।

वर्ण्य विषय—इस के छन्द भगवान श्री कृष्ण की बंशी और उसकी महिमा को अर्पित है। सम्मोहन आकर्षण उच्चाटन और मारण चारों मन्त्रों का प्रभाव बंशी की ध्वनि में कवि ने देखा है। आरम्भ इस भांति है—

'श्री जगदम्बाय नमः। अथ श्री बंशी बीसा लिख्यते ॥

बन्न बिहारीलाल की, बसी बीसा वेस।
विदुष बदन विकसावहीं, बुधिबल बर बिसेष ॥

समापन इस प्रकार है—

काहू तने कामरु की करामात मोखी कब,
कब ते जमाई जोर जभन की जोत हू।
कौन कन्दरा में बठि कर करतूत कला,
कौन से परबसिद्ध कीयो मत्र गोत है॥
ग्वाल कवि गोपिन के खेंचि लेइ प्रान यह
बसी एक नाली जाकी हरित उदोत हू।
इस नाली थमन को उच्चाटिबे को सात
नाली मोहिबे को अजब हजार नाली होत है॥

इति श्री ग्वाल कवि विरचिते बसी बीसा समाप्तम् ॥ हस्ताक्षर नारायण मिश्र क ॥ शुभ भव ॥

२८ दग शतक (हस्तलिखित) भक्त भावन में पद्य संख्या १०८ से ११४ तक सग्रहीत अन्य ग्रन्थों की भांति यह भी ग्वाल की एक प्रामाणिक रचना है। श्री विद्यार्थी के पास इसकी एक पृथक प्रति विद्यमान है। हमने भक्त भावन वाली प्रति का उपयोग किया है। इस में १०३ दोहे हैं।

---

१ प्राप्ति स्थान—प० जवाहरलाल चतुर्वेदी, मथुरा।

रचनाकाल—ग्रन्थ मे इसका रचना आरम्भ फाल्गुन शुक्ला द्वितीया स० १८१६ वि० लिखित है—

९ १ ९ १

सवत निधि ससि निधि ससी, फागु पथ्य उजियार ।
द्वितीया रविआरम्भ किय, दृग सत सुख को सार ॥

वर्ण्य विषय—रीति परम्परा म कवि ने आंख पर १०० दोहे प्रस्तुत किये हैं। आरम्भ म मगलाचरण, कवि और ग्रन्थ का परिचय है।

दोहा सख्या १०३ के साथ ग्र थ की समाप्ति इस प्रकार होती है—
'प्यारी लोचन ग्रह्म मे मन लय हुवे जो जुक्ति ।
नजर और प जात नहि होत जगत मे मुक्ति ॥
इति दृग सतक सम्पूर्ण ॥'

२९ शान्त रसादि के कवित्त—खा० रि० १८३५ ३३ जी पृ० ३१। भक्त भावन म पत्र सख्या ११४ से ११८ तक सग्रहीत है।

रचना काल—इसके ३ छन्द रसिकानन्द और १३ छन्द रसरग म सग्रहीत हैं रसिकानन्द मे छन्दों को स्थान मिलने से इसकी रचना स० १८७६ वि० स पूर्व की सिद्ध होती है।

वर्ण्य विषय—जसा कि इस सग्रह के नाम से प्रकट है इसम शान्त रस के और भक्ति के २३ कवित्त हैं। अन्त मे एक कवित्त दिवाली का देकर समापन का दोहा दिया है। कवित्त इस प्रकार है—

छाई छवि छिति प छहर छवि छलन की
छमकें छपाकर छटा सो बाल त्यारी प ।
उन्नत अनार अलगारन अगारन प,
आसमान तार उठे ऊपर अगारी प ॥
ग्वाल कवि जाहर जवाहर अनत ओर
जागत जुआरी जाम जाम जर जारी प ।
दीप दीप दीपन की दीपति दवरि आइ,
जम्बूदीप दीपन मे दिपति दिवारी प ॥२२॥

दो० श्री जगदम्बा राधिका त्रिभुवनपति की प्रान ।
तिनके पदमें मन रह श्रीसिव दीज दान ॥२३॥

३० बलवीर विनोद (अप्राप्य)—ग्वाल का यह ग्रन्थ अभी तक अचर्चित रहा है। साहित्यानन्द की खोज के उपरान्त ही यह ज्ञात हो सका कि इस नाम का कोई ग्रन्थ इस कवि ने लिखा था। साहित्यानन्द के प्रथम

स्कन्ध के नवें दोहे म कवि न उक्त ग्रथ का नाम अपने उन ग्रथो के नामो के साथ लिखा है, जिनके उदाहरणो को साहित्यानन्द में अगीकृत किया गया है, यह दोहा निम्नलिखित है—

रसिकानन्द जु नखसिख द कवि दरपन रसरग।
पुनि बलवीर विनोद है, जमुना लहरि प्रसग॥

इस सन्दभ के आधार पर इस ग्रथ को मैंने उत्तर प्रदेश, राजस्थान और पजाब के सावजनिक और व्यक्तिगत ग्रथागारो मे खोजा, हिन्दी के कई गण्यमान्य खोजकर्त्ता विद्वानो के साथ भी सम्पक स्थापित किया, किन्तु यह ग्रथ अप्राप्य ही रहा है। अत इसके विषय म साहित्यानन्द म उदाहृत छन्दो के आधार के अतिरिक्त अन्य विकल्प नही है।

निर्माण काल—साहित्यानन्द मे उदाहृत होने से इस ग्रथ का रचना काल स० १९०५ वि० से पूव का ठहरता है। परन्तु रसरग (१८०४ वि०) या उसने पूव लिखित ग्रथो म न तो इस ग्रथ का कही नाम ही लिखा मिलता है और न साहित्यानन्द मे उदाहृत इसके छन्दो में से कोई छन्द ही कही मिलता है। इससे यह निष्कष निकलता है कि बलवीर विनोद की रचना स० १९०४ वि० और स० १९०५ वि० के बीच हुई होगी। परन्तु जब तक कोई अन्य प्रमाण नही मिलता, इस विषय म निश्चित रूप से इससे अधिक और कुछ नही कहा जा सकता।

वण्य विषय—साहित्यानन्द और कवि दर्पण मे इस ग्रथ के जो छन्द लिये गये हैं, उसमें शृङ्गार रसान्तगत नायिका भेद और दोष निरूपणान्तगत काव्य-दोष विषयक १८ छन्द हैं।[1] इन छन्दो से पूव समग्रत कवि ने, अथ बलवीर विनोदे" शब्द सन्दभ का उल्लेख किया है। अत यह असन्दिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि ये छन्द बलवीर विनोद के ही हैं। इससे हम केवल यह अनुमान करने की स्थिति म अवश्य हैं कि बलवीर विनोद रीति शास्त्र का विविधाग निरूपक ग्रन्थ रहा होगा। ग्रन्थ के वण्य विषय के सम्बन्ध मे अभी इससे अधिक और कुछ नही कहा जा सकता।

---

१ उदाहरणाय 'साहित्यानन्द से दो दोहे यहाँ उद्धृत किये जाते हैं—
बलवीर विनोदे—लखो राधा को एक टक, तकत बिहारीलाल।
हलन चलन बोलन हसन भूलि गये सब ख्याल॥
वही, ३।३०
अन्य बलवीर विनोदे—हरि लखि कामिनी अलक स, दिय तुलसी प डार।
जल ऊपर फिर डारिकें पोछन लागी बार॥

७ | ग्वाल के काव्य की प्रवृत्तियाँ और प्रतिपाद्य

अन्य रीति कवियों की भांति ग्वाल कवि के काव्य का प्रस्फुरण, पल्लवन और विकास विभिन्न राजा और नवाबों के राज्याश्रय में हुआ। इन्होंने रीतिकालीन परम्परा के अनुसरण में तत्कालीन सभी प्रचलित प्रमुख विषयों और प्रवृत्तियों को अपने काव्य का प्रतिपाद्य बनाया। दूसरे शब्दों में इन्होंने रीति कविता की परम्परा को ही चलाय रखने का प्रयत्न किया।

रसिकानन्द, रसरंग, कवि दर्पण, प्रस्तार प्रकाश और साहित्यानन्द ग्वाल के रीति निरूपक ग्रन्थ हैं, जिनमें से अंतिम साहित्यशास्त्र की विविधांग निरूपक वृहत् रचना है। श्रीकृष्ण जू को नखशिख, दृगशतक, षट्ऋतु वर्णन रीतिबद्ध काव्य हैं। जमुना लहरी, गोपी पच्चीसी, कुब्जाष्टक कृष्णाष्टक, राधाष्टक गणेशाष्टक, ज्वालाष्टक, बंसी बीसा, निम्बार्क स्वाम्यष्टक, गुरुपचासा, देवी देवताओं के कवित्त भक्ति परक रचनाएँ हैं। हम्मीर हठ और विजय विनोद वीररससिक्त काव्य प्रबन्ध हैं। इश्क लहर दरयाव उर्दू से अनूदित रचना है। नीति और वैराग्य पर इन्होंने प्रस्तावक कवित्त, अन्योक्ति कविता और वैराग्य कवित्त लिखे। नेह निवाह में विशुद्ध प्रेम की परिपाटी का वर्णन किया गया है। नरप्रशंसा और राजवैभव के वर्णन इनके रीति ग्रन्थों और अनुवाद काव्य में मिलते हैं। नीति भक्ति और वैराग्य विषयक कथनों की प्राय सभी ग्रन्थों में यत्र तत्र स्फुट चर्चा हुई है। इस प्रकार ग्वाल ने विभिन्न विषयों को अपनी कविता में समाविष्ट करने का प्रयास किया है।

संक्षेप में ग्वाल की कविता के निम्नांकित पक्ष हैं—

(अ) रीति निरूपण (१) रस वर्णन (शृङ्गार हास्यादि, शृङ्गारान्तर्गत नायिका भेद, नखशिख, षटऋतु वर्णन आदि) (२) अलंकार विवेचन, (३) पिंगल वर्णन, (४) काव्य दोष वर्णन, (५) शब्द शक्ति, रीति, गुण और वृत्ति विवेचन, (६) काव्य निरूपण।

(आ) नराशंसा तथा राजवैभव वर्णन।

(इ) भक्ति वैराग्य और नीति वर्णन, (ई) वीर काव्य रचना, (उ) उर्दू भाषा का काव्यानुवाद, (ऊ) रीतिबद्ध काव्य, (ए) रीतिमुक्त रचना।

अन्तःसाक्ष्य के अध्ययन पर आधृत इनके काव्य की प्रमुख **प्रवृत्तियों** का [illegible] के की पंक्तियों में प्रस्तुत किया जाता है।

(अ) रीति निरूपण रीति निरूपण मे दो अतप्रवत्तियाँ काम कर रही है—एक तो एकत्र विविधाग निरूपण और दूसरी रस अलकार पिंगल, काव्यदोप, काव्य रूप काव्य भेद शब्द-शक्ति आदि का पृथक पृथक विवचन करने की प्रवत्ति। ग्वाल ने विविधाग निरूपण म 'साहित्यानन्द' की रचना की। इसमे काव्य के सभी अगो के विवेचन का चेष्टा है। अलग रस निरूपण की प्रवत्ति के अनुरोध म इनके तीन स्वतन्त्र ग्रंथ हैं—(१) रसिकान द, (२) रसरग और (३) बलवीर विनोद। 'प्रस्तार प्रकाश' म सक्षिप्त शली म पिंगल का प्रस्तार वर्णित है। कवि दपण' का पूरा कलेवर दोप विवेचन और दोषापहार को अर्पित है। काव्य के शप अगो पर कवि ने स्वतन्त्र ग्रन्थ नहा लिखे। ग्वाल के समकालीन गोविन्द, जगतसिंह रामसहायदास प्रतापसाहि निहाल कवि ने अपने विविधाग निरूपक ग्रथो म पिंगल के प्रकरण को नहीं रखा है। इनम से कई ग्रथो मे शब्द शक्ति प्रसग भी छूट गए है। ग्वाल ने पिंगल अलकार, शब्दशक्ति, आदि सर्वाग का वणन 'साहित्यानन्द' म किया है। यह प्रयास ग्वाल को इस प्रवत्ति का प्रतिनिधि लेखक बना देता है।

ग्वाल ने नायिका भेद नखशिख और षटऋतु गर्भित शृङ्गार वणन, हास्यादि रस, अलकार पिंगल, शब्द शक्ति रीति गुण, वत्ति काव्य स्वरूप और काव्य भेद का विवेचन इस प्रवत्ति के अतगत किया है। कवि म अनुशीलन और विमश द्वारा प्राचीन मतों को निरखा और परखा है। अधिकाश म पुराने आचार्यों की मा यताओ को कवि ने रीति निरूपण म ज्यो का त्यों ग्रहण कर लिया है। परन्तु कई विवादास्पद स्थलों पर उसने पुराने मतो पर विमश प्रस्तुत करत हुए खडन और मडन भी किया है और अपना तक सम्मत मत स्थापित किया है। यहा उसका आचार्यत्व उभरा है।

१ रस निरूपण—रस प्रसग में ग्वाल ने सबस पहले भाव को लिया है क्यो कि रस भावा से उद्बुद्ध होता है।[१] मन के विकार ही भाव बताये गये हैं।[२] 'विकारो मानसो भाव' से इसकी पुष्टि की गई है। भाव की सद्धान्तिक परिभाषा रसिकान द मे इस प्रकार की गई है।

> बस बासना अचल हिय रहै जीव के सग।
> मन विकार सो भाव हैं लहियत पाय प्रसग॥ २।१॥

यहाँ वासना' शब्द का प्रयोग अवलोकनीय है। रस निष्पादन के लिय 'वासना' का स्थायी रूप से हृदय म रहना अनिवाय है। रस के मूल म वासना' की यह महत्व स्वीकृति है। ग्वाल ने भाव को वासना के पर्याय के

---

१ (अ) साहित्यानन्द—३।२। (ब) रसरग २।८ २ साहित्यानन्द ३।२।

रूप म ग्रहण किया है।[1] उसके अनुसार भाव वह मनसिज विकार है, जो अवल रूप से हृदय म वासना के रूप म रहते और अनुकूल अवसर पाकर उद्बुद्ध होते हैं। भाव की प्रकृति के सम्बन्ध मे कवि की मान्यता है कि वह रस को अनुकूल करता है अत भाव की रस अनुकूलक परिभाषा वह साहित्यानन्द म इस प्रकार करता है—

रसहि करें अनुकूल जो ऐसे हैं जु विकार।
भाव कहत तासों सुकवि, बुधजन करौ विचार ॥३।१२॥

अर्थात केवल रस के अनुकूल मनोविकार ही भाव कहलाने के अधिकारी हैं। प्रश्न उठता है कि क्या रस प्रतिकूलक मनोविकारो को भाव नही कहेंगे। इसका उत्तर कवि इस प्रकार देता है—

जसो जौन विकार जह उपजत समयो पाय।
तसो रस अनुकूलक जु होत भाव वह आय ॥३।२३॥
ताते रस प्रतिकूलक जु कोऊ नहीं विकार।
याते रस अनुकूलक सु भाव लक्षन उरधार ॥३।२४॥

जो विकार जहाँ अवसर पाकर उत्पन्न होता है वह वहाँ उसी प्रकार के रस के अनुकूल भाव बन जाता है। अत रस के प्रतिकूल विकार का कोई अस्तित्व ही नही है। अत भाव का रस अनुकूलक लक्षण ही अवधारणीय है। कवि ने एक उदाहरण द्वारा इसको स्पष्ट किया है। वह कहता है कि विप्रलब्धा को मान लिया कि आरम्भ म कोई हर्ष उत्पन्न हुआ। परन्तु प्रिय के न मिलने से वह विषाद म परिणत हो गया। यहा विषाद ने आकर हर्ष का नाश कर दिया। अत यहा विषाद शृङ्गार रस अनुकूलक भाव न रहकर करुणा अनुकूलक बन गया।[2] परन्तु मनोविकार एक ही रहा। एक अवसर पर वह 'हर्ष' बन कर शृङ्गार अनुकूलक बना, दूसरे अवसर पर करुणा के अनुकूल हो गया। ऐसी दशा म रस प्रतिकूलक भाव का अस्तित्व है ही नही। सभी भाव रस अनुकूलक होते हैं।

कवि ने अपने कविता काल के आरम्भ म भावो के चार भेद माने हैं—(१) विभाव, (२) अनुभाव, (३) सचारी और (४) स्थायी भाव।[3] अपने अन्तिम काल के प्रौढ ग्रन्थ साहित्यानन्द म उसने भावो के पाच भेद किये हैं—(१) विभाव, (२) अनुभाव (३) स्थायी (४) सात्विक और (५) सचारी भाव।[4] कवि ने विभावो को भी भाव के भेदो म रखा है जबकि विभाव

१ भावित वासित कृतमित्यनर्थान्तरम्। भावित का अर्थ है वासित। नाट्य शास्त्र पृ० १०४।

२ साहित्यानन्द—३।१३ १४ व २१। ३ रसिकानन्द—२।२ तथा रसरंग—२।१० ११। ४ साहित्यानन्द—३।३६।

मनोविकार नही होते। कवि दृष्टिकोण यहाँ व्यापक रहा है। यहाँ उसका 'भाव' का अभिप्राय पूरी रस व्यजक सामग्री का है, केवल मनोविकारो का नहीं। भरत के नाट्य शास्त्र म भाव की सत्ता वस्तुगत ही मानी गई है। वह रस की सामग्री का भी वाचक है। डा० नगेन्द्र लिखते हैं—'आधुनिक शब्दावली म प्राचीन आचार्यों के मतानुसार 'भाव' या तो काव्य अथवा नाट्य के 'संवद्य तत्व' का वाचक है या संवेदक तत्वो का मनोवेग (मानसिक शारीरिक अनुभूति) या 'चेतना की मात्रा का द्योतक नहा है।'[1] इसी कारण ग्वाल ने विभाव को अनुभावादि मनोवेगो म पृथक नही किया। 'रसव्यंजक सामग्री के अन्तगत स्थायी, सचारी के साथ विभाव और अनुभाव भी आ जाते हैं।[2] ग्वाल की विभाव सम्बन्धी इस मान्यता को इसी परम्परा के अन्तगत मानना चाहिये।

ग्वाल ने सात्विक भावो की पृथक सत्ता मानी है इसी कारण उपर उन्हें भाव का पाचवा भेद उन्होंने मान लिया हैं। संस्कृत म सात्विको को अनुभाव के अन्तर्मुक्त कर लिया गया है—

पृथग् भावा भवन्त्य ये नुभावत्वे पि सात्विका [3] (दशरूपक) और भाव का प्रयोग सामान्यत स्थायी तथा सचारी के लिये ही होता रहा है—ते च स्थायिनो व्यभिचारिणश्चेति वक्ष्यमाणा (दशरूपकावलोक, धनिक पृ० १२४)[4] ऐसी दशा म ग्वाल की सात्विका की स्वतन्त्र सत्ता की मान्यता पुरानी है अत शास्त्र सम्मत नही।

कवि यहाँ मतिराम से ही प्रभावित हुआ है। इसका प्रमाण यह है कि कवि ने पहले मतिराम की सात्विका की स्वतन्त्र सत्ता की मान्यता का 'रसिकानन्द' म खडन करते हुए सात्विको को सचारियो म रखा है।[5] सात्विक भाव आठ हैं। ग्वाल ने भानुदत्त की रस तरंगिणी के आधार पर नवा सात्विक 'जम्भा' भी स्वीकार कर लिया है।[6] इसी प्रकार तरंगिणी के आधार पर 'छल' नामक ३४ वें सचारी को भी ग्वाल ने अपनाया है।[7] रसिकानन्द म कवि ने इन्हें छोड दिया था। कवि ने ५ कर्मेन्द्रियो के सम्बध से द सात्विक भावो में ४० भेद किये हैं।[8] ग्वाल के अनुसार रस सामग्री के भेदोपभेदों के नाम व सख्या निम्नोक्त हैं—

१ रस सिद्धात—डा० नगेन्द्र पृ० २१८।
२ वही पृ० २१८। ३ वही, पृ० २१९। ४ वही पृ० २१९।
५ रसिकानन्द २।१४। ६ (अ) रसरंग ६१। (ब) साहित्यानन्द ३१।
८ (अ) साहित्यानन्द ३०६ व ३०७। (ब) रसरग १८८।
(अ) रसरग ४२। (ब) साहित्यानन्द ९५।

विभाव — आलम्बन और उद्दीपन।[1]

स्थायी भाव — रति हास्य, शोक क्रोध, उत्साह, ग्लानि, विस्मय, भय और निर्वेद।[2]

सात्विक भाव — स्तम्भ, स्वेद, रोमाच, स्वरभग, कम्प, ववण्य, प्रलय, अश्रु[3] और जम्भा।

सचारी भाव — निर्वेद[4] ग्लानि, शका, असूया, मद, श्रम, आलस्य, द य, चिन्ता, मोह स्मृति, धृति, वीडा, चपलता, हर्ष, आवग, जडता, गर्व, विषाद, औत्सुक्य, निद्रा, अपस्मार, सुपुप्ति, प्रबोध अमर्ष, अवहित्था, उग्रता, मति, व्याधि, उन्माद, मरण त्रास, वितर्क और छल।

कवि ने स्थायी भावो को दशन, श्रवण और स्मरण द्वारा उत्पन्न माना है। पर तु लक्ष्य और लक्षण केवल दशन और श्रवण के ही दिये है। उत्साह के युद्धोत्साह दानोत्साह और दयोत्साह तीन भेद और किये है। बाद मे आठो स्थायियो के चक्षु श्रोत घ्राण, रसना त्वचा, सम्बन्ध मे उदाहरण दिये गये हैं। स्थायी भावो की आठ[5] और सचारियो की बीस दृष्टिया[6] गिनाई गई है। ३४ सचारियो की २० ही दृष्टि क्से रह गई, इसका कवि ने कोई कारण नही लिखा।[7] यह परम्परागत ही है।

'निज रस म थिर भाव जो, सो पररस विभिचारि" ॥८५॥ साहित्यानन्द के अनुसार रति शान्त करुणा आर हास्य म, हसी व शोक शृङ्गार म, क्रोधवीर म, उत्साह रौद्र और हास्य मे भय करुणा म, ग्लानि भयानक म तथा विस्मय और उत्साह का सभी रसो म सचार होता है।

कवि ने वितर्क सचारी के (१) विचारात्मक, (२) सशयात्मक, (३) *अनध्यवसायात्मक और (४) विप्रतिपत्यात्मक ये* चार भेद और किये हैं, जो अनुभावो क आधार पर हैं।

भावो के वणन के उपरान्त कवि ने भावध्वनि—देवरति और राजरति, भावोदय भाव सन्धि, पाँचो भेदों सहित—सरूप, विरूपसन्धि, भावशबलता, भावशान्ति, भावाभास का विशद वणन किया है। विरूप भावसन्धि को भिन्न२

---

१ अ) रसरग १२। (ब) साहित्यानन्द ३७। २ (अ) रसरग १६।
(ब) साहित्यानन्द ४२ व ४३। ३ (अ) रसरग ४०।
(ब) साहित्यानन्द ९०। ४ (अ) साहित्यानन्द ६५, ६६ ६७।
(ब) साहित्यानन्द १३७। ५ साहित्यानन्द ८३ व ८४।
६ वही ३१३, से ३१७। ७ वही, ३१८।

कारणो से भिन्न भिन्न 'काय विरूप सधि', एक कारण से 'बहुत काय विरूप सधि' के रूप म भी वर्णित किया है।

ग्वाल ने अनुभावो को रस के साथ वर्णित किया है। ये प्रत्येक रस के भिन्न भिन्न हैं।

ग्वाल ने रस की परिभाषा रसिकानन्द एव रसरग म इस प्रकार की है—

कारन विभाव थाई भाव अनुभाव करि,
मिलि बिभिचारी होत प्रगट प्रमानिये।
नाट्यो काव्य देखें सुनें अन्य ग्यान विगत ह्वै,
जाते जो जनित ताही मे थिति आनिये ॥
श्रुति हू कहत रस ब्रह्म को सरूप एक
याते ब्रह्मानन्द सम आनन्द प्रमानिये।
चाव है चतन्य अदभुतता सहित अति,
परम प्रकास सुख आनि मत जानिये ॥१॥

जह विभाव अनुभाव अरु सात्विक औ सचार।
ये मिलिथिति को पूरहीं, सो रस सुकवि उचार ॥१॥
चिदानद घन ब्रह्म सम, रस है श्रुति परमान ॥२॥—रसरग।

कहि विभाव अनुभाव अरु, सात्विक पुन विचारि।
इन करि इति की पूणता सो रस भरत उचारि ॥—साहित्यानन्द।

स्पष्ट है कि कवि ने भरत के सूत्र विभावानुभाव व्यभिचारिसयोगाद्रस निष्पत्ति को ही अगीकृत करके रस की निष्पत्ति लिखी है। कवि ने श्रुति के रसो वै स। रस ह्येवाय लब्ध्वानन्दी भवति' के आधार पर अन्य ज्ञान विगत, एकमेव वृत्ति' रूप रस को 'चिदानन्दघन ब्रह्म' के समान माना है। अपने मत की पुष्टि म कवि ने भरताचाय, अभिनव गुप्त, मम्मट और विश्वनाथ के मतो को गद्य म प्रस्तुत किया है। कवि के रस के उक्त आचार्यों का समन्वय मिलता है।[1]

---

१ अथ प्रथ भरताचाय को मत—विभाव अनुभाव सचारी इन करि थाई भाव पग कीयो सोई रस आनन्द सरूप प्रगट होत है।

अथ अभिनव गुप्ताचाय को मत—नाट्य काव्य देखि सुनि आवरनादि जहाँ विगत होंय अरु आनन्द रूप प्रकासित चत य सोई रस होत हैं।

अथ काव्य प्रकास का मत—कारन कारज सहायक ये मिलि कर प्रगट होंय थाई भाव सो रस। कारन कारज सहायक इन ही कों नाट्य काव्य मे विभाव अनुभाव सचारी भाव कहत हैं। अरु भावादिक मे एक ही होय। जहा और भावन की कल्पना करि लीजियत है।

अथ साहित्य दरपन को मत—स्वय प्रकास आनद सरूप सुद्धता अखड अन्य ज्ञान रहित ब्रह्मानन्द स्वाद तुल्य ऐसो रस होत है।

कवि ने रस को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का हेतु कहा है—

पूरन रस जो होत है, जानौं बुद्धि निकेत ।

धर्म, अर्थ औ काम पुनि मोक्षसहित सब हेत ॥९॥—साहित्यानन्द ।

वास्तविक ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं होती । कवि ने श्रुति-सूत्र 'ऋते ज्ञानान्न मुक्ति' को देकर अपने मत को पुष्ट किया है—

ग्यान बिना नहि मुक्ति है, लिख्यौ सु वेद मझार ॥१३॥ साहित्यानन्द ।

ग्वाल की रस की परिभाषा ज्ञानमूलक है ।

रस की स्थिति और उसके स्वरूप वर्णन के उपरान्त कवि ने रस के दो भेद माने हैं—(१) लौकिक और (२) अलौकिक ।[1] लौकिक रस का उद्भव लौकिक सन्निकर्ष से और अलौकिक का जन्म अलौकिक सन्निकर्ष से होता है ।[2] लौकिक में घट इन्द्रियगत सन्निकर्ष की विद्यमानता मानी गई है ।[3] विद्वानों ने अलौकिक रस के मूल में पूर्वजन्म के अनुभाव के ज्ञान को निहित माना है[4] अर्थात पूर्व जन्म के अलौकिक संस्कारों से ही अलौकिक रस उद्भूत होता है । अलौकिक रस के कवि ने तीन भेद किये हैं—(१) स्वाप्निक (२) मानोरथिक और (३) औपनायिक । (साहित्यानन्द ४।६)

ग्वाल ने भी इस वर्गीकरण को सीधा भानुदत्त की रसतरंगिणी से ही लिया है ।[5] ग्वाल ने यद्यपि इन तीनों के लक्षण तो नहीं लिखे, परन्तु औपनायिक अलौकिक रस की स्थिति वाद काव्य, पद, पदार्थ और चमत्कार में मानी है । कहीं प्रधान और कहीं अप्रधान रूप में यह रस इनमें से प्रत्येक में विद्यमान रहता है । (साहित्यानन्द ४।७-८)

ग्वाल ने शृङ्गार हास्यादिक रसों को औपनायिक अलौकिक रस के अन्तर्गत साहित्यानन्द के खण्ड ४ में वर्गीकृत किया है—

औपनायिक हि रस रौद्र बखान ॥२७॥

घोर भयानक माँहि निरधार ॥२८॥

पहले आठ ही रस गिनाये गये । नवां बाद में जोड़ा गया । कारण स्पष्ट है—

---

१ साहित्यानन्द ४।४ । २ वही ४।५ ।

३ लौकिक जो सन्निकर्ष घट इन्द्री विषगत ॥ वही ।

४ पूर्वजन्म अनुभाव ताको ज्ञान कहैं वहु रस सो अलौकिक है विबुध करें विचार ॥ वही ।

५ स च रसो द्विविधः लौकिको लौकिकश्चेति । अलौकिको रसस्त्रिधा स्वाप्निको मानोरथिक औपनायिकश्चेति । (रस तरंगिणी, षष्ठ तरंग,) ।

"सात रस काव्य में कहियत है, नाट्य में नाहीं। नाट्य में आठ ही कहे हैं।" (रसिकानन्द छन्द सं० ३ के पश्चात) यह वर्गीकरण मम्मट के काव्य प्रकाश पर ही आधृत है।[1]

शृंगार—ग्वाल ने शृङ्गार को ही सर्वोच्च रस मान कर साहित्यानन्द में उसका सर्वप्रथम वर्णन किया है। इसकी व्याख्या उन्होंने भक्तिमूलक की है। कवि प्रश्न करता है—

रस सिंगार ही आदि में, कहत सु कारन कौन।
क्यों न और रस प्रथम में, बरनत है बुधि भौन ॥४।३०॥

उत्तर— होत विष्नु ही तें सकल, देवन की उतपति।
वही विष्नु सिंगार में है विख्यात अधिपत्ति ॥३१॥
और रसन के देवता इहाँ, ठीक सुविचार।
रस सिंगार के विष्नु प्रभु याते प्रथम सिंगार ॥३२॥

शृङ्गार रसराज क्यों है[2] इसका उत्तर कवि इस प्रकार देता है—

जसें विष्नु विख्यात हैं, सब देवन सिरताज।
तसें विष्नु प्रताप तें है सिंगार रसराज ॥४।३४॥

कवि ने 'शृंगार' पद का अर्थ 'एकाक्षरी' से प्रमाणित किया है। 'शृंग को प्राधान्य' और 'आर' को काम का वाचक बतलाते हुए मनोज की प्रधानता प्रतिपादित की है।[3] साहित्यानन्द में वह लिखता है—

शृंग कहत   अपराध उरधार ॥४।३५॥
शृंग आर की   मनोज की धार[4] ॥४।३६॥

कवि ने शृंगार की पदवी[5] रसों के राजा की मान कर उसका लक्षण इस प्रकार दिया है—

नायिका औ नायक   करत उदोत हैं[6] ॥४।३७॥

---

१ शृंगार हास्य करुण रौद्र वीर भयानकाः।
बीभत्साद्भुत सज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसा स्मृताः ॥२९॥
काव्य प्रकाश—चतुर्थ उल्लास।
'निर्वेद स्थायी भावो स्ति शान्तो पिनवमो रस।' वही।

२ साहित्यानन्द ४।३३।

३ प्रमान अनेकार्थ—'शृंग प्राधान्यमीक्षति' पुन प्रमान एकाक्षरी आर काम।' वही, छन्द सं० ३६ के उपरान्त उद्धृत।

४ (अ) रसिकानन्द ४।४ व ५ (ब) रसरंग २।७ व ८। ५ रसरंग १।२।

६ रसिकानन्द ४।६   (ब) रसरंग २।९ से ११।

शृंगार के भेद सयोग और वियोग (विप्रलम्भ) शृंगार रस के दो भेद कवि ने रसरग म परम्परानुसार ही किये हैं—

रस शृंगार क भेद द्वै, इक सयोग सिंगार।
विप्रलभ सिंगार दुअ यही वियोग सिंगार[1] ॥६।१॥

सयोग लक्षण प्रिय और प्रिया हित चित से मिल कर जो अभीष्ट सिद्ध करें, वहाँ सयोग शृंगार होता है—

प्यारी पिय हित चित मिलें करें अभीष्ट जो सिद्ध।
सो सयोग सिंगार है, वरन सुकवि जो वृद्ध ॥६।३॥
—रसरग।

अथवा— प्यारी पिय दोऊ जहाँ, करें केलि की खान।
सो सजोग सिंगार है बरनत परम सुजान ॥८।२॥
—रसिकानन्द।

पहले दोहे में 'वृद्ध' शब्द अवलोकनीय है। रसरग की रचना के समय कवि वृद्ध हो गया था, इससे उसने 'अभीष्ट सिद्धि' लिखकर काम चला लिया है। रसिकानन्द की रचना युवावस्था की कृति है, अत यहाँ 'केलि की खान' सयोग पक्ष म लिखना उसे अभीष्ट था।

सयोग का उदाहरण—
मौंहनि ते कछुक   छाती लें[2] ॥६।३॥ —रसरग।

प्यारी और प्रिय क्रमश नायिका और नायक दोनो आलम्बन विभाव हैं। 'चौंही पटियाँ माँग नन कपोल, बेसर आदि उद्दीपन विभाव हैं। उलटि परिवो' यह अनुभाव है। रति रीति स्थायी और सकुचि सकुचि' पद सचारी है। इस प्रकार विभाव, अनुभाव और सचारी सयोग से रस निष्प न हुआ।

कवि शृंगार के प्रच्छन्न और प्रकाश उपभेदो के चक्कर म न पड़कर सयोग के दसो हावो[3] के लक्षण लक्ष्या म लीन हो गया है। हावो का वणन परम्परानुसार हुआ है। इसके अतर कवि ने अय कवियो के आधार पर ८ और हावो का वणन किया है। वे हैं—१-हेला, २-मद ३-बोधक, ४-मदन, ५-अभिनयन, ६-चतुर, ७-खीझ और ८-गुण।[4] पदमाकर ने १-हेला,

---

१ रसिकानन्द ८।१। २ वही, ८।३।
३ (अ) रसरग ६।६ व ७ (ब) रसिकानन्द ८।६ व ७।
४ रसिकानन्द ८।३० व ३१।

२–बोधक दो अतिरिक्त हाव लेकर इन की सख्या १२ कर दी है। हावों का वणन ग्वाल ने मर्मावत किया है। जहाँ नायक नायिका लज्जा विगत प्रेममय और मुदित होकर हम वहाँ हेला [1] पूण परम प्रीति म जहाँ मद बढ़े वहाँ 'मद' [2] जहाँ कोई गूढ़ क्रिया करके भाव बोध किया जाय, वहाँ बोधक [3] काम की बातें करते हुए जहाँ अगों म ज्योति बढ़े वहाँ मदन [4] हाव, जहाँ शृगार म अभिनय किया जाय वहाँ अभिनयन' [5] जहाँ चतुर क साथ और की ओर बातें कर के अपना अथ बताया जाय, वहाँ चतुर' [6] हाव जहाँ नायिका नायक स रस पूवक क्रोध करे और उस देख कर हर्षित हो वहाँ धीम [7] हाव और जहाँ नायिका गायन आदि स प्रिय को वश म करन वहाँ गुन [8] हाव होता है। कवि न इन आठ हावों के मात्र लक्षण लिख कर छुट्टी पाली है उदाहरण नहा दिये। हाव वणन प्रसग म अन्य कवियों द्वारा हावों को ३२ की सख्या तक बढ़ाने की भी चर्चा की है। परन्तु ग्रन्थ म य दिये नही। क्योंकि उसके मत म वे चमत्कारी नही प्रतीत हुए। [9]

वियोग शृगार—कवि ने वियोग का लक्षण इस प्रकार लिखा है—

प्यारी पिय म वाछित जु, अप्रापति सु निहार।
हिय सजोग आसा रहे सो वियोग सिगार॥ [10] ६।३६–रसरग।

वियोग भेद—चार हैं—(१) प्रवास (२) पूर्वानुराग (३) मान और (४) दवयोगात्। पूर्वानुराग को पुन श्रुत्वानुराग और दृष्टवानुराग म तथा दवयोगात् को मेहावरोध और अन्यावरोध विभेदों म विभाजित किया गया है।

नायक के परदेश चले जाने पर प्रवास' [11] विरह जहाँ सुन कर या देखकर प्रेमाकुर उत्पन्न हो वहाँ पूर्वानुराग [12] जहाँ मान म मनाने वाले की ओर से विलम्ब होन से विरह की अग्नि बढ़े वहा मान' [13] विरह और जहाँ दवयोग स ही नायिका नायक दूर दूर हो जायें, वहाँ दवयोगात [14] विरह कहलाता है। यह शाप, मेघ, पावक, पवन, उपद्रव बीमारी, सिंहादिक के भयद शब्द उत्सव और भीड के भय आदि कई कारणों स हो सकता

---

१ रसिकानन्द ८।३२ २ वही, ८।३३ ३ वही, ८।३४
४ वही, ८।३५ ५ वही, ८।३६ ६ वही ८।३७
७ वही ८।३८ ८ वही ८।३९
९ वही ८।४० १० वही ८।४१। ११ रसरग, ६।३१
१२ वही ६।३३ व ३४ १३ वही ६।५१ १४ वही, ६।८३।

है।[1] कवि ने करुणा विरह का भी सकेत किया है, परन्तु उसका वणन नही किया।[2]

प्रवास उदाहरण (रसरग)
तेरे मन भावन गरजि गरजि क ॥८।३२॥
श्रवणानुराग उदाहरण (वही)
जब तें सुनाई टूटि जाय कान री ॥८।३५॥
दृष्टानुराग उदाहरण (वही)
नैनन मिलाय गयो मिलोंगी पिछवारे पें ॥८।३६॥
मान उदाहरण (वही)
पाती परनारि की पोरी परि गई है ॥८।५२॥
शाप उदाहरण (वही)
प्रीतम ल जलकेलि कहा हाथ म आयौ ॥८।४६॥

वियोग दशायें वियाग की दशाओ का वणन ग्वाल ने पारम्परिक ही किया है। कवियो ने वियोग की दस दशा मानी हैं—(१) अभिलाषा, (२) चिन्ता, (३) स्मृति (४) गुण कथन, (५) उद्वेग, (६) प्रलाप, (७) उन्माद, (८) व्याधि, (९) जडता और (१०) मरण।[3] जहा प्रिय मिलन की आकाक्षा बनी रहे वह 'अभिलाषा,'[4] जहा प्रिय के दशन की चाह म चिन्तन जारी रहे वह 'चिन्ता',[5] किसी से श्रवण करके या कुछ देखकर प्रिय का स्मरण हो, वह 'स्मृति',[6] विरह म प्रिय गुन कथन 'गुणकथन',[7] विरह म जहाँ हित अहित समान लगें, इतनी व्याकुलता हो जाय वहा 'उद्वेग',[8] विरह-व्याकुलता म जहा व्यथ की बातें की जायें वहा 'प्रलाप'[9] अति व्याकुल होकर जहाँ अविचार के काय हों वहा 'उन्माद',[10] जहा अति सतप्त होकर ऊष्ना उत्पन्न हो जाय वहा 'व्याधि',[11] जहाँ अति सन्ताप से बुद्धि ही जड हो जाय वहा 'जडता',[12] जहाँ विरहिन शरीर त्याग करने को उद्यत हो जाय, वहाँ 'मरण'[13] दशा होती है। कवि ने लक्षण और उदाहरण स्पष्ट

१ रसरग ६।५४ व ५५। २ रसिकानन्द, ८।४९।
३ (अ) रसरग ८।५९ व ६०। (ब) रसिकानन्द, ६।५७-५८।
४ रसरग, ८।६१। ५ वही, ८।६३। ६ वही, ८।६५।
७ वही, ८।६८। ८ वही ८।७०। ९ वही, ८।७२।
१० वही, ८।७४। ११ वही, ८।७६। १२ वही, ८।७८।
१३ वही, ८।८०।

और स्वच्छ हैं। कवि ने एक 'करुणरस' दशा लिखकर उसका वियोग से अन्तर इस प्रकार दिखाया है—

आसा है जह मिलन की सो सिंगार वियोग।
आस नही जहँ मिलनकी सो करुणाके जोग॥[1]

वियोग मे दर्शन वर्णन ग्वाल ने स्थूल रूप मे (१) श्रवण (२) स्वप्न (३) चित्र और (४) साक्षात् ये चार प्रकार के वियोग के दर्शनों का वर्णन किया है। इनके नाम से ही लक्षण स्पष्ट हैं, अत इनके उदाहरण मात्र ही दे दिये गये हैं। इन चारों के चार चार और उपभेद कवि ने दिखाये हैं, जो इस प्रकार हैं—

१ श्रवण बोल श्रवण, गुण श्रवण, पत्र श्रवण, नाद ध्वनि श्रवण।
२ स्वप्न ध्यान दर्शन, मूर्छा दर्शन टकटकी दर्शन, स्वप्न-दर्शन।
३ चित्र चित्र दर्शन मुकुरान्त दर्शन,[2] जलान्त दर्शन[3] मणिनान्तर-दर्शन।
४ साक्षात् साक्षात दर्शन, पटान्तर दर्शन,[4] जालान्तर-दर्शन[5] यवनिका दर्शन।[6]

इन सभी के लक्षण नामो से ही स्पष्ट हैं। कवि ने केवल इनके उदाहरण भर लिखे हैं। इस प्रसग मे कवि ने पूर्वानुराग और श्रवण दर्शन के सूक्ष्म भेद को पहले पद्य मे फिर गद्य मे समझाया है जो इस प्रकार है—

टीका—श्रुत्वा अनुराग दृष्ट्वा अनुराग के विषय पहिल प्रेम नही होत। जब ही प्रेम को अकुर लगत है तब गुन रूप सुनत हैं अथवा लखत हैं। तब यह अकुर बढ्यो फेर जो वा प्रेम को कथन दूतिका प्रति कर सो पूर्वा अनुराग अरु श्रवन दरसन मे पहिल नायक नायिका को मिलाप भयो होत है। पहिलई प्रेम जम्यो होत है। फेर वियोग मे उनके गुन रूप की अवस्था सुनिकै जीव तृप्त होत है। तब सब मनोरथ पूरन होत है। इतनो भेद जानिय। —रसिकानन्द—छ०स० ८६ ८७ की टीका।

१ रसिकानन्द, ६।७७।
२ दर्पण के कोने मे।
३ जल के कोने मे।
४ परदे के भीतर।
५ जाल के छिद्रो मे होकर।
६ चिक आदि मे होकर।

२ नायिका भेद विवेचन   रीति काल मे यह विषय स्वतंत्र और सवप्रधान रीति के विषय के रूप मे विवेचित हुआ है। ग्वाल न भी काव्य के अन्य अगो की अपेक्षा नायिका भेद को ही अधिक महत्व प्रदान किया है। उनका अधिकाश काव्य साहित्य इसी विषय को किसी न किसी रूप म समर्पित हुआ है।

"आश्रय आलबन कहै, प्यारी को कवि लोग"

अर्थात् नायिका शृङ्गार रस का आश्रय आलम्बन है। अत ग्वाल ने शृङ्गार के वर्णनोपरान्त नायिका भेदो को[1] पहले और तत्पश्चात् नायक प्रसग को ग्रहण किया है। कवि ने नायिका की सामान्य परिभाषा उसके रूप, चातुय और गुणो को लेकर इस प्रकार की है—

ता तिय तकि तरुनिनहु को, चल चित्त अममान।
भरे सु बहुविधि जायका, वहै नायिका जानि॥
—रसिकान द ४।१०।

तथा   रूपवती हू लखि लुभ, अति प्रवीन गुन खानि।
बहुन जायका दायका वहै नायिका जानि॥
—रसरग २।१४।

कवि के अनुसार ऐसी रूपवती रमणी, जो प्रवीण हो और नाना गुणो की भडार हो और जिसे देखकर पुरुष तो क्या सुन्दर स्त्रियां भी मुग्ध हो जायँ, नायिका कहलाती है। इसम उसका बहुत जायका दायका' होना अनिवाय है। 'जायक' शब्द नारी-प्रसग मे कुछ श्लील की कोटि म न आते हुए भी बडा सटीक है। कवि की नायिका की परिभाषा मौलिक प्रतीत होती है। *मोहि न नारि नारि के रूपा।* पर तु वह नायिका ही क्या जिस पर रमणी मुग्ध न हो, पुरुष तो मुग्ध होगा ही। ग्वाल की नायिका की परिभाषा म इतर कवियो की परिभाषा से वशिष्ट्य है। कवि ने अन्य कवियो की

---

१ याते प्रथमहि नायिका करियत हैं निरधार।
—रसिकानन्द ४।९।
यातें बरनो नायिका पुनि नायक रस हेतु।
—रसरग २।१२।

परिभाषा[1] से पृथक नायिका की विशेषताओं में उसके शारीरिक सौन्दर्य, प्रवीणता, गुणों और रति जनित विविध विलास सुख पर विशेष बल दिया है। मन की अपेक्षा नारी का शरीर ही कवि की दृष्टि में प्रधान रहा है।

जाति—ग्वाल ने गोणिका पुत्र न दकेश्वर आदि प्राचीन आचार्यों के मतानुसार नारी की चार जातियाँ लिखी हैं—(१) पद्मिनी, (२) चित्रिणी, (३) शंखिनी और (४) हस्तिनी।[2] वात्सायन के कामसूत्र पर आधृत मृगी, बड़वी और हस्तिनी[3] के भी लक्ष्य-लक्षण इन्होंने दिये हैं। कामशास्त्र के अनुसार ही कवि ने इन नायिकाओं की नाना रति विधियों के भी वर्णन किये हैं। अन्तरंग और बहिरंग दोनों प्रकार की रतियों के सात सात भेद बताये गये हैं।

---

१ (अ) जो कामिनी में देखिये, पूरन आठहु अंग।
ताही बरन नायिका त्रिभुवन मोहन रंग ॥—देवरस विलास।

(ब) उपजत जाहि बिलोकि कै चित्तबीच रतिभाव।
ताहि बखानत नायिका जे प्रवीन कविराय ॥—मतिराम रसराज।

(स) रस सिंगार को भाव उर उपजहिं जाहि निहारि।
ताको को कवि नायिका बरनत विविध प्रकार ॥
—पद्माकर—जगत विनोद।

(द) जाहिलख उपजै हिय रतियाई मनमाँहि।
ताहि बखानत नायिका कविजन सुमतिसराँहि ॥
—प्रतापसाहि—व्यंग्यार्थ कौमुदी।

(य) चतुरन के चित में बढ़ जेहि लखिसुचि रतिभाव।
ताहि बखानत नायिकाजे प्रवीन कविराय ॥
—चन्द्रशेखर—रसविनोद।

(फ) रूपभरी अति गुनभरी सीलभरी सुखदान।
ताकों कामिनि कहत है कोविद अति सज्ञान ॥
—नन्दकिशोर—श्यामाश्याम विनोद।

२ *कहियत ताको जाति अब चारु चारहूं नाम।*
पद्मिनी चित्रिनि सखिनी बहुरि हस्तिनीवाम ॥—रसिकानन्द।
होतनायका प्रथम हो जातभेद करि चार।
पद्मिनी चित्रित सखिनी फेरि हस्तिनी उचार ॥—रसरंग २।१७

३ रसरंग, ४।५४ ५५।

गुण—गुणों के अनुसार भानुदत्त[1] की पद्धति पर नायिकाओं के तीन भेद किये गये हैं। (१) उत्तमा, (२) मध्यमा और (३) अधमा।[2] इनका विस्तार सभी नायिकाओं में पाया जाता है।[3]

अंश—अंश के विचार से दिव्या, अदिव्या और दिव्यादिव्या ये तीन प्रकार की नायिकाओं के नाम लिखे हैं। ये क्रमशः देवानी, मानुषी और देवमानुषी भी कहलाती हैं। सुरी पुलोमजा आदि दिव्या, दमयंती आदि रानियां अदिव्या और सीता, रुक्मिणी, राधा आदि दिव्यादिव्या[4] हैं। सभी नायिका भेदों में इनका विस्तार है।

कर्म—ग्वाल ने कर्मानुसार तीन नायिकाओं के लक्षण-लक्ष्य लिखे हैं। वे हैं—(१) स्वकीया, (२) परकीया और (३) गणिका।[5] स्वकीया के तीन भेद और किये हैं—(१) मुग्धा (२) मध्या और (३) प्रौढ़ा।[6] कवि ने मुग्धा का दूसरा नाम 'वय संधि अंकुरित नवयौवना' लिखा है।[7] वय संधि के अनुसार ग्वाल ने 'मुग्धा' के चार भेद किये हैं—(१) अज्ञात यौवना, (२) ज्ञात यौवना, (३) नवोढ़ा और (४) विश्रब्ध नवोढ़ा।[8] ये ही नाम कर्मीमत के हैं, गौड़ी मत में (१) नवल वधू (२) नवयौवना, (३) नवल अनंग और (४) सलज्जरति[9] ये चार भेद हैं। इन दोनों मतों के नामों में ही अंतर है। लक्षण चारों के एक से हैं। मतिराम, पद्माकर और सुंदर ने मुग्धा के केवल दो ही भेद माने हैं—(१) अज्ञात यौवना और (२) ज्ञात यौवना।[10] ग्वाल के मतानुसार जिस रमणी को शरीर में आये यौवन का ज्ञान नहीं होता वह 'अज्ञात यौवना', जिसे उसका ज्ञान रहे वह 'ज्ञात यौवना' जिसे पति रति में लज्जा और भय रहे वह नवोढ़ा और जिसे पति की प्रतीति हो जाय वह विश्रब्ध नवोढ़ा कहलाती है।[11] प्रौढ़ा के भी आगे चलकर दो भेद किये गये हैं (१) रति प्रीता और (२) आनन्द सम्मोहिता।[12]

---

१ रसिकानन्द, ४।६४। २ रसरंग, २।२६। ३ रसिकानन्द, ४।६६।
४ रसरंग २।३३ से ३।५ ५ वही, २।३६। ६ वही, २।४०।
७ रसिकानन्द, ४।८७। ८ वही, ४।८९ व ९०। ९ वही, ४।९२।
१० (अ) मुग्धा के द्वै भेदवर भाषत सुकवि सुजान।
इक अज्ञात यौवन बहुरि ज्ञात यौवनामान॥—रसराज।
(ब) मुग्धा द्विविधि बखानहीं प्रथम कही अज्ञात।
अज्ञात सुयौवना दूसरी भाषतमति अवदात॥—जगतविनोद।
(स) तामुग्धा द्वै भांति की पंडित करत विवेक।
इक अज्ञात सुयौवना, ज्ञानयौवना एक॥—सुंदरशृंगार।
११ (अ) रसिकानन्द ४।१०७। (ब) वही, ४।१०९। (स) वही, ४।१११।
(द) वही, ४।११४। १२ वही ४।१२३

पादाचाज सवक लेप तं पल्यो आव है क स्वकीया म ही मान होत है तिनकी आग्या उल्लघन करि क अपनी नवीन मत मिर्णि करिवो अति अनुचित है।[1] यहाँ प्रश्न उठना है कि फिर ग्वाल कवि न परकीया म धीरादि भेदान्तगत खंडिता, कलहा तरिता दोना कोपजन्य भेद क्या दिखाये हैं। इसका उत्तर कवि ने इस प्रकार दिया है— बहुत कवि सस्कृत अरु भाषा म खण्डिता कलहांतरिता परकीया की बरनत हैं उनके लिखने बमूजिब हमहू परकीया खडिता कलहांतरिता आगे वरनन करि देंगे।[2]'

पटऋतु वणन— ग्वाल ने रीतिकालीन शृङ्गारिक प्रवत्ति क अ तगत नायक-नायिकाआ क विविध भावा तथा उनके रूप सौ दय का चित्रण पधानता से किया है। अत स्वभावत प्रकृति चित्रण प्राय शृङ्गार के उद्दीपन रूप म ही अधिक हुआ है। तथापि प्रकृति वणन की अ य विधाएँ—निरपेक्ष प्रकृति चित्रणादि—उपेक्षित नही हैं। पर तु स्वत त्र छन्द सख्या म अल्प ही हैं।

आलम्बन—ग्वाल ने आलम्बन रूप क प्रकृति चित्रण मे किसी मानवीय भाव का आरोप न करके उसे एक पृथक दृश्य के विशुद्ध रूप म ही अकित किया है। कवि ने निम्नांकित कवित्त मे वर्षा ऋतु की गगन व्यापी टेढी सीधी, गोल, चौकोर, रीती भरी, खुली, मुन्दी, काली, घोरी धुमरारी, धुरवारी आदि घनघटाआ का कसा मनोरम चित्र खींचा है और वह भी ऐसा कलामय कि एक के पश्चात् दूसरी और दूसरी के उपरा त तीसरी दृश्यावली नेत्रो के समक्ष सिनेमा की रील की भांति विविध सचल विम्ब चित्र प्रस्तुत करती चली जाती है। ग्वाल की चित्र ग्राहिणी क्षमता और प्रस्तुतीकरण की कुशलता की बरबस वाह वाह करनी पडती है। यह चित्र केवल नेत्र जगत की वस्तु है। पटऋतु वणन के उदाहरण देखिये—

---

१ रसिकान द—चतुथ प्रकरण छ० स० ३८ के पश्चात् की वार्ता।
  सखी भेद—मडना उपालम्भिका शिक्षिका और उपहासिका।
  दूती भेद—सघट्टना और निवेदना।
  नायक—पाचाल दत्त कुचमार और भद्र, शशक, वृषभ और अश्व (जातिगत)
  गुण—उत्तम, मध्यम और अधम। अश्र-दिव्य, अदिव्य और दिव्यादिव्य।
  कम—पति। धीरललित धीरशा त धीरोद्धत धीरो दात्त उपपति। ।उत्तम मध्यम अधम।, वशिक ।उत्तम मध्यम अधम। अनुकूल, दक्ष, चतुर, धृष्ठ, शठ मानी, प्रोषित पति।
  सचिव—पीठमद, विट, चेट और विदूषक।

२ वही।

प्यारी आऊ छात प ... यह और है ॥३१॥

नीचे के कवित्त मे शीत का प्रभाव अपने पूर्ण उत्कर्ष पर दिखाई दे रहा है—

सीत को सवाई सी ... होत हैं ककोरा से ॥८२॥

शरच्चन्द्रिका की शोभा का एक निरपेक्ष चित्र देखिये—

मोरन के सोरन की ... चांदनी सरद की ॥४७॥

उद्दीपन—ग्वाल भाव विश्लेषण क कवि हैं। उन्होंने रीति परम्परा मे प्रकृति चित्रण के अन्तगत मानव स्वभाव और मानवेतर पदार्थों के स्थायी गुणो का परस्पर सापेक्ष रूप म वणन किया है। आश्रय की मनोदशा के अनुकूल ही प्रकृति के गुण, रूप आदि प्रस्तुत किये गये हैं। शृङ्गार के सयोग और वियोग दोनों पक्षो को दृष्टि म रखकर ही प्रकृति के विभिन्न उपादानो का चित्रण ग्वाल ने भी किया है। नायक-नायिका के सयोग म प्रकृति उनकी शृङ्गार-भावनाओं को तीव्रतर करती है। उनके शारीरिक और मानसिक सामीप्य की स्थिति म मानवेतर पदार्थ भी उपभोग्य बन जाते हैं। वर्षा ऋतु म—

गेह अति ऊँचे होंय ... दामिनी के सग सी ॥३५॥

प्रकृति मानो चिल्ला चिल्लाकर मानिनी को मान विमोचन का आदेश सा देती है—

मान की बेर सनमान ... चचल चमाके सों ॥३८॥

वियोगावस्था म प्रकृति ये ही उपादान दाह बन जाते हैं—

मेरे मनभावन ... गरजि गरजि क ॥रसरग ५।३२॥

विरहावस्था म कभी कभी यह प्रकृति अपने समस्त उपादाना के साथ विरहिन के विरहताप को आशातीत बढा देती है—

कूकें कोकिलान की ... फूकें डारती ॥षट्ऋतु ३७॥

कभी कभी विरही प्रकृति के विरुद्ध विद्रोह करके उसके उपादानों को नष्ट करने की भी कल्पना करने लगता है—

प्यारी बिन जानि ... मरोर डार ॥षट्ऋतु २९॥

'वर रहे झरसे ये गजरे गुलाब के', 'लिपट तमालन सों धीर म [illegible] हैं,' हाय हाय धीर विरहागिनि म बारि दई बरी बलवत या [illegible]

नें,' 'कुसुभ पलासन डारि प ई तें, अगार भभूकें,' कारी कसाइन कूर कल-किनि रविन ववलिया काटती कूकें,' आदि इसी मनोदशा के भाव हैं।

सयोग म भी एक मनोदशा ऐसी होती है, जब प्रिय के भावी विरह की कल्पना प्रिया को व्याकुल कर देती है और वह उसे रोकने को प्रकृति का सहारा खोजती है—

जिन जाउ पिया　　　　　लुए लागती हैं ॥ रसरग ४।२८ ॥

अप्रस्तुत—रीतिकालीन कवियो की परिपाटी पर ग्वाल ने भी अप्रस्तुत रचना विधान द्वारा प्रकृति का उपयोग भावो के उत्कर्ष हेतु किया है। मूल पदार्थों के लिये प्राकृतिक पदार्थों को अप्रस्तुत क रूप म प्रस्तुत करने मे ग्वाल का ध्यान दोनों के स्थूल रूप, गुण तथा क्रिया आदि के प्रभाव साम्य पर केंद्रित रहा है। निम्नाकित दोहे मे नायिका क रूप म प्रयाग त्रिवेणी तथा बकुण्ठ के रूपक की कल्पना की गई है—

प्यारी तन सु　　　　　बकुण्ठ अपार ॥दृग शतक ४॥

निम्नोक्त दोहे मे अरविन्द, मकरद और मलिंद के रूपको को ग्रहण किया गया है—

प्यारी तो तन ताल　　　　मो मन भयो मलिंद ॥ वही ६ ॥

ऐसे दो और दोहे यहाँ और दिये जाते हैं—

सारस[1] वृग तेरे निरखि सारस[2] बैठ बिजात।
सारस[3] बलबल हल नये सारस[4] जोट सुहात ॥वही ३२॥
चपलाइ तो दृगन की लखि लखि खजन मीन।
सीखत प आवत नहीं लखि लखि खजन मीन ॥वही ५८॥

मूल इसमे म लिये प्रकृति के स्थूल अप्रस्तुतो का उपयोग हुआ है। उदाहरणार्थ

फाग की फल करी　　　　डालन ऊपर ॥ षटऋतु ७३ ॥

×

फाग म राग की　　　　रग फुहार हजार ॥ षटऋतु ७४ ॥

×

मानौं स्याम कबु　　　　बठ्यो अलिनन्द है ॥ नखशिख ३६ ॥

×

मानौं नीलमनि की　　　　चपा मे चढाय हैं ॥ नखशिख ३७ ॥

सारस=शुद्ध सालस। २ छद विशेष, ३ कमल ४ पक्षी विशेष।

षटऋतु वणन विस्तार के साथ हुआ है । इसमे कवि ने हिन्दी की पूव परम्परा का ही पालन किया है ।

हास्यादिरस वणन रीतिकालीन कवियो ने शृङ्गार रस का विवेचन तो विशद किया किन्तु इतर रसो को चलता कर दिया । सभी रस ग्रथो मे प्राय यही परिपाटी पाई जाती है । ग्वाल ने भी स्वरचित रस ग्रन्थ 'रसरग' और 'रसिकानन्द' म इसी परम्परा का अनुसरण किया है । परन्तु सर्वांग निरुपक 'साहित्यानन्द' ग्रन्थ मे इन रसो को किंचित विशदता के साथ विवेचित किया गया ह । लक्षणो को स्पष्ट करने म गद्य का भी आश्रय लिया गया है । उदाहरण स्पष्ट हैं, जिन्हें प्राय पद्य के साथ गद्य म भी समझाया गया है । विवेचन स्वच्छ हैं । शृगारेतर आठो रसो के अतिरिक्त गौडेश्वर रूप गोस्वामी के 'भक्तिरसामृत सिन्धु' के उपासना कांड के दास्य, सख्य, वात्सल्य रसो का भी ग्वाल ने विवेचन किय । अन्य रीतकालीन कवियो द्वारा यह प्रयत्न नहीं किया गया । कवि ने अपने विवेचन को अधुनातन बनाने का सफल प्रयास किया ।

मुख्य रसो मे से रौद्र और वीर को छोड कर शेष छ रसो को स्वनिष्ठ और परनिष्ठ दो दो भेदो मे विभक्त किया गया है । रौद्र का कोई भेद नही हो पाया । शेष रसो के भेद निम्नाकित रूप में वर्णित हैं—

रस नाम	रस भेद
हास्य	स्मित, हसित [उत्तम], विहसित उपहसित [मध्यम] अपहसित, अतिहसित [अधम] के पृथक पृथक स्वनिष्ठ, परनिष्ठ करके कुल १२ भेद ।
करुण	स्वनिष्ठ और परनिष्ठ, कुल २ भेद ।
वीर	युद्धवीर, विद्यावीर, दानवीर, दयावीर, धर्मवीर, कुल ५ भेद ।
रौद्र	कोई भेद नही, कुल १ भेद ।
भयानक	स्वनिष्ठ और परनिष्ठ, कुल दो भेद ।
वीभत्स	स्वनिष्ठ और परनिष्ठ कुल दो भेद ।
अद्भुत	अत्युक्ति अन्योक्ति विशेषोक्ति विरोधाभास के पृथक पृथक् स्वनिष्ठ-परनिष्ठ भेद, कुल ८ भेद ।
शान्त	स्वनिष्ठ और परनिष्ठ कुल २ भेद ।

रस उपासना के भेद

सख्य	समता, विश्वासता ।
दास्य	दास्य ।
वात्सल्य	वात्सल्य ।

संस्कृत ग्रन्थों के आत्मस्थ और परस्थ ही ग्वाल के स्वनिष्ठ और परनिष्ठ हो गये हैं। वीररस में संस्कृत में शस्त्र और शास्त्र वीर भेद हैं। कवि ने 'शास्त्र' के स्थान पर 'विद्या' कर दिया है और 'शस्त्र वीर' युद्धवीर कहलाता ही है। शेष तीनों वीर रस के भेद भी नये नहीं हैं। अद्भुत रस के चारों भेद अत्युक्ति, भ्रमोक्ति, चित्रोक्ति और विरोधाभास वास्तव में अलंकार हैं। यहाँ तो मात्र इनके उदाहरणों में रसाभास ही अधिक लक्षित होता है।[१] इनके लक्षण नहीं दिये गये। उदाहरण कवि के अपने हैं और स्पष्ट हैं।

कान्ता हास्या करुणा, रौद्रा, वीरा, भयानका, वीभत्सा और अद्भुता ये आठ रस दृष्टियाँ रसतरंगिणी के आधार पर लिखी गई हैं। कवि का निजी मत है कि शृंगार संयोग में रूप ललचौंही, वियोग में रुदिता हास्य में प्रफुल्लिता करुणा में करुणा रौद्र में कुपिता, वीर में उत्साहिता भयानक में भीता, वीभत्स में संकुचिता अद्भुत में चकिता और शान्त रस में समान दृष्टि होती है।[२] ये विभाजन वैज्ञानिक भी प्रतीत होता है। रसों के जनक, मित्र और अमित्र रसों का वर्णन भरताचार्य के मतानुसार किया गया है।[३] इसमें कोई मौलिकता नहीं है।

२ अलंकार विवेचन—रीतिकाल के देव आदि अधिकतर कवियों ने अलंकारों का वर्णन करते समय शब्दालंकारों की प्रायः उपेक्षा करते हुए अर्थालंकारों—और उनमें भी विशेषतः उपमालंकारों—को ही प्रधानता दी है।[४] ग्वाल कवि ने शब्द को अर्थ का आश्रय बता कर अर्थालंकार से पहिले ही शब्दालंकारों का वर्णन प्रस्तुत किया है।[५] अलंकारों का विशद और विद्वत्ता-

---

१ स्वनिष्ठ अत्युक्ति—साहित्यानन्द १०।८७, परनिष्ठ—वही १०।८८, स्वनिष्ठ भ्रमोक्ति—वही, १०।८९, परनिष्ठ-भ्रमोक्ति—१०।९०, स्वनिष्ठ चित्रोक्ति—१०।९१ परनिष्ठ चित्रोक्ति—१०।९२ स्वनिष्ठ विरोधाभास—१०।९३, परनिष्ठ विरोधाभास—१०९४।

२ साहित्यानन्द—१०।२९, ३ (अ) वही १०।३१ ३२
(ब) वही १०।५६।

४ (अ) सरस वाक्य पद अरथ तजि, शब्दचित्र समुहात।
दधि, घृत, मधु, पायसहि तजि वायस चाम चबात॥
—देव शब्द रसायन।

(ब) सकल अलंकारन विसे, उपमा अंग उपंग। ,, ,,

५ साहित्यानन्द १६।१७,

पूर्ण वर्णन स्वरचित साहित्यानन्द षोडश स्कन्ध में 'अलकार भ्रम भजन' नाम से किया है। 'इस प्रकरण की रचना पंडितराज जगन्नाथ की परम्परा पर हुई है। विषय के आधार संस्कृत के शास्त्र ग्रंथ विशेषत काव्य प्रकाश, चन्द्रालोक, कुवलयानन्द और अलकार चन्द्रिका रहे हैं। 'उन्होंने संस्कृत आचार्यों तथा भाषा काव्य शास्त्रियों के मतों का यथास्थान खंडन कर के तर्क संगत स्थापनाएँ की हैं।[1] शब्दालंकारों में छेकानुप्रास, वृत्यानुप्रास, लाटानुप्रास, यमक, चित्रालकार पुनरुक्तवदाभास का ही वर्णन है वक्रोक्ति को शब्दालंकारों में न लेकर अर्थालंकारों में रखा है।

ग्वाल की अलकार विषयक मान्यता

परिभाषा—जो रस व्यंग्य और शब्दार्थ से भिन्न होकर शब्दार्थ में विषयगत चमत्कार का कारण होता है, वही अलकार है।[2] यहाँ अलकार की रस व्यंग्य से भिन्नता मानी गई है। शब्दार्थ से भी भिन्न है, पर शब्दार्थ में है। अलकार चन्द्रिका में वद्यनाथ सूरि ने अलकार को रस से रहित व्यंग्य से पृथक माना है। ग्वाल भी अलकार को व्यंग्य से भी भिन्न मानते हैं। ग्वाल ने अर्थ का अर्थ पूर्ण' मानकर अलकार को अक्षरों में व्याप्त बताया है। स्वर्णादि के भूषण तो उतारे और पहने जा सकते हैं परन्तु ये अलकार कभी शब्दार्थ से पृथक नहीं किये जा सकते।[3]

अलकार इक छंद में ताम् नाम कहवाय[4] ॥

अलकार के क्षेत्र में ग्वाल ने कोई मौलिक उद्भावना स्थापित नहीं की जो कुछ प्राचीन ग्रंथों में वर्णन है वही उन्होंने भी वर्णन कर दिया है। यत्र-तत्र नामों में परिवर्तन अवश्य हुआ है, जैसे–प्रतिवस्तु के स्थान पर प्रतिवध। रस दृष्टियों के नाम भी दूसरे रख दिये हैं। विवेचन में कवि ने सूक्ष्म दृष्टि से काम लिया है। संस्कृत और भाषाग्रंथों में वर्णित प्राय कोई भी अलकार कवि की दृष्टि से ओझल नहीं रह पाया यही नहीं विस्तृत गद्य टीकाओं का सहारा लेकर उसने विवादास्पद लक्षणों को स्पष्ट किया है। एक विशेषता कवि ने इस विषय में यह दिखाई है कि सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्तर वाले मिल दिखने वाले अलकारों के भेदों को पारदर्शी दृष्टि द्वारा पृथक् पृथक् करके दिखा दिया है। ये इस प्रकार हैं रूपक तथा वाचक धर्म लुप्तोपमा,

---

१ वही पृष्ठ १४५ २ साहित्यानन्द, १६।४-५, ३ वही १६।३। ४ वही १६।१५।

अधिक अभेद रूपक तथा परिणाम, सन्देह तथा विकल्प शुद्धापह्नुति तथा पयस्त, पयस्तापह नुति तथा परिसख्या, छेकापह नुति तथा व्याजोक्ति, अक्रमातिशयोक्ति तथा अक्रम हेतु, तुल्ययोगिता प्रथम तथा दीपक वण्य अवण्य अप्रस्तुत प्रशसा तथा प्रस्तुताकर पर्यायोक्ति तथा गूढोक्ति तथा विषाद तृतीय विषम तथा विषाद, तृतीय सम तथा प्रहषण, प्रहषण तथा सूक्ष्म तृतीय विशेष तथा प्रथम पर्याय, प्रथम समुच्य तथा कारक दीपक, अविना तथा अनद्गुण मीलित तथा सामा य और उ मीलित तथा विशेष।[1]

इस विषय मे ग्वाल की प्रौढ विश्लेषण प्रतिमा, विचार गाभीय और विशद शास्त्रानुकूल विवेचनाशक्ति भी सम्यक स्पष्ट मिलती है। रीति के परवर्ती आचाय होने के नाते उनसे अपेक्षा भी यही थी।

३ पिंगल वणन–पिंगल छ द शास्त्र है। छन्द के बिना काव्य की सृष्टि सम्भव नही। अत पिंगल शास्त्र काव्य का एक अनिवायता है। छ दनियामक विषय होने के कारण यह दुरूह और शुष्क है। फलत रीतिकालीन कवियो मे से कतिपय ने ही इस पर ग्रथ लिखे हैं। ग्वाल ने वृत्ति विनोद शीषक से साहित्यानन्द म दो विस्तृत स्कन्ध लिखकर इस क्षेत्र म भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। साथ ही छन्द प्रस्तार पर 'प्रस्तार प्रकाश नामक स्वतन्त्र ग्रथ भी लिखा, जो पिंगल मे कवि की विशेष गति का द्योतक है। पिंगल के आदि आचाय शेषनाग हैं जिनको कवि ने आरभ म ही प्रणाम किया है।[2] कवि के अनुसार पिंगल का शाब्दिक अथ है गुरु लघु को बाधना।[3] कवि ने प्रस्तार की विविध विस्तत विधियों के लक्षण और उदाहरण दिये हैं। वर्णित छन्दो क नाम कवि के ग्रथ परिचय मे दिये जा चुके है। ग्वाल का आधार शेषनाग हैं।[4]

कवि ने विस्तत गद्य वार्ताओ और टीकाओ, प्रस्तार स्वरूपो द्वारा विषय को हृदयगम कराने का पूण प्रयास किया है। विस्तार की दृष्टि से देखा जाय तो आर्या के ८, १६, २० ००० और दोहा को १६ ०६, ५५ ६२५ की गिनती तक प्रस्तार किया है। पर यहाँ एक कमी खटकती है। वह यह कि पिंगल के अन्य शास्त्रीय ग्र थो से छन्दों के नामों को मिलाकर समन्वय नही दिखाई देता। यों एक एक छद के कई नाम दे दिये गये है, परन्तु उनके विशद विवेचन का अभाव है। कवि पिंगल के शिक्षक आचाय की दृष्टि से

---

१ वही, छन्द ४०० से ४२५ तक। २ वही १।१५।
३ वही, १।१६। ४ वही, २।५७।

कवि ने निश्चय ही पिंगल निरूपक हिन्दी आचार्यों में अपना प्रमुख स्थान बनाने का स्तुत्य प्रयास ही किया है।

४ काव्य दोष वर्णन—संस्कृत के प्रायः सभी आचार्यों ने काव्यगत दोषों के परिहार का वर्णन किया है। दोष विवेचन शास्त्रीय विषय है हिन्दी के सर्वाङ्ग निरूपक आचार्यों ने ही काव्य दूषणों का वर्णन किया है। रचित स्वतन्त्र दोष ग्रन्थ 'कवि दर्पण' और साहित्यानन्द के दोष प्रकरण के पन्द्रहवें स्कन्ध के अध्ययन से प्रतीत होता है कि इन्होंने मम्मटाचार्य की परिपाटी पर थोड़े बहुत अन्तर से दोषों का नामकरण करते हुए लक्षण और उदाहरण अपने दिये हैं। उदाहरणों में हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों के भी उदाहरण अंगीकृत किये और निर्दुष्ट बनाकर दिखाये हैं। खंडन मण्डन-पद्धति से प्रसिद्ध संस्कृत शास्त्रकर्त्ताओं और भाषा कवियों के मतों का भी उल्लेख किये गये हैं गद्यात्मक शैली ने ग्वाल को इसमें पर्याप्त सफलता प्रदान की है। संस्कृत के ग्रन्थों के दोष उदाहरणों को भी कवि ने मम्मट के काव्य प्रकाश के आधार पर निर्दोष बना रखा है। साराश यह कि कवि की विषय दृष्टि सर्वतोमुखी रही है। वर्णन शैली शास्त्र सम्मत है। पहले लक्षण फिर अपना उदाहरण, तत्पश्चात इतर कवियों के उदाहरण, तदुपरान्त दुष्ट पदों का दोष-निरसन करना—आद्योपान्त इसी क्रम का अनुसरण किया गया है। लक्षण लक्ष्य दोनों स्पष्ट है।

ग्वाल की दोष विषयक मान्यताएँ

दोष परिभाषा—जिस प्रकार शरीर में व्याधि होती है उसी प्रकार कविता में दोष होते हैं।[1] काव्य के सुनने में और समझने में जो निमिषमात्र हर्ष प्राप्त होता है, उसे जो दुखद रोकता है, वह दूषण है।[2] काव्य के और कवि की उत्कृष्टता परखने को दोषों के विचार से ग्वाल ने एक अपना मापदंड बनाया है। वह यह कि जिस कवि का आधा काव्य सदोष हो, वह कवि और उसका पूरा काव्य ही दूषित है। यदि काव्य का पचमांश ही सदोष हो तो फिर वहाँ उतने में दोष गिनने चाहिए। वहाँ कवि अदोष है। क्योंकि अधिक वर्णन में चूक हो ही जाया करती है।[3] कवि की दोष परिभाषा में 'सुनिबे' पद से शब्द और 'समुझ' से अर्थ और रस दोनों का भाव व्यंजित होता है। यह बिल्कुल सटीक ही है क्योंकि दोष स्थूल रूप में तीन ही प्रकार के माने गये हैं—(१) शब्द गत दोष, (२) अर्थगत दोष और (३) रसगत दोष।[4]

१ (अ) कवि दर्पण १।१७। (ब) साहित्यानन्द, १५।२। २ वही १५।३।
३ (अ) कवि दर्पण १।१०–१२। (ब) वही, १।१३।
४ (अ) वही, १।२३। (ब) काव्य प्रकाश–सूत्र ७१, पृ० १६८।

कवि ने शब्ददोषों को तीन भेदों में विभक्त किया है— (१) पददोष, (२) पदांशदोष और (३) वाक्य दोष। यही तीन भेद अर्थ और रस में भी माने जाते हैं। कवि ने दोषों को मम्मट के आधार पर वर्गीकृत किया है।

अलंकार दोषों में (१) जाति न्यून (२) जाति अधिक (३) असंभव (४) भिन्न लिंग, (५) वचन अभ्रन्य, (६) असादृश्य (७) न्यून प्रमाण (८) अधिक प्रमाण भेद कवि ने किये हैं जो वास्तव में नये नहीं हैं। ये उपभेद और उपमान के रस-दोषों में इस प्रकार मिलते हैं— जाति न्यून और जाति अधिक सहचरि भिन्न में न्यून प्रमाण और अधिक प्रमाण लोक विरुद्ध में असम्भव और भिन्न लिंग लोक विरुद्ध में, अश्रव्य वचन और असादृश्य भी संस्कृत के प्रसिद्ध विरुद्ध के आकृति के भेदों में समाहित हैं।

संस्कृत साहित्य में वाक्यगत दोषों की संख्या २१ है। ग्वाल ने १८ भेद किये हैं। उपसम लुप्त, विसग लुप्त और विसंधि हिन्दी में नहीं होती। ग्वाल ने मम्मट के अनुसार शेष दोषों का वर्णन किया है। केवल कुछ नामों में ही अन्तर है।

अर्थगत दोषों का वर्णन भी काव्य प्रकाश सम्मत है केवल नामों का यत्रतत्र अन्तर है। संस्कृत के अप्रसिद्ध को प्रसिद्ध विरुद्ध लिखकर नौ उपभेद कर दिये हैं, जो वैज्ञानिक ही है।

५ शब्द शक्ति, रीति, गुण और वृत्ति शब्द शक्ति साहित्य शास्त्र का अत्यन्त महत्वपूर्ण और सूक्ष्म विषय है। हिन्दी के कतिपय आचार्यों ने ही इतनी गहराई तक जाने का साहस किया है, भले ही वे उसे स्पष्ट न कर पाये हों। ग्वाल ने 'साहित्यानन्द' के एकादश स्कन्ध में 'लक्षणा-व्यंजना' शीर्षक से शब्द शक्ति की गहराइयों में उतरने का प्रयत्न किया है। शब्द की परिभाषा करके उन्होंने पहले उसको ध्वन्यात्मक और वर्णात्मक भेदों में विभक्त किया है।[1] वर्णात्मक को फिर रूढ़, रूढ़योगिक और योगिक भेदों में बाँटा है।[2] शब्द की वाचक लाक्षणिक और व्यंजक तीन कोटियाँ रखकर लक्षणा के चार भेद किये हैं—(१) उपादान, (२) लक्षणलक्षणा, (३) सारोपा और (४) साध्यवसाना। इन चारों को पुन गौणी और शुद्धा दो दो भेदों में रख कर आठ भेद किये हैं।[3] गौणी के और भी दो भेद—(१) रूढ़ा और (२) प्रयोजनवती-किये गये हैं।[4] प्रयोजनवती लक्षणा दो प्रकार की है—(१) गूढ़ व्यंग्य और अगूढ़ व्यंग्य।[5] इस प्रकार ८ प्रकार की रूढ़ा और १६ प्रकार

साहित्यानन्द ११।२, २ वही, ११।४। ३ वही, ११।१४-१५,
वही ११।२२ ५ वही ११।२३।

की प्रयोजनवती हुई। प्रयोजनवती कही धम म और कही धर्मी में मानी गई है। इस प्रकार उसक ३२ भेद होते हैं। रुढा और प्रयोजनवती मिल कर ४० प्रकार की हुई। पद और वाक्यगत दो भेद इन ४० के और करके लक्षणा ८० प्रकार की गिनाई गई है।[1] कवि के मत मे लक्षणा के अस्सी भेद केवल दिखावा और कथन मात्र ही है।[2] चाहे कितने ही भेद कर दिये जायँ परन्तु जिनके उदाहरण बन सकें, वे ही ठीक हैं।[3]

व्यजना अनेक या एक वाचक मे जो व्यग्य प्रकट करे, वह व्यजना है। यह शाब्दी आर्थी वृत्ति वाली है। स्थूल रूप से यह दो प्रकार की है—(१) अभिधामूल और (२) लक्षणामूल। अभिधामूल व्यजना तेरह प्रकार की है-(१) सयोग, (२) वियोग, (३) साहचय, (४) विरोधा (५) अर्था, (६) प्रकरणा (७) चिन्हा, (८) शब्द, (९) समर्था, (१०) उचिता, (११) देश, (१२) काल और (१३) व्यक्तिगत।[4]

लक्षणा मूल व्यजना स्थूल रूप से गूढ और अगूढ दो प्रकार की है।[5] लक्षणा शब्द शक्ति का एक पृथक ही भेद है, तब व्यजना मे लक्षणा मूल भेद क्यो रखा गया। यहाँ यह तक उठता है कि जब कोई लक्षणा ही बिना व्यग के नही होती, तब फिर यहाँ पृथक व्यजना क्यो रखी गई है। कवि इसका उत्तर इस प्रकार देता है कि व्यजना म अभिधामूल व्यग्य और लक्षणा मूल दोनों ही बनते हैं, अत इनका वणन पृथक भी होना चाहिये ही।

आर्थी व्यजना कवि ने १० प्रकार के प्रभाव की बताई हैं—(१) वक्ता, (२) बोधव्य, (३) काकु वाक्य, (४) काकुवाक्य (वचन) (५) अन्य सन्निधि, (६) प्रस्तावन, (७) देशिक, (८) कालिक, (९) राज्य और (१०) चेष्टा।

ग्वाल ने शब्द शक्ति का वणन पर्याप्त गहराई म बैठ कर किया है। मम्मट के अनुसार उसके भेद और उनके लक्षण लक्ष्य शास्त्र-सम्मत है। लक्ष्यो मे विविधता, स्पष्टता और सुबोधता है। अन्य हिन्दी कवियो के उदाहरणों को भी अंगीकृत किया गया है। सक्षेप मे कवि ने अपने उद्देश्य म सफलता प्राप्त की है।

प्रचलित परम्परा मुक्त प्रणाली म ग्वाल ने रीति, गुण और वृत्तियो का प्राय मम्मट के आधार पर वणन किया है। गुणों को कवि ने काव्य पुरुष के गुण की सज्ञा दी है—माधुरज आदि गुन सनमानिये।[6] एक दूसरे स्थान

१ साहित्यानन्द ११।६१ ६८, २ वही ११।६०, ३ वही ११।५४,
४ वही ११।७२, ५ वही ११।१०२ ६ वही १२।४।

पर गुण को जीव (प्राणी) की सूरतादि माना है—सूरतादि ज्यो जीव म त्या गुण काव्य सु जान ।[1] गुण का य में मुख्य रस का उत्कष होता है—मुदय जु रस उत्कस को हेतु सरूपा होइ ।[2] पहले मम्मट के अनुसार तीन–माधुय और प्रसाद–गुणभेद किये गय हैं तदुपरा त प्राचीन आचार्यों क दश गुणा—श्लेष प्रसाद, समता, समाधि, माधुय, ओज, सौकुमाय, अथ यक्ति उदार का ति का भी सक्षिप्त वणन प्रस्तुत हुआ है । प्रमुख तीनो गुणो के सम्मिश्रण स छ गुणो को वणन ग्वाल ने किया है—(१) माधुय निष्ठ प्रसा (२) ओजनिष्ठ प्रसाद, (३) माधुय ओजनिष्ठ प्रसा , (४) शुद्ध माधुय, (५) शुद्ध आज और (६) शुद्ध प्रसाद ।

गौडी, पाचाली, वदर्भी तथा लाटी रीतियो और परपा उपनागरिका और कामला वृत्तियो का वर्णन चलता हुआ किया गया है । गौडी रीति की वत्ति परपा, वदर्भी की उप नागरिका पाचाली (गौडी वदर्भी सयुक्त) की सयुक्त वृत्ति (पम्पा उपनागरिका) और लाटी की कोमला वृत्ति कही गई है । आज गुण के वण गौडी रीति म, माधुय क वदर्भी म और प्रसाद क वण पाचाली मे हाते हैं । लाटी के कोमल वण प्रसाद गुणमय हाते हैं ।

कवि न इस वणन म न तो कोई विस्तार दिया है और न तकपूण विवचन । वणन सक्षिप्त और सामा य स्तर का है ।

६ का य निरूपण—ग्वाल के अनुसार काव्य मे श द और अथ का सु दर मेल, नियमिक वण विचार छ दोबद्धता और चमत्कार की प्रभूत मात्रा मे विद्यमानता का होना आवश्यक हैं ।

शब्द अथ सु दर का य उचार ।।साहित्यान द।।१२।३ ।

इस लक्षण म से जो विपयय हो, वही दोष कारण है ।[3] का य की परिभाषा करते समय ग्वाल जयदेव के बहुत समीप है ।

जयदेव की परिभाषा—निर्दोषा लक्षणवती सरीतिगुण भूषिता ।
सालकार रसानेक वत्तिर्वाक्का य नामभाक् ।।
—चद्रालोक १।७ ।

पद प्रा , वाक्य, वाक्याथ रसगता दोषा से शू य अक्षर सहतादि लक्षणा स युक्त पाचाली लाटी आदि रीतिया स भूषित, श दाथगत अलकारो से चमत्कृत तथा कौशिकी आदि शब्द वृत्तियों से सम्बद्ध वाक्य को ही जयदेव ने का य कहा है ।

---

१ वही, १४।२ । २ वही १४।२ मम्मट ने भी यही परिभाषा दी ह । काव्यप्रका सूत्र ८७ (कापी देखो) । ३ साहित्यान द १२।४ ।

ग्वाल ने शब्द और अर्थ की सुन्दर रचना, नियमित वर्ण और छन्दोबद्धता की पिंगल सम्मतता आदि लक्षण काव्य की निर्दोषिता की ओर ही इंगित करते हैं। 'बहुत चमत्कृत' पद अलंकारों की अनिवार्यता का द्योतक है। ग्वाल का निम्नांकित कवित्त जयदेव की काव्य-परिभाषा के कितना समीप है यह अवलोकनीय है।

हाव भाव वार्तनि सजुक्त .... कवित्त नये नये ॥ रसिकानन्द १।३९॥

ग्वाल ने काव्य पुरुष का स्वरूप इस प्रकार किया है—शब्दार्थ शरीर—शब्द अग्रभाग और अर्थ पृष्ठ भाग—व्यंग्य ध्वनि ही आत्मा, अतिशय व्यंग्य ध्वनि, कहीं व्यंग्य कहीं ध्वनि ही जीवन, अद्भुत उक्तियाँ ही वस्त्र और वेश माधुर्यादिगुण ही गुण, अलंकार ही भूषण रूप, अर्थ व्याधि व्रण, कफ आदि ही काव्य के दोष हैं।

काव्य के कारणों में ग्वाल ने जयदेव और मम्मट के सिद्धान्तों का समन्वय कर दिया है। जयदेव के अनुसार—'प्रतिभैव श्रुताभ्यास सहिता कविता प्रति हेतु'—और मम्मट के अनुसार—'शक्ति निपुणता लोके शास्त्र काव्याद्य वेक्षणात। काव्यज्ञ शिक्षयाभ्यास इति हेतुस्त-दुद्भव।'[1] और ग्वाल काव्य का कारण इस प्रकार लिखते हैं—

काव्य करन कारन .... कहू देव बरदाय ॥
—साहित्यानन्द १२।५ ६ ॥

देव वरदान ग्वाल की अपनी मौलिक सूझ है। काव्य शक्ति के अनुसार तीन प्रकार के कवि होते हैं—(१) देव वरदान से उत्तम, (२) शास्त्राभ्यास से मध्यम पंडित कवि और (३) अभ्यास से अपन अधम कवि।

काव्य के प्रयोजन में ग्वाल मम्मट के सिद्धान्त से प्रभावित है।[2] 'जगचातुरी' में व्यवहार', 'दुगति दुर' में शिवेतर भाव और रहै मुदित' में 'कान्तासम्मितयोपदेशयुजे' का भाव आ जाता है।

ग्वाल ने शास्त्र सम्मत काव्य के तीन ही भेद किये हैं—(१) उत्तम, (२) मध्यम और (३) अधम। जिसमें व्यंग्य या ध्वनि प्रधान हो वह उत्तम काव्य[3] जहाँ अप्रधान अचमत्कृत व्यंग्य हो[4], वह मध्यम काव्य और जिसमें शब्द चित्र हो या अर्थ का किंचित व्यंग्य हो[5], वह अधम काव्य है। इस प्रसंग

१ काव्य प्रकाश—१।३। (ब) काव्य प्रकाश १।२।
२ (अ) साहित्यानन्द, १२।१०।
३ साहित्यानन्द १२।१२।
४ वही, १३।२।
५ वही, १३।३९।

म कवि ने व्यंग्य और ध्वनि का विशद विवेचन प्रस्तुत करते हुए ध्वनि की परिभाषा इस प्रकार की है—

प्रथम अर्थ ते कुछ अरथ, ताते कछु अर्थ ।
यह ही अति सों व्यंग है यही धुनि सामर्थ ॥साहित्यानन्द १२।१७ ।

स्थूल रूप से यह ध्वनि दो प्रकार की है—(१) अविवक्षित वाच्य ध्वनि और (२) विवक्षित वाच्य ध्वनि । ध्वनि अविवक्षित वाच्य लक्षणा मूलक है, जो मुख्यार्थ में पाई जाती है । इसके दो उपभेद और है–(१) अर्थान्तर संक्रमित और (२) अत्यन्त तिरस्कृत । अर्थान्तर संक्रमित ध्वनि का उपादान लक्षणा से सोजन्य है और अत्यन्त तिरस्कृत ध्वनि का जन्म लक्षण लक्षणा से होता है । विवक्षित वाच्य ध्वनि का जन्म अभिधामूल लक्षणा से होता है । यह भी दो प्रकार की कही गई है–(१) असंलक्ष्य क्रम और (२) संलक्ष्यक्रम ध्वनि । असंलक्ष्यक्रम ध्वनि रसभाव ध्वनि में होती है । यह तीन प्रकार की है–(१) शब्द शक्ति जन्य, (२) अर्थ शक्ति जन्य और (३) उभयार्थ शक्ति जन्य । शब्द शक्ति से वस्तु और अलंकार ध्वनि बनती है । अर्थशक्ति के तीन स्थूल भेद हैं । (१) स्वतः सम्भवी, (२) कवि प्रौढोक्ति और (३) कवि निबद्ध प्रौढोक्ति । इन तीनों के फिर चार चार अन्तर्गत भेद हैं–(१) वस्तु से वस्तु, (२) वस्तु से अलंकार, (३) अलंकार से वस्तु और (४) अलंकार से अलंकार । इस प्रकार असंलक्ष्यक्रम ध्वनि के १२ भेद कहे गये हैं । संलक्ष्य क्रम ध्वनि के १५ भेद वर्णित किये हैं । विद्वानों ने ध्वनि भेद की गिनती १०४५५[१] तक कराई है । ग्वाल ने इस गणना को कथन मात्र ही कहा है । और १५३ भेदों को ही मान्यता दी है । इन्होंने प्रत्येक रस में १७-१७ ध्वनि भेदों को स्थान दिया है ।[२]

मध्य काव्य के गुणीभूत व्यंग्य को कवि ने आठ प्रकार का लिखा है— (१) अगूढ़, (२) इतरांग, (३) वाच्य सिद्ध्यंग (४) अस्फुट (५) संदिग्ध, (६) तुल्य प्रधान, (७) काकु, (८) असुन्दर । इनमें इतरांग, असुन्दर संदिग्ध वाच्य सिद्ध्यंग, काकु और अस्फुट छः ही ठीक बताये गये हैं । उत्तम काव्य में १७ भेद और मध्यम में छः भेद ही पाये जाते हैं । ग्वाल ने तुल्य प्रधान और अगूढ़ को उत्तम काव्य के सत्रह भेदों के ही भीतर अन्तर्भूत माना है । पूर्व पंडितों ने मध्यम काव्य में आठ भेद माने हैं । ग्वाल ने उनसे सहमत न होकर ६ ही भेदों की उसमें विद्यमानता स्वीकार की है ।[३]

---

१ देखिये साहित्यानन्द स्कन्ध १२ छ० सं० ६९ से ८१ तक ।
२ वही १२।८५ ८९ । ३ वही १३।१३ ।

अधम काय मे चित्रभेद के अतगत ग्वाल ने इनका वणन लक्षण, लक्ष्यो और स्वरूपो के साथ किया है—अनुप्रासनिष्ठ, यमकनिष्ठ बहिर्लापिका, आद्याक्षरी मध्याक्षरी, अत्याक्षरी, अतर्लापिका, मुक्तावरणग्राही जलभिन्नाय श्लेषोत्तर, गतागत बधरचना—अश्वगति, गोमूत्रिका, पदगुप्त कपाटबध, हारबध, कमलबध, अष्टदल कमलबध, त्रिपदी चक्रबध, धनुषबध, सर्वतोभद्र, छत्रबध, चौकीबध, वृक्षबध, समुद्रबध, अधर रहित, द्वाक्षरी एकाक्षरी।

काव्य निरूपण म ग्वाल ने अपने विस्तृत गहन अध्ययन का परिचय दिया है। विविध कवियो द्वारा किये गये ध्वनि आदि के भेदो मे से औचित्य के अनुसार भेदो को चुना है। अय मतो का खडन करते हुए कवि ने अपनी मायतायें शास्त्र सम्मत विधि से स्थापित की है। लक्षण स्पष्ट है। उदाहरण कवि के अपने हैं और लक्षणो क अनुकूल बन पडे हैं। विवेचन विशद हुआ है।

(आ) नाराशसा तथा राजवभव वणन

ग्वाल ने अपने जीवन के लगभग ४५ वष राज्याश्रय म ही व्यतीत किये। आश्रयदाताओ की प्रशस्ति मे उन्होंने पर्याप्त लिखा है। यही नही कतिपय सरदारों की भी जिन्होने उन पर अपना वरद हस्त रखा, कवि ने स्तुतियां की हैं। प्रथम कोटि मे लाहौर के राज्याधिपति महाराजा रणजीतसिंह और महाराजा शेरसिंह, नाभानरेश जसवतसिंह और भरपूरसिंह, आते हैं। दूसरी कोटि म अमृतसर के सरदार लहनासिंह लाहौर दरबार के मत्री राजा ध्यानसिंह, राजा हीरासिंह जल्हा पडित और नाभा के गुरुसहाय पडित गणनीय हैं। कवि द्वारा प्रशसितों की एक विशिष्ट श्रेणी सिख धम के दस गुरुओ की है, ये कवि के आश्रयदाता तो नहीं रहे परतु जो ऐतिहासिक और धार्मिक जगत के महापुरुष थे। एक चौथी श्रेणी ऐसे व्यक्तियो की है जिनका गुण कीतन कवि ने आत्मिक भक्तिभाव में लीन होकर किया है। कवि के पूवज, गुरु और कतिपय मित्र ऐसे ही कुछ पात्र हैं।

ग्वाल की प्रशस्तियां रसिकानन्द, विजय विनोद, इश्कलहर दरियाव आदि के आरम्भ म क्रमबद्ध रूप म और ग्रथात मे आशीर्वादात्मक रूप म लिखी गई हैं। यत्र उदाहरणो मे भी आश्रयदाता की प्रशस्तियां मिलती है। कवि दपण प्रभृति ग्रथो की पुष्पिका के रूप म भी कुछ प्रशस्तियाँ विद्यमान हैं। ग्वाल ने अपने गुरु और मित्रो की स्तुतियाँ ग्रथो के वर्ण्य विषयो के बीच बीच मे ही अधिक की है। गुरु और पिता को कवि ने प्राय मगलाचरणो मे भी स्मरण किया है।

नर गुण गायन म कवि ने सयम से काम लिया है, इसका कारण यह रहा है कि रणजीतसिंह जसवतसिंह भरपूरसिंह और शेरसिंह प्रभृति सभी नरेश इतिहास और साहित्य मे शूरवीर, यशस्वी, गुणी गुणग्राही और प्रभूत वभव के स्वामी प्रसिद्ध हैं। जसव तसिह भरपूरसिंह दोनो अच्छी कोटि के कवि भी थे। इनके दरबारो म दजनो हि दी कवि रहते थे। जसव तसिह के काय ग्रथ भी उपलब्ध होते हैं। सहनासिंह प्रसिद्ध कवि साहित्यकार और ज्योतिषशास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे। जल्हा पडित प्रसिद्ध विद्वान और ज्योतिषी थे। कुछ स्थलो को छोडकर जहा कवि की दृष्टि अतिरंजित रही है स्तुत्य व्यक्तियो के चरित्रो म अमानवीय गुणो का आरोप कवि ने प्राय नही किया है। यो काव्य तो काय ही है इतिहास नही। राजाओ की प्रशसा मे उनके वयक्तिक गुण कथन के अतिरिक्त राज्य वैभव के वणन भी हैं। गुरुओ म कवि को दवोचित चरित्र की झाकी दिखाई दी है। इतर नर प्रशस्तियो म वयक्तिक गुणो का ही कथन अधिक मिलता है। उपयु क्त सामाय विशेषताओ को ही दृष्टिगत रखकर हम ग्वाल के नाराशसा काय की कुछ झाकियाँ निम्नाकित पक्तियों म प्रस्तुत कर रहे हैं।

रणजीत सिंह एक कुशल शूरवीर योद्धा, विजेता, प्रशासक, सगठन कर्त्ता, सेना पति बुद्धिमान और विचक्षण राजनीतिज्ञ के रूप मे महाराजा रण जीतसिंह की प्रशसा भारतीय और विदेशी इतिहासकारो ने एक स्वर से की है। ग्वाल न इन्ही गुणो को काव्य का विषय बनाया है।

रणजीतसिंह स्वय भगवान क अश के रूप म प्रकट हुए हैं। वे वेद, गो, विप्र, तुलसी के रक्षक, तेजवान, ज्ञानवान, बुद्धिमान, दानी और शूरवीर हैं।[1] आयु क बढने के साथ ही साथ उनका प्रताप बढा। महासिंह के इस सुपुत्र की यश की खटाई स अनेक राजाओ के राज्य फटने लगे।[2] काबुल ते कई बेर कतल करैया आय[3] दिल्ली स कई बार 'चकत्ता[4] कत्ता[5] बाध बाध कर आये परन्तु व किसी से सर' न हुए। यही नही—

ठाकुरी न काहू की रहन दीनी परबत मे बाइस हू धारते कराई नित चाकरी।[6]

उन्होंने समस्त पजाबी और पहाडी रियासतें तो जीती हीं, अटक, पशावर, काश्मीर, मनकेरा और भारी मुलतान तक डगमगाने लगे।[7] शत्रुओ की नारियाँ महाराजा के नाम से आतंकित हैं। वह कहती हैं—

---

१ विजय विनोद–८। २ वही, ९। ३ वही १०।
४ मुगल। ५ हथियार विशेष। ६ वही, १०। ७ वही, ११।

शेरन पै जाने नमशेर नजर उतालियाँ ॥विजय विनोद १४॥

महाराजा की अधीनता स्वीकार करने के उपलक्ष मे देश देश के राजा भेंट भेजने लगे—

काबुली कंधारी सेव नजर दीनहु वचे ॥वही १६॥

महाराज के ऐश्वर्य का प्रभाव ही ऐसा है कि—

सहज सभा मे महाराज शास सच्च है ॥वही १७॥

प्रशासन वर्णन—

चोर धाड धीन ईरान की अरजी ॥वही १८॥

सेना वर्णन—

लने[1] तोपखाने की तडिता तडाके सों ॥वही १९ २०॥

तलवार—

मडन मही के महाराज कटाकी करतल है ।[2]

दान—

कयक हजारन मना रोमरोम छाई है ॥विजय विनोद ६४॥

शेरसिंह प्रशस्ति रणजीत सिंह की मृत्युपरान्त उनके पुत्र खडग सिंह राजा हुए तत्पश्चात् उनके तीसरे पुत्र शेरसिंह। शेरसिंह शूरवीर, दानवान और बुद्धिमान थे।

जसे बुद्धि सागर आनत अनेक अग ॥वही ३५२॥

सेना—

फौजें महाराज शेर तब तडवयी करें ।।[3]

दान—

उद्दत प्रतापी महाराज लपेटि मोहि लीनो है ।[4]

शूरवीरता—

आदि ही ते श्री गाढि गहरानी है ॥विजय विनोद २३०॥

ध्यानसिंह प्रशस्ति राजा ध्यानसिंह रणजीत सिंह के राज्यकाल से लेकर शेरसिंह तक लाहौर राज्य के प्रधान मंत्री रहे। ग्वाल चिरकाल तक इनके कृपापात्र बने रहे। ये एक कुशल राजनीतिज्ञ, प्रशासक और बुद्धिमान सेनापति भी थे। तत्कालीन लाहौर की कूटनीति के ये सचालक रहे थ। ग्वाल ने इनकी प्रशसा किसी स्वतत्र महाराजा से कम नही की।

लोकप्रियता—

जसो जिस लायक है लागै सब नीको है ॥वही ३५॥

---

१ अंग्रेजी लाइन (LINE) का अपभ्रंश रूप बहुवचन २ ग्वाल कवि—प्रभुदयाल मीतल ३ वही पृष्ठ २१ ४ वही पृष्ठ २२ पृष्ठ १९।

सुप्रबंध—

चित्त ही ह चोर एसौ बन्दोबस्त है । वही ३८॥

स्वामिभक्ति—महाराज शेरसिंह के प्रति ध्यानसिंह ने आजीवन निम्नांकित प्रतिज्ञा को निभाया—

राजा ध्यान सिंघ जू कही जा जवान म ॥वही १५०॥

चरित्र—

सागर सगर न्याव नागर जू की छाई है ॥वही २५१॥

दान—

श्री बजीर महाराज सुभ पान सों ॥वही ११७॥

×

धन्य धन्य श्री ध्यानसिंह रन रूरो वुधिवन्त । वही २५१॥

राजा हीरासिंह प्रशस्ति ध्यान सिंह की मृत्यूपरान्त राजा हीरासिंह लाहौर के प्रधान मन्त्री हुए। ग्वाल बराबर उनके ही कृपा पात्र बने रहे। हीरासिंह अपने पिता की भांति ही योग्य और कुशल थे।

युद्धवीर—

अग करिब कों महाराजे तडप तडडात है ।।वही ३८८॥

×

चढ्यो एक हल्ल हिंदू पति पान फेरा सो ॥वही ३८६।

तलवार—

व्याली सी कहों तो ताको अजगरी है ॥वही ४७०॥

आशीर्वाद—

तज रहो रवि सो उमराज करिवौ करो ॥४८६॥

दीवान दीनानाथ प्रशस्ति ये लाहौर के राजकीय कार्यालय के उच्चतम अधिकारी ग्वाल के प्रशसक और कृपालु थे। ग्वाल ने इनकी प्रशसा म पर्याप्त लिखा है। यहाँ केवल एक कवित्त ही दिया जाता है—

इलम कमाल हाल दीवान दीनानाथ हैं ॥वही ३७०॥

जल्हा पण्डित प्रशस्ति ये भी लाहौर दरबार म एक उच्च पदस्थ कर्मचारी थे। ग्वाल के ये अभिन्न हृदय थे। कूटनीति और ज्योतिष के ये अच्छे ज्ञाता बताये जाते हैं—

कुल अपने में भानु जल्हा महाराज भयो, सरद सुधाकर सों चित्र चकोरन को।

×

ग्वाल कवि कहैं मत्व उछाहो को ॥वही ४८० ४८१॥

जसवन्तसिंह प्रशस्ति ग्वाल नाभा दरबार म पर्याप्त समय तक रहे। इन्हाने जसवन्तसिंह, भरपूरसिंह और भगवानसिंह तीनो राजाओ की कृपा प्राप्त की। ये तीनो ही वडे गुणग्राही थे। ग्वाल को यहाँ से प्रचुर धन और यश मिला। ग्वाल ने इस दरबार की सर्वाधिक प्रशसा की है।

नाभा-नगर—

चारौं हू बरन निज भूपति प्रचड अति ॥रसिकानन्द ९।४॥

गयन्द—

सोभित सवारे रग अखड श्री नाभेस के ॥वही ९।२०॥

तुरग—

सुघर समाजी साज राजी बरबाजी लेत ॥वही ९।२१॥

राजसभा—

सोभित सभा है साज जाहर जगत मे ॥वही ९।२२॥

कीर्ति—

तारा सौ सुजस पारावार पायो है ॥वही ९।१७॥

पडितेश गुरुसहाय प्रशस्ति ये नाभा दरबार के सभासद शिरोमणि, शास्त्रो के अच्छे ज्ञाता कहे जाते हैं। ग्वाल ने इनकी स्तुतियाँ लिखी हैं। केवल एक कवित्त और एक दोहा प्रस्तुत किया जाता है—

सभा सिरोमणि देखिये श्रीगुरू तिन्हें सहाय।
गुरु सहाय महाराज तहू, राजत रहत सदाय ॥वही ९।२४॥

तेज रवि सो है रावरी धरा प है ॥वही ९।२६॥

भरपूरसिंह प्रशस्ति

दुग—

बहुत बुलन्द है किलो मैं लियो निहार ॥इश्कलहर भू० १७॥

महाराज भरपूरसिंह ताके मालव मुल्क।
खुली खूबियाँ खलक मे सबसो खासे खुल्क ॥वही २०॥

कीर्ति—

दया के करैया बाद साध्या जमाने के ॥वही १४ प्रशस्ति॥

आशीवचन—

एहो तेजधारी भरपूरसिंह उमरदराज होय ॥वही १६॥

गुरु गोविन्द सिंह प्रशस्ति:

वेद व्यास वाक्य ते करालताई कटती ॥गुरू पचासा ५०॥

मुरलीधर (कवि के पितामह) प्रशस्ति

श्री मुरलीधर राजत कविता करी अनूप ॥रसिकानन्द ९।४१ ६०॥

उपर्युक्त विवरण से ग्वाल की नाराशसा प्रवृत्ति का एक परिचय मिल जाता है। तत्कालीन अन्य विशिष्ट पुरुषो की प्रशसा मे भी ग्वाल ने काव्य पक्तियाँ लिखी हैं। ऐसे छन्दो की सख्या प्राय ३०० है, जबकि अब तक के प्राप्त इनके साहित्य म लगभग १० सहस्र छन्द हैं। इस अनुपात म इनका नर प्रशस्ति विषयक काव्य अत्यल्प ही माना जायगा।

(इ) भक्ति वैराग्य तथा नीति वर्णन

शृङ्गारिक वर्णनो प्रशस्तियो आदि को काव्य का विषय बनाने वाले ग्वाल को भक्त कवि कहना कदापि समीचीन नहीं हो सकता। किशोरावस्था से ही नौन तेल लकडी' की चिन्ता मे घर से निकल कर कवि आजन्म ऐसे वातावरण म रहा, जहाँ भक्ति साधना का प्रश्न ही नही उठता था। परन्तु उसने भक्ति पर पर्याप्त लिखा है, साथ ही साथ उसके वैराग्य और नीति विषयक छन्द भी कम नही मिलते। ग्वाल निधनता की गोद म धर्मस्थली मथुरा वृन्दावन के वातावरण म पले थे। अत सस्कारवश भक्ति कदाचित उनकी घुट्टी म मिली थी। दूसरे रीतिकवियों की भाति एक दीर्घ अवधि तक शृङ्गारिक कविता और नाराशसा करने वाले इस कवि को मन की प्रतिक्रिया ने भी भक्ति और वैराग्य की ओर प्रेरित किया होगा। तीसरे ग्वाल का पारिवारिक जीवन एक पुत्र की मृत्यु और दूसरे के पथभ्रष्ट होने के कारण अति क्लेशग्रस्त भी रहा था। फलत इस कारण भी वह इस दिशा म रचना करने को उन्मुख हुए होगे। जो भी हो, श्रीकृष्ण जू को नखसिख, यमुना लहरी, कृष्णाष्टक राधाष्टक गोपी पच्चीसी, कुन्जाष्टक गणेशाष्टक, ज्वालाष्टक, निम्बार्क स्वाम्यष्टक तथा विविध हिन्दू देवी देवताओं की उपासना के अनेक पुस्तकबद्ध और प्रकीर्ण छन्द ग्वाल की स्वतन्त्र भक्ति और वैराग्य प्रवृत्ति के ठोस साक्ष्य हैं। इनम निश्चय ही भक्तिकालीन कवियो की सी भाव-तीव्रता और गहराई देखने को नही मिलती। अधिकतर वर्णनात्मकता की ही इनम व्याप्ति है। कवि की प्रतिभा भक्ति वर्णनों म भी षटऋतु वर्णन का समाहार करती चली है। यमुनालहरी इस का उदाहरण है। रीतिकालीन अलकारों और चमत्कृत उक्तियों ने भक्ति को प्राय प्रतिपादित ही नही होने दिया है। यही बात इस युग के अन्यान्य रीतिकवियों के विषय म भी उतनी ही सटीक उतरती है। अत ग्वाल अकेले इसके दोषी नही।

ग्वाल कवि और भक्ति सम्प्रदाय—ग्वाल के मगलाचरणों म राधा की स्तुतियाँ अखण्ड रूप म मिलती हैं। राधोपरान्त कृष्ण इनके दूसरे उपास्य

रहे हैं। राधा-कृष्ण समस्त रीति कवियों के ही उपास्य रहे हैं। इस युग के काव्य के व नायिका-नायक ही बने हैं। ग्वाल भी इसके अपवाद नहीं हो सकते। निम्बार्क स्वाम्यष्टक' के मिल जाने से इस धारणा को बल मिलता है कि वह निम्बार्क मतावलम्बी थे। निम्बार्क मत में राधा-कृष्ण की युगल उपासना का विधान है, परन्तु राधोपासना का प्राधान्य है। इस दृष्टि से ग्वाल को ऐसा माना जा सकता है। उधर ग्वाल ने अपने को जगदम्बा का भी भक्तघोषित किया है। कवि द्वारा निर्मित 'गवरि संभु' का मन्दिर इसकी पुष्टि भी करता है। इससे निम्बार्क मत वाली बात निर्बल पड़ती है। ग्वाल ने गणेश, नृसिंह, राम, गंगा, काली तारा, विद्या, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगुलामुखी मातंगी, कमला, महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती, ज्वाला, गणेश, शिव, हनुमान, भैरव स्वामिकार्तिकेय, सूर्य, शीतला, ब्रह्मा इन्द्र त्रिवेणी आदि देवी देवताओं की स्तुति में भी छन्द लिखे हैं। कोई भी कट्टर मतानुयायी इष्टेतर देव वन्दना इतनी मात्रा में नहीं करता फिर ग्वाल ने ऐसा क्यों किया। इस शंका का समाधान हम इनके जीवन विषयक प्रसंग में कर चुके हैं। यहाँ तो इतना ही पर्याप्त है कि ग्वाल कवि थे और 'कवय किं कि न कथयन्ति' वाली उक्ति इन पर ठीक घटित होती है। जैसा कि जीवनी में कहा जा चुका है ये आरम्भ में जगदम्बा के उपासक रहे थे, परन्तु भक्ति का दृष्टिकोण उनका उदार था, कट्टर नहीं। शिव-पार्वती का मन्दिर बनवाकर उन्होंने अपनी भक्ति-आराधना विषयक शंका का समाधान कर दिया है।

यहाँ सभी देवी देवताओं की स्तुति में एक एक भी छन्द प्रस्तुत करना विषय विस्तार ही होगा। अतः इनके प्रमुख ग्रन्थों से भक्ति विषयक कतिपय कवित्त ही नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

राधा—

नागन की नरन की ... राधा महारानी है ॥ ८ राधाष्टक ॥

कृष्ण—

जरें के जलूसन में ... नजर बुलंद है ॥ २ कृष्णाष्टक ॥

राम—

धीरता सखेंगे रघुवीर ... रामचंद चंद हो ॥ ८ रामाष्टक ॥

त्रिवेणी—

वारिद हरनी सुभ ... त्रिवेनी है ॥

—२१वेंबी देवताओं के कवित्त।

(उ) काव्यानुवाद

हिन्दीतर प्रान्तीय भाषाओं के ग्रन्थों के अनुवाद करने की प्रवृत्ति रीतिकालीन में नहीं रही। ग्वाल ने मीर हसन देहलवी की उर्दू की प्रसिद्ध मसनवी 'सहर उल बयान' का हिन्दी में सफल काव्यानुवाद करके हिन्दी क्षेत्र में एक नवीन प्रवृत्ति का सूत्रपात किया। आगे चलकर भारतेन्दुकाल में यह अनुवाद प्रवृत्ति पर्याप्त सम्मानित हुई। ग्वाल के अनुवाद 'इश्क सहर दरियाव' का परिचय इसी प्रबन्ध के छठे अध्याय में दिया जा चुका है। 'रीतिबद्ध काव्य' और 'रीति मुक्त' काव्य की परम्परा पर्याप्त प्राचीन है, जिसके निर्वाहार्थ ग्वाल ने रचनायें कीं। हम्मीरहठ, श्रीकृष्ण जू को नखशिख आदि रीतिमुक्त और नेह निवाह रीतिमुक्त रचना है।

सारांश—ग्वाल ने आचार्यत्व की परम्परा में विविधांग निरूपक लक्षण ग्रन्थों की रचना करके रीतिकालीन प्रवृत्ति का निर्वाह किया, जिसमें उन्हें पर्याप्त सफलता मिली। रीति की इतर समस्त प्रवृत्तियों का भी उनमें पूर्ण आग्रह मिलता है। इतिहास प्रसिद्ध वीर-काव्य और उर्दू का काव्यानुवाद प्रस्तुत करके उन्होंने परम्परा को नकारा और नई दिशा की ओर संकेत किया। इन नये आयामों की प्रतिष्ठापना के लिये ग्वाल श्रेय के अधिकारी रहेंगे।

अष्टम अध्याय

ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

८ | ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

(अ) ग्वाल की काव्य कला

कवि की कला उस के समग्र आत्म रूप की अभिव्यक्ति है। उसकी आत्मानुभूति अभिव्यंजना के माध्यम स रग, रेखा शब्द आदि मे निबद्ध होकर जो सहज रूप धारण करतो है वही उसकी कला है। अनुभूति को आकार देने का सबसे सहज माध्यम है चित्र। इस अनुभूति को व्यक्त करने के लिये कलाकार या तो अनुभोक्ता की मूर्त चेष्टाओ का अकन करता है या फिर अनुभोक्ता की वासना मे रगे हुए अनुभूति के विषय अथवा पात्र के रूप का चित्रण।[1] ग्वाल की अनुभूति प्रधानत एकात शृगार है अत उनके काव्य म शृगार के आलम्बन और आश्रय की चेष्टाओ के रूपचित्र अकित किये गये हैं। काव्य म आत्माभिव्यक्ति का माध्यम भाषा है और उसका स्वरूप छन्दोबद्ध। अत वस्तु विषय, भाषा और छन्द योजनाकला के इन तीनो अगो के आधार पर ही ग्वाल की काव्य कला का अध्ययन प्रस्तुत किया जायगा।

वस्तु विषय—

विभाव और अनुभाव का वणन ही कला का प्रमुख वस्तु विषय है। काव्य के अतगत आचार्यों ने भावा की अनिवाय सत्ता को सवमत स स्वीकारा है। विभाव, अनुभाव और व्यभिचारिया के प्रसग म बाह्य विषयो तथा उनकी शारीरिक और मानसिक क्रियाओ के वणन अलौकिक आनन्द की सृष्टि करते हैं। इन चित्रो की रेखाए और रग जितने स्पष्ट होग, अनुभूति की अभिव्यक्ति उतनी ही सजीव होगी। ग्वाल ने रीति परम्परा क अनुरोध स्वरूप नायक नायिकाओ के रूपचित्र और चेष्टाओं के शब्द चित्र अकित किये है। इनके अतगत अनेक वस्तु चित्र हैं जो भाव व्यजना को तीव्र करने के लिये अकित किये गये हैं। सर्व प्रथम हम एक नायिका का स्थिर-स्थूल रूप चित्र नीचे प्रस्तुत करते है—

लाल लाल पांयन बठी कुरसी प है ॥रसरग ३।७५॥

लाल लाल परो म जरकसी कोसें, घेरदार पाइचे कीमखाप का इजार

१ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र, पृ० १८१।

बन्द, पीली कुर्ती, ऊचे उरोजा पर तग चोली, रगीन चूनरी, आरसी पर लगी आँखें ये सब मिल कर नायिका का एक स्थूल चित्र निर्माण करते है। कुर्मी पर बठी हुई नायिका की तन द्युति सोने की सीढी, विजली और चन्द्रमा के खण्डा की उपमाओ से सफलतापूर्वक स्पष्ट की गई है। इस स्थिर चित्र म एक समान क्षीण रेखाआ और रगो का प्रयोग दिखता है।

एक दूमरे रूप चित्र मे अकित एक परकीयागामी नायक को अपने शरीर का भी होश नही है। गले म जनानी माला है, भाल पर महावर के चिह्न हैं। नायक की निलज्जता और ढीठता पर नायिका दपण मे उसका मुख दिखा रही है—

माल पे जनानी बदन निहारी लौ ॥वही ४।४१॥

यहाँ माथे पर लगा महावर और सिन्दूर दोनो सूक्ष्म होते हुए भी पर्याप्त स्पष्ट हैं। नायक का मौन और बेसुध होना उमके शरीर के शथिल्य को सजीव रूप मे प्रस्तुत कर रहा है। नायिका द्वारा दपण का दिखाना उमके अलस रूप को और भी स्पष्ट कर देता है।

नायिका के सूक्ष्म शृगार का स्थिर रूपचित्र कवि ने निम्न कवित्त म इस प्रकार निर्माण किया है—

कसी रेख मिसी की सरस करि देत है ॥रसरग ६।२६॥

दातो मे पृथक पृथक दिखने वाली मिस्सी की पतली रेखायें ऊपर से पान की शोभा गजमुक्ताओ का गुनीबन्द चन्द्रहार की चमक, कसी कचुकी म कुचो का औ नत्य चूनर की चुनटें बडा स्वच्छता के साथ नायिका के अव यवो के रगो और सूक्ष्म रेखाओ को उभार रहे हैं। यहाँ एक समान रेखाआ और रगों की योजना एक स्वच्छ सजीव चित्र बनाने म समथ हुई है।

ऊपर के उदाहरणा म क्षीण रखायें ही प्रयुक्त हैं। अब नीचे कुछ ऐस छन्द लिये जाते हैं जिनम क्षीण रेखाआ के अतिरिक्त व्यजना की गहराई भी पाई जाती है एक छन्द देखिये—

आई यह पाती प्रान पूछि न सकत है ॥वही ४।९६॥

मुग्धा नायिका को सखी उसके प्राण प्यारे का पत्र लाकर देती है। कहती है— यह तुम्हारे प्रियतम का पत्र है इस लो छाती म लगाओ मैं इसे पढवा लाई हू। वह सुखी और हर्षित है और अब शीघ्र ही आकर मिलेगा, इसम कोई अवरोध नही। पत्र का समाचार सुनकर कमल नयनी हर्षोत्फुल्ल हो उठी। दृष्टि नीची करली और तिरछी चितवन स दखन लगी। नायिका

सखी से पूछना चाहती है कि नायक किस तिथि और किस दिन चला है, परन्तु पूछ नहीं सकी। समाचार सुनने से लेकर हर्षोत्फुल्ल होने तक की नायिका की मनोगत क्रियाएँ कवि ने एक समान सूक्ष्म रेखाओं द्वारा चित्रित की हैं। तदन तर 'नजर निचोही करि तिरछी तकति है' पद द्वारा व्यंजना को तीव्र किया गया है। 'ऐसे चहै पूछयो परि पूछि न सकत है' द्वारा नायिका की पीड़ा की तीव्रता को और भी तीव्रतर अंकित किया गया है। इसी प्रकार—

सीत के सदन आगि .... बधाई कहती गई ॥वही ४।९८॥

परकीया नायिका नायक के घर आग लेने गई है। उसके हृदय मे भी विरहाग्नि धधक रही है। उसी समय नायक का पत्र आया। यहाँ तक सीधी, सूक्ष्म और एक समान रेखाओं द्वारा चित्रांकन हुआ है। 'पीतम पठाई पेखि मौन गहती गई' पद मे नायिका ने मौन द्वारा बरबस अपने मनोगत हर्ष को दबा लिया है। घरवालो (नायक की पत्नी, मा आदि) ने पत्र को पढ़कर यह निश्चय ही जान लिया कि यह बात (नायक का आगमन) सच है। कवि ने यहा भी 'आवत है स्याम यह सुनि सहती गई' कह कर एक बार पुनः नायिका द्वारा उसके मनोवेगो को प्रच्छन्न और दमित रखने दिया है। 'यही नहीं पी गई खुशी को' पद द्वारा व्यंजना को और भी तीव्रता प्रदान कर दी है, क्योंकि नायिका का अन्तर्मन नायक के आगमन की सूचना से हर्ष मे निश्चय ही बल्लियों उछल रहा है—'जी गई हिये मे वह।' परन्तु बाह्यतः उसने अपने एकेपन को स्थिर करके घरवालो से 'बधाई कह ही तो दी और चलती बनी। इसमे 'बधाई' शब्द तीव्रतम भाव-व्यंजना का द्योतक है। इस प्रकार यह चित्र पूर्ण मनोवैज्ञानिक बन पड़ा है विचारणीय है कि वह अपने साथ हृदय मे विरहाग्नि लाई थी और उधर आग भी लेने आई थी। नायक के आगमन की शुभ सूचना से वह दोनों ही प्रकार की आगों को भूल गई। हर्ष लेकर लौटी। कवि अनेकत्र ऐसे भावो के व्यंजक सुन्दर रूपचित्र अंकित करने मे सफल रहा है।

अन्यत्र द्वारपाल ने नायक के आगमन का सन्देश दिया ही था कि इतने मे ही वह द्वार पर आ गया और मित्रों से मिलने मे इतना व्यस्त हुआ कि उसका चित्त ही नहीं करता कि घर मे घुसे और नायिका से चार आखें हों। नायिका विवश घर के भीतर दौड़ गई और नायक द्वारा परदेश से लाये पदार्थों को देखने लगी। वहाँ उसे बड़ी आयु की सखियाँ भी विद्यमान हैं, अतः

एक एक वस्तु को उनसे छिप छिपकर क्षण क्षण छाती से लगाती है और तृप्त होती है। देखिये—

पौरि प कौ पहरू छिन छिन मे छकत ह ॥वही ४।१०२॥

इसम भीतर का भजे' और छिपि कें छवाइ छवाइ छाती' य दो पद विशेषत द्रष्टव्य हैं। द्वार पर नायक का मित्रा से मिलन स ही अवकाश नही मिल पा रहा। उधर वह भेंट करने को अत्यधिक अधीर हो रही है। स्वाभाविक ही है कि तब तक वह भाग कर भीतर पहुची और नायक द्वारा लाई गई वस्तुओ को ही छाती स भेटने लगी और वह भी सखियो से छिपकर कि वे कही उसकी मिलनोत्कण्ठा को दख न लें। यहा नायक को द्वार पर दखकर मिलनोत्कण्ठा म तीव्रता आई परन्तु नायक को देर करते देखकर उसके औत्सुक्यातिरेक ने भीतर को दौड लगाई। वस्तुओ को हृदय से लगाने म नायिका को नायक से भेंटने का ही आनन्द प्राप्त हुआ। यह चित्र भी पर्याप्त मनोवैज्ञानिक और सहज बन पड़ा है।

कवि ने कही कही भावो की तीव्रता को अभिव्यजना के लिये मानवेतर उपादानो के धर्म साहश्य की सहायता लेकर चित्रो म सजीवता उत्पन्न की है। निम्नाकित दो एक उदाहरण इसी कोटि के हैं—

औचकाय मोहन बिसेस मछरी लौं तरफराइ ॥वही ४।१०३॥

उक्त छन्द म नायिका का कबूतरी लौं' फडफडाना और 'मछरी लौ' तडपना उसके अधीरतातिरेक और चापल्य के तीव्र व्यजक हैं। प्रिय के आगमन पर भी प्रिया की उस स निकटतम पाणिग्रहण म तड़प कितनी सजीव और स्पष्ट है, इसे चित्रित करने मे कवि असफल नही रहा है। एक ऐसे ही अन्य सुअवसर पर नायिका प्रिय दर्शन को गमनोद्यत है परन्तु उसकी सास और पडोसिनें पास म विद्यमान हैं, अत 'सरकना चाहते हुए भी वह विवश होकर रह गई है। प्रिय को देखन की उसकी लालसा और भी उद्दाम हो जाती है, परन्तु जाल म फसी हुई हिरनी के सदृश तडपते रहने के अतिरिक्त उसके पास और चारा ही क्या है—

सहज सुभाइ कहीं तकन प्रान प्यारे कौं ॥वही ४।१०४॥

सहज स्वभाव स आगन म आकर किसी का प्रियागमन का स देश सुनाना यशोदा के द्वार पर ग्वालो का नगाडे बजाना क्रियायें अपने म बडी स्पष्ट हैं। गुरुजनों की भीड म स धीरे स खिसकने क लिये 'सरकन चाहे' पद का प्रयोग अत्यन्त सटीक हुआ है। जाल में फसी हिरनी की फडफडाहट और

तडपन के सादृश्य के माध्यम से कवि ने नायिका के चापल्य को सजीवता प्रदान की है जो सफल बन पडी है।

गतिशील चेष्टाओ द्वारा गतिमय चित्रो का निर्माण भी कवि ने कम कुशलता के साथ नही किया। ऐसे चित्र नितात मनोवैज्ञानिक बने हैं। नायक के शुभागमन के शकुन हो रहे हैं। नायिका की दशा औत्सुक्य और चापल्य के कारण ऐसी विचित्र हो जाती है कि वह कभी अटारी पर चढ जाती है कभी तिदरियो म घूमती है। कभी झझरियो म होकर झाकती है, कभी किवाडो की खुली झिरियो म से ताकने लगती है। ऐसी चचलता न तो मछली म देखी गई है, और न खजना मे और न बिजली मे है। देखिये यह चित्र—

आज या वियोगनी की वहू खिडुरीन मे ॥रसरग १।११९॥

कहने की आवश्यकता नही कि उक्त चित्र की प्रत्यक क्रिया स्वय म सुस्पष्ट है। इससे कुछ और अधिक वेगवान गति चित्र नीचे के कवित्त मे दृष्टव्य है—

मन दै सुनो री काह किलकात पिछवारे प ॥वही १।१२०॥

यदि और भी गति वेग मय चित्र देखना हो तो निम्नाकित पक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

'ग्वाल कवि चादनी सी गिलौरी ल गुपाल प ॥वही १।१२७॥

शृगार के अतिरिक्त ग्वाल ने वीर रस के भी कुछ चित्र बनाय हैं। नाभा नरश क हाथियो का एक चित्र यहा दिया जाता है—

सोभित सवारे रग अचल श्री नमेस के ॥रसिकानन्द १।२०॥

उक्त चित्र म कवि का उद्देश्य व्यजना द्वारा आश्रयदाता की प्रशस्ति करता रहा है। ऊपर हाथियो का अकन जहाँ उभरी हुई रेखाओ म है वहाँ क्षीण रेखाओं म आश्रयदाता की प्रशस्ति परक व्यजना भी लक्षित हो रही है।

नीचे एक युद्ध स्थल का चित्र दिया जा रहा है। यह युद्ध अलाउद्दीन और हम्मीर देव क मध्य हुआ है। घायलो और मृतक योद्धाओ की लाशों से रणस्थली भरी पडी है। कुछ घायल भाग जा रहे हैं—

किते सीसहीन किते धरे घास काँधे ॥हम्मीर हठ ९५-९७॥

वस्तु वर्णन—ग्वाल ने अन्य कवियो की भाति भाव चित्रण तो रेखाओ को उभार कर या क्षीण करके किया है किन्तु वस्तु चित्रण म प्राय सभी प्रकार के

रगों का आश्रय लिया गया है । रगो का उपयोग रेखाओ के साथ मिलकर चित्र को समृद्ध बनाता है । जहा रखायें चित्र को उभारने म असमर्थ सी हो जाती है वहा रग उसे स्पष्ट करत हैं । ग्वाल ने अकेले रगो से भी चित्राकन किया है और रेखाओ के साथ साथ रगो के मिश्रण स भी । पहल हम केवल रगो के चित्रण को ही लेते हैं ।

सखी ब्रजचन्द जू प यह कौन है ॥रसरग ४।९०॥

ऊपर क कवित्त में शुक्लाभिसारिका का चित्र अकित है । नायिका का चिकना गोर शरीर चन्दन स चर्चित है वस्त्र श्वेत चादी से चमक रहे हैं हीरो की चमक चारो ओर है चुने हुए चमेली के श्वेत पुष्पो की माला गले म पडी है । समस्त द्युति चादनी जमी है । नायिका चन्द्रमा को दखती जा रही है । जिसे देखकर स्वय चन्द्रमा को द्वितीय चन्द्रमा का भ्रम होने लगा है । कहना न होगा कि श्वेत वर्ण का यह चित्र पूर्ण सफलता से अकित हुआ है । एक चित्र म केवल श्याम वर्ण का प्रयोग भी देखिये—

नीलम के हार जालदार नन्द के कुमार प । वही ४।८६॥

श्यामाभिसारिका ने समस्त अवयवो को यथाशक्य रात के अधियारे म मिला लेने की पूर्ण चेष्टा की है । सासनी रग की साडी नीलम के हार कस्तूरी आदि की काली बिन्दी सभी श्याम वर्ण हैं । रात भी काली है । तन चोआ चर्चित है अत काले भ्रमरो की भीड नायिका के चारो ओर मडरा रही है । अधिक अधेरे मे कही चमत्कार मुख मडल न दिख जाय, इस कारण वह मुख पर काले केश डाल कर पूरी की पूरी श्यामाभ बन गई है । रात क रग म रग मिल गया है । कहना व्यर्थ है कि कवि की तूलिका वर्ण-योजना म पूर्णत सफल हुई है ।

मिश्रित रगो की एक चटक निम्नलिखित पक्तियो म द्रष्टव्य है—

गोरे गोरे उरज उतगन धरि राखो है ॥रसरग ५।१९॥

गोरे स्तनो पर नोली कचुकी, उस पर सफेद गोटे की धारें बीच-बीच म सुनहरी बिन्दियाँ, कुल मिलाकर चार रगो का चित्र अति अभिराम बना है । कवि ने शिव शीश पर त्रिवेणी की कल्पना करके चित्र के रगो को और अधिक चमक दे दी है ।

विविध रेखाओं के साथ विविध रगो का उपयोग करके ग्वाल ने कई चित्रो का निर्माण किया है उनम से एक चित्र इस प्रकार है—

सबज बिछान छात राख दग कोर ॥वही २।९३॥

हरी त्रिछत पर लाल लाल छापा है। कमरे की छत की कड़िया सुनहरी हैं, जिनम हरी रशमी डोरें पड़ी हैं। पलें का रंगीन पट्टा कितना चौडा और चमकदार है यहा तक चित्र मे विविध रग भरे गये हैं। इसमे आग कुछ क्षीण और कुछ उभरी हुई रेखायें हैं। नायक न दोनो नायिकायें हृदुे पर आमने सामने मुँह करके बिठा रखी हैं। और वह स्वय 'मचकि मचकि' कर उन दोनो की ओर मुसकराते हुए झूले पर पगें बढा रहा है। चित्र अपन आप म पूण और सजीव हो गया है।

इसी प्रकार एक चित्र म एक चन्द्रमुखी अपन नत्र नीचे झुकाए हुए है। स्वर्णिम झूमका कानो म पडे हैं, जो अपनी आभा गोरे गोल कपोलो पर डाल कर उनको बसन्ती रूह की छवि प्रदान कर रहे हैं। नायक ने कुछ विचार करके नायिका को मदिरा पिला दी है, जिससे व बसन्ती छविधारी गोल कपोल लाल लाल हो गये हैं। नायक जब जब उनको चूम चूमकर चूमने लगता है, तो नायिका बिजली की भाँति चमक चमक उठती है और कपोल ज्यो के त्यो पुन बसन्ती के बसन्ती हो जाते हैं। इस प्रकार श्वेत से बसन्ती, बसन्ती स अरुण और अरुण स पुन बसन्ती रगो का परिवतन दिखाकर कवि ने एक गतिमय रगीन चित्र का विधान किया है। चित्र म क्षीण और उभरी रेखायें हैं और गहगहे रग भी हैं इनके निदशनाथ निम्नांकित पंक्तियाँ द्रष्टव्य है—

चद की निकाई नम बसती होइ आये हैं ।।वही २।५५।।

कहना न होगा कि चित्र अपने आप म पूर्ण और सप्राण है।

प्रकाश और अंधेरे का मिला जुला चित्र देखिये—

गोरे गोरे रग की बीजु महताबी सी ।। वही ३ १७ ।।

ग्वाल ने पावस की सन्ध्याकालीन धन घटाओ म काली, श्वेत, चम्पकई, नीली, पीली, धूमरी, सिन्दूरी और जान कौन कौन रग भर दिया है —

पावस की साँझ तसवीरें उडी जात हैं ।।वही ७।९७ ।।

आसमान म अस्ताचलगामी सूय की दबी दबी प्रकाश किरणें पृष्ठभूमि से काली, पीली, चम्पई, नीली पीली, धूमई और सिन्दूरी घन घटाओ क रगो को गहगहे बना रही हैं। आगे की उत्प्रेक्षा 'मानहु मुसब्बर मनोज को मुरब्बा मजु फलि परयौ ताकी तसवीरें उडी जात हैं' स कवि ने चित्र को उचित गत्यात्मकता और कांति प्रदान कर दी है।

विरोधी रगो द्वारा निर्मित एक रगीन खण्ड चित्र नीचे देखिये। इसम श्याम और लाल रग विरोधी हैं। नायिका के नेत्र बिना काजल के ^ कजरारे

हैं और रतनारे भी हैं। दोनों रंगों का विरोध नेत्रों की आभा को द्विगुणित कर रहा है। उधर श्वेत और लाल रंगों का हाथों पर अनूठा मिश्रण है। गोरे गोरे हाथों पर मेंहदी की लाल लाल बुंदकियां शोभित हैं। देखिए—

बिन कजरा के मेंहदी की भरिकें ॥वही ३।१४॥

सूक्ष्म और उभरी हुई रेखाओं और विविध रंगों द्वारा चित्र-निर्माण करना ही एक मात्र कलाकार कर्म नहीं इससे आगे चित्र में वह एक प्रकार की कान्ति भी उत्पन्न करता है जिसे पालिश कहा जाता है। इस कान्ति या 'पालिश' से रंगों में एक विशेष चमक उत्पन्न हो जाती है और चित्र सवाक हो उठते हैं। ग्वाल ने विविध व्यंजक पदों द्वारा अपने चित्रों में कान्ति भरने की है। उदाहरणार्थ नीचे कुछ पंक्तियां दी जाती हैं—

'ग्वाल कवि रावरे बसती या कपोल पर,
कंत पर चुभायो दंत अजब सुहायो है।'[1]

ऊपर की पंक्ति में 'सुहायो' पद के साथ 'अजब' विशेषण ने नायिका के बसंती कपोल पर नायक द्वारा चुभाये दंत चिह्न में कान्ति भरने का काम किया है। इसी प्रकार—

१—'ग्वाल कवि कहे ताहि ताक तकि बांध लाल,
हाल भयो और गई सुधि हू सिराय के।[2]
२—'ग्वाल कवि' चपला को आभनि को दाब है कि
मोहनी सिताब रूप धारि लियो फेरि मे।[3]
३—ग्वाल कवि' मेरे सुखमा के प न उपमा के,
अजब अदा के मन मोहन मजा के हैं।[4]

में 'और' 'सिताब' और 'अजब' पदों से भावों में कान्ति भर दी गई है।

ग्वाल में रंगों के प्रति विशेष आग्रह है। भाव प्रधान चित्रों को इस कवि ने रेखाओं और रंगों से साजा सवारा है। आलम्बन और उद्दीपन के प्राय समस्त काव्य चित्र ग्वाल की दृष्टिमात्र व्यंजक रही है।

अभिव्यंजना के प्रसाधन—अनुभूति के सौन्दर्य तथा अभिव्यक्ति सौन्दर्य में सहज सम्बन्ध होता है। सौन्दर्य शास्त्र के इस मूल रहस्य और इसके महत्व से रीति शास्त्र सुपरिचित था। परन्तु इनकी अनिवार्य एकता का वह कायल नहीं था। इसी कारण उसने अनुभूति और अभिव्यक्ति के पार्थक्य को

१—वही—५।९ २—वही—६।१४ ३—वही—६।४५ ४—वही—६।४२

सर्वथा लोप नहीं होने दिया।[1] परन्तु रीति के रसवादी आचार्यों ने इन दोनों की सत्ता को अभिन्न माना है। ग्वाल ने अपनी अलंकार की परिभाषा में इस तथ्य को स्पष्टतः स्वीकार किया है कि काव्य में अलंकार की सत्ता आन्तरिक है बाह्य नहीं। कवि के अलंकार विवेचन के प्रसंग में हमने सौन्दर्य शास्त्र के इस रहस्य को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि अलंकारों की सत्ता काव्य में पृथक नहीं है।[2] वे शब्दार्थ से भिन्न रहते हुए भी शब्दार्थ में ही अन्तर्भूत रहते हैं।[3] कवि की यह भी मान्यता है कि 'अलंकार' शब्द में 'अलम् पद परिपूर्णता' का द्योतक है जो अक्षरों में ही व्याप्त रहता है—'अलं भापियत पून को पूरि रह्यौ अखरान'[4]। इनके मत में अभिव्यक्ति का सौन्दर्य अनुभूति के सौन्दर्य की एक अनिवार्यता है। दूसरे शब्दों में वे अभिव्यक्ति को अनुभूति की आत्मा मानने के पक्षपाती हैं। इस सम्बन्ध में वे केशव से कुछ आगे हैं। केशव अलंकारों के बिना काव्य की सत्ता नहीं मानते—'भूषन बिना न सोहहीं, कविता वनिता, मित्त'। ग्वाल की मान्यता है—'होय विषय संबंध कौ चमत्कार कौ धन'[5]। केशव के अलंकार जहाँ केवल चमत्कार के निमित्त हैं तो ग्वाल के रस और चमत्कार दोनों के लिये। अतः ग्वाल का दृष्टिकोण रसालंकारवादियों का रहा है, केवल अलंकारवादी का नहीं है। इनके इस दृष्टिकोण को हृदयंगम करने के उपरान्त ही इनके अभिव्यक्ति के प्रसाधनों—अलंकारों—के विषय में यहाँ विचार किया जायगा।

अप्रस्तुत विधान—कवि जहाँ अभिव्यक्ति को रमणीय तथा सशक्त बनाने के लिये अप्रस्तुतों का प्रयोग करता है, वहाँ वे प्रधानतः साम्य पर आधृत रहते हैं। यह साम्य भी मुख्यतया तीन प्रकार का होता है—१. रूप साम्य या सादृश्य २. धर्म साम्य या साधर्म्य और ३. प्रभाव साम्य। ग्वाल ने अपने अप्रस्तुत विधान में इन तीनों प्रकार के साम्यों का अनुगमन किया है।

सादृश्य—प्रस्तुत वस्तु के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिये कवियों ने अप्रस्तुतों का प्रयोग किया है। नारी के नखशिख वर्णन में प्रयुक्त अप्रस्तुत प्रायः रूढ़ हो गये थे। रीति के कवियों ने संस्कृत के उपमानों की रूढ़ परम्परा

---

१ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र, १९६० ई०, पृष्ठ, १९०।

२ हेमादिक भूषनन कौं, पहन उतारन जोग।
ये भूषन तन में दिये होत न जुगै उदोत ॥ साहित्यानन्द १६।३,।

३ सब्दारथ तें भिन्न हुवै सब्दारथ के माहि ॥ वही १६।४।

४ वही—१६।२।   ५ वही—१६।८।

के अनुरोध म पुराने अप्रस्तुता का प्रयोग तो किया ही, कतिपय प्रतिभाशाली कवियो ने अपनी कल्पना से अभिनव अप्रस्तुत भी प्रयोग किये। ग्वाल मे रूढ उपमानो का प्रयोग तो है ही, नये अप्रस्तुतो के प्रयोग भी पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध होते हैं। नीचे पारम्परिक उपमानो का प्रयोग उदाहरण के लिये उद्घृत किये जात हैं—

जसे भूमि अम्बर के बीच मे न कोई खम,
तसें लाल लोचनी के अक मे न लक हैं।[1]

तथा— जसें अक्षराम मे अकार यों प्रमानियत,
तसें लक जानियत गोरी के सरीर मे[2]॥

उपयु क्त पक्तियो म कमर के लिये प्रयुक्त दोनो उपमान रूप की अनुभूति कराने मे किसी प्रकार भी समय नहीं हो रहे। कोई चित्रमयता यहा नही दिखती। जसे भूमि और आकाश के मध्य कोई खम्भ नही वसे ही नायिका की कमर का पता नही। दूसरे उदाहरण मे—अक्षरो मे अ' अक्षर की भाति शरीर मे कटि का अस्तित्व है जो दिखाई नही देती। इन उपमानो से कमर की सदिग्धता एव सूक्ष्मता तो निस्स देह व्यजित होती है, पर तु उसका रूप सौ दय चित्रायित नही होता।

पर तु कहीं-कहीं कवि नये नये मूर्त अप्रस्तुता को भी लाया है। एक उदाहरण देखिये—

पावस की सामसाम तसवीरें उडी जात हैं॥षटऋतु वरान ३३॥

आकाश म काली, श्वेत चम्पकई नीली, पीली भूमरी सि दूरी घन घटायें मडरा रही हैं। कवि ने उद्भावना की है कि मानो चित्रकार कामदेव के चित्रो का डि्बा खुल गया है जिसम से विविध रगो के चित्र आसमान म इधर उधर बिखरे बिखरे उडे जा रहे है। कितनी रमणीयता भरी कल्पना है। मनोज के मुड्बा' के उपमान ने पावसकालीन स ध्या के आकाश क बहुरगी रूप चित्र को न केवल रमणीय बनाया है बल्कि अभिव्यक्ति को गतिमयता और सशक्तता भी प्रदान कर दी है।

वय सधि की नायिका की क्रमश क्षीण होती हुई कमर के लिय कवि ने पतग की डोर के गोला का उपमान चुना है। यह इस प्रसग म नया ही है। देखिये—

दौरन दरीन की है पतग की॥ रसरग २।४३॥

---

1 रसरग—५।१४। 2 वही—५।१५

'ग्वाल कवि' छाती पर पूनों को मयक है ॥वही २।७०॥

यहा सुदरी नायिका के लिये सरद की पूनो के मयक का अप्रस्तुत प्रयुक्त है।

कवि ने भावो के चित्रण म भी सुन्दर अप्रस्तुतो का विधान किया है—

ग्वाल कवि त्योंही भीत चकाचौंध सी करत है ॥वही ११५३॥

यहा प्रभावाधिक्य क कारण नायिका का शरीर कम्पायमान होगया है उसी द्युति का सौदय बोध कराने के लिये चचला की पुन पुन चकाचौंध को अप्रस्तुत रूप म लाया गया है।

कुछ साधर्म्यमूलक अप्रस्तुतो के उदाहरण और द्रष्टव्य है —

चपक बरनवारी हास हुलसनवारी हस सी चलनि वारी प्रेम रस पोखी सी।[१]

ऊपर नायिका का हस की सी चाल वाला बताया गया है। यहाँ गुण साहृश्य है।

कहू ला बुलाइ औ कबूतरी सी फरकराइ।
मिलिबे को अकुलाइ मछरी लौं तरफराइ[२] ॥

यहाँ नायिका के औत्सुक्य और व्याकुलता की उपमा कबूतरी की फडफडाहट और मछली की तडफडाहट से देकर क्रिया साहृश्य स्थापित किया गया है। उपमान सटीक हैं।

हिरनी ज्यों जाल म फस ते तरफर दया,
तरफर तीय त्या तक्न प्रानप्यारे को।[३]

गुरजन भीड में फसी नायक का देखने मे असमर्थ नायिका की तडफडाहट जाल म फसी हरिणी की तडफडाहट के सहश है। बैचेनी उत्सुकता असमर्थता विवशता आदि मनोगत भावों को इस उपमान द्वारा स्पष्ट करने म कवि पूर्ण सफल रहा है —

तारा सो सुजस तिहारो जसवतसिंघ उज्जल अनूपम अमल मल छायो है।[४]

यहाँ यश की उपमा तारे स देकर कवि ने उसकी उज्जवलता और अमलता को प्रमाणित किया है यश अमूर्त और तारा मूर्त है। अत अमूर्त प्रस्तुत के लिये यहा मूर्त अप्रस्तुत की सफलता देखी जा सकती है।

तेज रहो रवि सो जहान मे प्रकाससान सेज रहो।
सुखको सुफ्ल फरिबो करो॥
सरद ससी सा पूर सुजस नहर रहो।
प्र व्रत प्रताप सों प्रताप करिबो करो[५]।

---

१ वही ११४४। २ वही - ४।१०३। ३ वही ४।१०३।
४ रसिकानन्द ११७। ५ विजय विनोद ४८६।

इन पक्तियो म तेज, सुजस' और 'व्रत' तीना प्रस्तुत अमूर्त है, इनके लिये क्रमश सदृश धर्म वाल रवि, ससी' और 'प्रताप' मूर्त अप्रस्तुतो की योजना की गई है, जो उचित ही है। तज क लिये सूय सुयश क लिये शशि के उपमान भले ही रुढ हैं पर तु व्रत के लिये प्रताप (राणा) का उपमान नवीनतम है।

कवि ने अमूर्त प्रस्तुत के लिय अमूर्त अप्रस्तुतो की कल्पना भी कहीं-कहीं की है एक उदाहरण देखिये—

गज बरुनी दग उभय ए समरस अति दरसाय।
सान सिंगार विरोध तजि, बसे कुटी इक आय॥[1]

यहाँ 'समरस' अमूर्त और "शान्त शृङ्गार' रस भी अमूर्त हैं। नेत्रों की समरसता ठीक एसी है, जस शान्त और शृङ्गार विरोधी होते हुए भी एकत्र बटकर समरसता उत्प न करते हैं।

मानवीकरण—भाव की तीव्र अनुभूति को व्यक्त करने के प्रयत्न म ग्वाल ने जड वस्तुओ भावनाओ तथा अग विशेष पर कर्तृत्व आदि मानव गुणों का आरोप करके सुन्दर रचनायें की हैं। सूक्ष्म द्रव मन पर मानव अगो का आरोप करके कवि ने अनेक छन्द लिखे हैं। एक अत्यन्त प्रसिद्ध छन्द उदाहरण के रूप म नीचे दिया जाता है—

ताकें तिया कों गयो ... झलका मे री ॥रसरग ११६८।

इसी प्रकार—

"ए रे मन मेरे तेरे काज सब सिद्ध होय
सिद्ध निद्ध साज होय सो उपाय करिये।'[2]

काया जिन आपनी ... पार तू उतरि जा॥[3]

कवि ने जड वस्तुओ म भी मानव गुणो का आरोप किया है। देखिये—

सरद हिमत अत करिकें ... तेरो अवलय है ॥षटऋतु वर्णन ११४॥

इसी प्रकार कवि ने मेघमाला पवन बिजली कदम्ब, चन्द्रमा, पावस वसन्त, ग्रीष्म आदि म मानवीकरण अनेकत्र प्रस्तुत किया है।

सम्भावनामूलक अप्रस्तुत विधान—

ग्वाल की रचनाओ म देव और मतिराम की भाँति ललित सम्भाव

---

१ दग शतक—११। २ वही—११।
३ शान्त रस के कवित्त—३।

नाओं की कल्पना कम नहीं मिलती। हेतूत्प्रेक्षा और फलोत्प्रेक्षा ग्वाल के प्रिय अलकार हैं। इन्हीं में सम्भावना मूलक अप्रस्तुतों की ललित छटा के दर्शन होते हैं। एक उदाहरण देखिये—

झपकि झपकी खुलें   चक्रवान बांधि राखे हैं ॥रसरंग १।९८॥

नेत्रा और चक्रवाकों म गुण साहश्य है। खजनी क छबीले पन और चपल नेन झपक झपक कर खुलते हैं। कानों को पार करके कुछ केश कुण्डलाकार नेत्रों तक आ रहे हैं। निसिनाथ च द्रमा (मुख) न यह सोचकर कि ये चक्रवाक (नेत्र) रात्रि को विरोधी हैं। रात न होगी तो उस (च द्रमा) का उदय ही नहीं होगा, उनको नागफास (केशजाल) में बाध कर डाल दिया है। यह सम्भावना मूलक ललित कल्पना है। भावुक कवि ने भावुकता का पुट देकर एक अद्भुत सौ दर्य उत्प न कर दिया है।

वषम्यमूलक अलकार—

वषम्य मूलक अलकारों द्वारा कवि सामा यत रूप, रग आदि उप करणों के वषम्य से मुख्य विषय की अनुभूति म अद्भुत सौ दय की सृष्टि करता है। साम्य मूलक अलकारों की भाति ही इनक उपयोग म कवि को अपनी सूक्ष्म दृष्टि और परिष्कृत रुचि से काम लेना पडता है। उदाहरण के लिये नीचे की पक्ति म कवि न अधिक अलकार की सहायता स भगवान त्रिपुरारि के मुखों का वषम्य प्रस्तुत कर के हरि लीला का प्रभावी चित्र अकित किया है। हरि एक हैं और लीला नायक पाच मुख। इन पचसख्यक मुखों म एक हरि की लीला नहीं समा रही—

हरि लीला न समात है त्रिपुर मुखन मे देख ॥साहित्यान द १६।२२८॥

इसी प्रकार अ यत्र एक दोहे म बताया गया है कि जिस भगवान के रोम रोम में कोटि कोटि ब्रह्माण्ड हैं व ही भगवान मुनि के एक मन म समा रहे हैं। यहाँ आधार को आधेय से अधिक बताया गया है। हरि आधेय हैं और मुनि मन आधार।

कोटि कोटि हरि रोम जिहि, सो हरि मुनि मन माहो ॥वही १६।२२९॥

कहा मुनि का छोटा सा मन और कहाँ कोटि कोटि ब्रह्माण्डों म रोम रोम म व्याप्त करने वाले हरि। पर वे मन म समा गय हैं। यहाँ मुनि मन का प्रभावी चित्र अकित किया गया है। विषम अलकार के प्रयोग से भी यह वषम्य उपस्थित करके आधार की सौ दर्य वृद्धि की जाती है। नीचे के उदा हरणों म यही वैषम्य उपस्थित किया गया है—

१—कह श्री गगा को सुजल, कहा उदधि को पाथ ।।वही २१६।।

२—हरी जु मेहदी तें कन्त अरुन रग सो जोय ।।वही २२०।।

३—पठई सखि पिय ल बनहिं, रही वही लिपटाय ।।वही २२१।।

प्रथम पक्ति म गगाजल मीठा और समुद्र जल नमकीन । इस प्रकार वषम्य है । दूसरी पक्ति मे हरी महदी से लाल रग निकलता है और तीसर उदाहरण म नायिका मे सखी को अपने अभीष्ट के लिये प्रिय के साथ भेजा है परन्तु वह सखी ही उस प्रिय स रतिलीन होकर इष्ट के स्थान पर अनिष्ट कर रही है । इस प्रकार वैषम्य स्थापित करके क्रमश गगा जल, महन्दी और सखी का उत्कष प्रस्तुत किया गया है ।

असगति अलकार की सहायता से भी वषम्य स्थापित किया जाता है । निम्नाकित दोहे म नायिका ने दूती को प्रिय के बुलाने के लिये बुलाया था परन्तु स्वय उस के साथ विरह भुलाने के लिये चौपड का खेल खेलने लगी । देखिये—

बोलि पठाई दूतिका प्रियहिं बुलावन काज ।

तासों चौपड खेलि प घर बिरहे व्रजराज ।।वही १६।२१८।।

आरम्भिक काम कुछ और ही था, हो कुछ और ही गया । इसी प्रकार अ यत्र नायक ने नायिका को तो सकेत स्थली मे भेज दिया और स्वय गायन म लीन होकर मुख्य काम को भूल बठा । दखिये—

भेजी प्रिया सकेत म, आप सु गावन लाग ।।वही १६।२१७ ।

निम्नाकित छन्द म 'याघात' अलकार की सहायता स कवि ने नायिका के नेत्रों का सौन्दय चित्रित किया है । देखिये—

तो अखिया नीकी कहत, भरी अनी की घात ।

हिय वेधत कसकत नही भीतर धसकत जात ।।शृगारशतक ८२।।

आखो की चोट हृदय को बधती है पर कसक नहीं होती । उलटी वे आखें हृदय म भीतर और धसती जाती है । यहां आखो का गुण वर्णित है । इसी प्रकार 'विशेषोक्ति' अलकार द्वारा वषम्य का प्रयोग—

पग प्रहार भृगु न कियो तऊ न विष्नु रिसान ।।साहित्यान द १६।२११।।

इसी प्रकार विरोधाभास अलकार के प्रयोग म भी प्रभाव वैषम्य उप स्थित किया गया है—

छक छक तेरो अधर रस, अछक रहत व्रजराय ।।वही १६।२००।।

अधर रस को छक छक कर भी अछक (अतृप्त) रहना वषम्यमूलक है । इसी प्रकार—

जागत जे हरि भजन म ते सोवत निह चन ।
सोवत जे हरि भजन बिनु, ते जागत भत्र अत ॥वही १६।२०१॥

'जागत' और 'सोवत वपम्यमूनक प्रभाव है ।

आतिशय्य-मूलक-अलकार —

इन अलकारा का प्रयोग प्राय भावोद्दीपन के लिये होता है । कवि इनके द्वारा अपनी अनभूति को आवग देना है। परतु रीतिकाल म इन अलकारो का कुछ ऐसा विस्तार हुआ है कि उक्ति अपनी सवदन शमता खोकर चमत्कार मात्र रह गई है । ग्वाल भी इस कथन के अपवाद नही रहे । कहीं कहीं इनकी ऊहोक्तिया अतिशयय की सीमा का उल्लघन कर गई है । उदाहरण के लिये इनके कटि सूक्ष्मता के वणन को ही लें —

दूर तें दिया लें गोरी के सरीर मे । रसरग ५।१५ ।

यहा तक ही हो तो भी गनीमत है । अम्बरी म अ क अस्तित्व के समान लक का कहीं अस्तित्व तो माना तो गया है । परतु जहा कमर का अस्तित्व ही न रहा हो यहा क्या कहियेगा । देखिये —

'ग्वाल कवि' जो न लक है । वही ५।१४ ॥

परतु सवत्र ऐसी ही अतिशयय मूलक उक्तिया नही कही गई । सीमा के भीतर भी ग्वाल ने अतिशयय का अकन किया है । जसे —

प्रिय जाय विदेस लुयें लागती हैं ॥ वही ४।६५ ।

वक्रता मूलक अलकार —

प्रत्येक आलकारिक उक्ति या तो वक्रता लिये हुए रहती ही है, परतु इन अलकारो की तो विशेषता ही यह है कि वाणी भगिमा द्वारा य रसिक हृदय म अनुभूति को पुष्ट करते हैं । ग्वाल इस कला म पर्याप्त कुशल प्रतीत होते हैं । वक्रोक्ति को इन्होंने अर्थालकारो के साथ लिया है शब्दालकारो म नही । इसम स्पष्ट ही है कि य वक्रोक्ति का विशेष महत्व देते हैं । श्लेषाश्रित वक्रोक्ति कि सहायता म कवि ने राधाकृष्ण के सुन्दर वार्तालाप का एक चित्र इस प्रकार खींचा है ।

पीठि मोर बठी करी हाट मे ॥ रसरग १।११० ।

यहाँ नायक के 'मोर' 'साई घरवारा,' कवी' 'पीठों, प्रियतम, और धनी शब्दो को नायिका न क्रमश तोडे', योगी, 'घर निछावर किया' 'आर', पिऊ गा, 'तम ही जिस प्रिय है जिम वह, और धनवान अय सवथा उन्ह ही लगाकर उत्तर दिये हैं । नायक का कथन है कि तुम पीठ मोडे क्या बठी हो, नायिका कहती है कि मैंने किसी के पाट कब मोरे (तोडे) है ।

नायक-मैं साई हूं'। नायिका 'तो वही अलख जगाओ' आदि आदि। यहाँ श्लेष से शब्दार्थ म वक्रता उत्पन्न की गई है।

पर्यायोक्ति' का आश्रय लेकर ग्वाल ने पर्याप्त सम्यक वक्रोक्तियां अपने का य म सजाई हैं। यहा हम दो एक उदाहरण ही देंगे।

इकली मै अभागिन   लुए लागती हैं ॥वही ३।४०॥

मैं घर मैं अकेली हू। पडोसिनें मुझसे कोई सम्बन्ध नही रखतीं। इस समय सब दिशायें जल रही हैं। दो दो कोस तक पानी की बूंद नही है और न कोई छायादार पेड ही माग मे है। आगे बडो लुए चल रही हैं। तुम्हे देखकर बडी दया आरही है। इस समय हमारी हौरी मे ही विश्राम करो। यह कहकर नायिका पथिक को आश्वस्त कर देना चाहती है कि यहा नितान्त एकान्त है। रतिक्रीडा करने का इससे अच्छा अवसर और क्या होगा।

क्रिया की वक्रता द्वारा भी नायिका अपने अभीप्राय को व्यक्त करती है। ऐसे अवसर प्राय भीड़भाड के होते हैं जहाँ बोलना निरापद नही होता। एक ऐसा ही उदाहरण यहा लिया जाता है—

आज गोपसुत के   धरिकैं चली गई ॥वही ३।४५॥

नायिका ने नायक को दिखाकर अपनी कचुकी से एक फूल निकाला और उसे बरगद के पत्ते के नीचे रख कर चली गई। वक्रार्थ से यह व्यजित हुआ कि नायक को रात्रि को बाग में बरगद के नीचे मिलना चाहिये। पत्ता बरगद का व्यजक है और फूल नायिका का और पत्ते के नीचे का अधेरा रात्रि का।

औचित्य मूलक अलकार—

स्वाभाविक सौन्दय की अभिव्यक्ति प्राय औचित्य मूलक अलकारो द्वारा हुआ करती है। स्वाभाविकता की सृष्टि अनुभूति के विविध अवयवो का विशिष्टक्रम म सजोकर रखने म हुआ करती है। ग्वाल की रचनाओ म यह स्वाभाविकता ज ■ सौन्दर्य प्रभूत मात्रा म अवलोकनीय है। यद्यपि वे व्यजना को ही अधिक प्रश्रय देते दीखते हैं परन्तु उन्होने जितने छदो मे औचित्यमूलक अलकारो का प्रयोग किया है, वे अपनी कोटि के अन्य रीति कवियो द्वारा रचित छन्दो से उनीस नही बठत। निम्नांकित छन्द इस कथन के प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत है—

ताक तिया कौं   रहयौ भलका मे री ॥रसरग १।१८

इसम नायक की दृष्टि क्रमश नायिका की कमर से लेकर समस्त अवयवो पर होती हुई सिर तक के सौदय का पान करती गई है। वणन स्वाभाविकता के साथ हुआ है।

ग्वाल के प्रतीकों का विवेचन—

ग्वाल की रचनाओ म काय के प्रस न और मुख्य प्रतीको का प्रयाग आधिक्य के साथ हुआ है। प्रतीको के प्रयोग कवि को पर्याप्त प्रिय रहे हैं। परम्परा के अनुरोध स्वरूप ग्वाल म शृ गार प्रतीकों का प्राधान्य है। ऊपर के उदाहरणो म सभी प्रतीक शृ गार के हैं। य सभी कोमल रमणीय तथा चित्र मय बन पडे हैं। इनमे वण वमव भरा पडा है। परन्तु अय रीति कवियो की भाति ग्वाल की काव्य सामग्री भी सीमित है और रूढ उपमाना का उसम बाहुल्य है जिनको कवि ने अपनी भावुकता म रग कर चमकाने का सफल प्रयत्न किया है। ग्वाल म नवीन प्रतीकों क प्रयोग का सवथा अभाव है ऐसी भी बात नही है। नवीन अप्रस्तुत विधान भी अनक्त्र मिलता है पर्याप्त मात्रा म अमूत्त उपकरणो का प्रयोग है परन्तु आधिक्य म नही। परन्तु इसक लिय भी कवि को दोषी नही ठहराया जा सकता। यह तो युगानुकूल ही हुआ था। ग्वाल के विषय म यह बात बिना सकोच कही जा सकती है कि कवल चम त्कार के लिये ही नही वल्कि भाव यजना के लिए भी उस ने अलकारो का प्रयोग किया है। उनके प्रतीक अधिकाशत भावमूलक हैं, अत भाव सवेदन का ही उद्‌बुद्ध करते हैं। केशव, देव और बिहारी को छोडकर बहुत कम कवियो का क्षेत्र इतना विस्तृत है जितना ग्वाल का। इमम परम्परा के निर्वाह क साथ साथ ग्वाल ने नई उद्‌भावनाओ के भी पयाप्त सकेत इस क्षेत्र म दिय हैं। उमका प्रतीको का कोश पर्याप्त समृद्ध है। जितनी सहजता के साथ उसके का य म रसमूलक अलकार जड गय हैं इसे देख कर आश्चय करना पडता है।

(आ) ग्वाल की भाषा

स्वरूप—ग्वाल के समय तक आते आते साहित्यिक ब्रजभाषा का स्व रूप भली भाँति सज सवर गया था। इसका श द कोश भी व्यापक बन गया था। ग्वाल क पूववर्ती आचाय भिखारीदास ने इसक स्वरूप के विषय म स्पष्ट कथन किया था कि—

> ब्रजभाषा भाषा रुचिर   विधि कहत बखानि॥

स्पष्ट है कि तत्कालीन ब्रजभाषा म सस्कृत और फारसी के प्रचलित सुगम श दो के अतिरिक्त पूर्वी, प्राकृत आदि के शब्दो का भी मिश्रण रहता

था। इसके अतिरिक्त ब्रज मे प्रचलित देशज और तद्भव शब्दो का भी इसम प्रयोग रहता था। उत्तरी भारत की अन्य बोलियो के शब्द भी इसमे स्थान पाते थे। ग्वाल ने अपनी जन्म भूमि ब्रज के अतिरिक्त पजाब, राजस्थान और पहाडी रियासतों मे पर्याप्त भ्रमण और निवास किया था। अतएव वहा की बोलियो के शब्दो का इनकी काव्य भाषा मे प्रयोग मिलता है। वे संस्कृत के प्रकाण्ड पडित थे ही। अनुभव ने उनको फारसी, उर्दू पजाबी, गुजराती पूर्वी, राजस्थानी भाषाओ का भी ज्ञान कराया था। उर्दू और फारसी उस समय की दरबारी भाषा थी। अतएव ग्वाल की भाषा और भी अधिक मिश्रित बन गई थी। इनके काव्य मे संस्कृत, अरबी फारसी और उर्दू के तत्सम शब्दों के प्रयोग अधिकता के साथ मिलते हैं। तद्भव शब्दो के प्रयोग भी या हैं परन्तु वे छन्द के अनुरोध के अनुसार ढाल कर लिए गये हैं। लक्षण ग्रन्थो मे संस्कृत की शब्दावली अपने विशुद्ध रूप मे ही प्रयोग हुई है। काव्य मे भी संस्कृत के तत्सम शब्द कम नही आये। कहीं कही ब्रज की बोली के शब्दो का भी प्रयोग उनके साहित्यिक स्वरूप को विकृत करके किया गया है। 'सीरक', घाम, 'नगीच' आदि ग्रामीण ब्रजी शब्द भी काव्य मे अनायास स्थान पा गये हैं। देव बिहारी और मतिराम की भांति ग्वाल ने भाषा के मध्यम मार्ग का अनुसरण नही किया। भाषा को छन्दो में पर्याप्त विकृत कर दिया गया है। हिन्दी मे अरबी फारसी के शब्दो के प्रयोग का आधिक्य खटकने लगता है। यो ग्वाल का शब्दकोष भरा पूरा है।

समग्रत ग्वाल ने निम्नोक्त तीन प्रकार की भाषा का प्रयोग किया है—

(१) विशुद्ध ब्रजभाषा। (२) संस्कृतनिष्ठ ब्रजभाषा। (३) फारसी और अरबी निष्ठ ब्रजभाषा।

कवि ने पजाबी गुजराती और पूर्वी भाषाओ के कवित्त भी मिलते हैं, जिनमे इनकी विशुद्ध शब्दावली प्रयुक्त हुई है। परन्तु ये सभी भाषायें उसके काव्य मे अत्यल्प ही आई हैं। अत उसके काव्य की भाषा के उपर्युक्त तीन रूप ही विचारणीय हैं।

(१) विशुद्ध ब्रजभाषा—

ग्वाल को मिश्रित भाषा यो विशेष प्रिय है किन्तु एक तो वे ब्रजवासी थे, दूसरे ब्रजभाषा की कोमल कान्त पदावली उनको पुरा कवियो से उत्तराधिकार मे प्राप्त थी अत स्वाभाविकतया ही उनके सैकडो छन्दो मे **विशुद्ध** ब्रजभाषा की पदावली की ही छटा मिलती है।

(२) संस्कृतनिष्ठ ब्रजभाषा—

दक्षिन द्विभुज अधहर्त्ता अध खग्ग खुल्यौ,
बाम अधकर म कपाल है विराजमान।
अद्ध कर नील कज चारा कर अरुणाई
नील घन द्युति देह दत सव कु द जान॥
'ग्वाल कवि' जिह्वा दीह तीन दग ससि भाल,
बद्धित सुकेस सीस पावन सी सोभवान।
बहु मुख सव सेत सीस पै सो छत्र रहे,
द्वितीया श्री तारा जी को ऐसें करो नित्य ध्यान॥४॥
—देवी देवतान के कवित्त

उक्त कविता श्री तारा जी की स्तुति म है। इसम बाम, कपाल, अघ हर्त्ता, विराजमान, नील कज नील घन सव जिह्वा भाल बद्धित बहुमुख छत्र, द्वितीया, विशुद्ध रूप म आय हैं। दक्षिन अघ खग्ग, द्युति, दत दीह, ससि सुकेस, सीस, सेत शब्द संस्कृत क क्रमश दक्षिण अद्ध खडग द्युति दन्त, दीर्घ शशि, सुकेश, शीश श्वेत शब्दो के ब्रजीरूप हैं। ग्वाल की भक्ति परक कविताओ मे प्राय सस्कृत निष्ठ ब्रजभाषा प्रयुक्त हुई है। इनम यो कुछ शब्द फारसी क भी अनायास प्रवेश पा गय हैं। संस्कृतनिष्ठ भाषा के बीच-बीच म आये कुछ अरबी-फारसी शब्दो के उदाहरण—

जावक जपा मे वट किसल पसद के।
लाल म गुलाल म गहर गुल लालन म।
तसी है न कज बीच औ गुलाब फन्द के।
सोभा के जहाज राज लोकन के ताज राज।

ऊपर की पक्तियो म रेखकित शब्द अरबी फारसी के है। कवि ने अनुप्रासिकता क लोभ म इनका सस्कृत के शब्दो के साथ प्रयोग कर डाला है। जसा कि स्पष्ट ही है ये शब्द भावों की सम्प्रेषणीयता म कोई रुकावट नही डालते। दरबारी भाषा मे ऐसे शब्द घुलमिल चुके थे अत बरबस ही कवियो की रचनाओ मे स्थान पा जाते थे।

(३) अरबी फारसी निष्ठ ब्रजभाषा—

इस मिश्रित भाषा के ग्वाल मे दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। एक तो आमफहम उदू फारसी शब्द मिश्रित ब्रजभाषा और दूसरी क्लिष्ट उदू फारसी मिश्रित ब्रजभाषा। अरबी के शब्दो को दोनों म ही खपत समान रूप म पाई जाती है। दोनो प्रकार की भाषा के उदाहरण यहा दिये जाते हैं—

(अ) जाकी खूब खूबी खूब खूबन मे खूबी यहाँ।
ताकी खूब खूबी खूब खूबो नभ गाहना ॥प्रस्तावक–३॥

(आ) चाहिय जरूर इसानियत मानस को।
नौबत बजे पै फेर भेरि बजिबो कहा॥
जाति औ अजाति कहा हिंदू और मुसलमान ॥वही–४॥

उद्ध ोक्त पक्तियो म खूब, खूबी, जरूर, इन्सानियत, नौबत, मुसल मान हिन्दू, आदि उदू के शब्द हैं। ये शब्द तत्सम रूप म भी प्रयुक्त हैं और विकृत भी। उदाहरणाथ कृष्णाष्टक का यह छद—

जर की जुलूसों म लोटता हमेसा रहै
सीमजर गौहर का आप बख्सद है।
जिसके खयाल म खलक गिरफतार हुआ-
हुआ गिरफतार वही मा के बसफद है॥
'ग्वाल कवि' जिसने चलाया आफताब तिस
गोपियों सिखाती रफतार हरचद है।
चार सिर वाले के करिंदे हैं जिसकी के वही
बदे पर महरबान नजर बुलद है॥ २॥

इमम जर सीमजर, गौहर, खलक, गिरफ्तार, दस्तकश, आफताब, रफतार आदि फारसी के शब्द है, जो ब्रजभाषा में ढाल लिये गये हैं। जुलूस, हमेशा बकसद, खयाल, तिस, हरचन्द, जिसी के, बन्द, नजर बुलन्द आदि उदू शब्द हैं।

ग्वाल रामपुर क दरबार म कई वप रहा था। उसका सम्बध टोंक के नवाब तथा अन्य मुसलमान शासको स रहा था। इस्मादुल्ला खा ताब, 'इस्म और अमीर आदि उदू के शायरो से उस का घनिष्ठ सम्पक था। अत फारसी और उदू कवि को पर्याप्त प्रिय थी और सम्भवत इसी कारण कवि की काव्य भाषा पर इनका पर्याप्त प्रभाव लक्षित है। सस्कृत की भाति कवि ने उदू और फारसी के शब्दों को ब्रजभाषा म पचाने की भरसक चेष्टा की है परन्तु इसम वह सर्वत्र सफल नहीं पाया जाता है। ग्वाल के फारसी और उदू के शब्द समूह क अवलोकन स ज्ञात होता है, इन भाषाओं क शब्दों का एक बडा भडार इनके काव्य म मिलता है। क्षेत्र के [illegible] के कारण इस कवि ने जहाँ सस्कृत के तत्सम रूपों का खुलकर [illegible] के तत्सम-शब्दों की भी एक बडी सख्या इनके [illegible] ी।

'इश्क लहर दरयाव' के माध्यम से उन्होंने हिन्दी को अरबी फारसी और उर्दू की एक बहुत बड़ी और मूल्यवान शब्द सम्पत्ति हिन्दी को दी है। इस कवि पर फारसी उर्दू के प्रयोग के आधिक्य का आरोप प्राय लगाया जाता है जो अंशत ठीक ही है। सम्भवत इसके लिये कवि का युग और वातावरण दोनों उत्तरदायी हैं। कवि ने परम्परा के अनुरोध स्वरूप कुछ कवितायें पंजाबी गुजराती और पूर्वी भाषाओं में भी की थीं। कवि हृदय विनोद से प्राप्त उदाहरण भाषा का स्वरूप दिखाने के लिये यहाँ दिये जाते हैं –

पंजाबी—

जेही पवाडे चिरा बिच्च भाउदी है आउदी हैं
ओहा तुसा करणाग्रि गाणे कानु कस्स वे।
साडी खुसी ऐहो आप आरांदी खुसी है बिच्च
जेही चाहो तेही करोने हो कानू नस्स वे॥
ग्वाल कवि होऊ करमांदा लिख्या लेख
सावी बल्ल न मानू विचारे रख्यो हुस्स वे।
छल्ल रल्ली गल्लां पवाडी सोहणी न [illegible]दी
स्याम सिद्धी गल्ल साड्डे नालकरन वस्स वे॥३५॥

पंजाबी के कवित्त में अतिरिक्त कवि रचित विजय विनोद में ग्रन्तत्र पंजाबी लटक दृष्टिगोचर होती है किन्तु यहाँ उर्दू शब्दों को पंजाबी उच्चारण में ढाला गया है यथा—लवार मनूम, चलाक वहानियाँ खुमालियाँ खालियाँ वालिया आदि।

गुजराती भाषा—

तम तो वहो छो छया मोरी ऊधमी छ म्हारी
मटकी मठानी ढुरकावनी निदान छ।
सो तो म्हनें आयू तमे सगली जु भाखो झूठ
दीधो म्हनें सीख मस्ती माटी पहचान छ॥
ग्वाल कवि' साने मेवा चरित रचो छौं तमे
सगली थई छौं गेली अडको मा आन छ।
घरे मा रमेछ हुरणा तौ दी करान माह, तम
तेसू दोस मो क्लावा वाला जान छ॥३४॥

पूर्वी भाषा—

नदक बबुआ बगिया म बाटे अस कहि मोहि का लयलस बाटी।
वहि पर ससुर क डरवा छुडल्यू मितवा न पेयू सोचत बाटी॥

गवई न मनई कमनई मिले न मग यह बिधना हम मागत बाटी ।
जस जस ग्वया कीन्हा हम सन, तस तस हम सब जानत बाटी ॥३३॥

शब्द-समूह—इस कवि की रचनाओं में संस्कृत, अरबी फारसी आदि के शब्दों का बाहुल्य है। कहीं वे तत्सम रूप में हैं तो कहीं तद्भव रूप में। नीचे हम इन भाषाओं के ऐसे कुछ शब्द दे रहे हैं जिनका कवि ने अपने काव्य में खुलकर प्रयोग किया है। कोष्ठक में तत्सम रूप लिख गये हैं—

संस्कृत शब्द समूह तथा संस्कृताभास शब्द समूह—कलित, कीरति (कीर्ति), मुनीसुर (मुनीश्वर), धुनि (ध्वनि), म्रदुलता (मृदुलता), विसस (विशेष), पानिप मजु मुक्ता (मुक्ता) सिधु (सिन्धु) अगम (अगम्य), बिंब (बिम्ब) जावक, ललित दुद (द्वन्द्व), तत्व, सत्व, प्रभुत्व, कुलिस (कुलिश), चिन्हित विचित्र सुपमा उन्नर, ऊरध (ऊर्ध्व), कदली अरध (अर्द्ध) प्रिष्ट (पृष्ठ), चामीकर स्वर्ण हीरक, पुसकर (पुष्कर), सब द्रव्य, यथा विहिन न्य-तिरिक्त नकुल, कन्यका, घृत, दीप, धूम (धूम्र) काक मारतड (मार्तण्ड), पडितेश पुरहूत, मृगमद, अखड कम्बु, पुडरीक, कलानिधि अमन्द कलस (कलश), विद्रुम परिपूरन (परिपूर्ण), पियूप (पीयूष) पल्लव प्रभा, पारिजात द्रिष्टि (दृष्टि) खचित, जटित, मुकर उद्दित, रुद्धित क्रुद्ध, मयक, सहस्त्र फनीस (फणीश) पदारविन्द युग्म सुभूपित नव, हरितपत्र अरुनाबर (अरुणाम्बर) लक्षित विलक्षण, क्रीट (किरीट), कुभ (कुम्भ) जिह्वा द्युति (द्युति) रत्नदीप कल्पवृक्ष, घूरनित (घूर्णित), अक्ष श्यामलाग्र दिव्य, दीह या दीरघ (दीर्घ) परिध, पसु (परशु) सुरापात्र रिपुमर्दिनी, राका, उद्भव, पराभव प्रबल उतकस (उत्कर्ष), दुतिय (द्वितीय) त्रितिय (तृतीय), पट (पट) सुभ्र (शुभ्र) सरसुति (सरस्वती), वृत्ति घति, चारु आदि।

अरबी फारसी शब्द समूह—इस वर्ग में अरबी और फारसी के ऐसे आमफहम शब्द भी हैं जो साधारण बोलचाल की भाषा के अंग बन चुके थे और ऐसे भी, जो केवल साहित्य में ही प्रयुक्त होते थे। ग्वाल के काव्य में इन भाषाओं के प्रचलित शब्दों का ही प्रयोग बाहुल्य से हुआ है कुछ शब्द ये हैं—खुब्बत, चश्मा, मजा, शिकार, कबूल, निसान (निशान) हद हमाम गुलाम, फरियादी गिरद (गिर्द) करामात, फबत, चिराक (चिराग) कसाला, कलाम, नजराना करार, तुफे (तोहफे), नजर कहर, अजायब आतिश मरजी, दरयाव बन्दोबस्त, कमल हिसाब, आमद, मुन्शी, दफतर (दफ्तर) फरद कुरान, खुदा, आईना करीना, खबर, बुज इनसाफ तकसीर तकदीर दुरस्त (दुरुस्त), वजीर बखसीस (बख्शिश) महताब (माहताब), चोगा, जमक

कहने की आवश्यक्ता नही कि प्रत्यक वाक्य अपने म पूण और लिग, वचन, कारक, क्रियादि क दोषो से रहित है। बहु वचन के कर्त्ता और तदनुकूल, बहु वचन की ही क्रियायें हैं। केवल प्रथम पक्ति म 'हम' पद के स्थान पर मोहिं' (मुझको) होता तो और अच्छा होता। क्योकि यह वचन नायिका (एक वचन) का है। परन्तु यह त्रुटिपूण प्रयोग क्षम्य ही माना जायगा क्योकि ग्वाल न नायिका के लिये उसके स्वकथन म अनेकत्र उत्तम पुरुष एक वचन का ही प्रयोग किया है।

व्याकरण के सभी नियमा का पूण निर्वाह है। पहले कर्त्ता, फिर कम और अन्त मे क्रिया—यही व्याकरणिक वाक्य विधान है। ग्वाल के काव्य म ऐसे अगणित छन्द हैं, जो व्याकरण सम्मत हैं। परन्तु अनेकत्र वे भी व्याकरणिक दोषो से बच नही पाये। यदि उनके पूरे काव्य को व्याकरण विधान की कसौटी पर कसा जाय तो उनका काव्य अन्य रीति कवियो के काव्य की भाति ही दूषित मिलेगा। ग्वाल ने काव्य के शास्त्रीय पक्ष पर अधिक ध्यान दिया, व्याकरण पर नही।

वचन और लिंग के दोष—

> ताकें तिया के मन मेरी गयौ लक पर
> निकसि तहा तें धॅस्यौ त्रिवली प्रभा म री।
> रोम अवली तें उच कुच मे सरुच लसि,
> सकुच म की ही लूम्यौ हेम के हरा म री॥
> 'ग्वाल कवि उचकि वहा ते अधरा प गयौ
> नासिका चढन गिरि परयौ कौन यामे री।।रसरग ९।१८॥

उक्त पक्तियो म कुच और 'अधरा दोनो एक वचन मे प्रयुक्त हुए हैं। नियमानुसार ये बहुवचन म ही प्रयुक्त होने चाहिये। रीति कविया ने इन शब्दा की ओर इस दृष्टि से ध्यान नही दिया। प्यारी कुच शम्भु को मैं पूजन करत हो (ग्वाल) मे कुचो का शम्भु के साथ रूपक दोषपूण बनता है। कुच दो हैं, शम्भु एक। परन्तु परम्परा म यही रूपक मान्य चलता रहा है। परन्तु कवि की रचनाओं म वचन सम्बन्धी दोष अधिक और लिंग सम्बन्धी दोष अपेक्षाकृत कम मिलते हैं।

कारक चिह्नों के दोष—ग्वाल ने अन्य रीति कवियो की भाँति कारक चिह्नो को अधिकाशत छोड दिया है। कही कही इनका अनावश्यक प्रयोग किया है। ऐसे सकडा उदाहरण दिये जा सकते है जिनम चिह्न तो गायब है कर्त्ता भी नही लिखा।

१—'ग्वाल कवि' कहै वीर कदी मे किये हैं केते।
२—अजब अनूठे विधि कोले द्व बनाये हैं सो।
३—बोले क्यो न आली का गुनाह उन पाली।
४—मैं न अपराधी तुम साधी क्यो रिसीली रीति।
५—द्दा को द्दा ई वर देन हारी मे निहारी।

उपर्युक्त पंक्तियों मे रेखांकित कर्ता शब्दो के साथ 'ने' विभक्ति नही लिखी गई।

प्राचीन ब्रजभाषा मे 'ने' का प्रयोग बहुत ही कम मिलता है। अवधी की भाँति 'ने' रहित वाक्य भी व्याकरणानुसार शुद्ध हैं। 'मैं किये" का अर्थ है= मेरे द्वारा किये गये'।

स० मया> प्रा० मइ > मैं—यह विकास क्रम है।

ग्वाल कारक चिह्नों के प्रयोग मे विशेष सजग नही रहे। एक कारक के प्रायः सभी चारू चिह्नों को उन्होंने अपने काव्य में इच्छानुसार स्थान दिया है। उन्होने कर्म के 'को', 'कौ', 'कौं' 'कों' चिन्हो को स्वतन्त्रता से प्रयोग किया है। करण और अपादान कारक के लिये 'तें' 'तें, त' से, 'सें', 'सों', 'सौं, अधिकरण कारक मे 'मे', मैं, 'प', 'पर' 'माहिं', 'मांझि', 'पह', 'पाहिं' चिन्ह प्रयुक्त हैं। इनमे से कौं, मैं 'सौं', 'तें' आदि दीर्घ मात्रा वाले चिह्न ग्वाल के जिस जिस हस्तलिखित ग्रन्थ में मिलते हैं, उसी में इनके लघु मात्रा वाले रूप भी लिखे मिलते हैं। यह लिपिकर्त्ताओं की भूल भी ठहराई जा सकती है।

क्रिया रूप—ग्वाल ने क्रिया पदो को यथाशक्ति उनके पूर्णरूप मे ही प्रयोग करने की चेष्टा की है। प्राचीन कवियों द्वारा अत्यल्प प्रयुक्त वर्तमान कालिक 'है' क्रिया का पृथक रूप मे उन्होंने बखूबी प्रयोग करके दिखाया है। वर्तमान कालिक क्रियाओं के रूपो का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है—

इकली प अभागिनि हौं बडो सूनें लागती हैं ॥रसरंग ३।४०॥

भविष्यत कालिक क्रिया पदों मे 'गा', 'गी', 'गे', चिन्हों के प्रयोग के अतिरिक्त इनका एक और स्वरूप रीति के कवि प्रयोग करते थे। ग्वाल की रचनाओं मे कही कही क्रिया पद के अशुद्ध रूप प्रयोग भी मिलते हैं। यथा—

'ग्वाल कवि' एक का जु सामने बिठाय दीनौ
दूजी को बिठाई निज करि मुख ताकी ओर ॥ वही २।६३॥

यहाँ दीनौ' क्रिया पद अनुपयुक्त है इसके स्थान पर 'दियौ' होना चाहिये था। दूसरा पद 'बिठाई भी ठीक नहीं। यहाँ भी 'बिठायो' होना

निगु ण–निगु ण' की रट लगाये हुए हो कृष्ण कब के योगी बने हैं। उनमे तो सगुणों का भंडार भरा है।'

जो पीय ब्याहि लायो   ठेगन सों भरो है ॥ कुब्जाष्टक ७ ॥

दोषारोपिता काहू दासी कुब्जा ने गोपियों के ऊपर 'सूप बोल तो भलई चाल चालनी हू बोल जो कि छेदन सों भरो है' लोकोक्ति के माध्यम से कितना जबरदस्त व्यंग्य प्रहार किया है। यह कवि की लक्षणा शक्ति का ही चमत्कार है।

लोकोक्ति कहावतें अथवा मुहावरे लक्षणा के ही प्रयोग होते हैं। जहाँ इन में अलंकारों का समावेश रहता है, वहीं अर्थ की वक्रता भी निहित रहती है। ग्वाल के साहित्य से इस प्रकार के लक्षणा प्रधान कुछ मुहावरे और लोकोक्तियाँ यहाँ उद्धृत किये जाते हैं। ये लक्षणा के अनूठे प्रयोग हैं—

१। बिरहा के परी पिजरा गिन बोलत बोल महा अभरे हैं।
खान न पान की स्वाद कहूँ द्रग मूँदे कछू औ कछू उघरे हैं॥
त्यों कवि ग्वाल तियान को जूथ सब उपहासन में पसरे हैं।
बूझ न बात कछू कहूँ तोय री कामिनि प पथरा से परे हैं॥

—रसरंग ९।१३० ।

'परी पिजरा' गिन बोलत बोल अभरे हैं, द्रग मूंद बूझ न बात में मुहावरों का सुन्दर प्रयोग दर्शनीय है। पथरा से परे हैं' मुहावरे में उपमा अलंकार की भी छटा है। इन उदाहरणों से ग्वाल की भाषा की लक्षणा शक्ति का पूरा आभास मिल जाता है।

(ग) व्यंजना—जहाँ अभिधार्थ और लक्ष्यार्थ के अतिरिक्त एक तीसरे प्रकार के अर्थ का भी बोध होता है वहाँ व्यंजना का व्यापार होता है। जिस शब्द से इस अर्थ का बोध होता है वह व्यंजक और इस व्यंजक शब्द से प्रतिपादित अर्थ व्यंग्यार्थ कहलाता है। यद्यपि शब्द में इस अर्थ का प्रत्यक्ष निर्देश नहीं होता, परन्तु प्रसंग विशेष में वह स्वयं ही ध्वनित हो जाता है। अतः व्यंजना शक्ति शब्द की अनेकार्थी शक्ति से भिन्न रूप में काम करती है। व्यंजना के पर्याप्त उदाहरण पीछे वक्रतामूलक अलंकारों के प्रसंग में दिये जा चुके हैं। यहाँ व्यंजना के कुछ अन्य उदाहरण प्रस्तुत हैं—

१–त्रिविधि बयार बहे जहां तहां चलो हरिराय।
गहवर वन निरजन जहाँ तहा न रवि हरसाय ॥साहित्यानन्द ११।१२७॥

यहाँ गहवर वन निर्जन है, सूर्य का प्रकाश भी नहीं है। उधर

त्रिविधि समीर प्रवहमान है। समय और स्थान दोनों ही रतिक्रीडा के अनुकूल हैं। इससे व्यंग्य निकलता है कि निश्चय ही क्रीडा करेंगे।

२—परिक्रमा गिरिराज की करन चलौगी भोर।
अटवी दुपहर काटि हौं जहाँ सघन वन घोर ॥वही ११।१२१॥

नायिका का मित्र समीप ही है। 'सघन वन में दुपहर काटने' से व्यंग्यार्थ निकला कि वहीं क्रीडा करेंगे।

३—कहा कहौं कहत न बनें, प कछु करौं बखान।
मोरन की सी गति लई, तुम हू स्याम सुजान ॥ वही ११।११८ ॥

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ग्वाल की भाषा में शब्द की विविध शक्तियों का नाना विधि समावेश है। भाषा काव्यगत सौन्दर्य को व्यंजित करने में प्रायः समर्थ है।

(घ) नाद सौन्दर्य—अनुकरणात्मक शब्दों की योजना द्वारा अभीष्ट नाद ध्वनि की सृष्टि करके प्रसंगानुकूल चित्र उभारने में ग्वाल पर्याप्त कुशल हैं। वर्षा की उमड़ती घुमड़ती घट घटाओं के नाद सौन्दर्य की चर्चा हम कवि के प्रकृति वर्णन में कर चुके हैं। यहाँ युद्ध में तोपों की ध्वनियों द्वारा प्रसूत नाद सौन्दर्य का एक उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है—

फौजें महाराज शेर शेरसिंह जू की चलीं,
घन घहरात गड़ गड़ गड़क्यो करै।
पलटन की पगति त्यों पलक न फरि पर
फेर फुरती से फड़ फड़ फड़क्यो करै ॥
ग्वाल कवि कहै बल तोप की तड़ाक
तेज सड़र सड़र सड़ मड़ सड़क्यो करै।
तड़ड़ तड़ड़ ताड़ तड़ड़ तड़ड़ ताड़
तड़ड़ तड़ड़ तड़ तड़ तड़क्यो करै ॥ वि० वि० ॥

'घन घहरात गड़ गड़ गड़क्यो करै' 'फड़ फड़ फड़क्यो करै' में तोपों के गुरु गम्भीर मन्द्र घोष और 'सड़र सड़र सड़ सड़' में तोपों के चलन का उपयुक्त योजित नाद जैसे कानों के समीप ही हो रहा प्रतीत हो रहा है। अन्तिम पंक्ति के 'त' 'ड' में निरन्तर तोपों के चलने का घोष निनादित हो रहा है।

(ङ) वृत्ति और गुण

भाषा की सक्षमता और भावों की अभिव्यक्ति में वृत्ति और गुणों का ... महत्वपूर्ण स्थान है। वृत्तियाँ दो हैं—

(१) परुषा और (२) कोमला । गुण तीन हैं—(१) माधुर्य (२) ओज और (३) प्रसाद । इन पर हम पीछे स्थान के रीति निरूपण में विचार कर आये हैं । यहा तो मात्र यह देखना है कि कवि की रचनाओं में किस सीमा तक उक्त वृत्ति और गुणों का निर्वाह हुआ है ।

माधुर्य गुण—इसमें कोमल भावनाओं का प्रकाशन होता है अत यह गुण योजना कोमला वृत्ति के अन्तर्गत आती है । ग्वाल शृंगार के सिद्ध कवि हैं, अत इनमें माधुर्य गुणाश्रित रचनाओं का प्राचुर्य होना स्वाभाविक ही है । निम्नांकित छन्द कोमला वृत्यन्तर्गत माधुर्य गुणोपेत सौन्दर्य का एक अच्छा उदाहरण है । इसकी संगीतात्मकता इसे और मधुर बनाती है ।

मैल करी यारों नैन सैन सर केलें करी
गैल करी रात दिन दस करी रहि कें।
चाहे अब अब करी दरसन दवै करी,
भोजन ह्या प वै करी निज रुचि चहि कें ॥
ग्वाल कवि' मोहि निज खुसी ही की जायो करी
जुदी जिन जायो करी कहीं पाव गहिकें ।
छिपि कें न जवो करी बसन सजवो करी
पानि पान लवो करी जवो करी कहिकें । ॥रसरंग १।११०॥

ऊपर शृंगार के संयोग पक्ष में कोमल कान्त पदावली में माधुर्य गुण उदाहृत है ।

ओज गुण—इसका संयुक्ताक्षरों, द्वित्व वर्णों, टवर्गी से युक्त शब्दों की योजना में परुषा वृत्ति का ही ध्यान रखा जाता है । संयुक्ताक्षरों का ओजो गुण मय छन्द अमृत ध्वनि है । ग्वाल की एक अमृत ध्वनि का उदाहरण प्रस्तुत है—

गहि गहि कर तरवार को, हीरासिंघ समत्थ ।
मत्तगज हय रत्थ प, किन्ति ग्वाल कवि कत्थ ॥
कत्थ गत्थ अगत्थ सुनियत पत्थ खलभल ।
मत्थ धुनि हरि पथ्य धरक्कि कुपथ्थ बलचल ॥
लथ्थ पथ्थ अनथ्थ सुनथ्थ नथ क्किय लच्छर्छाहि ।
गुथ्थत रुंडन मुंड सुभट हताहत भुज गहि ॥ वि० वि० ४७१ ॥
गज्ज गज्ज सन सन । भज्ज भज्ज धन्न धन्न ।
घाइ घाइ झट्ट झट्ट काटि काटि कट्ट कट्ट ॥वही ४१४॥

प्रसाद गुण—प्रसाद गुण सभी रसो म स्थित रहता है। माधुर्य और ओज का सम्बन्ध भाषा से बाह्य से होता है, जबकि प्रसाद अथ से सम्बद्ध रहता है। प्रसाद गुण सवलित एक कवित्त कलियुग की 'कीर्ति' मे उप स्थित है—

> ईरषा की सन लकें कलजुग भूप आयो,
> झूठ के नगारे सो बजत दिन रात हैं।
> काम क्रोध मोह लोभ सग सभी धनु नेजा
> अन्याय अखड सो प्रचड फहरात हैं॥
> 'ग्वाल कवि' गब्बर गसील गोल गोला चलें,
> टाना कूर बचनो के पूर लहरात हैं।
> हूजियो हुस्यार यार साच ते मवास माहि
> पाप की पताका आसमान फहरात है॥प्रस्तावक २९॥

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्वाल भाषा गत विविध शब्द शक्तियो द्वारा काव्य म उपयुक्त सौन्दय बोध उत्पन्न करने की क्षमता रखते थे। इनकी शब्द योजना वृत्तियो के उपयोग म भावाभिव्यजना के प्राय सवथा अनुकूल है।

(उ) उक्ति वैचित्र्य

कवि कम-कौशल जन्य शब्दाथ चारुता उत्तम काव्य का सहज अग है। इस से भाषा की धार पनी बनती है, जो व्यग्य को तीव्रता प्रदान करती है। इस का नाम उक्ति वचित्र्य है जिसे शास्त्र मे 'वक्रता' कहते हैं। वक्रोक्ति जीवित कार ने इसके ६ भेद किय हैं—(१) वण विन्यास वक्रता, (२) पद पूर्वाद्ध वक्रता (३) पदपराद्ध वक्रता, (४) वाक्य वक्रता, (५) प्रकरण वक्रता और (६) प्रबन्ध वक्रता। ग्वाल के उक्ति वचित्र्य के सन्दभ म इन्ही शीषको म विचार करना अपेक्षित है।

(१) **वण विन्यास वक्रता**—इसके अन्तगत अनुप्रास योजना, वर्गान्तयोगी स्पर्शों त, ल, न आदि वर्णों के द्वित्व तथा रेफादि वर्णों की आवृत्ति, यमक योजना आदि आते हैं। ग्वाल ने इन सभी तत्वो का अपनी रचनाओ म पर्याप्त कुशलता के साथ निर्वाह किया है। अनुप्रास के प्रति इनका विशेष आग्रह रहा है। इन्होने पद पद पर अनुप्रासो का ऐसा समा बाधा है कि कही कही कविता के भाव भी दब म गये हैं। इन के कुछ उदाहरण नीचे दिय जाते हैं—

१—झूमे झूकें झिझकें झिहरें झुमका झमकें झपकें झपकीन म ।
—रसरग ११८९ ।

२— ग्वाल कवि' कहें चलें तोप की तडाडें तेज
सडर सडर सड सड सडक्यौ कर ।
तडड तडड ताड तडड तडड ताड
तडड तडड तड तड तडक्यौ कर ॥वि० वि०॥

३—लाल लाल गिंदुक गुलान लाल लाल गुल
गालिब गुलाब मोल गावौ गुल गुल की ॥षट्ऋतु ६८॥

४—गावत धमार धूम धाम धाम धाय धाय ।
धीर ना धमत मौज फौज के नगीच मे ॥वही ७१॥

कहना न होगा कि ग्वाल की प्रतिभा अनुप्रास योजना म बडी लगन शील रही है । इनकी रचनाओ म से ऐसा छद खोजना कठिन ही होगा जो अनुप्रास से आभासित न हो ।

जैसे कान्ह जान तसे उद्धव सुजान आय
हैं तो पाहुने ये पर प्रानन निवारें लेत ।
लाख वर अञ्जन अजाय इन आखिन तें
तिनको निरजन कहय भू ठ धारें लत ॥
ग्वाल कवि हाल ही तमालन म मालन म,
ख्यालन मे खले हैं कलोल किलकारें लत ।
ह्या न परचे री परचेरी सग परचे री
जोग परचे री भेजि परचे हमारे लेत ॥गोपी पच्चीसी १॥

प्रथम परचे' का अथ 'पहचान', द्वितीय का 'दूसरे की सेविका', तृतीय का पुन पहचाने चतुथ का अथ 'पत्र' और पचम का अथ है 'परिचय । यमक का यहा अच्छा चमत्कार है ।

(२) पदपरार्द्ध और पदपरार्द्ध वक्रता— पदपूर्वार्द्ध के आठ भेद किय जाते हैं—(१) रूढि वचित्र्य वक्रता (२) पर्याय वक्रता, (३) उपचार वक्रता (४) सवति वक्रता (५) विशेषण वक्रता (६) वृत्ति वक्रता (७) लिंग वचित्र्य वक्रता तथा (८) क्रिया वचित्र्य वक्रता । रूढि वचित्र्य से आशय कोश तथा लोक व्यवहार म प्रसिद्ध अथ क अन्तगत लोकोत्तर चमत्कार उत्पन्न करने से है जबकि पर्याय—वक्रता की सफलता पर्यायवाची शब्दों के उनकी आत्मा के अनुसार प्रयोग म मानी जाती है । उपचार वक्रता जहाँ साम्यमूलक अलकार—व्यापार का पर्यायमात्र है, वहाँ विशेषण का वदग्ध्य

पूण प्रयोग विशेषण प्रधान अलकारा की कोटि म रखा जा सकता है—वसे अलकार के अभाव म भी विशेषण वस्तु वणन को सुन्दर बना देते हैं। सवृति वक्रता का सम्बन्ध क्रमश सना आदि के गोपन तथा समस्त पदावली की योजना मे उत्प न चमत्कार से है।[1] यह परार्द्ध वक्रता का भी काल, कारक वचन, पुरुष, उपग्रह (धातु पद) सूचक प्रत्ययों तथा निपातन आदि के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। य भेद प्राय सस्कृत क आधार पर हैं। अत प्रकृति और प्रत्यय की भिनता होने क कारण व्रज भाषा म इन के उदाहरण भाषानुकूल विशेषताओं के साथ ही मिलेंगे। ग्वाल सस्कृत व्याकरण म नाता प्रतीत होत हैं क्योंकि उनकी रचनाओं मे य विशेषतायें प्राय प्राचुय के साथ उपलब्ध होती हैं। इस प्रकार क कुछ उदाहरण नीच दिये जाते हैं—

१—रूप गहगहे म अनूप डहडहे म त्यो मन चहचहे म सदाई नहे नह म।
रहे न मनोरथ नियाहति बहे में बछू कवहू सहना दाग विरहा क डहे म॥
'ग्वाल कवि' मद चहचहे महलहे नन उलहे अरुन डारे मन महमहे म।
घातके चहे मे नित छवि के छहे मे अहे,
बात के कहे म उमहे म लाल लहे मे॥ रसरग ४।७८॥

यहाँ रेखाकित शब्द अपने विशिष्ट अर्थों द्वारा छन्द म प्रसगानुकूल चमत्कार उत्पन्न कर रहे हैं।

२—हेमी सूमशान की परी है आनि आभा याते,
ह्व गय वसती के कपोल मन भाये हैं।
ग्वाल कवि लाल ने लगाई ख्याल प्यायो मद,
ह्व गय कपोल लाल लास ललचाये हैं॥वही २।५५॥

रेखाक्ति शब्द विशेषण हैं और विशेष्यो के वस्तुगत सौन्दय मे वद्धि कर रहे हैं।

३—प्यारी लो तन लाल म फूले दग अरविंद।
विलसनि रसमकरन्द हित, मोमन भयोमलिद॥ दगशतक ६॥

रेखाक्ति पद सामासिक हैं, जो भाषा म विशिष्ट कसावट ला रह हैं।

४—मीन का दिखाइ कचुकी तें फून लक एक,
पर क पतोआतर धरि कें चली गई॥ रसरग ३।४५॥

रेखाक्ति म काल वक्रता है।

५—पति ही ते पति और सपति सुगति रूप
पति ही सो रघुपति बाधक विपति को॥वही १।१६८॥

---

१ मतिराम कवि और आचाय—डा० महेन्द्र कुमार पृ० २४१।

रेखांकित शब्दों में ग्वाल वक्रता एवं प्रत्यय निपात वक्रता दृष्टव्य है।

अन्त साक्ष्य के सम्यक् अध्ययन से विदित होता है कि ग्वाल को भाषा पर व्यापक अधिकार प्राप्त था। इनका शब्द भंडार अतुलनीय है, जिसमें से अपनी अद्भुत शब्द चयन शक्ति द्वारा वे अवसरानुकूल लचीले, लाक्षणिक या प्रतीकात्मक शब्दों का चमत्कृति पूर्वक प्रयोग करते दिखाई देते हैं। काव्य के अपने विशाल विस्तृत क्षेत्र में सानुप्रासिक पदावली के व्यापक प्रयोग कौशल को देखकर सहसा आश्चर्य करना पड़ता है कि रीति का एक परवर्ती कवि अत्यन्त स्वाभाविकता और लाघव के साथ काव्य में शब्द सौंदर्य को कितनी सफलता के साथ सम्पुटित करता है। उनकी शृंगार रसोपयुक्त भाषा की तो दाद देनी पड़ती ही है इनके वीर काव्यों की ओजस्वी वाणी को भी नहीं भुलाया जा सकता। इनकी चमत्कृत भाषा सदा रसानुगामिनी है। रीति के दो एक कवि को छोड़कर किसी का क्षेत्र ग्वाल के समान विस्तृत नहीं है और देव, मतिराम आदि दो एक कवियों को छोड़कर शायद ही किसी अन्य को भाषा पर इतना व्यापक अधिकार प्राप्त हो, जितना ग्वाल को है। उसका व्यापक शब्द कोश सफल प्रतीक विधान पदे पदे लाक्षणिक प्रयोगों की प्रचुरता आद्योपान्त अलंकरण का निर्वाह गुण और रीतियों का समन्वय आदि विशेषतायें उक्त कथन की मुखर साक्षी हैं।

(ऊ) ग्वाल की शैली

शैली के स्वरूप की चर्चा करते हुए विद्वानों ने इसके चार प्रमुख गुण बताये हैं—(१) ओजस्विता, (२) सजीवता (३) शैल्स्ता और (४) प्रभाव शालिता।[१] प्रकारान्तर से पीछे इन गुणों पर ग्वाल की कविता के सम्बन्ध में पर्याप्त विचार किया जा चुका है। यहां तो शैली के अन्तर्गत सामूहिक प्रभाव की चर्चा ही अभीष्ट होगी। ग्वाल ने शृंगार रस की रचनाएँ प्रमुख रूप से की है। इसमें उस शैली की हम विशेषता देखनी है जिसमें कवि प्रसंगानुकूल और विषयानुकूल शब्द योजना का विधान करके भाव में स्वयं ही उद्दीप्त होने की उस सशक्तता का समावेश कर देता है जो रचना में प्राणवत्ता फूंकने के साथ साथ किसी व्याख्या की अपेक्षा नहीं करती। एक उदाहरण देकर हम इसे स्पष्ट करेंगे—

उरि गई बात पीय   लाजवती सी सिकुरि गई ॥रसर॥ ४।१९॥

[१] कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० व्रज नारायण सिंह, पृ० ४२८।

यहां द्रष्टव्य है कि केवल नायक के परदेश जाने की बात सुनने मात्र से नायिका की विकलता का ठिकाना नहीं रहा है, जबकि वह अभी गया भी नहीं है और दोनों में भेंट सम्भावना सर्वथा समाप्त नहीं हुई है। कारण की सम्भावना ने ही नायिका के कार्य व्यापार अस्त व्यस्त से दिखाई पड़ने लगे हैं। जब पार्थक्य होगा, तब नायिका की क्या दशा होगी यह कल्पना से परे है। पति वियोग की कल्पना मात्र से उसके अंगावयवों में विरहाग्नि 'पुरि गई' है—व्याप्त हो गई है। जिससे वह इतनी शोकाकुल है कि दुहरी। मुरि गई जुरि गई है। जो खेल की उमंग। नायिका मुग्धा है उसके तनमन में लीन थी वह सहसा 'दुरि गई'—उतर गई। नसनस में पीड़ा का साम्राज्य हो गया और मुख द्युति और। अधर और। से औरही होगई। यही नहीं परम सहचरी सखीस भी वह लड़कर बिछुड़ गई। ग्रीवा नत। निहुरि। हो गई तथा नेत्रों से निचुड़ ही गई—श्रीहीन हो गई। सास सामने खड़ी है। उसे देखते ही अचानक उसमें व्रीड़ा का त्वरित संचार हुआ और वह तुरंत मुड़कर कोठरी में जा छिपी। लज्जा तिरेक से वह छुईमुई की भांति सिकुड़ कर रह गई। वैकल्प के इतने सारे कार्य व्यापारों के अन्तर्गत कहीं भी शिथिलता नहीं आने पाई है। भाव सशक्त प्राणवान और मूर्त है। 'दुरि गई बात' से लेकर 'सिकुरि गई' तक की समस्त शारीरिक और मानसिक चेष्टायें नितान्त मनोवैज्ञानिक ढांचे में ढली सी हैं जिन में गतिमयता का नैरन्तर्य और प्रबल प्रवेग है। एक साथ कई सचल बिम्बचित्र पाठक के नेत्रों के समक्ष स्वतः ही सजीव हो जाते और उन पर अपना अचूक प्रभाव डालते हैं। यह सब कवि की सफल शब्द योजना का प्रतिफलन है। 'दुरि गई' 'पुरि गई' 'मुरिगई' 'जुरि गई,' 'घुरि गई' 'ढुरि गई, 'बिछुरि गई, 'लरि गई, 'निहुरि गई' निचुरि गई' 'दुरि गई,' 'मुरि गई' और 'सिकुरि गई', पद कोमल कान्त, माधुर्य गुणोपेत, अलंकारिक होने के साथ साथ कितने सटीक भी हैं। इनमें से एक भी शब्द निकल जाय, तो पूरा का पूरा भाव ही नष्ट हो जायगा। कवि ने शब्दों की आत्मा में पैठ कर ही इस अपूर्व भाव सौंदर्य को घटायित किया है। कहना न होगा कि ग्वाल ने भावों की माला चुन चुन कर मोती पिरोये हैं आबदार और निष्कलंक।

वीर रस के अन्तर्गत कवि ने राजा ध्यानसिंह के क्रुद्ध अन्तर्द्वन्द्व का सजीव चित्रण इस प्रकार किया है—

राजा ध्यान सिंह के लहरें जराइ डारों ये ॥वि० वि० ३३३॥

महाराजा शेर सिंह और राजकुमार प्रताप सिंह के अजीत सिंह और तर्रासिंह द्वारा विश्वासघातपूर्ण नृशंस वध किये जाने पर मन्त्री राजा ध्यान-सिंह के क्रोध का ठिकाना नहीं रहा। उनके मन में अनेक लहरें उठ रही हैं। वद्राहियों को आनन फानन में नष्ट करने का एक के पश्चात् एक विकल्प आता है— भूमि में जीवित गड़वा दूं, तोप से उड़वा दूं, हाथियों के पैरों तले कुचलवा दूं, मौयर हथियारों से अंग प्रत्यंग पृथक् पृथक् करा दूं', बारूद से उड़वा दूं और शस्त्र जल में पटक दूं या जला दूं आदि के द्वारा क्रोध भाव का मूर्त रूप खड़ा किया गया है। क्रुद्ध व्यक्ति के मनोविज्ञान का यह सफल अध्ययन प्रस्तुत करता है। कहना आवश्यक नहीं कि कवि भावों को प्राणवत्ता प्रदान करने में पूर्ण सफल हुआ है। इस सफल भाव चित्रण का श्रेय कवि की सशक्त शब्द चयन शक्ति को है।

१—सकेतात्मक शैली ग्वाल की रचनाओं में लक्षणा और व्यंजना गत वक्रता की प्रायः पूर्ण व्याप्ति है। इनमें लक्षणा का अर्थगत चमत्कार वर्णन की शैली द्वारा अधिक प्रभाव के साथ सामने आता है। इसमें अर्थगत शक्तियों का तो पूरा पूरा योग है ही, प्रस्तुतीकरण की भी कवि की अपनी सूझ बूझ महत्वपूर्ण है। अनेक गोपनीय बातों को संकेतों द्वारा किसी माध्यम से कह जाने की परम्परा में भाषा की संकेतात्मक शैली के दर्शन होते हैं। निम्नांकित छन्द में नायिका के संकेत व्यापार का एक ऐसा ही अनूठा सलज्ज चित्रण प्रस्तुत है जिसमें गुरुजनों के मध्य बैठी नायिका तिरछी चितवन से सब कुछ कह देती है। भाषा के प्रस्तुतीकरण की यह शैली संकेतात्मक है—

बीच गुरु नारिन ... मुख पाइ कें ॥वही॥

२—संगीतात्मक शक्ति समन्वित शैली शब्दों की विशिष्ट योजना से छन्द की भाषा में एक लय सी उत्पन्न होकर नाद सौन्दर्य की सृष्टि कर देती है। यह शैली की संगीतात्मक शक्ति होती है। ग्वाल की रचनाओं में प्रचुर संगीतात्मक छन्द सरलता से अनेकत्र मिल जाते हैं। पीछे इस शैली के कई छन्द उदाहृत किये जा चुके हैं।[१] एक उदाहरण यहाँ दिया जाता है—

> बारियाँ महल की मुरो हैं ता न हलकी सु
> रास परमल की अगीठिया अनल की।
> जोतें मन जल की चगेरें हैं निकल की
> सुप्यालियाँ अमन की पलगें मखमल की ॥

---

१ (अ) रसरंग (आ) वही, ४.१९ (इ) वही, ४।७८ (ई) वही, ९।१७२।

'ग्वाल' कवि थल की सचीली लक बल की
वो पून ममतन की प्रभाम झलाझल की ॥
विपरीत ललकी कहै की वात कलकी,
सुवाले छवि छलकी दुमाले म उछन की ॥

छन्द—रीतिकालीन कवियो न अधिकाशत दोहा, कवित्त और सवया इन तीन छन्दो का ही अपनी शृ गारिक रचनाओ म प्रयोग किया है। लक्षण ग्रन्थो म भी प्राय ये ही छन्द प्रयुक्त हैं। प्रबन्ध काव्यो म वीर गाथा परम्परा के योग्य चौपाई, भुजग प्रयात, नाराच आदि छन्दो का भी प्रयोग हुआ। ग्वाल ने रीति निरूपण और रीतिबद्ध शृ गारिक रचनाओ म परम्परानुगत दोहा कवित्त और सवया छन्दो को अपनाया है। इनमे भी अपेक्षाकृत दोहो की प्रधानता है। 'विजय विनोद' और 'हम्मीर हठ' प्रबन्ध काव्यो म इन तीनो छन्दो के अतिरिक्त सोरठा प्रमाणिका, अमृतध्वनि भुजग प्रयात, शार्दूलविक्रीडित पद्धरी मल्लिका, छप्पय, चौपाई आदि भी लिखे गये हैं। ग्वाल के लिखे कुछ प्रमुख छन्दो पर हम यहाँ विचार करेंगे।

दोहा—ग्वाल ने दोहो का सर्वाधिक सख्या म प्रयोग किया है। साहित्यानन्द के कुछेक लक्षणो को छोडकर, जो कवित्तो म हैं शेष सवत्र ही दोहों म लक्षण लिखे गये हैं। दूषणदर्पण पूरा ही दोहा म है। लक्ष्य प्राय सवत्र ही कवित्त और सवैयों म लिखे गये हैं। साहित्यानन्द म अधिकाशत दोहो म लक्षण लिखकर कवि ने अपनी कवित्त की प्रवत्ति को एक मोड दे दिया है। यहा तक कि अलकारो के सम्पूर्ण लक्षण लक्ष्य दोहा मे ही हैं। ग्वाल ने परम्परानुगत दोहे क तेईस भद माने हैं— (१) भ्रमर, (२) सुभ्रामर, (३) शरभ, (४) श्येन (५) मडूक (६) मकट (७) करभ (८) नर (९) हस, (१०) गयद, (११) पयोधर, (१२) बल (१३) वानर (१४) त्रिकल (१५) कच्छप (१६) मत्स (१७) शादूल, (१८) अहि, (१९) विडाल, (२०) श्वान, (२१) वर (२२) उदर और (२३) सप।[1]

---

१ भ्रमर सुभ्रामर सरभ कहि स्पेन बहुरि मडूक।
मरकट करभ जना समुझि बहुरि सुहस अचूक ॥६८॥
मदकल फेर पयोघर सुवल अस वानर मान।
त्रिकल मुकल भानि मत्सपुनि सारदूल पहिचानि ॥६९॥
अहि वर ब्याल कहि स्वान उदर अरु सप।
दोहा तेइस विधि कहे, जिनको है अति दप ॥७०॥
—साहित्यानन्द प्रथम स्कन्ध।

कवि ने अपनी रचनाओं में प्रायः सभी प्रकार के दोहों का प्रयोग किया है परन्तु दोहों का नाम निर्देश कहीं भी नहीं हुआ। उदाहरणार्थ कवि ने 'भ्रमर' का लक्षण २२ गुरु और ४ लघु वर्ण कुल २६ मात्रायें लिखी हैं, जो निम्नांकित दोहे में लक्षित हैं—

काहा काहा हू सदा ताके संग भाइ।
S S S ͜ I S S S S S S I
राधा राधा गाइये बाधा बाधी जाय ॥वही १।१७७॥
S S S S S I S S S ͜ S S I

कवित्त—यह रीतिकाल का अत्यंत प्रसिद्ध छन्द है। कवित्त में अधिकांशतः ८ ८ ८ ७ पर यति का नियम होता है। देखिये—

| ए रे मन मेरे सब | | काज तेरे सिद्ध होय |
८ ८
| सिद्ध निद्ध साज होय | | सो इलाज करिये | = ३१
८ ७
| कोटि कोटिन जाकी | | दुति ◌ समान है न, |
८ ८
| पिता वृषभान जाके | | ऐसो ध्यान धरिये | = ३१
८ ७ —रसरंग १।१।

एक दूसरे प्रकार के घनाक्षरी में ८ ८ ८, ८ पर यति होकर ३२ वर्ण होते हैं। इसे रूप घनाक्षरी कहते हैं। ग्वाल ने ३१ और ३२ वर्ण वाले दोनों कवित्तों का ही अधिकांशतः प्रयोग किया है। ३२ वर्ण वाले कवित्त का उदाहरण दिया जाता है—

| भूप बलवारे छन | | वारे कलवारे किते |
८ ८
| धनुष उठाय हारे | | वठे बदरंग होय | = ३२
८ ८
| दशरथनंद पानि | | मृदु अरविंद हू ते |
८ ८
| बाल गति मदकौतु- | | लन मौन अंग होय | = ३२
८ ८ —वही१।१०४।

सवया—कवित्त के उपरान्त यह रीति काल का परम प्रिय छन्द रहा है। आचार्यों ने इसके ४८ तक भेद किये हैं। कवि ने प्राय ८ प्रकार के सवया का प्रयोग किया है—(१) मदारमाला, (२) मदिरा, (३) माद, (४) मत्त गयन्द, (५) चकोर, (६) सुमुखी, (७) वागीश्वरी और (८) अग्र। सवया म २२ से लेकर २६ तक वर्ण होते हैं। सम्पूर्ण छन्द एक गण पर आधत रहता है, जिसके कारण इसमे संगीतात्मकता आ जाती है। ग्वाल ने अधिकांशत मत्तगयन्द दुर्मिल और चकोर सवया लिखे हैं।

मत्त गयन्द—यह २३ वर्णों का होता है। आदि म ७ भगण और अन्त म दो गुरू आते हैं। चकोर सवैया भी २३ वर्णों का है। मत्त गयन्द का उदाहरण—

प्रान पियारि निहारि के हाल लिखौं जिन चालन सो रहती हैं।
ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। । ऽ। ।ऽ ।। ऽ।। ऽ ।।ऽऽ =२३वण
कीन्ह भली न रह मन को तन छी न छिना छिन ही लहती हैं।।
ऽ । ।ऽ । ।ऽ ।। ऽ ।। ऽ । ।ऽ ।। ऽ ।।ऽऽ =२३ वण
यो कवि ग्वाल गरीबि गह वितर्जे दिन रात हिय दहती है।
ऽ ।। ऽ ।।ऽ। ।ऽ ।।ऽ ।। ऽ। ।ऽ।।ऽऽ =२३ वण
सौतिन के विप बोरि कुचाल अलाल भई सि सब रहती हैं।रसरग १११०१।
ऽ। ।ऽ ।। ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ ।।ऽऽ =२३ वण

इनमे ७ भगण ऽ।। और अन्त म दो गुरू हैं।

दुर्मिल—यह २४ वर्णों का और आठ सगण का छन्द है। १२ १२ पर यति होती है। आरम्भ म दो लघु और अत म एक गुरू का नियम है। देखिये—

पिचकारिन सौं वट का छिरक्यो जन धारन सो जटा जागनि हैं।
।।ऽ।।ऽ ।। ऽ ।।ऽ ।। ऽ।। ऽ ।।ऽ।। ऽ =२४ वण
तिहि छाह घनी म विचोवा खसो खम ही की कनातें सुपागति हैं।।
।। ऽ। ।ऽ। ।ऽ ।।ऽ ।। ऽ । ।ऽ। ।ऽ। । ऽ
कवि ग्वाल' वु सौचि गुलाब घने पै जलाव तऊ न विरागनि है।
।। ऽ। । ऽ । ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। । ऽ
न छुएँ न छुएँ सिय राइ कहू न रुचें न रुके लुजें लागति हैं।।प० वराग ७।।
। ।ऽ। ।ऽ ।। ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ।ऽ ऽ। । ऽ

ग्वाल ने २५ वर्णों के ८ भगण और एक गुरु वाले सवया भी लिख हैं। परन्तु इनकी संख्या अत्यल्प है। एक उदाहरण देखिये—

भभराइ गई विरहागिनि म मति की गति ▯ कतराय गई सी।
।।S। ।S ।।S । । S । । S । । S । । S । । S S
निय राइ गई प्रिय आवन औधि तऊ तरुनी अधिराय गई सी ॥
। । S । ।S । । S । । S । । S । । S । । S । S S
सिय राइ गई न विथा तन की 'कवि ग्वाल' कहूँ घवराइ गई सी।
। । S । । S । । S । । S । । S । । S । । S । S "
दुवराइ गई पियराइ गई पलिका पै परी हियराइ गई सी ॥रसर ▯ ११७२॥
। । S । । S । । S । । S । । S । । S । । S । । S S

२२ और २६ वर्णो के सवया छन्द कवि ने सम्भवत इसलिये नही लिख है कि उनम लय आदि म कमी या अधिकता के कारण गयता कठिन हो जाता है। कवि का प्रिय छन्द २३ वर्णो का मत्त गयन्द है। कवि न छन्दो म यति का पूरा ध्यान रखा है परन्तु यत्र तत्र यति भग भी हुआ है। न्यून पदत्व दोष भी कही कही लक्षित होता है यह लिपिकारो की कृपा स भी सम्भव हो सकता है। छन्दगत दोषो पर हम आग के अध्याय म विचार करेंगे।

प्रबन्ध काव्यो म ग्वाल ने भुजग प्रयात प्रमाणिका और पद्धरी का प्रयोग सर्वाधिक किया है।

भुजगप्रयात—यह ४ यगण वाला ४ चरण का छ द है। इसम १२ वर्णो की योजना रहती है। ग्वाल ने वीर रस म इसका प्रयोग किया है—
फडक्क भुजा सिंह दल की फडक्क। तडक्क दुहूधा हिये या धडक्क॥
झडक्क पडक्क पगो म चन्क्क। चन्क्क खिल खग्ग लग्ग रडक्क।वि वि ४१९।

प्रमाणिका—यह चार चरण वाला अष्टाक्षरी वर्णवृत्त एक जगण और अ त म गुरु होता है। उदाहरण—

चले गुबार गोल यो। छुटे घुटे सु लोल या।
चढे चढे अकासिय। परे तरे प्रकासिय ॥वि०वि० ४०९॥

पद्धरी—यह अपभ्रश का प्रसिद्ध छन्द है। प्रत्येक चरण म चार चतुष्कल गणो का नियम होता है परन्तु अन्तिम गण म जगण (। ऽ ।) आवश्यक माना गया है। उदाहरण—

कढ्ढु करत भटट चक्र सु मार। अगुरीन रक्ख घूमत धार।
गति अधिक वक्र वज्र समान। झट हनतसीस नत्र प्रमान ॥वही ४२६॥

प्राय ग्वाल ने रीति परम्परागत सभी छन्दों का प्रयोग अपने ग्र थो मे सफलतापूर्वक किया है। इस नाते भी वे रीति का पूरा प्रतिनिधित्व करते दिखाई देते हैं। वे पिंगल शास्त्र के अच्छे ज्ञाता और लेखक हैं।

नवम् अध्याय

ख्याल-साहित्य में प्रतिबिम्बित समाज

मनाओ, युद्धो और सामान्य नागरिकों की सामाजिक परिस्थितियों का ज्ञान होता है। सामाजिक दृष्टि से दूसरा महत्वपूर्ण ग्रन्थ है रसिकानन्द और तीसरा इश्क लहर दरियाव। कवि के इतर ग्रन्थ इस दृष्टि से हीन हैं, ऐसा कहना सर्वथा युक्तियुक्त न होगा। उनमें भी समाज के चित्रों के प्रकीर्ण चित्र खण्ड इतस्तत: खोजने से मिल जाते हैं।

समाज का उच्च वर्ग—उन्नीसवीं शताब्दी में मुगल सम्राट प्राय: सन् १८५७ ई० तक किसी न किसी रूप में अस्तित्व में बने रहे। रणजीतसिंह के प्रसंग में ग्वाल की बस एक पंक्ति इस सम्राट के विषय में मिलती है— दिल्ली त चरत्ता कत्ता बांधि बांधि आये पर साहू सो भए न सर शत्रु की निसा करो।[1] इससे केवल इतना ही आभासित होता है कि मुगल सम्राट और रणजीत सिंह के सम्बन्ध मधुर नहीं थे।

स्वतन्त्र क्षत्रीय शासक मुगल सम्राटों की भांति निरंकुश और ऐश्वर्य शाली होते थे। कुछ शासकों को प्रजा भगवान का ही अंश मानती थी— जब हरिजू ने निज अंस प्रगटायो भायो, रनजीतसिंह नाम पायो सो जहान जान।[2] रणजीतसिंह इतना शक्तिशाली नरेश था कि उस की धाक, बलख, बुखारे और चीन तक थी।[3] स्वयं अंग्रेजों ने उस के प्रति अपनी मैत्री का हाथ बढ़ाया था।[4] उसकी मृत्यूपरान्त भी तत्पुत्र लाहौर नरेश शेरसिंह के शत्रु अतरसिंह को अंग्रेज गवर्नर जनरल ने भी शरण देने का साहस नहीं किया था।[5] नाभा नरेश भरपूर सिंह जैसे कतिपय शासक तो अंग्रेजों के सरक्षित ही थे,[6] ठीक वैसे ही जैसे मुगल सम्राट बहादुरशाह। भरपूर सिंह के पितामह जसवन्त सिंह स्वयं अंग्रेजी शक्ति से आतंकित थे पर तब तक नाभा में कोई पोलिटिकल एजेंट नहीं रहता था। इन शासकों में से कुछ की शक्ति और धाक इतनी होती थी कि दूसरे राजा षडयन्त्र रच कर उन को नीचा दिखाने की भी चेष्टा करते थे। देशी राजा परस्पर एक दूसरे के राज्य का हड़पने की चेष्टा में रत रहते थे, तो दरबारों के उच्च पदस्थ कर्मचारियों को पारस्परिक द्वेष मात्सर्य छल, छद्म, उत्कोच, चाटुकारिता आदि के विषैले कीटाणुओं ने कलहप्रिय, सत्ता लोलुप षडयन्त्रकारी विश्वासघाती, अवसरवादी और रक्तशोषक बना रखा था। उत्तराधिकार का प्रश्न मुगलों की भांति इन देशी राज्यों में भी तलवार द्वारा हल होता था, जिसमें शक्ति

---

१ विजय विनोद—१० २ वही ८ ३ वही १६ ४ वही, १०४
५ वही २६९ व २७२ ६ पुष्पिका इश्क लहर दरयाव।

शाली सत्ता लोलुप सरदार षडय त्रो क विनाशकारी के द्र बनते थे । रणजीत सिंह के प्रथम पुत्र खड्गसिंह की मृत्यूपरा त तत्पुत्र नौनिहाल सिंह की असामयिक और अस्वाभाविक मृत्यु पर रणजीतसिंह क द्वितीय पुत्र महाराज शेर सिंह को राज्य सिंहासन के लिये प्राणो का सौन्द करना पडा । यही नही खड्गसिंह की विधवा रानी चन्द्र कौर तक ने विद्रोहियो स मिल कर गृह युद्ध की आग म घी डाला । अतरसिंह अजीतसिंह, और लहना सिंह के अधार्मिक विश्वासघात ने महाराज शेरसिंह, उनक कुवर और राजा ध्यान सिंह जसे स्वामिभक्त मन्त्री का भी दिन दहाडे वध कर डाला और इस प्रकार रणजीत सिंह के खून पसीने से निर्मित सिखो की एकता का दुग भरभरा कर धराशायी होगया।[1] 'विजय विनोद' के प्राय ७४ छन्दो मे इस लोमहषक विश्वासघात पूण घटना का ऐतिहासिक वणन कवि ने किया है।

यह तो हुई तत्कालीन राज्य दरबारो क सत्ता षडय त्रो की एक झलक। अब राजमहलो म व्याप्त रसरगीनी को देखे तो ज्ञात होता है कि अन्य राजाओ की तो बात क्या है स्वय रणजीतसिंह की विवाहित और अविवाहित ११ पत्नियां थी।[2] जो उन की चिता मे साथ भस्म हुई। उनक मन्त्री राजा ध्यान सिंह के साथ सती होने वाली नारियो की सख्या १५ थी।[3] कहने का तात्पय है कि तत्कालीन सिख राजमहलो म भी विलास क साधन उपकरणो का अभाव न था। रसिकान द और इश्क लहर दरियाव म ग्वाल ने नाभा दरबार, स्वण मडित राजमहलो[4] आदि के वभव पूण जीवन का वणन किया है। वभव श्रृ गारेषण का पोषक होता ही है। नाभा नगर सुख सम्पन्न है। धन वभव बहु दिशि व्याप्त है।[5] चारो वण अपने अपने धम पर आरूढ हैं।[6] नाभा का दुग अजेय है और तोपो से सज्जित है। सरदारो के भी शाही महल इस युग के वभव के प्रतीक थे। इस की कल्पना सहज ही की जा सकती है। पुत्र जन्म, राज्यारोहण उत्सव विजय पव या ऐसे ही अन्य शुभ दिनो पर दिये जाने वाले दानो म हाथी, घोडा, गाय, स्वण, नाना रत्नाभूषण, हीरे पन्न, माणिक्य, रेशमी परिधान स्वण पालकियाँ, ग्राम आदि का वणन ग्वाल ने किया है। मत्री ध्यान सिंह के पुत्र हीरासिंह क ज म पर दिये गये दान का वणन कवि ने इन शब्दो म किया है—

मु गन की मोतिन प दिवाय हैं॥विजय विनोद ७४।

---

१ विजय विनोद—२६०-३३६ २ वही ९३
४ वही १८ ५ वही, १६

होता था। रणजीतसिंह खड्गसिंह, शेरसिंह, ध्यानसिंह हीरासिंह, जसवंत सिंह, भगवानसिंह और भरपूरसिंह सभी गौ गंगा और ब्राह्मण को हिन्दू धर्म के मूलाधार मान कर इनकी पूजा करते थे। नाभा और लाहौर दरबार में क्रमश पंडितेश गुरुसहाय और पंडितश जल्हा प्रसिद्ध ब्राह्मण विद्वान् थे, जिनका शासक भारी सम्मान करते थे।

तत्कालीन समाज में सब वर्णों से ऊपर ब्राह्मणों की श्रेष्ठता सिद्ध होती है। क्षत्रियों के धर्म की मर्यादा रखने के लिये जम्मू नरेश गुलाब सिंह भारी असमञ्जस में ग्रस्त हैं। चन्द्रकौर रानी की रक्षा करें, यह क्षत्री का धर्म है। शेरसिंह सेना समेत किले का घेरा किये हुए हैं। राजा ध्यानसिंह अभी लाहौर लौट नहीं सके हैं। गुलाबसिंह हीरासिंह से विमर्श करते हैं (देखिये विजय विनोद छन्द २१७ व २१९) अन्त में क्षत्र धर्म की रक्षा का ही विचार पक्का होता है कि अब तो लड़ना ही अनिवार्य है क्योंकि नारी की रक्षा क्षत्रिय का धर्म है—

छोडि देंय किल्ला और अबला गरीबनी कों
तो रहै न धर्म छितिछत्री रघुवसी है ॥वही २१९॥

एक ओर क्षत्रियों का यह आदर्श रहा तो दूसरी ओर अजीत सिंह, अतरसिंह और लहनासिंह जैसे अधार्मिकता में पगे विश्वासघाती क्षत्रिय भी उस समय में देखने को स्थान काव्य में मिलते हैं। परन्तु इन अपवादों को छोड़कर सर्वत्र क्षत्रियों ने आलोच्य काव्य में प्रायः अपने क्षात्र धर्म की रक्षा हेतु अनेकधा आहुति दी हैं। कृषि गो रक्षा वाणिज्य यही क्षात्र धर्म शास्त्र सम्मत कहा गया है। क्षत्रियों ने कृषि गौ और वाणिज्य की सुरक्षा के पूरे प्रबन्ध किये थे। कवि ने रणजीतसिंह के मंत्री ध्यानसिंह के देश पर छन्द की प्रशंसा विजय विनोद के ३३ से ३८ तक के छन्दों में की है।

हिन्दू और मुसलमानों के अतिरिक्त कुछ अंग्रेज जाति के व्यक्तियों की भी चर्चा विजय विनोद में है—'ग्वाल कवि देखि इन्तजाम अंग्रेज पुनी कहै वाह वाह वाह वाह वाह वाई है। (वही छन्द संख्या ४०)

व्यवसाय— राज सेवा उन दिनों भी सर्वोत्तम समझी जाती थी। सभी वर्गों के लोग राजकीय सेवा प्राप्त करने के उद्योग में रहते थे। राज सेवकों को पूरी सुख सुविधाएँ प्राप्त था। समाज में भी इन्हीं की प्रतिष्ठा होती थी। राज कर्मचारियों का आतंक भी जनता पर कम न था। स्वतन्त्र व्यवसायों में कृषि व्यापार, दूकानदारी संगीत, चित्रकला वास्तु शिल्प, काव्य रचना तथा

अन्य छोटे छोटे काम थ। नाभा नगर के कुछ व्यवसायो का वणन कवि ने विजय विनोद क छन्द ७ स १२ मे किया है।

शिक्षा—ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य की ओर से शिक्षा का कोई प्रबन्ध नही होता था और जनसाधारण शिक्षा के लाभ से वचित रहता था। केवल उच्चवग और मध्यम वग ही शिक्षित था, क्योकि इन्हे अपेक्षाकृत अव काश और धन साधनो की सुविधा थी। ग्वाल काव्य मे पडितो ज्योतिषियो, कवीश्वरो एव मन्त्रज्ञाताओ के वणन यत्र तत्र आते हैं, जिमस प्रकट होता है, कि इन विद्याओ का इस युग म प्रचार था।

छहों सास्त्र के क्यन विलायपनु छाई हैं ॥इ० ल० वरिवाव ११७ ३९॥

राजा उक्त सभी विद्याओ का ज्ञाता था। देशी भाषा के अतिरिक्त उम फारसी, अरबी सस्कृत और अग्रेजी भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था—

ललित कलायें—यहा यह कहना पिष्टपेषण लगता है कि काव्य सगीत, नत्य वादन चित्र और वास्तुकलादि को समाज म विशिष्ट स्थान प्राप्त था। राजसभाओ म विविध कलावन्त' और बजन्त्री आदि रहते थे। सितार, बीन तबला सारगी तम्बूरा, नफीरी शहनाई बासुरी मृदग, डफ ढोल साझे चग, पखावज नगाडा तूती, मारू, डफले, खजरी झाझ, मजीरे ढोलक आदि वाद्ययन्त्रो का वणन इस कवि के काव्य म अनेकत्र मिलता है। उदाहरणाथ—

बीन कनून रबाब नये जोर तमासे ॥वही १२९-३०॥

×

घूँधा धन्त्रीन बाजे और तबूर बाजें ॥वि० वि० ३९६॥

नाचने वाले भाड और वश्या नतकिया होते थ। नाना प्रकार के नत्यो का प्रचलन था। विशेषकर उत्सवो म 'नचवये' और 'गवये' बडी सख्या मे एकत्र होते थे और दशको का मनोरजन करत थे। देखिये इश्क लहर दर याव पहली दास्तान छन्द २७ ८, ३१ से ३४, ३९ ४४ व ४५।

विविध विद्याएँ—पटशास्त्रो का वणन ऊपर आ चुका है। ज्योतिष, शस्त्रास्त्र तन्त्र और मन्त्र विद्याओ के अतिरिक्त मल्ल विद्या का भी प्रचार समाज मे था। ग्वाल ने मल्ल विद्या के कुछ दाव पेचो का वणन 'रसिकानन्द के तृतीय प्रकरण म किया है, जो इस प्रकार है—

डारें नाग फांस चख बाधि के पछारें फेर,
छाती चढ़ि करि फेर कूवत तडातडी।

'ग्वाल कवि' मोतीचूर कोल्हुआ कितेकन को
द द ताल मुदन सुभटन सडा सडी ॥
फुटत सुमेर फर टूटत विवान आन,
आसुरी अदष्ट सीस कुटत वडाफडी ॥१३१ प्र० ३॥
× —रसिकानंद

रेलें मुई वरत हस्त पेलें करि वसा फेंट
हस्ती औ कुदस्ती झलि झपत झमका ज्य ।
'ग्वाल कवि' बठक लवेडा वेस कचो एच,
बाहुबली दिग्गज बली ठड बलका सब ॥वही १३०॥

वेशभूषा वस्त्र, आभूषण और अगराग—यह बनाव शृगार, प्रदशन और सुखोपभोग का युग था । समाज मे मूल्यवान तडक भडक वाले आकषक और जडाऊ वस्त्रों का भारी प्रचार था । स्त्री और पुरुष दोनो ही बहुमूल्य रत्नाभूषणो को धारण करने म रुचि रखने वाल दिखाई देते हैं ।

ग्वाल ने रसरग की द्वितीय तरग मे नायिका के प्रसग म खासा जीन झोला कमरखतार किरन, तून ननमुख डोरिया चारखाना, गाता तनजेब मलमल तनसुख बादलारा, तालुआ जरी मसरू सानन गुलबदन कीमखाब आदि वस्त्रा का पुन पुन वणन किया है ।[1] विजय विनोद मे हीरासिंह की बहुमूल्य पोशाक का वणन है । शाहजादे मूल्यवान वस्त्रों के ऊपर जवाहरात पहनते थे—यह वणन इश्क लहर दरियाव म किया गया है ।

स्त्रिया कसे वस्त्र और आभूषण धारण करती होगी इसका अनुमान सहज ही हो सकता है । वे तो दिनरात गहनो से ही लदी रहती थी । जिन म कई वार रत्नाभूषणो को भी नये नये ढग से धारण करती थी । दान म मोती हीरा, माणिक्य पुखराज आदि दने के वणन अनेक्त्र है । नारिया अपन सौन्दय की वृद्धि क लिये विविध अगरागो का प्रयोग करती थी । माथे पर जावक[2] का टीका, हाथो और परो मे महदी[3] लगाती थी । इत्र और गुलाब जल म तो जसे वह अहर्निशि ही डूबी रहती था ।[4] स्त्रिया कघी से बाल सवारती और दातो म मिस्सी लगाती । होठो पर लाली का प्रयोग भी होता था ।[5] मुख सौन्दय के लिये पान का प्रयोग स्त्री पुरुष दोना ही करते थे ।[6]

---

१ (अ) रसरग—२।१०५ (ब) वही २।१०६ २ रसरग ३ वही ५।२२२
४ इश्क लहर दरियाव ५।१७ ५ वही ३।३३ ६ रसरग २।४३ ।

सीसफूल, बणफूल बिन्दी, मुरकी, नथ, बाली, जंजीर नटरन हार, अंगूठी, छाप छल्ला, कड़े जासन, हसली, गुलूबन्द गाजूबन्द, चूड़ी कधनी किंकिणी नूपुर बिछिया, पायजेब, पजनी हमल, तोडिया, बसर आरसी आदि समाज में प्रयुक्त होने वाले सोने चाँदी के विविध आभूषण थे। अपने अपने स्तर के अनुसार विभिन्न जाति के लोग इनका प्रयोग करते थे।

आमोद प्रमोद—समाज शृंगार प्रिय था। अतः ललितकलाओं में स्त्री-पुरुष अपना मनोरंजन ढूंढते थे। गायन, वादन नृत्य, सैर सपाटे इस युग के समाज के प्रमुख आमोद प्रमोद थे। धनी लोग शिकार के शौकीन थे।[1] शतरंज और चौपड़ का खेल स्त्री पुरुष दोनों में ही प्रचलित था।[2] आसव और शराब के प्रयोग के वर्णन भी ग्वाल के काव्य में मिलते हैं। स्त्री पुरुष दोनों ही सम्भवतः इस नशे में रुचि दिखलाते थे।[3] विशेष खुशी के अवसरों पर आतिशबाजी की रोशनी की जाती थी।[4] लोक जीवन में प्रायः विविध मेले और जात इत्यादि जुड़ती थी, जहाँ साधारण स्तर के लोग जाकर अपना अपना मनोरंजन करते थे।[5]

खाद्य पदार्थ—ग्वाल के काव्य में निम्नांकित खाद्य पदार्थों के वर्णन हुए हैं—[6]

मिष्ठान्न—लड्डू बरफी, जलेबी अमृती सूतफनी, खाजा, खजला खोया पेड़ा, खुरमा, लौज, गुलगुला (पूआ) बालूशाही, मिश्री कुलफी, दही दूध आदि।

नमकीन—कचौड़ी, खस्ता, दालमोठ, मठरी पकौड़ी दालसेव, पूरी, समौसे आदि।

मेवा—किशमिश, दाख छुआरे बादाम पिस्ता आदि।

फल—सेब, नासपाती, अमरूद, आम संतरा बेर अंगूर नींबू।

गमनागमन के साधन—ग्वाल ने अपने काव्य में आवागमन के साधनों में प्रायः हाथी, घोड़े रथ पालकी ऊँट, बग्घी आदि वाहनों का उल्लेख तो रीति कवियों की परम्परा के अनुसार ही किया है। रेलगाड़ी का एक छंद में पृथक वर्णन इस कवि ने किया है जिसे हम पीछे उसके वर्ण्य विषयों में उद्धृत कर चुके हैं। हाथी, घोड़े रथ और ऊँट युद्ध में भी काम आते थे।

---

१ विजय विनोद–१।१३१ २ (अ) रसरंग १।१५९ (ब) वही १।१५९ (स) वही २।१०२ (द) वही २।११२ ३ (अ) वही १।८८ (ब) वही १।८० ४ विजय विनोद–५९ ५ (अ) रसरंग ३।७ (ब) वही ३।१४ ६ (अ) विजय विनोद–४८ से ५१ (ब) रसरंग ५।२१ (स) वही ५।१८ (द) वही २।१०७

'ग्वाल कवि' मोतीचूर कोल्हुआ कितेकन का,
द द ताल कुदन सुभन्न सडा सडो ॥
फुटत सुमेर फर टुटत विमान अंन,
आसुरी अदष्ट सोस कुटत कडाक्डी ॥१३१ प्र० ३॥

× —रसिकानन्द

रेलें मुई वस्त हस्त पेलें करि क्सा फॅट
हस्ती औ कुदस्ती झुलि झपत झमक ज्य।
'ग्वाल कवि' कक सवेरा वेस कचो एच,
वाहुवलो दिग्गज वली ठडे धसका सव ॥वही १३०॥

वेशभूषा वस्त्र आभूषण और अगराग—यह बनाव शृगार, प्रदर्शन और सुखोपभोग का युग था। समाज म मूल्यवान तडक भडक वाल आनपक और जडाऊ वस्त्रा का भारी प्रचार था। स्त्री और पुरुष दोनो ही बहुमूल्य रत्नाभूषणा को धारण करने म रुचि रखत थान दिखाई देत हैं।

ग्वाल ने रसरग की द्वितीय तरग म नायिका के प्रसग में खासा जीन बोसा कमरखतार, किरन, तून नैनसुख डोरिया चारखाना, गाढा तनजव मलमल तनसुख चादतारा, सालुआ जरी मसरू माटन गुलबदन कीमखाप आदि वस्त्रा का पुन पुन वणन किया है।[1] विजय विनोद म हीरासिंह की बहुमूल्य पोशाक का वणन है। शाहजाद मूल्यवान वस्त्रा के ऊपर जवाहरात पहनत थे—यह वणन इश्क लहर दरियाव म किया गया है।

स्त्रिया कस वस्त्र और आभूषण धारण करती होगी इसका अनुमान सहज ही हो सकता है। वे तो दिनरात गहनो से ही लदी रहती थी। दिन म कई बार रत्नाभूषणो को भी नये नये ढग से धारण करती थी। दान म मोती हीरा, माणिक्य पुखराज आदि देने क वणन अनेकन हैं। नारिया अपन सौन्दय की वृद्धि के लिये विविध अगरागो का प्रयोग करती थी। माथ पर जावक[2] का टीका, हाथो और परा म महदी[3] रचाती थी। इत्र और गुलाब जल म तो जसे वह अहर्निशि ही डूबी रहती था।[4] स्त्रियाँ कघा से बाल सवारती और दातो म मिस्सी लगाती। होठो पर लाली का प्रयोग भी होता था।[5] मुख सौन्दय के लिये पान का प्रयोग स्त्री पुरुष दोना ही करते थे।[6]

---

१ (अ) रसरग—२।१०५ (ब) वही २।१०६ २ रसरग ३ वही ५।२२
४ इश्क लहर दरियाव ५।१७ ५ वही ३।३३ ६ रसरग २।४३।

मोतीपूम, वलयकन किन्नी, मुरकी, नथ, वाली, जंजीर सन्सर हार, अगूठी, छाप छल्ला, कडे आमन, हमली, गुलूबन्द बाजूबन्द, चूडी पधारी किंकिणी नूपुर बिछिया, पायजेब, पजनी, हमल, साहिया, रसर आरसी आदि समाज में प्रयुक्त होने वाले सोने चाँदी के विविध आभूषण थे। अपने अपने स्तर के अनुसार विभिन्न जाति के लोग इनका प्रयोग करते थे।

आमोद प्रमोद—समाज शृगार प्रिय था। अनेक ललितकलाओं में स्त्री-पुरुष अपना मनोरंजन करते थे। गायन वादन नृत्य, नट-नपाट इस युग के समाज के प्रमुख आमोद प्रमोद थे। धनी लोग शिकार के शौकीन थे।[1] शतरंज और चौपड का खेल स्त्री पुरुष दोनों में ही प्रचलित था।[2] आसव और शराब के प्रयोग के वर्णन भी ग्वाल के काव्य में मिलते हैं। स्त्री पुरुष दोनों ही सम्भवतः इस मद में रति विलास थे।[3] विशेष गुणी के अवसरों पर आतिशबाजी की रोशनी की जाती थी।[4] लोक जीवन में प्राय विविध मेले और जात इत्यादि जुटती थी, जहाँ साधारण स्तर के लोग जाकर अपना अपना मनोरंजन करते थे।[5]

खाद्य पदार्थ—ग्वाल के काव्य में निम्नांकित खाद्य पदार्थों के वर्णन हुए हैं—[6]

मिष्ठान्न—लड्डू, बरफी, जलेबी अमृती, सूतफेनी, खाजा, खजला खोया पेडा गुरमा, लौंज गुलगुला (पूआ) बालूशाही, मिश्री कुल्फी, दही, दूध आदि।

नमकीन—कचौडी, खस्ता, दालमोठ, मठरी पकौडी दालसेव, पूरी, समोसे आदि।

मेवा—किशमिश, दाख छुआरे बादाम, पिश्ता आदि।

फल—सेव, नासपाती, अमरूद, आम संतरा, बेर अंगूर शौफला।

गमनागमन के साधन—ग्वाल ने अपने काव्य में आवागमन के साधनों में प्राय हाथी, घोडे, रथ पालकी ऊंट बग्घी आदि वाहनों का उल्लेख तो रीति-कवियों की परम्परा के अनुसार ही किया है। रेलगाडी का एक छन्द में पृथक वर्णन इस कवि ने किया है जिसे हम पीछे उसके वर्ण्य विषयों में उद्धृत कर चुके हैं। हाथी, घोडे, रथ और ऊंट युद्ध में भी काम आते थे।

१ विजय विनोद–१।१३१ २ (अ) रसरग १।१५९ (ब) वही १।१५९ (स) वही २।१०२ (द) वही २।११२ ३ (अ) वही १।८६ (ब) वही १।६० ४ विजय विनोद–५९ ५ (अ) रसरग ३।७ (ब) वही ३।१४ ६ (अ) विजय विनोद–४८ से ५१ (ब) रसरग ५।२१ (स) वही ५।१८ (द) वही २।१०७

सामाजिक प्रथाएँ—हिंदू शास्त्र विहित प्रथाओं के समाज में अनुसरण का प्रतिबिम्ब विजय विनोद में मिलता है। राजा ध्यानसिंह ने पुत्र जन्म पर ज्योतिषियों को बुला कर जन्म नक्षत्रादि का ज्ञान किया था—'शुभ दिन शुभ घडी शुभदानक्षत्र योग सुन्दर लगन राजयोग सरसायो है।' (विजय विनोद–४३) शुभ मुहूर्त पर कल्याण के प्रतीक केला, मोती तिल, पाचों पल्लव कलश रोचन पान आदि का प्रयोग करके ही नवग्रह पूजनोपरान्त पुत्र का 'आरता' किया गया था।[1]

रणजीतसिंह की रानियां विधि विधानपूर्वक विविध दान कर के ही सती हुई थीं।[2] सती होते समय विवाहित और अविवाहित रानियां क्रमश सिर और पैरों की ओर बैठी थीं।[3] सती प्रथा हिन्दू धर्म का एक अंग थी। रणजीतसिंह का अन्तिम संस्कार विधानानुसार किया गया। बादशाह जू को ज्येष्ठ पुत्र श्री खड्गसिंह आइ आगि दीन्हो भयो जं जं सब्द सोर है। (वही–८३) हिंदू धर्म में ज्येष्ठ पुत्र ही पिता का दाहसंस्कार सम्पन्न करता है। उन के फूलों की सवारी निकाल कर उनको हरिद्वार गंगा जी में प्रवाहित किया गया था—'इति में गंगा का गय बादशाह के फूल।' (वही–१०५)

महाराज खड्गसिंह का राज्याभिषेक बंगों और सौढी ब्राह्मणों द्वारा नवग्रह भूमि, सिंहासन शस्त्रादि की मंत्रों और तीर्थों के पवित्र जल से पुजवा कर ही हुआ था—

सुंदर महूरत बतायो राजतिलक चढायो है ॥वि० वि० १४४॥

सती प्रथा—हिन्दू धर्म में सती प्रथा का प्रचलन था। रणजीतसिंह के साथ उनकी रानियां सती हुई थीं जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है। राजा ध्यानसिंह की मृत्यूपरान्त उनकी पन्द्रह रानियां भी सती हुई थीं। इस का उल्लेख विजय विनोद के छन्द ४४७ व ४४८ में मिलता है।

समाज में अन्धविश्वासों की स्थिति—हिंदू समाज धर्मभीरू था। भगवान और उसके विविध अंशों–देवी और देवताओं की पूजोपासना के अतिरिक्त पीपल आदि वृक्षों की पूजा का प्रचार उन दिनों में था। ग्वाल ने इस विषय में एक संकेत भर किया है—

पेरि वह फेरी जाय पीपर की देन लागी मैं हू देन लाग्यो न्व
॥ रसरंग ३।७ ॥

मियाँ या मसानी की 'जात' में न जाने का भी एक नारी का उल्लेख

१ विजय विनोद–४४ से ४६ २ वही ८७ ३ वही १०६।

है जिस म प्रगट होता है कि इस प्रकार की बातें भी लोक जीवन म प्रच लित थी—

जमुना नहाय न हरि मदिर म आइ कभू,
जात म न जाय पौरि पालो न दिखाय है ।।वही ३।१।।

शकुन और अपशकुन के प्रभाव से उस युग क समाज का मन भली-भाति आक्रान्त था। कोमल हृदया स्त्री अपने बायें अग फड़कने और कौआ के बोलने को अपने विदेश गत पति के शुभागमन का शुभ सूचक प्रतीक मानती है जैसा रमरग के छन्दा १।११८, ४।६५ व ४।६७ स स्पष्ट है।

लोक जीवन म एसा विश्वास आज भी है कि यदि गमन काल म सामने स जलपूरित घडा, घोडा, बछडे के साथ दुधारू गाय, कुए स आती हुई पनिहारिन, फूल फल, दधि, ब्राह्मण वृन्द गोबर भरा डला, कन्या, शराब के बतन, धूप दीप, अमर, श्वेत, वृषभ निधूम अग्नि, घृतपूरित कुम्भ, सिंहासन, पताका, वस्त्र धोता हुआ धोबी रत्नो क साथ साहूकार, नीलकठ नेवला, वृक्षारूढ मयूर मछली, पिक, पाडुकी, छछूदर, दक्षिण दिशा म हिरन आदि दिखाई दें, तो कायसिद्धि म कोई शका सन्देह नही रहता। राजा हीरासिंह की सेना के समक्ष यही सब शुभ दशन कवि ने काव्याकित किये हैं। देखिये विजय विनोद क छ द ३७४ से ३७७ तथा ३७६ स ३८३।

समाज की धार्मिक मान्यतायें ग्वाल रचित का य मे हिन्दू धमगत समस्त देवी देवताओ की उपासना और स्तुति के छन्द प्रचुर मात्रा म पाये जाते हैं। इन का वणन सप्तम प्रकरण म धम, वैराग्य और नीति क प्रसग मे पहले ही किया जा चुका है। तत्कालीन समाज म भागवत धम की उपासना की ही प्रधानता प्रतिबिम्बित होती है। समाज के वग या व्यक्तियो को भाव नानुसार इष्टोपासना करने की स्वतन्त्रता थी। भागवत धम मे भी द्वतभाव अद्वैतभाव, द्वताद्वत और विशिष्टाद्वत भावो से पृथक् पृथक् उपासना की जाती थी। कोई किसी की उपासना करता था, कोई किसी की। प्रत्येक दशा म समाज म आस्तिकता का बोलबाला था। उधर सिखो म दशम ग्रन्थ और दसो सिख गुरुओ की पूजा का भी प्रचलन था। ग्वाल ने राधा कृष्ण बलदेव, राम शिव, ब्रह्मा, विष्णु, सूय, गगा, यमुना त्रिवेणी हनुमान, शीतला, भरव, लक्ष्मी महालक्ष्मी, सरस्वती, ज्वाला, बगुलामुखी, काली, तारा विद्या षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी छिन्नमस्ता धूमावती, मातगी आदि हिन्दू देवी देवताओ की स्तुतियों के साथ साथ सिख धम के दसो गुरुओं की भी स्तुतियाँ लिखी थी। इससे स्पष्ट होता है कि कवि के समय में समाज में बहुदेववाद का प्रच

न था। ग्वाल की निम्नांकित 'सर्वोत्कृष्ट गुरुत्व स्तुति' कदाचित उस युग की हुदयशान की समवाधित उपासना का ही प्रतीक मानी जायगी—

वद यास वाक्य तें अद्वैतता प्रगट कीनी
ना तौ जगजीवन का द्वैतताई जरती।
चारि हू वरन कीन एक ब्रह्म दरसाय
भए ब्रह्ममय दियो जो न हाथ धरती॥
ग्वाल कवि कहैं पथ खालसा अखड मड्यौ,
लालसा को पूरन कन्या है सु न्हती।
हात जो न एसे श्रीगोविंद सिंह महाराज,
तौ न कलिकाल की करालताई कटती॥गुरुपचासा ५०॥

समाज म यो धम के प्रति आस्था प्राय बलवती थी पर तु नतिकता का अधिकाश म अभाव था। नतिकता यो पूणरूपेण लुप्त नही हुई थी और रणजीतसिंह, ध्यानसिंह हीरासिंह आदि जसे चरित्र नायका से धरा सवथा शून्य नही हुई थी। पर तु क्षतरसिंह अजीतसिंह और लहनासिंह जस विश्वास घाती कपटी राजद्रोही और घोर स्वाथ परक यक्ति भी इसी समाज म विद्यमान थे। हम पीछ लिख चुके हैं कि किस प्रकार राजद्रोही और स्वदेश द्रोही अजीतसिंह न लाहौर नरेश क विरुद्ध अग्रेज गवनर जनरल की सहायता कलकत्ता जाकर मागी थी। ब्रिटिश सहायता के अभाव म उसने राजा का बिना शत क्षमा याचनापूवक आत्म समपण कर दिया था। गुरु ग्रथ साहब की शपथादि को शीघ्र ही भुला कर अकस्मात उसन चन्द देशद्रोहियो से मिल कर राजा, राजकुमार एव राजमत्री का दिन दहाडे विश्वासघातपूण नशस वध कर दिया था। ऐस ही सत्तालोलुप महत्वाकाक्षियो क कर्मों क परिणाम स्वरूप धीरे धीरे सारा भारत ही कुछ दिन पश्चात ब्रिटिश झण्डे के नीचे आ गया था। यह दशा नतिकता की दृष्टि से उच्च वग की थी, कि तु समाज क निम्न स्तर भी इसी प्रकार की अनतिकता वतमान थी इसका प्रतिबिम्ब हम आलोच्य काय म नही मिलता।

क्षमा दया करुणा, स्वामिभक्ति वचनाह्लढता, क्षात्रधम, उच्चाशयता, उदारता आदि सात्विक गुणो का भी समाज से सवथा तिरोभाव नही हो गया था इस के लिये यहा पुन महाराजा रणजीतसिंह ध्यानसिंह हीरासिंह, दीवान दीनानाथ पडित जल्ला आदि क दृष्टा त रख जा सकत हैं। 'विजय विनाद' म सत्ता के लिये किये गय विविध षडय त्रो की एक शृ खला वर्णित है, जिसम प्राय खलनायको मे उक्त गुणो का अभाव है।

समाज मे नारी का स्थान—ग्वाल की नारी कल्पना एक चतुर (द्विविध) गुणी (अथवा), 'विविध जायका दायका' (रति वेलि गत) अलौकिक सौन्दर्यशालिनी ऐसी स्वर्गोपमा रमणी की है जिसे देख कर पुरुषों की तो बात ही क्या है, गन्धर्व लोक, नरलोक, नागलोक और देवलोक की रूपवती देवियाँ और परियाँ भी मुग्ध हो जायें और वाह वाह कह उठें। वह नख से शिख तक केवल रूप ही रूप की राशि है। उसके शरीर म सभी छहो ऋतुओं की बहार का निवास है[1] और जहाँ नायक शिकारी के शिकार खेलने हेतु पूरा पूरा सुप्रबन्ध है।[2] यही तक नहीं उस सर्वगुण सम्पन्न नायिका के पास नायक के उपभोग के लिये सुस्वादु खाद्य पदार्थों का अक्षय भडार भी विद्यमान रहता है।[3] परिवार म वधू को क्या-क्या आचरण करने पड़ते थे, इसका वर्णन भी कवि करता है।[4]

हिन्दू नारी कुल रीति का निर्वाह करती हुई पितृगृह और पतिगृह दोनो को सुखमयी बनाती थी। पति और घर के अन्य बडो के चरण स्पर्श करके प्रात वह घरेलू कामो म इस भाँति लीन हो जाती थी कि गुरुजन उसकी परछाई भी न देख पाते थे। यह परदा प्रथा का प्रभाव था। तुलसीदास की आदर्श नारी 'पुत्रि पवित्र किय कुल दोऊ' का आदर्श रखती थी। ग्वाल के युग की नारी भी न्यूनाधिक इसी आदर्श का अनुगमन करने की इच्छा रखती है। पति ही उसका सर्वस्व है। उसके सारे हित उसी म लीन हैं।[5]

साराश यह कि उस समाज म सभी प्रकार के नारियाँ और पुरुष मिलते है अच्छे भी बुरे भी। परन्तु दोनो ही विलासिता के रग म सिर से पैर तक रगे हैं। उस युग म नारी राजनीति म क्या स्थान रखती थी, इसकी एक झाँकी रानी चन्द्रकौर के चरित्र से मिल जाती है। रणजीतसिंह के निधन पर सत्पुत्र खड्गसिंह राजा बनाया गया। खड्गसिंह की असामयिक मृत्यु से राजसत्ता के लिए एक द्वन्द्वात्मक सघर्ष उठ खडा हुआ। मन्त्रियो ने खड्गसिंह की रानी चन्द्रकौर को गद्दी दे दी। यह बात भारतीय इतिहास म नई नही है। इससे पूर्व भी महिलाओ ने राज्य किये हैं परन्तु यहाँ चन्द्रकौर मंत्रियो की दया की पात्र बनती है। जब रणजीतसिंह का द्वितीय पुत्र शेरसिंह सेना लेकर लाहौर जीतने आता है तो राजा गुलाबसिंह, जो रानी के सरक्षक हैं, अन्तद्वन्द्व म केवल इतना कहते हैं—

जबू ते न आये किले ते नाम है गयो ।।वि० वि० २१७।।

---

१ रसरग ५।१७ २ वही ५।१६ ३ वही ५।१८ ४ वही २।३९
५ वही ११।६८।

जब युद्ध की तयारियाँ पूरी हो जाती हैं तो रानी घबरा कर अपनी दुर्बलता दिखाती हुई कहती है—

कहै चन्द और राजा साहब जू सही मत,
किले देहि डारो अब बात बिगरी सो हू ।।वही २३८।।

अन्त में रानी शेरसिंह के निय मदद्भी श्यानी कर ही दती है। कहने का तात्पर्य यह है कि ग्वाल के साहित्य में प्रतिबिम्बित समाज में पुरुष और नारी अपना पारस्परिक रूप ही प्रकट करते हैं। दोनो ही साम नी युग के हैं। इन के गुण दोष दोनो उनमे विद्यमान हैं।

निष्कर्ष—राज दरबारी समाज में रह कर कवि से जिस प्रकार के समाज चित्रण की अपेक्षा थी उसमे वह असफल नही हुआ। समाज के उच्च वर्ग के सत्स्या का वर्णन करने में उसने विशेष रुचि और मनोज्ञता का परिचय दिया है। इतर वर्गों के वर्णन केवल आनुषंगिक हुए हैं, बल्कि कहना चाहिए उनके केवल संकेत ही ग्वाल का व्य मे मिलते हैं। समाज के सांस्कृतिक पक्ष को कवि ने उपेक्षित तो नहीं रहने दिया, किन्तु यहाँ उसका मन अधिक नही रमा। उसने राजनीतिक समाज का चित्रण बड़ी सतर्कता और मनोनता से किया है। यहाँ उसने राजा, रानी प्रधान मंत्री, मन्त्री, राजपुत्र राजा के सम्बन्धी जन साम त, सरदार छोटे बडे नौकर तक के चरित्र को अपनी लेखनी का विषय बनाया है। राजनीतिक गुत्थियो, शंकाओ और षड्यन्त्रा तक का वर्णन उसने सफलतापूर्वक किया है। चरित्र चित्रण की उसमे क्षमता है। परन्तु अपने परिवेश के आग्रह के कारण समाज के सांस्कृतिक पक्ष को वह विस्तार नही दे पाया है। उसके वर्णनो से यह तथ्य हाथ लगता है कि आलोच्य शताब्दी का समाज अठारहवी शताब्दी के समाज से विचारों और कार्यों में किसी प्रकार भिन्नता रखता दिखाई नही देता। तत्कालीन समाज के उलझे हुए ताने बाने मे यदि नाक का कोई सूक्ष्म तार दिखता है तो वह यह कि राजा अपनी प्रजा के दुखो के प्रति संवेदनशील है। कवि ने इस सूक्ष्म तार को पकड़ा है और कई छन्दो में इस गुण का उसने वर्णन किया है। यह कवि कर्म की जागरूकता का परिचायक तो है ही, समाज के भावी परिवर्तन का सचेतक भी है। आगे चलकर हम देखते है कि भारतेन्दु युग के साहित्यकार इस दिशा में अधिक सजग और क्रियाशील है। अंग्रेजी शक्ति के उद्भव के छिप छिपे से बारीक संकेत समाजगत भय और आशंका को प्रकट करते हैं।

दशम् अध्याय

ग्वाल कवि का मूल्यांकन

ग्वाल म काव्य शक्ति निपुणता और काव्याभ्यास—काव्य रचना म प्रवृत्त होने स पूर्व ग्वाल ने वृन्दावन म दयानिधि गोस्वामी काशी म दयाल कवि और बरेली म खुशहाल राय जस तत्कालीन प्रसिद्ध आचार्यों स दीक्षा ग्रहण की थी। सस्कृत और हिन्दी के काव्य शास्त्रो का भी उन्होने गहरा अध्ययन किया था। इस विषय म हम उनके शिक्षा दीक्षा प्रकरण म विचार कर चुके है। एक सफल कवि के लिये शिक्षा दीक्षा और काव्य शास्त्र का गहन अध्ययन ही पर्याप्त नही, यदि उसम प्रतिभा नही है। यह प्रतिभा ईश्वर प्रदत्त होती है। ग्वाल को काव्य प्रतिभा प्राप्त थी अन्त साक्ष्य इसका प्रमाण है। अन्त साक्ष्य इस बात का भी प्रमाण देता है कि काव्य रचना की प्रवृत्ति ग्वाल को उनके पूर्वजो से ही प्राप्त हुई थी। आगे चल कर अपने अध्यवसाय द्वारा कवि ने अपनी प्रतिभा को कुशाग्र बनाया था। अत निसकोच रूप से कहा जा सकता है कि ग्वाल विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। कवि का दूसरा प्रमुख गुण निपुणता या व्युत्पन्नता है। ग्वाल की काव्यकला तत्कालीन सभी काव्य प्रवृत्तियों के निर्वाहार्थ लिखे गये उनके बहु सख्यक ग्रन्थ नवीन विषयो और उपेक्षित पात्रों को लेकर की गई रचनाएँ, उनकी ग्रन्थ लेखन की व्यवस्था की कुशलता और उनकी आलोचक बुद्धि को देख कर सहसा आश्चर्य करना पडता है। उन्होंने प्राचीन काव्य परम्परा का प्रतिनिधित्व करते हुए भी नवीन क्षेत्रो म नये आयामो की स्थापना की। इससे उनकी निपुणता पर सन्देह करने की गुजायश नही रह जाती। प्रतिभा और निपुणता के पश्चात कवि की तीसरी विशेषता है उसका काव्याभ्यास। ग्वाल ने सस्कृत शास्त्र म निष्णात होकर अपनी प्रतिभा को काव्य रचना के क्षेत्र म उतारा था। यो तो विद्यार्थी जीवन म ही कवि रचना करने लगा था। 'निम्बार्क स्वाम्यष्टक' और 'नेह निबाह' उस की प्रारम्भिक रचनायें इसके प्रमाण स्वरूप देखी जा सकती हैं। 'यमुना लहरी' (र० का० स० १८७९ वि०) म लेकर 'दृगशतक' और 'भक्त भावन' के सग्रह (भावना का रचनाकाल स० १९१९ वि०) तक की प्राय ४० वर्ष की दीर्घावधि म ग्वाल ने विविध विषयक अनेक ग्रन्थो की रचना की। यही नही देश के अनेक राज्यो म घूम घूम कर उन्होंने प्रभूत मात्रा म अनुभव प्राप्त किया और हिन्दीतर बहु भाषाओ का ज्ञान भी

(एकावली), विश्वनाथ (साहित्य दपण), भानुदत्त (रसतरंगिणी और रसमंजरी), रूप स्वामी (भक्ति रसामृत सिंधु तथा उज्ज्वल नीलमणि), अप्पय दीक्षित (कुवलयानंद) वद्यनाथ सूरि (अलंकार चंद्रिका) पण्डित राज जगन्नाथ (रसगंगाधर), विश्वेश्वर पंडित (अलंकार प्रदीप) वात्सायन (कामसूत्र) कोक्कोक (रति रहस्य), श्रीहर्ष (रत्नावली) पिंगलाचार्य (पिंगल) अमरकोश, एकाक्षरी भारती वृत्ति, वर्णोत्सव सूर पच्चीसी कुमार सम्भव, वीर चरित्र आदि के सन्दर्भ भी प्रमाण स्वरूप दिये गये हैं।

हिन्दी—केशवदास (रसिकप्रिया कविप्रिया और रामचंद्रिका), चिन्तामणि (कविकुल कल्पतरु), देव (काव्य रसायन, भवानी विलास भावविलास और प्रेम तरंग) भिखारीदास (काव्य निर्णय) मतिराम (रसराज) बिहारी (सतसई) कुलपति मिश्र (रस रहस्य) जसवन्त-सिंह (रसमंजरी) हरचरण दास (सभा प्रकाश व कवि वल्लभ) पद्माकर (पद्माभरण जगतविनोद) ठाकुर कालपी वासी श्रीपति (काव्य सुधाकर) नरवरपति रामसिंह (रसविनोद) परमेश सुंदर, दयानिधि, दयाल बैरीसाल (भाषाभरण) उदयनाथ कवीन्द्र, बलभद्र (नखशिख) सूरति मिश्र (अमरचंद्रिका और नखशिख), दूलह (कवि कुलकण्ठाभरण), आदि।[1]

जसा कि पीछे ग्वाल के रीति निरूपण प्रसंग में लिखा जा चुका है कवि ने केवल एक या दो ही संस्कृत ग्रंथों को अपने विवेचन का आधार नहीं बनाया बल्कि उपरिलिखित सभी ग्रंथों से कुछ न कुछ अंगीकृत किया है। परन्तु काव्य प्रकाश नाट्यशास्त्र रसतरंगिणी रसमंजरी कामसूत्र, रति रहस्य चन्द्रालोक कुवलयानन्द और संस्कृत पिंगल ग्वाल के प्रमुख आधार ग्रंथ रहे हैं। संस्कृत सूची के अन्य ग्रंथों के मतों को कवि ने या तो प्रमाण स्वरूप अनुवाद किया है या फिर उनकी सन्दर्भ रूप में चर्चा की है। रीति के कवियों पर प्रायः आरोप लगाया जाता है कि वे एक या दो संस्कृत ग्रंथों का आधार बना कर ही रचना में प्रवृत्त हो जाते थे और यह कि वे संस्कृत शास्त्र का गूढ़ अध्ययन नहीं करते थे। यह बहुत कुछ अंशों में सत्य भी है। परन्तु ग्वाल के सम्बन्ध में यह निःसंकोच रूप में कहा जा सकता है कि उन्होंने

१ संस्कृत और हिन्दी के कवियों की सूचियों में कोष्ठगत ग्रंथों का ग्वाल ने अपनी रचनाओं में आधाररूप, प्रमाणरूप अथवा उदाहरण अथवा प्रसंग के लिये प्रयोग किया है।

सस्कृत काव्य शास्त्र का ही नहीं, हिन्दी रीति ग्रन्थों का भी गूढ़ अध्ययन किया था। यही नहीं कवि ने संस्कृत हिन्दी के विशाल वाङ्मय का सम्यक आलोडन करके हिन्दी को जो संतुलित काव्य शास्त्र दिया, उसे देख कर सहसा आश्चर्य करना पड़ता है। ग्वाल की अध्ययन गरिमा के विषय में आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का यह कथन ठीक ही है कि 'हिन्दी रीति शास्त्र की परम्परा में संस्कृत आधार ग्रन्थों का कदाचित सबसे अधिक आलोडन करने वाले ये ही हुए हैं।'[1] संस्कृत शास्त्र के व्यापक अध्ययन ने ग्वाल में आत्म विश्वास उत्पन्न कर दिया था जिसके कारण वे दृढ़ता से हिन्दी के ही नहीं संस्कृत के आचार्यों के मतों का खण्डन मण्डन करने में भी नहीं चूके। इनके ऋण को कवि ने स्पष्ट रूप में स्वीकार किया है। विवादास्पद स्थलों में ग्वाल ने वैज्ञानिक पद्धति का अनुसरण किया है। पहले वे हिन्दी के आचार्यों के मत का उल्लेख करते हैं, तदनन्तर संस्कृत के ग्रन्थों के प्रमाण दे कर[2] अपने मत की पुष्टि करते हैं। जहाँ वह अपने सर्व सम्मत मत की स्थापना करते हैं वहाँ 'हमारो मत' लिखते हैं।

हिन्दी के पूर्ववर्ती आचार्यों के मत के साथ जहाँ कवि का वैमत्य हार

---

१ हिन्दी साहित्य का अतीत दूसरा भाग शृंगार काल—आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, द्वितीय संस्करण स० २०२३ वि० वाणी वितान वाराणसी, पृष्ठ ६१०।

२ रस प्रकरण में ग्वाल अपने मत की पुष्टि में संस्कृत के प्रमाणों को रसिकानन्द के चतुर्थ प्रकरण में इस प्रकार लिखते हैं—

प्रथम प्रमान भरताचार्य को मत—विभाव, अनुभाव, सचारी भाव इन करि थाई भाव व्यंग कीयो रस आनन्द स्वरूप प्रगट होत है।

अथ अभिनव गुप्ताचार्य को मत—नाटय काव्य देखि सुनि आवरन आदि विगत होय अरु आनन्द रूप प्रकासित चतन्य सोई रस होत है।

अथ काव्य प्रकास को मत—कारन कारज सहायक ये मिलि फिरि प्रगट होइ थाई भाव सो रस। कारन कारज सहायक इन ही को नाटय शास्त्र में विभाव अनुभाव सचारी भाव कहत हैं। अरु भावादिक में एक ही होय जहाँ और भावन की कल्पना करि लीजियत हैं।

अथ साहित्य दरपन को मत—स्वयं प्रकार आनन्द स्वरूप सुद्धता अखंड अन्य ज्ञान रहित ब्रह्मानन्द स्वाद तुल्य ऐसो रस होत है—४।१।

है, उसका कहीं-कहीं उसने अपने तर्कों द्वारा भी खंडन करके नयी परिभाषा बनाई है। रसिकानन्द के द्वितीय प्रकरण के आरम्भ में कुलपति मिश्र की काव्य की परिभाषा को लेकर कवि ने अपना तर्कपूर्ण मत प्रस्तुत किया है।[1] इससे कवि के ज्ञान और आलोचना शक्ति का पता चलता है। अमर कोश[2] के उद्धरणों और वेद[3] के वाक्यों से भी कवि ने अपने कथनों की पुष्टि की है। संस्कृत के प्रसिद्ध आचार्य मम्मट के परस्पर विरोधी वचनों की भी कवि ने कवि दर्पण में एक स्थान पर आलोचना की है और उसे केवल अपने ज्ञान बल पर खंडित करने का प्रयास किया है।[4] ग्वाल का यह प्रयास उन के आत्म विश्वास का द्योतक है। यहाँ कवि का आशय काव्य प्रकाश कार की कमियों की ओर संकेत करने का है, जिन की ओर किसी भी टीकाकार ने ध्यान आकृष्ट नहीं किया। इस न्यूनता को कवि ग्वाल की सूक्ष्म बुद्धि ने देखा था। कहने का तात्पर्य यह है कि ग्वाल जिस आत्म विश्वास, दृढ़ता योग्यता और व्युत्पन्नता के साथ संस्कृत आचार्यों की आलोचना करते हैं और रीति शास्त्र में वे जितने गहराइयों में उतरे हैं उतना रीति का कोई अन्य आचार्य सम्भवतः नहीं दिखता। उन्होंने रीति के जिस अंग को पकड़ा उसे मनोयोग के साथ पूरा पूरा निभाने का सफल प्रयत्न किया। इस विषय में डा० महेन्द्र कुमार का कथन हमारे मत की कुछ सीमा तक पुष्टि करता है। वे लिखते हैं—उनकी विवेचन शैली की सब से बड़ी विशेषता यह है कि यथा स्थान संस्कृताचार्यों का मत देकर उसे तर्क की कसौटी पर कसते हैं और अपने मत की स्थापना करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि उनमें संस्कृत के आचार्यों की आलोचना करने का साहस और प्रतिभा दोनों थी। इनकी विवेचन शैली की दूसरी विशेषता यह है कि इन्होंने लक्षण और उदाहरण यद्यपि कुवलयानन्द और चन्द्रालोक की शैली पर दिये हैं तथापि यदि विषय इससे स्पष्ट होता हुआ दिखाई नहीं दिया तो ब्रजभाषा गद्य में उसकी व्याख्या भी करदी है। यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि इस व्यक्ति ने आचार्य कर्म को अत्यन्त मनोयोग के साथ ग्रहण किया है।'[5]

जब दूषण की चर्चा चली है तो लगते हाथ यहाँ यह भी निवेदन कर

---

१ इसी शोध प्रबन्ध का रसिकानन्द विवरण। २ इसी शोध का साहित्यानन्द विवरण। ३ वही। ४ कवि दर्पण-७।३२ ४२ व टीका।

५ हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास—षष्ठ भाग, डा० नगेन्द्र, पृष्ठ ३८१-३८२।

दिया जाय कि कवि ने इस प्रसग को भी रस, अलकार की भाति गहराई पूर्वक ग्रहण किया है। साहित्यानन्द म सामान्यत और कवि दपण म विशेषत केशव, बिहारी आदि हिन्दी के मान्य रस सिद्ध कवियो के अनक प्रसिद्ध छन्दो को ग्वाल ने शास्त्र की कसौटी पर कसा और उनको सदोष बता कर निर्दुष्ट बना कर रखा है। कवि दपण की रचना की पृष्ठभूमि मे कवि की यही इच्छा बलवती दिखाई देती है कि सभी कविया न अपनी-अपनी कविता को शुद्ध करने की प्राथना विद्वानो मे की है परन्तु इस ओर ध्यान नही दिया गया और यह कि मैं (ग्वाल) इनको निर्दुष्ट बना कर दिखाऊगा।[1] और यह सच है कवि ने अपनी इस प्रतिज्ञा का अनुपालन किया है।

रस, अलकार और पिंगल के निरुपण के प्रसग मे पीछे यह दिखाया जा चुका है कि ग्वाल ने अपने विवेचन म पर्याप्त ईमानदारी से काम लिया है। रस और अलकार पर अच्छे विशद विमश किये गये है। मुख्यत रस-प्रसग म ग्वाल न परम्परा के साथ साथ चलते हुए भी नये आयामों की प्रतिष्ठापना की है और कही कही परम्परा को नकारा भी है। उदाहरणाथ हिन्दी के किसी रीति कवि न रूप गोस्वामी द्वारा प्रतिपादित भक्तिरस को ग्रहण नही किया है। भक्ति रसामृत सिन्धु और उज्ज्वल नीलमणि के भक्ति उपासना के सख्य, दास्य और वात्सल्य रसो के निरुपण को रस विवेचन मे प्रथम बार अगीकार करने वाल आचाय ग्वाल हैं। इससे रस निरुपण का अद्यतन समाहृत रूप बना। इस प्रसग म दूसरी नवीन बात ग्वाल ने यह की कि रीति परम्परा के विरुद्ध चल कर उन्होने अपन ग्रन्थो म सवत्र सवप्रथम 'भाव का निरूपण किया, तदनन्तर रस का प्रसग उठाया। रस भावो से उद्बुद्ध होता है अत भाव का रस से पूव वणन करना तक सम्मत और समीचीन भी है। मिश्र अमिश्र रसो की चर्चा हिन्दी क बहुत कम कविया न की है। ग्वाल ने अपने ग्रन्थो म इस प्रसग को भी निभाया है। इस कवि ने नायिका की परिभाषा को भी अपनी सूझ से नया रग देने का प्रयत्न किया है।[2] अलकार के स्वरूप को भी कवि ने नये दृष्टि बिन्दु से देखा है।[3] अधिकाश रीति कवियो ने अर्थालकारा का ही वणन किया है। ग्वाल ने अब तक के प्रसिद्ध सभी अर्थालकारो का विशद वणन करत हुए शब्दालकारो को भी विवृत किया है।

---

१ कवि दपण—१।८९ २ इसी शोध का नायिका वणन ३ अलकार वणन (इसी शोध का)।

पिंगल निरूपण म पिंगलाचाय का अनुगमन करते हुए कवि ने परम्परा का ही पालन किया है। शब्द शक्ति पर कवि ने जम कर लिखा है।

जिन काव्यागो के वणन म ग्वाल की वृत्ति विशष रूप से नही रमी है, उनम रीति के अय आचार्यो ने भी रुचि नही दिखाई और वे हैं रीति गुण वृत्ति और शृगारेतर रस। ग्वाल ने भी इनका वणन आनुषगिक कर दिया है।

निष्कष

१ ग्वाल ने काव्य के दशाग का निरूपण किया है। इस दृष्टि से ग्वाल हिन्दी के इने गिने आचार्यो म से एक हैं।

२ ग्वाल के लक्षण और उदाहरण प्राय स्वच्छ और सुबोध हैं जहाँ आवश्यकता समझी है उ होने वहाँ पूरक ब्रजभाषा गद्य वाताओ के माध्यम से अपनी पूरी बात कह दी है।

३ ग्वाल ने आचायत्व कम को अत्यन्त गम्भीरतापूवक ग्रहण किया और सतकता एव म ोयोगपूवक उस निभाया है।

४ इस कवि को अपने विषय पर पूण अधिकार था जिस से यह काय शास्त्र की शिक्षा के कई महत्वपूण ग्रथो का निर्माण कर सका। इनके ग्रथो के पाठक का शास्त्र ज्ञान अधूरा नही रह सकता।

५ ग्वाल रीति के परवर्ती तम आचाय थ। इस नाते आचायत्व निरूपण म उनसे जो अपक्षाए की जा सकती थी उन का उन म समाहार मिलता है।

६ उ होने मौलिक उद्भावनाए तो नही की रीति के किसी भी कवि मे यह सम्भव नही हुई, परन्तु खण्डन मण्डन गत तकपूण निष्कर्षो का उनक शास्त्र मे प्राचुय मिलता है। लक्षणो को नया रग देकर सटीक बनाने के भी प्रयत्न उनमे परिलक्षित हैं।

७ उनके लक्षण सस्कृत ग्रथो पर आधत हैं पर तु उदाहरण उनके अपने हैं और कही कही एक से अधिक सख्या म भी है। यही नही, अपनो के अतिरिक्त अय हिन्दी–कवियो के छन्दो को भी उन्होने प्रचुरता से उदाहृत करने म सकोच नही दिखाया।

८ उनका रीति विवेचन तकसम्मत और प्रमाणिक है।

९ परम्परा को कहा कही नकारते हुए उन्होने नये आयामो की भी प्रतिष्ठापना भी की है। इसस उनके काय शास्त्र मे उस युग तक के प्रतिपादित समस्त सस्कृत और हिन्दी शास्त्र का समाहार हो गया है।

३ कवि के रूप में ग्वाल का मूल्यांकन—रीति के कवि अपने लक्षण ग्रंथों के लिये जिस प्रकार संस्कृत शास्त्र साहित्य के ऋणी थे उसी प्रकार संस्कृत के मुक्तकों के भी वे अनुगृहीत थे। संस्कृत में मुक्तकों की बहुत पुरानी परम्परा है। रीति ही क्या भक्तिकालीन विद्यापति सूर, तुलसी आदि सिद्ध भक्त कवियों पर भी संस्कृत का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। वास्तव में कवि अपनी प्रेरणा के लिये अतीत में डूब कर सोचता है जहाँ उसके लिये विषय भाव आदि प्रचुर मात्रा में सुरक्षित मिलते हैं। कुशल कवि की मौलिकता पर इससे आंच आती है ऐसी बात नहीं। कवि की प्रतिभा, व्युत्पन्नता और साधना उन पुराने भावरत्नों को और भी चमका सकती है जिससे गृहीत सामग्री कभी कभी मूल से भी उत्कृष्ट बन पड़ती है। यह बात भाव और भाषा के पारखियों के लिये तो सच है किन्तु अपारखी कहीं-कहीं पुराना माल उड़ाते हुए पकड़ में भी आते देखे गये हैं। ग्वाल रीति के सिद्धहस्त लेखक थे। उनमें प्रतिभा, निपुणता और साधना तीनों थी। ये भी प्राचीन मुक्तकों के ऋणी रहे हैं। ये रीति के अंतिम छोर के कवि थे अतः इनके समक्ष संस्कृत के मुक्तकों का एक विशाल भंडार था। किन्तु इन्होंने अपने पूर्ववर्ती कवियों की भांति अत्यन्त प्रसिद्ध संस्कृत-मुक्तकों से ही अपनी काव्य रचना में सहायता ली।

सात वाहन हाल की 'गाहा सतसई' अमरु की 'अमरु शतक' और गोवर्द्धनाचार्य की 'आर्यासप्तशती' आदि मुक्तकों की संग्रह पुस्तकें रीतिकाल के कवियों के मुक्तकों का आदर्श रही हैं। केशव बिहारी और पद्माकर प्रभृति कवियों ने उक्त संग्रहों से न केवल भाव ही लिये बल्कि अनेक का रूपांतर तक प्रस्तुत किया है। बिहारी ने तो रचना करते समय उपर्युक्त तीनों ग्रंथों को आदर्श रूप में सामने रखा है—इन्हीं के अनुकरण पर उन्होंने कहीं एक भाव, कहीं एक चमत्कार को लेकर समास शैली में दोहों का निर्माण किया है। उक्त संस्कृत ग्रंथों के छन्द ग्वाल के भी मनोराज्य में अवश्य ही उन्मुक्त विचरण करते रहे होंगे। फलस्वरूप उनके भावों, चमत्कार आदि का उनकी कविता में समावेश होना स्वाभाविक ही था। परन्तु बहुत मिलान पर भी ग्वाल का ऐसा कोई पूरा छन्द नहीं मिलता जो उक्त मुक्तक ग्रंथों के किसी संस्कृत छन्द का पूर्ण रूपांतर अथवा पूर्ण भाव साम्य हो। भाव साम्य के खण्ड सर्वत्र तो अनेक छन्दों में दिख पड़ते हैं। गाहा सत्तसई से भाव साम्य के कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं—

रुअ अच्छी सु दिअ फरिसो अ गेसु जम्पिअ कण्णे ।
हिअअ हिअए णिहिय विआइअ किं त्थ देवेण ॥
— गाहा सत्तसई १३२ ।

संस्कृत छाया– रूपमक्ष्णो स्थितस्पर्शो गेषु जल्पित कर्णे ।
हृदय हृदये निहित वियोजित किमत्र दवेन ॥

×

ग्वाल—कहिबे कों हम सौ रसिक बिहारी है ॥ गोपी पच्चीसी २४ ॥

देव ने कुछ अधिक भाव साम्य के साथ उक्त गाथा को अपने शब्दों मे बाधा है—

रावरो रूप रह्यो भरि मननि बननि के रस सौ श्रुति सानो ।
गात जो देखत गात तुम्हारेई बात तुम्हारिय बात बखानो ॥
ऊधा हमा हरि सो कहियो तुम हो न इहा यह हो नहि मानो ।[1] (देव)

हिअअ हिअए णिहिय चित्तालिहिअ व्व तुह मुहे दिठी ।
आलिंगण रहिआइ णवर खिज्जति अग्गाई ॥
—गाह सत्तसई–हाल ४८५ ।

संस्कृत छाया–हृदय हृदये निहित चित्रलिखितेव तव मुख दृष्टि ।
आलिगन एहितानि केवल क्षीयतेऽगानि ॥[2]

इस गाथा का भाव ग्वाल म इस रूप मे चित्राकित है—

इ घरी तें दधिको बिलोवत ही रूपरासि,
आसपास आलिन की हुती उहाँ भीर है ।
तानें तक्यो तोहि तब ही ते तक एक टक,
ए रे जसुधा के भलो भयो जादू भीर है ॥
ग्वाल कवि वह तौन डोल है न बोल कछू,
साधत न चोल है न विसुधि सरीर है ।
कचन की मूरति बनाई प न बनि आई
तब लिखि मानों मैन रति तसवीर है ॥रसरग १।६०॥

आखो मे रूप है अगो मे स्पर्श है कानो मे वाणी है हृदय मे हृदय निहित है फिर विधाता ने वियोग ही किसका किया है ।

---

१ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र पृष्ठ २६१ से उदधृत ।
२ तेरे आलिगन के बिना उसका हृदय हृदय मे विलीन हो गया है, चित्र मे बनाई हुई सी दृष्टि तेरे मुख पर टिकी हुई है तथा अग क्षीण हो गये हैं ।

एक्कक्कमवइ वठण विवरतर दिण्णतरनण अणाए ।
तइ बोलते बालअ पजरमउणाइ अनीए ॥
—गाहा सत्तसई वही २२० ।

सस्कृत छाया—एकक व त्ति वष्ट न विविरा नर दत्त तरल नयनया ।
त्वयि यतिक्रान्ते बाला पञ्जरश कुनायि ततया ॥[१]

ग्वाल ने उक्त भाव को इस स्वरूप मे बाधा है—

तव ही तें तरुनी को ताको मैं तमासौ यह
चढत अटारी कभू डोलें तिदरीन मे ॥
ग्वाल कवि कबहू झकत झझरीन बीच,
कबहू झक है री ख्विार की खिरीन में ।
ऐसी तो न तौफगी तको हो सफरीन में न,
खजनी खरीन में न कहू ख्रिजुरीन में ॥रसरग १।११९॥

ग्वाल के पूव वर्ती मतिराम और देव ने भी इ ही भावा को इस प्रकार काव्यबद्ध किया है—

सजनी मेरौ मन परयौ मनमोहन के सग ।
छटपटात छूटत न ज्यो पजर परयौ पतग ॥
—मतिराम सतसई २८८ ।

फेरि फेरि हेरि मग्रु बात हित वठी पूछै
पछी हू मृगछी जैसें पछी पिंजरा परयो ॥ देव ॥

गाहा सत्तसई के पश्चात् 'अमरु शतक' दूसरी महत्वपूण मुक्तक रचना है जिसका व्यापक प्रभाव रीति साहित्य पर पडा । ग्वाल के मस्तिष्क म इस के छ दो का प्रचुर प्रभाव था जो उनके मुक्तको म ध्वनित हुआ दीखता है । कुछ प्रभावापन्न छन्द उदाहरण स्वरूप यहाँ दिये जाते है—

१–अमरु—एकस्मिन् शयने विपक्ष रमणीनाम ग्रहे मुग्धया
सद्य कोप पराड्मुख ग्लपितया चाटूनि कुव नपि ।
आवेगाद वधीरित प्रियतम स्तूष्णी स्थितस्तत्क्षणा
न्माभून्म्लान इवत्यमन्द वलितग्रीव पुनर्वीक्षित ॥[२]

इसके प्रथम तीन चरणो के भाव को ग्वाल ने इस प्रकार अगीकृत किया है—

---

१ तेरे चले जाने के पश्चात् एक एक आवरण पर द ष्टि डालती हुई, वह पिंजडे मे ब द पक्षी जसी हो गई है ।

२ अमरु शतक—अनुवादक कमलेश दत्त त्रिपाठी, इलाहाबाद, पृष्ठ २२ ।

सोवें एक सेज प छबीलो छल दोऊ जहा
पर तो की लीयो नाम पीउ सपन हैं देख ।
सुनि क सलोनी आहि आहि यों कराहो फेर
थाहो खेंचि बठी मान माहो छलत्यो हैं देख ॥
ग्वाल कवि जनि कें गुविंद कह 'को हो प्यारी',
प्यारी हो तिहारी है न कोऊ म सर्योहै वप ।
गोरस की सौंह प्यारी, गोरस की सोहमोहि
तो रसकी सौं॰ प्यारी तेरीसो हसा है दम्र ॥

— रसिकानन्द ५।५१

खि न केन मुख न्विाकर करेंस्ते रागिणी लोचने
रोषात्सद्वचनोदिता द्विलुलिता नीलालका वायुना ।
भ्रष्ट कु कममुत्तरीय कपणास्खला तासि गत्यागत
दत्त तत्मवल विभत्र वद ह दूति । क्षतस्याधरे ॥रसरग ११३॥

ग्वाल के रसिकानन्द मे—

पूछत हौं तोहि कुच रेख कत लागी लाल
तोरे पून लाल सो खरौंटे यह खाई मैं ॥'
'ग्वाल कवि' स्वद सरसी क्यो' 'अमराह है ते,
'पीत पट कसें ओढि आई, भरथाई मैं ।
'तू जो कहैगी घनस्याम प गई न ताते,
पीतपट तेरी य प्रतीत कालाई मैं ॥रसिकानन्द ५।४२॥

ग्वाल के उक्त दोनो छन्दों मे अमर शतक क छन्द का शलीगत प्रभाव दृष्टिगोचर है ।

मिथ्यावादिनि ! दूति ! बान्धव जनस्याशानपीडागमे ।
वापी स्नातुमितो गतामि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम ॥अमरु १०५॥

यह भावपूर्ण रूपेण ग्वाल की निम्नांकित पंक्तियो म ज्यो का त्यो ध्वनित है—

दूती जानि तोका मजबूती कें पठाई आज,
घूती करि बातन सु बाउरी बनाई मैं ॥

—रसिकानन्द ५।४२॥

प्यारे प्राननाथ प न पहुची प्रवीनी प्रिया
बावरी मी बावरी अहाई फिर आई तू ॥वही ५।४३॥

४—अमर के श्लोक सख्या ६०[१] और १०५[२] की भाव ध्वनि ग्वाल मे निम्नाक्ति छदो म स्थापित हुई है—

अ– ऐसें पिक बनी बैन कहि व निहारी फेर,
जावक लिलार पीक पलकन कीन पर ॥रसिका० ६।३०॥

ब– आये भोर भावते सुहाये नखरेख लाए
मानो स्याम घन म कालनिधि की भाग यह ।
अजन तें रजन अनूप रूप अधरा की,
माना बिम्ब ऊपर ,मलिदन की भाग यह ॥
भाल पै सु जावक जम्यो है जोर जाहर या,
माना मन सीस पै सुहायो रतिराग यह ॥वही ६।३१॥

सम्भवत ग्वाल पर अमरु का पर्याप्त प्रभाव पडा है । इसकी कतिपय स्फुट पक्तिया की प्रतिध्वनि ग्वाल म अनेकत्र सु जायमान है ।

आर्यासप्तशती—गोवर्द्धनाचार्य रचित यह अमरु शतक से परवर्ती रचना है । इसम आतिशय्य और चमत्कार प्राय कुछ अधिक मात्रा म पाया जाता है । चमत्कार प्रिय ग्वाल न अपने कतिपय छ दा म इस रचना के कुछ एक श्लाको की ध्वनि और कहीं कही भावा को भी अङ्गीकृत किया है । ऐसे दो तीन उदाहरण यहा पर्याप्त हाग—

परमोहनाय मुक्ता निष्करुणे तरणि तव कटाक्षोऽयम ।
विशिख इव कलित कर्ण प्रविशति हृ य न नि सरति ॥३५५॥[३]

इसके 'न नि सरति' पद को छोड कर शेष श्लोक के अर्थ और भावा को ग्वाल ने निम्नाक्ति दोहा म इस रूप म अपनाया है—

तर दृग सर सों छिद गौ प्रान सिपाही सूर ।
मसक्कत हू सौंहीं रहैं नकौ होत न दूर ॥दृगशतक ३५॥

यहाँ विशिख' और हृदय' शब्दा को क्रमश सर' (शर) और प्रान' के रूप म ग्रहण किया गया है । न नि सरति के लिये 'नकौ होत न दूर'

---

१ लाक्षालक्ष्म ललाट पटममित केयूर मुद्रा गले,
वक्त्रे कज्जल कालिमा नयनयोस्ताम्बूल रागो पर । अमरु शतक—पृष्ठ ११८ ।

२ नि शेष च्युत चन्दन स्तन तट निमृष्ट रागो धरो,
नेत्रे दूर मनजने पुलकिता तन्वी तवेय तनु । वही पृष्ठ १६३ ।

३ आर्या सप्तशती—गोवर्द्धनाचार्य, काव्य माला सीरीज १८६६ ई० ।

लिख कर बताया गया है कि दग शर छिद के छिदे ही रहते हैं, सामने ही रहते हैं—पृथक् नहीं होते। 'हृदय प्रविशति न निःसरति' में भी यही अपाथक्य का भाव है। परन्तु 'प्रविशति' के स्थान पर 'छिद्यो' लिख कर कवि ने भाव की सम्प्रेषणीयता को और भी गहन बना दिया है। किंचित अन्तर के साथ इसी ध्वनि को ग्वाल ने अन्यत्र भी ग्रहण किया है—

तो चितवनि अंकुस सद्रिस छेदत मूधी जाय ॥वही २६॥
पै यह सर है मैन को, योंहि पार कढ़िजाय ॥वही २७॥

स्पष्ट ही है कि ग्वाल ने गोवर्द्धनाचार्य की आर्या की ध्वनि को अपनी कान्ति (पालिश) से चमक दे दी है।

दयित प्रहिता दूतीमालम्ब्य करेण तमसि गच्छन्ती।
स्वेद च्युत मृगनाभिद्रू रादगौरासि दृश्यासि ॥आर्या सप्तशती॥

गोरे गोरे अंग की उज्यारी सी पसरी पर
सेत जरतारी पै किनारी फब फाबी सी।
रैनि मैं हू न्नि सी दिखात है ददा की सौंह,
मृगमद दमकत बीजु महराबी सी ॥रसरंग ३।१७॥

नायक प्रति यहाँ दूती का कथन है कि नायिका के शरीर की कान्ति चन्द्रमा की चमक से भी बढ़ कर सूर्य की सी है, अतः चाँदनी में भी वह छिप नहीं सकती। उसे लाना संकट से रहित नहीं। यहाँ केवल शरीर की दीप्ति और मृगमद द्वारा लक्षित हो जाने के भाव में ही साम्य है। तम, मृगमद और गौरांगी के स्थान पर आये क्रमशः 'रैनि' 'मृगमद' और 'गोरे गोरे अंग' पदों में भाषा साम्य तो है ही। संक्षेप में हम इस उक्त आर्या की छाया ही कह सकते हैं।

संस्कृत के स्फुट श्लोकों की छाया

संस्कृत के कुछ स्फुट श्लोकों से भी ग्वाल ने छाया ग्रहण की प्रतीत होती है। बिल्हण कवि का चौर पंचाशिका[1] में एक श्लोक है—

अद्यापि तां गमनमित्युदितं मदीयं, श्रुत्वैव भीरु हरिणीमिव चंचलाक्षीम्।
वाचः स्खलद्विगलदश्रुजलाकुलाक्षीम्, संचिंतयामि गुरु शोक विनम्रवक्त्राम्।२८।

मुझको गमनुद्यत सुन कर भीत हरिणी के समान चंचल और वाणी स्खलन से विगलित अश्रुजल से आकुल नेत्रों वाली अत्यन्त शोक संतप्त उस

1 सम्पादक एस० एन० ताडपत्रीकर—पूना १९४६ ई० संस्करण।

का मैं आज चिन्तन करता हूं। ग्वाल ने इसी भाव को एक दूसरे प्रसग म इस प्रकार व्यक्त किया है—

'ग्वाल कवि' सीतामम सुनि सरकन चाहै,
ए पै सास पास औ परोसै घरवारे को।
हरिनी ज्यों जाल मे फसे त तरफरै दया,
तरफर तीय त्यो तक्न प्रान प्यारे का ॥रसरग ३।१०४॥

यहां प्रसग सर्वथा भिन्न है और मूल भाव म भी पूर्ण साम्य नही है परन्तु नायिका की चचलता का चित्र ग्वाल ने वसा ही खींचा है, जैसा बिल्हण ने। ग्वाल का निम्नाकित छन्द बहुत प्रसिद्ध है—

कल केलि भौन म कलानिधि मुखी सो कत,
कलि करतें ही 'नाहीं मुखसो निकल परै।
झिलवी न जान हिलमिल की न जानै बात,
हिलकी म सोम झिलमिल की उछल पर॥
ग्वाल कवि मसकि मसकि पिय राख तऊ,
खसकि खसकि प्यारी पाटी पै फिसल पर।
चचला सी चपल सुपारद सी हलचल
जल बिन मीन जसें उछल उछल पर।

अब एक सस्कृत का श्लोक देखिए—(रत्नहार से)

अक घृताऽपि नयन विनिवेशिताऽपि क्रोडे कृताऽपि यतते बहिरेव गन्तुम्।
जानीमहे नववधूरस्य तस्य वश्या य पारद स्थिरयितु क्षमते करेण ॥५६॥

सहज सजीली नवल वधू सहज ही हाथ नही आती। गोद म, शयन म और भुजाओ म कितना ही कसा जाय वह तो पारे की भाति चचल रहती है। इस भाव का ग्वाल के उपयुक्त कवित्त म सजीव वर्णन है। इसी प्रकार सस्कृत की कुछ और छायायें ग्वाल की रचनाओं म यत्र तत्र देखने को मिल सकती है।

ग्वाल पर हिन्दी कवियो का प्रभाव

ग्वाल पर हिन्दी क रीति कवियो का प्रत्यक्ष प्रभाव है। भक्त कवियो म सूरदास को छोड कर अन्य किसी का प्रभाव छाया इन पर नही पडी प्रतीत होती। इस का कारण यह है कि सूरदास भक्ति शृगार के कवि हैं। उनके सूरसागर म प्रकारान्तर से प्राय सम्पूर्ण नायिका भेद के उदाहरण मिल जाते हैं। अत प्राय सभी रीति कवियो ने सूर की अनुभूति और अभिव्यक्ति का पर्याप्त मात्रा म प्रयोग किया है। इनकी खण्डिता आदि नायिकाओं के चित्रो

सयोग क्रीडाओं के वर्णन और उद्धव-गोपी सवाद प्रसंग में सूरदास की काव्य सामग्री का रीति में बराबर प्रयोग हुआ है।

ग्वाल के खंडिता के चित्र निम्नांकित हैं—(रसरंग से)

१—जाम जाम जामिनी हू खातिर जमा न भई
एक जाम दिन हू चढ़ाय अब आये हो।
आज तो अधर वर अरुन तिहारे पर
अंजन के दाग लगे लाग लोभ छाए हो॥
ग्वाल कवि ताही साखि अति ही लजीली
याल पालकी पकी सी होयआई का मुहाए हो।
मानो याहि खेलिवे को गहकि गुनाव लाल
गुंजन की माल मुखमाहि दाबि लाए हो॥४।३६॥

२—राति रहि आय पिय जावक लगाये भाल
भाल पखि आये भाई पीक पर पीक है।
त्यौर तरराय सरमाय पर भुकि जाय
चुप पाइ ताहि चल्यो धाइ नन नीर है॥
ग्वाल कवि अंजन अधर ताकि ताकी पर
रोष भयो अंगन में सिगरो सरीर है॥४।४०॥

खण्डिता के चित्र बनाते समय ग्वाल के मनोराज्य में सूरदास के निम्नांकित पद अवश्य विचरण कर रहे होंगे—

१—प्यारी चित रही मुख पिय को।
अंजन अधर कपोलन वदन लागी काहू तिय को॥
तुरत उठी दरपन कर लीन्हे दखो बदन निहारो।
अपनो मुख उठि प्रात देखिके तवतुम कहू सिधारो॥[1]

२—दरपन ले प्यारी मुख आगे कहति पिया मुख हेरो जू।
मेरी सो हा हा कहि पुनि पुनि उन काहू मुख फेरो जू॥[2]

३ क्यो मोहन दरपन नही देखत।
क्यो धरनी पग नखनि करोवत क्या हम तन नहिं पेखन।

× × ×

उतरि गयो उर तें उपरना, नखछत, विनु गुन माल।
सूर देखि लट पटी पाग पर जावक की छवि लाल॥[3]

---

१ सूर सागर—दूसरा खण्ड—सम्पादक श्री नन्द दुलारे वाजपेयी, स० २०-१८ वि० पृष्ठ १०३३। २ वही, पृष्ठ १०३३।

४ जावक सा मह पाग रगाई, रगरजिनी मिली कोउ वाल।
वद न रग कपोलनि दीहो, अरुन अघर भये स्याम रसाल॥
माला कहाँ मिली विन गुन की उर छत देखि भई बेहाल।
५—चद्रावलि धाम स्याम भोर भए आये।
रिस नहि सकी सम्हारि बठी चढ़ि द्वार वारि॥
विन गुन वनी हृदय माल, ता बिच नख छत रसाल।
लोचन दोऊ दरस लाल जियसो रिस बाढी॥
जावक रग लग्यो भाल वदन भुज पर बिसाल।
पीक पलक अधर अलक बाम प्रीति गाढी॥
कहा आये कौन काज, नाना करि अग साज।
उलटे भूषन सिंगार निरखत हो जाने॥
ताही के जाहु स्याम जाकें निसि बसे धाम।
मेरे गृह कहा काम सूरदास गाने॥[1]

कहने की आवश्यकता नही कि ग्वाल ने अपने लिये काव्य सामग्री प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप म सूरदास से भी प्राप्त की है। यो उनके समक्ष देव, बिहारी मतिराम आदि रीति कवि भी अवश्य थे।

ग्वाल ने मध्या अधीरा की उक्ति इस प्रकार लिखी है—
आए पास कौन थे हो भूले कौन भौन के हो
डगमग गौन के हो देह मौज माची है।
पाग पच ढीले भये दृग उनमीले भये,
तऊ न नजीले भय पाटी भई काची है॥
ग्वाल कवि और न उपाय व्रजराज अब,
जाउ जाउ जहा चाउ म तौ यह जाची है।[2]

सूरदास जी के 'तहइ जाहु जह रनि बसे हो।', तहइ जाहु जह निसा बसे हो।, तहइ जाहु जह रनि हुत।' और तहइ जाहु जह रनि गवाई।' वाले पद इस सन्दभ म विशेषकर अवलोकनीय है। खडिता के चित्रण म देव, मतिराम आदि कवियो ने भी लगभग इसी काव्य सामग्री का उपयोग किया है। देखिये—

देव १—अजन अधर बीच नख रेख लाल लाल
जावक तिलक भाल सघन सुहाग के।

---

१. वही, पृष्ठ १०८७। २ रसरग, २।८१।

मोहैं अलसौहैं पलमौहैं पगे पीक रस रग
मग नन रनि जागे लगे लाग के ॥
नाहे वा लजात जलजात से बन्न मोहि
महासुख देन आए देव पेंच पाग क ॥[1]

२—भोर ही आए मया करि मोपर बठिये दरपन देत मगाये।
ओठन अ जन लीक लस दृग देव दुहू पल पीक लगाये ॥
अ गन म अगरे बगरे गुण बाल भरे रग रैनि रमाये।
को इन लोइन लाल लाय जि ह को इन लाइन ल्याए लगाय ॥[2]

३—पीक भरी पलकें झलकें अलकें जु गडी सु लसें भुज खोज की।
छाय रही छवि छन की छाति म छाप बनी वाहू ओछे उरोज की ॥[3]

मतिराम—

जावक लिनार ओठ अ जनकी लीक सोहैखये
न अलीक लोक लोक म बिसारिए।
कवि मतिराम छाती नख छन जगमग
डगमग पग सूध मगम न धारिए ॥
कसके उघारत हौं पलक पलक यातें पलकावें
पीठि सभ राति को बिसारिए।
अटपटे बन मुख बात न कहत बने
लटपटे पेंच सिर पाग के सुधारिए ॥[4]

रीति कवियो ने खण्डिता वणन प्रसगों मे नायक की अटपटी वपभूषा नायिका क अगरागादि के लग चिह्न के जो चित्र दिय हैं उनम प्राय साम्य पाया जाता है। ये रीति कवि इनक लिये या तो सूर के ऋणी है या सीधे सस्कृत या प्राकृत क मुक्तको के। भागवतकार ने भी ऐसे वणन किये हैं। ग्वाल भी इन वणनो के लिये प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में श्रीमद्भागवत् सस्कृत और प्राकृत के मुक्तकों तथा देव और मतिराम जसे रीतिकवियो के ऋणी हैं जिनसे उ होने अपनी काव्य सामग्री ग्रहण की है।

बि_ारी—

ग्वाल बिहारी से अपने कतिपय छ दो म प्रभावित रहे हैं बिहारी का एक दोहा इस प्रकार है—

---

१ देव की कविता— डा० नगेन्द्र पृष्ठ २६८,   २ वही, पृष्ठ २६८,
३ वही पृष्ठ २६९,   ४ मतिराम ग्रन्थावली—रसराज—१०५।

तिय मुख लखही राजरी वदी बढं विनोद।
सुत सनेह मानहु लिये बिधु पूरन बुध गोद ॥बिहारी सतसई॥

नायिका के मस्तक पर हीरा जडी बिन्दी शोभित है माना चन्द्रमा अपने पुत्र बुद्ध को गोद म लिये हुए है। इस उत्प्रेक्षा का कुछ दूसरे रूप मे कवि ग्वाल न निम्नाक्ति कवित्त मे प्रयोग किया है। देखिये-(रसिकानन्द से)

प्यारी पगी प्रेम म प्रवीन प्रान प्यारे सग
रति बिपरीत रची जाम जाग छाकी मैं।
छुटि परे बार हार टूटि परे मोतिन के
सरके सिगार अग अग छवि ताकी मैं॥
ग्वाल कवि भाल तें हरित मन बेंदा परयो
हीरन जडाऊ कान्ह चौकी हियराकी मैं।
मानो निज गोद मे कलानिधि सपूत बुध
दियो है उतार गोद छीरधि पिता की मैं॥ ४।१८॥

नायिका के भाल से पन्ना का बेंदा नायक के हृदय की हीरा जडी चौकी पर गिरा है, माना चन्द्रमा ने अपने पुत्र बुध को अपने पिता समुद्र की गोद म डाल दिया है। मुख कलानिधि, पन्ना का बेंदा बुध और हीरा की चौकी क्षीर सिंधु है। बिहारी ने दोहे मे बेंदा मुख पर ही रहता है, ग्वाल के कवित्त म वह नायक की गोद म गिर पडता है। इस परिवतन से ग्वाल की उत्प्रेक्षा म मौलिकता आगई है। वसे इसकी कल्पना उन्होंने बिहारी से ली है।

बिहारी का दूसरा अत्यन्त प्रसिद्ध दोहा यह है —

नहिं पराग नहि मधुर मधु नहि बिकास इहि काल,
अली कली ही सो बध्यो आगे कौन हवाल ॥बिहारी सतसई॥

ग्वाल ने इसी भाव को अपने निम्नाक्ति कवित्त म अपनाया है—

प्यारी लाज साज म गडी ही जात रनदिन
सकित रहत बीच गुर जन जाल के।
पानी पान भोजन करत पिय पूछि पूछि
पलग बिछावत बिछौना पून माल के॥
ग्वाल कवि वह तो न जानें भेद मोहिव क
मतर न जतर-न जान कौन हाल के।

हूव है यहा आगें सवलोर भये अब ही ते
अधिक अधीन भये ए री नव बाल के ॥वही ६।६८॥

हू है यहा० और अली भली ही सो पद्यों' का अ तर स्पष्ट है। बिहारी की कल्पना म जो विशषता है ग्वाल उससे उत्कृष्ट नही बना पाये।

बिहारी के एक विपरीत रति वर्णन के प्रसिद्ध दोहे की अर्द्धाली इस प्रकार है—'करत कुलाहल किंकिनी मौन गह्यौ मजीर।' इसी को ग्वाल ने इस प्रकार निम्नाकित पक्ति म उतारने की चेष्टा की है—

किंकिनी की नीको करयो मधुर निनाद स्वाद
बिछियन कीनी बाद अपनी अवाज को।[1]

इसमे ग्वाल पूरे भाव का रूपान्तर भी कुशलता से नही कर पाये।

भिखारीदास—इन्होंने कुचो को शकर के समान माना है। ग्वाल इन स कुछ और आग बढकर कुच शम्भु की पूजा का विधान बनाते हैं। देखिय—

भिखारीदास—

वे धरें अग भुजग के भूषन एऊ भुजग धरें तन कारे।
वे धरें भाल प चद्र सवारिकें ये हू नखच्छत सीस सम्हार॥
सकर औ कुच की समतानि म कोऊ विभेद न दीखत प्यारे।
वे करि कोप जरायो मनोज उराज मनोज जगावन हारे॥[2]

तथा—

कज के सपुट है ये खरे हिय म गडि जात ज्यों कुत की कोर हैं।
मरु हैं प टरि हाथ म आवत चक्रवती प बडेई कठोर हैं॥
तेरे उरोजन म सजनी गुन दास लखें सब और ही और हैं।
सभु हैं प उपजाव मनोज सुवृत्त हैं प पर चित्त के चोर हैं॥[3]

ग्वाल— सखी जानि मोको सोग कामी को पठावत हैं,
आवत न मेरे मन कान न धरत हो।
जघ कदलीबन म नाभि कूप कूल बठि अन्तर
ग गोतरी, की, सीसियाँ भरत हो॥
ग्वाल कवि चन्दन चढावो पहिरावो माल
आगुरीन आरती उतारि वितरत हो।
सुचि करि रुचि करि उच्च पद पाइवे को
प्यारी कुच सभु को मैं पूजन करत हो॥[4]

१ वही ४।१२८। २ ग्वाल रत्नावलि—कवि किंकर सन् १९४५ ई० इलाहाबाद भूमिका भाग। ३ वही। ४ रसरग—ग्वाल, ७१९।

'दास' जी के उपमान का लकर ग्वाल ने 'अतर गमोनी की सीसिया' भरन की अनूठी कल्पना कर डाली है। परन्तु कुच शम्भु की यह पूजा ग्वाल न न्गग से ही सीखी है। दास और ग्वाल दोनो ही यहा यह भूल गये हैं कि शम्भु एक हैं और उरोज दो। अत रूपक नही बनता। परन्तु यह एक दूसरा ही विषय है। यहा तो ग्वाल पर दास का प्रभाव देखना ही काम्य है।

भूषण के भाव और कही कही भावो की छाया ग्वाल की कुछ पक्तिया म अवलोकनीय है। शिवाजी की प्रशसा म भूषण का एक कवित्त 'शिवराज भूषण' म इस प्रकार है—

अति मतवार जहा दुरद निहारियत तुरगन म ही चचलाई परतीति है।
भूपन भनत जहा पर लग बानन मे कोक पच्छिनहिं माहि बिछुरन रीति है॥
गुन गन चोर जहा एक चित्त ही के लोर बध जहा एक सर जाकी गुन प्रीतिहै।
कप कदली म बारि बुन्द बदली म सिवराज अदली के राज मे या राजनीति
है॥२४७॥

इसी शली और भाव का एक छन्द ग्वाल के विजय विनोद से नीचे दिया जाता है—

चित्त ही है चोर और चोर कौन ओर कहू
धात्वी क्रिया के दृग दौरत दुरस्त हैं।
पौन ही पवन विभिचारी जहा देखियत
सूरज की तेज अनाचारी उन अस्त है॥
ग्वाल कवि कहै जहाँ दीप फूल ही को खून
लग्त मनोरथ जो अलिपुज मस्त है।
धन्य रघुकुल जन्य ध्यानसिंह महाराज
जान कियो देस दम ऐसो बदोबस्त है॥३८॥

इन दोना कविया व लगभग समानान्तर भाव के कुछ और छन्द यहा दिय जा रह हैं—

भूषण—(शिवा बावनी छन्द ५१)

बद राखे विदित कुरान राखे सार युत
राम नाम राख्यो अति रसना सुघर म।
हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की
काधे प जनऊ राखो माला राखी गर म॥
मोडि राखे मुगल मराडि राखे पातसाह
बैरी पीसि राखे बरदान राख्यो कर म।

राजन की हद्द राखी तेग वल सिवराज
देव राख दवल स्वधम राख्यो घर म ।।

ग्वाल—(विजय विनोद ४६६)

महाराज हीरासिंघ हिंदू पति हीरा एक
राखी निज टेक नव धरम की चोट्ददी तें।
फौज मे फितूर कीना फिरका चलन दीनो
हलन न दीनो कोऊ मूवा सरहद्दी तें ।।
ग्वाल कवि कहे बादसाही की न मुद करी
दुद खरी दरी प्रजा सुखन की लद्दी तें।
बद्दी को करया वेरी रद्दी सम फारि डारे
करके भरद्दी हद्दी राखी राजगद्दी तें ।।

स्पष्ट है कि भूषण के भाव को ग्वाल सफलतापूर्वक निभा नही पाय। उल्टे भाषा को भी विकृत कर बठे हैं।

भूषण—(शिवराज भूषण छन्द २५०)

देसन देसन नारि नरेसन भूषन या सिख देत दया सो।
मगन ह्व करि दत गहो तिन कत तुम्हें है अनत महा सो ।।
कोट गहौ कि गहो बन ओट कि फौज की जोट सजौ प्रभुता सो।
और करौ किन कोटिक राह सलाह बिना बचिहो न सिवा सो ।।

ग्वाल—(विजय विनोद १३ व १४)

खबर ते जे पर कहे का जवाब का साह।
तिन को नारी यों कह सुनो हमारे नाह ।।
सेरन प जान समसेर घालियाँ है वही
रनजीत सिंघ जू की फौज आवे चालिया।
चालिया अकालियाँ की पाति दूर दीख
कज जायगी सभालिया न फेर ततकालियाँ।।
ग्वाल कवि चाहत खुसालियाँ विसालिया
जो राखनी है मुख पर लालियाँ वहालिया।
मेवन की डालिया तुरगन की पालिया
ल मिलौ मुक्तालियाँ द नजर उतालियाँ ।।

ऊपर के कवित्त म ग्वाल न भूषण के भाव को सभाल कर रखा है।

पद्माकर और ग्वाल का आदान प्रदान—पद्माकर (स० १८१० ८८९ वि०) ग्वाल (स० १८८९-१९२४ वि०) के समसामयिक हैं। पद्मा

कर का रचना काल हिम्मत बहादुर बिरदावली (र० का० स० १८४६ १८५६)[१] के निर्माण से आरम्भ होकर गगा लहरी की पूर्ति (स० १८६० वि०) तक है और ग्वाल का रचना काल स० १८७६ वि० से १६१६ वि० तक निश्चित है। इन दोना की रचनाओ म भाव और भाषा का अद्भुत साम्य पाया जाता है–विशेषकर पद्माकर की गगालहरी और ग्वाल की यमुना लहरी के वण्य विषय ज्यो के त्यो मिलत हैं। यहाँ तक कि भाव, विषय, उप विषय शली आदि हूबहू एक हैं। इस सम्बन्ध मे विद्वाना का मत है कि ग्वाल ने अपनी यमुना लहरी' पद्माकर की गगा लहरी' के अनुकरण पर लिखी थी। आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र लिखते हैं—ग्वाल ने तो मानो पद्माकर की होडा होडी म ही अपनी रचनाए की हैं। उनकी 'यमुना लहरी' पद्माकर की गगा लहरी की होडा होडी म बनी है और 'रसरग' 'जगत विनोद' के अनुगमन पर निर्मित हुआ। इन कवियो म विषय की ही सामा-नान्तरता नही है उप विषय, प्रसग भाव आदि ठीक आमने सामने भिडे बठे हैं।[२] डा० ब्रज नारायण सिंह[३] श्री प्रभुदयाल मीतल[४] आदि विद्वानो की भी यही सम्मति है कि ग्वाल ने पदमाकर की 'गगा लहरी' के अनुगमन पर अपनी 'यमुना लहरी' की रचना की। परन्तु इन दोनो के रचनाकाल को किंचित ध्यान से देखा जाय तो एक विपरीत ही तथ्य हाथ आता है। गगा लहरी पद्माकर की अतिम रचना है, इस विषय मे विद्वानो मे दो मत नही हैं। मिश्र बधुओ ने लिखा है— रोग मुक्त होने पर पद्माकर जी गगा सेवनाथ कानपुर चले गये और वही सुखपूवक आयु के शेष दिन उन्होने प्राय ७ साल तक व्यतीत किये। इसी समय उन्होने गगा लहरी नामक ८६ छ दो का एक उत्तम ग्रथ बनाया।'[५] आचाय प० रामचन्द्र शुक्ल लिखते हैं—अतिम समय निकट जान पद्माकर जी गगा तट के विचार से कानपुर चले आये और वहीं अपने जीवन के शेष सात वष पूरे किये। अपनी प्रसिद्ध गगा लहरी

१ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० ब्रजनारायण सिंह १८६६ ई० पृष्ठ १०३।

२ पद्माकर पचामृत —आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र स० १९९२ वि० पृष्ठ ७७।

३ कविवर पद्माकर और उनका युग—पृष्ठ १९४।

४ ग्वाल कवि—श्री प्रभुदयाल मीतल स० २०१७ वि० मथुरा पृष्ठ ४९।

५ मि० ब० विनोद—द्वितीय भाग, स० १९८४ वि० सस्करण, पृष्ठ ९०६।

इन्होने इसी समय के बीच बनाई थी।[1] आचार्य मिश्र जी, डा० ब्रजनारायण सिंह प्रभृति सभी विद्वानों ने इसी मत की पुष्टि की है। डा० सिंह का गंगा लहरी के रचनाकाल के विषय में स्पष्ट मत है कि कवि ने अवश्यमेव इसकी रचना सं० १९८४ वि० के लगभग आरम्भ कर दी होगी और जैसा हम पहले अनुमान कर चुके हैं कि लगभग १८८६ वि० तक कवि बांदे में ही रहा तो वहीं पर ग्रन्थ का आरम्भ कर तथा अंतिम वर्ष (१८९०) में कानपुर में आकर इस ग्रन्थ को कवि ने समाप्त किया। इस कवि का यह अन्तिम ग्रन्थ ठहरता है।'[2] इस प्रकार बहुत हुआ तो पद्माकर की इस कृति का रचना काल सं० १८८३ वि० से लेकर सं० १८९० वि० तक निश्चित होता है। उधर ग्वाल अपनी यमुना लहरी की रचना कार्तिक मास की पूर्णमासी सं० १८७८ वि० को पूर्ण कर चुके थे। कवि का अंतःसाक्ष्य इसका साक्षी है।[3] इस प्रकार पद्माकर की लहरी से ग्वाल की लहरी कम से कम ४ वर्ष पूर्ववर्ती है। दूसरे शब्दों में 'यमुना लहरी' के समापन तक 'गंगा लहरी' का लिखना तक आरम्भ नहीं हुआ था। साम्य से सिद्ध होता है कि पद्माकर की गंगा लहरी के अनुगमन पर ग्वाल ने अपनी यमुना लहरी कदापि नहीं लिखी क्योंकि १८७६ वि० तक गंगा लहरी का अस्तित्व ही नहीं था। ऐसी दशा में ग्वाल अनुसरण ही किसका करते। बल्कि एक नया तथ्य यह सामने आता है *कि पद्माकर ने ग्वाल की यमुना लहरी के अनुकरण में अपनी गंगा लहरी की* रचना की थी। जहाँ तक पद्माकर के जगत विनोद का प्रश्न है। उसकी रचना सं० १८६२ और १८७० वि० के बीच की है।[4] और यह ग्वाल के प्रथम रीति ग्रन्थ रसिकानन्द (रचना काल सं० १८७८ वि०) की पूर्ववर्ती कृति है। उक्त विवेचन का निष्कर्ष यह है कि ग्वाल और पद्माकर अपनी रचनाओं में अनेकत्र एक दूसरे के ऋणी रहे हैं और भाव भाषा विषय तथा प्रसंग में परस्पर पर्याप्त प्रभावापन्न हैं। यहाँ पहले हम ग्वाल पर पड़े पद्माकर के प्रभाव पर विचार करेंगे, तदनन्तर पद्माकर पर ग्वाल के प्रभाव को देखेंगे।

पद्माकर का ग्वाल पर प्रभाव—पद्माकर अपने युग के एक प्रसिद्ध

---

१ हि० सा० का इतिहास—संस्करण सं० २०१८ वि० पृष्ठ २९५।

२ कविवर पद्माकर और उनका युग—पृष्ठ १३०।

३ देखिये इसी शोध प्रबन्ध का यमुना लहरी प्रकरण।

४ इस सम्बन्ध में देखिये 'ब्रजभारती' वर्ष २१ अंक १ में पद्माकर और ग्वाल सम्बन्धी मेरा लेख पृष्ठ २१-२४।

कवि हैं जिनका अनेक समसामयिक और परवर्ती कवियों पर प्रभाव पड़ा। ग्वाल भी यत्र-तत्र उन से प्रभावापन्न हुए हैं। परन्तु इस प्रभाव की मात्रा अत्यल्प और वह भी ग्वाल के कुछ ही छन्दों में अवलोकनीय है।

जगत विनोद में पद्माकर का एक अत्यन्त प्रसिद्ध छन्द है—

गुलगुली गिल में गलीचा हैं गुनीजन हैं,
चादनी है चिक है चिरागन की माला है।
कहै पद्माकर त्यों गजक गिजा है सजी
सेज है सुराही है सुरा है और प्याला है॥
सिसिर के पाला को न व्यापत कसाला तिन्हैं,
जिनके अधीन एते उदित मसाला है।
तान तुक ताला है विनोद के रसाला हैं,
सुवाला है दुसाला है विसाला चित्रसाला है॥३८८॥

इसी से मिलता जुलता ग्वाल द्वारा रचित षटऋतु वर्णन का कवित्त यहाँ प्रस्तुत है—

सोन की अंगीठिन में अगर अधूम होय,
होय धूमधार हू तो धूप मद आला की।
पौन की न गौन होय भरकयो सुभौन होय
मेवन की खौन होय डब्बियाँ मसाला की॥
ग्वाल कवि कहै हूर परी सी सुरनवारी
नाचती उमंग सी तरंग तान ताला की।
पाला की बहार औ दुसाला की बहार आई
पाला की बहार में बहार बड़ी प्याला की॥६०॥

कहने की आवश्यकता नहीं कि ग्वाल ने पद्माकर के वस्तु विषय को पूर्णरूप में ग्रहण किया है। यही नहीं भाषा भी लगभग पद्माकर की है।

जगत विनोद में पद्माकर का एक छन्द वचन विदग्धा नायिका से सम्बन्धित है—

जब लों घर को धनी आवै घरै तब लों तौ कहूँ चित दैबो करो।
पद्माकर ये बछरा अपने बछरान के संग चरैबो करो॥
अरु औरन के घर तें हमसों तुम दूनी दुहावनी लैबो करो।
नित सांझ सबेर हमारी हहा हरि गैया भला दुहि जैबो करो॥६१॥

ग्वाल ने पद्माकर के इसी भाव को ग्रहण करके अपनी वचन विदग्धा का वर्णन रसरंग में निम्नांकित छन्द में किया है—

यह लात चलावनी हाय दया हर एक सा नाहि दुहावनी है।
सुनी तेरी तरीफ मिलावनी की हित तेरे सा माल पुहावनी है॥
कवि ग्वाल चराय कें लावनी ह्या फिरि बाधनो ठौर सुहावनी है।
मनभावनी दहों दुहावनी मे यह गाय तुही पै दुहावनी है॥

पद्माकर की नायिका की उक्ति विनम्र और अनुरोधपूर्ण है। 'हहा नन्द' से उसकी आग्रह भरी चिरारी और भी सरस बन गई है। परन्तु ग्वाल की नायिका मे प्रार्थना नहीं विनय नहीं अनुरोध भी नहीं, वल्कि एक अधिकार भरी उक्ति है। ग्वाल की नायिका की गाय लात चलाने वाली है। हर किसी से नहीं मिलती। उसे नायिका किसी दूसरे को छूने भी नहीं देगी। नायक की गाय दुहने की कला की प्रशसा नायिका ने सुन रखी है यह जता कर वह नायक की कोमल वृत्ति को जगाती है। वह उसके हित की बात कह रही है। मन भावनी दुहावनी नैन का लोभ काफी मोहक है। पदमाकर की नायिका की पहुच जहाँ भावुक है वहा ग्वाल की नायिका की पहुच मनोवैज्ञानिक है।

जगत विनोद मे पद्माकर की वत्तमान गुप्ता नायिका की उक्ति इस प्रकार है—

ऊधम ऐसो मच्यो ब्रज मे सब रग तरग उमगनि सींचें।
त्यो पद्माकर छज्जनि छातनि छव छिति छाजती केसर कीचें॥
द पिचकी भजी भीजी तहाँ परे पीछें गुपाल गुलाल उलीचें।
एक ही सग इहा रपटे सखी ए भए ऊपर मैं भई नीचें॥८८॥

रसरग मे ग्वाल की वत्तमान गुप्ता की उक्ति भी अवलोकनीय है—

गोकुल की यहि साकरी गल मे जोरावरी रसरग मो मीचें।
लाल गुलालें मुधा लैं यहा मग लालें भये रग कीचें उलीच॥
यौं कवि ग्वाल गुपाल छलो छवि छल छकयो पट छोरन खीचें।
तेरी सो आली दुहू रपटे सग हो भई ऊपर ये भये नीच॥३।२६॥

ग्वाल ने पद्माकर के भाव को कुछ परिवतन के साथ ग्रहण किया है। भाषा तो मिल ही रही है विषय, प्रसग कारण और नाय भी समानान्तर चल रहे हैं। अन्तर कवल इतना रहा है कि ग्वाल की नायिका अपने नायक के ऊपर आ गिरती है जबकि पद्माकर के छद की नायिका पहले गिरती है और ऊपर से नायक। ग्वाल की यह कल्पना हृदयग्राह्य नहीं कही जा सकता। पद्माकर की उक्ति बडा स्वाभाविक और सरस है। ग्वाल यहाँ

पद्माकर के भाव को चतुराई से प्रयोग नहीं कर सके। एक दूसरे स्थल पर ग्वाल ने पद्माकर के इसी भाव को ज्यों का त्यों रख दिया है। देखिये—

आई मैं अकेली या कलिंद जाके कूलन पै
न्हाइ लाय केसन निसागन्ध मौंजे य।
नीर भरि औला म चलनि चह्यो तोलों घोर
छाय घन आयो मह चचलान कौंजे ये॥
ग्वाल कवि गागर गुविन्द नें उठाई आय
रपटि परे री दोऊ देखि चरचौंजे ये।
मैं तो चित्त चौंकि के गिरी री चित्त चाग
सिर ऊपर ते एक मग आडम्बर औंधे य॥

केवल प्रसंग बदल गया है। भाव कल्पना ज्यों की त्यों पद्माकर की है।

ग्वाल का हिन्दी कवियों पर प्रभाव

ग्वाल का पदमाकर पर प्रभाव—पद्माकर ने ग्वाल की यमुना लहरी की अनुकृति पर अपनी गंगा लहरी बनाई, यह ऊपर निवेदित हो है। अत आधार ग्रन्थ यमुना लहरी के वर्ण्य विषय, प्रसग और उपविषयों का प्रभाव गंगा लहरी पर पड़े बिना नहीं रहा। दोनों लहरियों म पापियों का उद्धार प्रमुख विषय है। नामोच्चारण, माजन, स्नान दर्शन से सभी पाप नष्ट होते हैं। कोई भी पापी यमदूतों के चगुल म नहीं फस पाता। चित्रगुप्त की परेशानी बढ जाती है। जिस भी यमराज पकड कर ले जाते हैं वह गंगा और यमुना का नाम लेकर स्वगधाम चला जाता है फिर नरक म कौन आयगा। इसी प्रकार दोनों नदियों की महिमा का गायन दोनों कवियों ने अपने ग्रन्थ मे किया है। पद्माकर गंगा भक्त हैं परन्तु उन्होंने जमुना लहरी भी लिखी है और ग्वाल यमुना के अनन्य भक्त हैं परन्तु उन्होंने भी गंगा पर पच्चीस छन्द लिखे हैं। ग्वाल की यमुना लहरी म १०८ छन्द हैं और पद्माकर की गंगा लहरी म ५६ छन्द। भाव, भाषा विषय और प्रसंग के साम्य के दोनों कवियों के कुछ ही छन्द नीचे लिखे जाते हैं—

ग्वाल की यमुना लहरी का एक स्थल देखिये—

मून करनी को धरनी प नर देह लैबो
देहन को मून फेर पालन दुनी को है।
देह पालिबे को मूल भोजन सुपूरन है,
भोजन को मूल होनो बरसा घनी को है॥

ग्वाल कवि मूल करमा को है जतन जप,
जतन सुमूल भेद वन बहु नीको है।
वन्न को मूल पान मूल तरिवे को
तरिवे को मूल नाम भानुनन्दिनी को है ॥६॥

गंगा लहरी में उक्त छन्द के ठीक अनुरूप पद्माकर का निम्नांकित कवित्त है—

करम को मूल तन तनमूल जग जीव
जग जीवन मूल अति आनन्द उधरिवो।
कहै पद्माकर सु आनन्द को मूल राज
राजमूल केवल प्रजा को भौन भरिवो ॥
प्रजा मूल अन्न सब अन्नन को मूल मघ
मघन को मूल एक जग्य अनुसरिवो।
जग्यन को मूल धन धन मूल धर्म अरु धर्म
मूल गंगा जल बिन्दु पान करिबो ॥४॥

यमुना लहरी में ग्वाल का एक दूसरा छंद देखिये—

काहू साहूकार को चुरायो धन चोर एक,
सोर भयो सहर गयो दई किस कित।
बहुत दिना में गयो बाधि कै नवाव भयो
पूछयो तें लयो है कहाँ हम नाहित हित ॥
ग्वाल कवि भाख्यो रविजा प जात न्यो माल,
हाल भयो और इमि कहत तित तित।
स्याम रंग ह्वैकै भुज चार भई आयुध ल,
चौकयो आम खास रह्यो हाकिम चित चित ॥२५॥

गंगा लहरी में इसी से कुछ मिलता जुलता पद्माकर का कवित्त है—

हरि हरि हसत न चाहत हरिष चल्यो
कलहू विनोदि मन वाको आर ढरको।
कहै पद्माकर सु देखि कै गरुड हू की
लेखि निज भाग अनुराग कैं न सरको ॥
कार्य चढा कौन तजो चाहत सबन यह
सोचन पतित परयो गंगातीर परको।
जीना घरी द्वक रूप हर को न पायो तोला
पातकी बिचारो भयो चोर भरघर को ॥४२॥

इसी प्रकार के साम्य पद्माकर और ग्वाल की लहरियो म पर्याप्त मात्रा म मिलते हैं। सक्षेप म कहा जा सकता है कि पद्माकर पर ग्वाल का प्रभाव पर्याप्त मात्रा मे पडा है। यहा यह निवेदन करना आवश्यक प्रतीत होता है कि पद्माकर पर ग्वाल के प्रभाव को यहाँ प्रथम बार विवेचित किया गया है। साहित्य म अभी तक ग्वाल ही पद्माकर के अनुकर्ता रूप म मान्य थे। एक और उदाहरण देकर हम इस प्रसग को समाप्त करेंग। ग्वाल यमुना लहरी म लिखत हैं —

कोई दुराचारी व्यभिचारी अनाचारी एक
"हाय जमुना म कह्यौ कस मैं उधारिहा।
फेरि प्रान त्यागे, भुज चारि भई ताही
ठौर आयो जमदूत कहै तोहि मैं पकरिहौं॥
ग्वाल कवि एसौ सुनि भाग्यबली भाख्यौ
वह निज भुजदड कौ घमड अनुसरिहौं।
तोरि जमदड कौं, मरोरि बाहुदड कौं सु
फोरि फोरि मडल अखड खड करिहौ॥

गगा लहरी मे इसी से मिलता हुआ पद्माकर का एक प्रसिद्ध छ द देखिये —

जमें तु न मोको कहू नेक न डरात हु तो
ऐस अब तो को हो हू नेकहू न डरिहौ।
कहै पद्माकर प्रचड जो परैगो तो उमडि
करि तो सो भुजदड ठोकि लरिहौं॥
चलो चल चलो चल विचल न बीच ही तें
कीच बीच नीच तो कुटुम्ब कौं कचरि हौं।
एर दगादार मेर पातक अपार तोहि गगा
की कछार मे पछार छार करिहौं॥८॥

ग्वाल कवि का फुटकर कवियो पर प्रभाव—पद्माकर के पश्चात् जिन कवियो पर ग्वाल का विशष प्रभाव पडा उनम चन्द्रशेखर बाजपयी नवनीत चतुर्वेदी, हरदेव उरदाम, लछीराम, सवक प्रमुख रूप स उल्लेखनीय हैं।

चन्द्रशेखर बाजपेयी—चन्द्रशेखर ग्वाल क समकालीन थे। इन्होंने ग्वाल कृत हम्मीर हठ' (र० का० स० १८८३ वि०) की अनुकृति पर स० १९०२ वि० म 'हम्मीर हठ का य की रचना की। दोनो का यो की हम्मीर विषयक कथा लगभग एक सी है परन्तु चन्द्रशेखर का का य ग्वाल के का य

कम पड़ा है। ग्वाल का अन्य प्रकार का प्रभाव चन्द्रशेखर वाजपेयी पर पड़ा।

नवनीत चतुर्वेदी (१९१५ १९८९वि०)—ग्वाल के काव्य का सर्वाधिक प्रभाव चतुर्वेदी जी के काव्य में दिखाई देता है। नवनीत जी ग्वाल के सहपाठी और प्रशंसक थे। अतः यह प्रभावापन्नता स्वाभाविक ही दीख पड़ती है। नवनीत जी के अनेक छन्द ऐसे हैं जिनमें ग्वाल की भाषा उनके भाव, विषय और प्रसंग तक ज्यों के त्यों गृहीत हुए हैं। ग्वाल ने कवियों द्वारा उपेक्षिता कुब्जा की हिमायत में कुब्जाष्टक लिखा। नवनीत जी ने भी इनके अनुकरण पर कुब्जा पच्चीसी की रचना की। दोनों का प्रतिपाद्य एक ही है—कुब्जा द्वारा गोपियों को खरी खोटी सुनाना। ग्वाल के कुब्जाष्टक का प्रथम छन्द है—

> मोहि व्यभिचारिनी कमीनी कहि बोलती हैं
> राखती न नेंक हू सम्हारि कें जबान को।
> दीन्हा गोपिकान ने भलो ही लाहिनो है बीर,
> खोलौंगी उन्हीं के पतिव्रत के बखान को॥
> ग्वाल कवि अबलों रही ही चुप कान कानि,
> कहों का गवारिनि के अधिक अयान को।
> जानूँगी ऊचाई चतुराई उन सौतिन की
> लैंय तौ बुलाय अब सानर सुजान को॥१॥

नवनीत जी के कुब्जा पच्चीसी के निम्नांकित छन्द से ठीक यही ध्वनि निकलती है—

> गोपिन की अकथ कहानी कहो ऊधो तोहि
> ऐसी कुल बोरनी न देखी बनिताम में।
> औगुन अनेकन तें पूरि रही रोम रोम कहाँ
> लों गिनाऊँ मन आवत गिलान में॥
> नवनीत नाहक लगावें दोष मोकों हाय,
> मैं तो ब्रज चन्द करि राख्यो गहि प्रान में।
> गोकुल की गूजरी गुमाइन बनेंगी कहा
> जिन सुयचोप खूब जाहिर जहान में॥२॥

ग्वाल की कुब्जाष्टक की निम्नांकित उक्ति को भी नवनीत जी से मिलाइए—

ग्वाल—ग्वाल कवि एक बस धाटी तौ जरूर मोम
गोबर न थाप्यो औ न खोयो मे उकर है।
घर घर द्वार द्वार गली गली फिरवैया
भोरतें घसत साझ तिनकी कहा दर है ॥३॥

—गोबर की डलिया सिर लै कब गायन म हम जात ही रु घन।
रया नवनीत दुहावन के मिस द्वार किवार दये कब मूदन ॥
कौन दिना बन बीच नही हरि कामरी लाय बनाय्यो बू दन।
उद्धव और कहा कहिये कब खालि दये फरियान के पू दन ॥
—कुब्जा पच्चीसी ५।

दोनो की कुछ और पक्तियाँ भी अवलोकनीय हैं। देखिये—

ग्वाल—(कुब्जाष्टक छ० ६)
ग्वाल कवि छिपछिप अधियारी रातिन म
सोवे पति त्यागि के किवार मुदी खोली वे।
बनन म, बागन मे, जमुना किनारन म
प्रेतन मसान म खराब होत डोली वे ॥६॥

नवनीत—(कुब्जा पच्चीसी छ० १० व ४)
कातिक की रनि बीच उन के बजावत ही
पहुची वन बीच कुल पतिव्रत खाय खोय।
घोय घोय डारी उन सरम धरम धीर
उदित हुलास चन्द्र चाँदनी सु जोय जोय ॥१०॥

तथा— दौरि उठी तजिकैं पति गह बढयो रस नह मनेह सुरु पर।
गरि दई उन लाज पै गाज कहा कहिये नवनीत निहू पर ॥
या रसरग उमग बन्याय रही सुख पाय तब व्रज भू पर।
भूलि गईं सब कौतुक वे सुलतान के नीचें पतान क ऊपर ॥४॥

ग्वाल —(कुब्जाष्टक छ० ८)
करि सकै कस गोपिकान की बराबरी मैं
हौं न धारी सीस डाली दही के किमाम की।
मैं न काहू मानुस मो विसरत डोली कहू,
बात हू न कीन्ही कहू हँसि हँसि काम की ॥
ग्वाल कवि कहू छिरी न ब्रत खिरकन म
धारि म न बन म न बगिया अराम की।

चाहै नरनारी मेरो यारी गिना मावर सो
चाहै घरबारी प्रानप्यारी गिना स्याम की ॥८॥

नवनीत—(कुब्जा पच्चीसी छं० ८)

या न करें अपन नितनेम जित दुख पाय मिन गिरधारी ।
त्या नवनीत दही सिर ल नित डोलत ही कुलकानि बिसारी ॥
उद्धव और कहा कहिये पर साकरी खोरि की बात जु न्यारी ।
क्या करें मरी बराबरी व नित नन्द को गोबर थापनहारा ॥८॥

कहने की आवश्यकता नहीं कि नवनीत जी के 'सनेह सतक' म प्राय सभी छन्दा म ग्वाल के भाव उनकी भाषा आदि का पूरा पूरा प्रभाव है । नवनीत जी की कविता ग्वाल जी की छाया म ही रची गई है । रीतिबद्ध का य में भी नवनीत जी ग्वाल से प्रभावापन्न हैं । यहाँ हम केवल एक एक छन्द देकर अब इस प्रसग को समाप्त करेंगे ।

ग्वाल—(रसरग १।९४)

मैंन तो कही ही वह अति सुकुमारि नारि
हारि हारि जाति हार फूलन के धारे हैं ।
तुम्हे एक लागी लाल इहाँ की बुलाइव की
यातें जाइ कहे प्रेम वचन तिहारे हैं ॥
ग्वाल कवि नवें चलि बढि गई सी करिकें
सीकर समूह वाके बदन पसारे हैं ।
तारेन के चन्दन कों करत हूतो मन्द चन्द
आज चढि चद पर चमकत तारे हैं ॥१।९४॥

नवनीत—(काव्य नवनीत ४७ पृ० ६३)

आई प्रात हाइ वृषभानुजा कलिंद जाम
सखिन समेत गृह मारग सुचीन्हो है ।
नवनीत प्यारी उत आवत लख्यो ही
तहा भई भेंट भरि हेरि हरख नवीनो है ॥
धरें सेत सारी सो किनारीदार मुक्तमाल
लाल का निहारि चट घूघट सुगीन्हो है ।
दाव ही रहत चन्द्रमा तो चाँदनी को सदा
आज चाँदनी ने चन्द्रमा कों दाबि लीन्हो है ॥४७॥

रेखाङ्कित पंक्तियो म अलकार साम्य स्पष्ट अवलोकनीय है । नवनीत जी न केवल प्रसग बदल कर ग्वाल जी की ही बात कह दी है ।

उरदाम चतुर्वेदी—ये ग्वाल के प्रतिद्वन्द्वी और समकालीन थे। इनकी रचनायें भी ग्वाल से प्रभावित हैं। नीचे ग्वाल और उरदाम का नेत्रा व कटी लेपन पर बना एक एक छ द उदाहरण स्वल्प दिया जाता है—

ग्वाल—(रसरग ५।१२)

मोभित सवार सने सुपमा समूल सुख
सरस रसील सरसील सील थोक्दार।
चचल चनाक चार चोपन चटक भरे
चोकत चमकें चलें सजल सरोक्दार॥
ग्वाल कवि मन्म म मतग से मजे म मजे
मैन मतवारे मृग मीनन के सोक्दार।
नूर भर नमित न मुदत न मूद नैन
नागर नवेली के नमोल नैन नाकन्दार।५।११॥

उरदाम—(व्रजभारती वर्ष ७ सख्या १-२)

जीवन मुलक महि मदन महीप जू ने
मीन छाप दर्के राख भट जुग जोरन्दार।
उरज बुरज दैनवासी छल रासी मनो
पीय मन चचल धनी के नीके मोरदार॥
उरदाम सिसुता सहर चढ़ि लूटि लीनो
सरम धरम रह्यो एकहू न छोरदार।
य म कज खजन चकोर भौंर गजन सो
बगत कजाकी कजरारे नन कारन्दार॥

कहने की आवश्यकता नहीं कि उरदाम ने ग्वाल के भाव को कुशलता पूर्वक निभाया है। ग्वाल की नायिका के नेत्र सुदर, सरस, शील भरे किन्तु चचल और चालाक हैं। वे चौंकते और चमकते हैं। उरदाम की नायिका के नैन छली, कजरारे कोरन्दार और कजाकी करने वाले हैं। उरदाम ने नेत्रा को दो मटों और दो बुर्जों से उपमा दी है, ग्वाल ने केवल मतग बताया है और वह भी दो नहीं एक मतग। दोनों द्विवचन चाहिये था।

हरदेव—ये ग्वाल के सहपाठी रहे हैं। उरदाम की भांति ये भी ग्वाल के प्रतिद्वन्द्वी थे। हरदेव पर ग्वाल का पर्याप्त प्रभाव है। यहां उदाहरण के लिये केवल एक ही छन्द लिया जा रहा है जिसमें ग्वाल का भाव है। दोनों का प्रसग भी एक ही है। देखिये—

ग्वाल—(रसरंग १।४७)

गोरी गोरी ग्वालिनी हौं रूप गुन गरवीली,
अति चमकीली नहीं अंग अंगराये हैं।
महकें महल जाके तनकी सुगंध ही सों
गनिके सुमन भौर भौंर दौरि आये हैं॥
ग्वाल कवि लाल जू सुनत बाल लोल भये
मुख पै अनेक बार स्रम कन छाये हैं।
मानो कामदेव एक बिकसे कमल पर मुकता
अमल दल दल पै बिछाये हैं॥

हरदेव—(ग्वाल कवि-प्रभुदयाल मीतल पृ० ९५)

इत आपु ते मैंन पै प्यारी चढ़ी उत आपुने गैल चढ़े जसुदा के।
दृष्टि सो दृष्टि गई मिलि यों उमड़े घुमड़े मनो मेह मुदा के॥
सोह रहे कविया हरदेव जू सज्जित साज सबै बसुधा के।
हैं मुख पै स्रम के बिनुका मनों चन्द के मंडल बिन्दु सुधा के॥

ग्वाल के छन्द में श्रवण मात्र से ही उत्पन्न श्रमकणों का वर्णन है जब कि हरदेव के छन्द में श्रमजन्य स्वेद वर्णित है। सरसता में ग्वाल का छन्द हरदेव के छन्द से बढ़ कर है। ग्वाल की भाषा का प्रवाह भी हरदेव से अधिक स्फीत है।

सेवक—ये ग्वाल के परवर्ती कवि हैं। इन का एक छन्द है जिसमें किसी मुग्धा की उक्ति है। मालिनि बेला के फूल देती है, किन्तु हाथ में आते ही वे जवा कुसुम बन जाते हैं। नायिका आश्चर्य चकित है। छन्द यह है—

दये सुगंधित बेल के देत भये कर लेत जपा दल कैसे।
ज्यो महि डारे पै पग पीठि धरे रंग सोन जुहीन में जैसे॥
'सेवक' हाँसी लगी उर झारि निहारि लखे पै लगे सब वैसे।
टौने किये किधों लौने अबै ये नये नये मालिनि फूलघो कैसे॥[१]

सेवक के इस छन्द में ग्वाल के निम्नांकित छन्द का भाव ध्वनित है। तद्‌गुण अलंकार भी है। देखिये—

(रसिकानन्द—४।१०८)

फूली कुंज क्यारिन में मालती महक भरी
पानि में लियें ते दुति चंपक की लीनी क्यों।

---

[१] ग्वाल रत्नावली—कवि किंकर, सन १९४५ ई० संस्करण इलाहाबाद भूमिका भाग।

सग की सहेलिन की कटिहि निहारि लेत
मेरी दिनरात होत जात कटि छीनी क्यो ॥
'ग्वाल कवि' अधिक अजभन दवाइ हाल
माल कुम्हलानी पै सुगध रस भीनी क्या ।
देखि नयनी म राज राजिव दुनी म वीर
मेरी नथनी म चुनी सीन पोहि दीनी क्यो ॥

सेवक ने ग्वाल के भाव को लेकर सुदर कल्पना की है। सेवक के छन्द का प्रसग दूसरा है, कल्पना भी दूसरी है। परन्तु इसम स देह नही कि सेवक का छन्द ग्वाल के छन्द से उत्कृष्ट बन पड़ा है।

लछीराम—ग्वाल के प्रशसक लछीराम ने कई छन्दो म उनके भाव को प्रथित किया है। यहाँ ग्वाल और लछीराम का एक समान छद उदा हरण स्वरूप दिया जा रहा है—

ग्वाल—(रसरग)

प्यारी परभात परयक त निसक ए री
उठि उठि कहे कम बचन विबम के।
फेरि आय आलिन की अवली अगाय लेत,
सौहू जमुहात मन धारे पनखस के ॥
ग्वाल कवि करन उचाय उलटाय पाछे
कच ते मिलाय तन नोरत सरस के।
मानो कामदेव ने मयक तें मिलाय करि
दिय हैं बकसि सरकस तरकस के ॥

लछीराम—(ग्वाल रत्नावली—भूमिका भाग)

प्यारी परभात मद मद मुसकात आजु
आरस बलित चली उतरि अटारी तें।
कवि लछिराम' कल कचुकी मे बक लट
बधि गई निसि म असम गुनतारी तें ॥
करन दुट तें तिन्हे बाहर करन लागी
छल छटकीलो छवयो छरकि छटारी तें।
बाजीगरी खेलिके जलूम हित मानों कढ़े,
कुडलित नाग नट मदन पिटारी तें ॥

ग्वाल उत्प्रेक्षा म अद्वितीय थे। वे चमत्कार के स्मरण करके उन्होंने उत्प्रेक्षा बाँध दी। जमुहाती हुई

पीछे से जाकर कंधे से मिला कर शरीर तोड़ने लगी है। कवि कल्पना करता है कि मानो कामदेव ने चन्द्रमा से मिला कर दो चरन तरकस दे दिये हैं। लछीराम ग्वाल के छन्द के भाव को ज्यों का त्यों ग्रहण करके एक दूसरी स्थिति की कल्पना कर लेते हैं कि नायिका की टेढ़ी बेशकीमती कंचुकी में बँध गई है। नायिका दोनों हाथों से बाला का निकालने लगी तो ऐसा लगा मानो कुंडली मारे हुए दो नाग बाजीगरी दिखा कर जुलूस के लिये पिटारी से निकले हों। उत्प्रेक्षा अनूठी है सटीक है। साथ ही भाषा सौष्ठवपूर्ण और स्निग्ध है। कहना व्यर्थ है कि लछीराम ने गृहीत भाव को और भी चमका दिया है।

निष्कर्ष—रीति निरूपण में ग्वाल हिन्दी के जिन आचार्यों से अधिक प्रभावापन्न हैं, इनमें वरीयता से केशवदास, कुलपति मिश्र हरचरण दास जसवंत सिंह मतिराम और भिखारीदास के नाम प्रमुख हैं। शृंगारिक रचनाओं में उन पर सूरदास, केशवदास मतिराम भिखारीदास और पदमाकर का आंशिक प्रभाव है। वीर काव्य और नाराशंसा में वे भूषण से अधिक प्रभावित हुए हैं।

मौलिकता—साहित्य में मौलिकता से अभिप्राय केवल 'नवीन उद्भावना' का नहीं बल्कि दृष्टिकोण अथवा विवेचन की नवीनता ही उसके लिये अपेक्षित रहती है। भावसाम्य या प्रभाव ग्रहण मात्र से ही किसी कवि की मौलिकता पर आँच नहीं आती। भाव और विचार सार्वजनिक सम्पत्ति हैं। इनकी अभिव्यक्ति ही कवि की अपनी होती है कवि में पूर्ववर्ती आचार्यों और कवियों से गृहीत भाव या विचार उसके आत्म के अंग बन कर अभिव्यक्त होते हैं। ऐसी दशा में उसकी मौलिकता हीन नहीं बनती। बहुत सी दशाओं में विविध कारणों से दो कवियों में भावसाम्य मिल जाता है। वहाँ इस प्रभाव ग्रहण नहीं माना जा सकता। समान सामाजिक परिस्थितियाँ समान वातावरण समान संस्कार समान विचार पद्धतियाँ समान भावों को उद्बुद्ध करने में प्रमुख रूप से सहायक रहती हैं। एक ही कोटि की प्रतिभाएँ एक सी मानसिक परिस्थितियों में एक विषय वस्तु पर एक समान सोचती हैं। रीतिकालीन कवियों की विविध परिस्थितियाँ उनके संस्कार, उनकी विचार पद्धति, उनका वातावरण उनके काव्य विषय और काव्य सामग्री आदि सभी एक समान थे। अतः यह स्वाभाविक ही था कि उनमें भावसाम्य होता। ग्वाल कवि भी इसके अपवाद नहीं थे। उनके समक्ष संस्कृत के काव्य शास्त्र के जो आदर्श ग्रन्थ विद्यमान थे, वे ही रीति के अन्य कवियों के भी आधार थे। अतः इनके रीति

निरूपण म केशव आदि पूववर्ती आचार्यों का सा विवेचन साम्य मिलता है। परन्तु इससे ग्वाल की मौलिकता म किसी प्रकार की कमी नहीं आती। क्यों कि अभिव्यक्ति उनकी अपनी है। ठीक इसी प्रकार ग्वाल की कविता मे मिलने वाले स्तर पूववर्ती कवियो के भाव साम्य के लिये उनकी मौलिकता पर दोषा रोपण नहीं किया जा सकता। अन्य निपुण कवियो की भांति ग्वाल ने भी अपने पूववर्ती काव्य का गम्भीर अध्ययन करके कुछ संस्कार अर्जित किये थे। मनन द्वारा पूववर्ती भावो और विचारो को उन्होंने पचा कर अपने आत्म का अग बना लिया था और अब वे उनके लिये बाह्य नहीं रह गये थे। ऐसी परिस्थिति म ग्वाल के कतिपय छन्दो मे पूववर्ती कवियों के छन्दो का यत्किंचित जो भाव साम्य पाया जाता है, उसके लिये वे सवथा साम्य ही माने जाने चाहिए। उनम जो कुछ प्रभाव ग्रहण की मात्रा है वह भी उनके आत्म का अग बन कर अभिव्यक्त हुई है। ग्वाल संस्कृत और हिन्दी के पडित थे। दोनो साहित्यों मे उनकी पारगति थी। अत यह कहना कि उन्होंने जान बूझ कर किसी का भाव ग्रहण किया है उनके प्रति न्याय नहीं होगा। एक समान प्रसग और एक समान मानसिक स्थिति म पूववर्ती काव्य की भाषा और भाव की यत्रतत्र प्रतिध्वनि जाने अनजाने उनकी रचनाओ मे हुई है। परन्तु ऐसे छन्दो की संख्या अत्यल्प है। ग्वाल ने बहुत लिखा है अत इसम इतना अल्प भाव साम्य और प्रभाव ग्रहण क्षम्य ही माना जायगा। उन्होंने बडी सचाई के साथ कवि दपण म लिखा भी है—

ज कवन कहू करत हैं ते काहू इक ठौर।
चूक गये तो चूक उहि सब म चूक न और ॥१।१२॥

तथा—तुरी को चढ या जमें तुरी को चलावें नित्त,
जो प गिरयो कबहू तो इलम घटै नहीं।
तान को मिलया जैस तानन्नु मिलायो कर,
कबहू मिला न तो प्रमान सु हट नहीं॥
ग्वाल कवि पडित परम तापें काहू सम
आई एक बात न तो पडित लट नहीं।
कवि के कवित्त मुक्ताहल से साचे लाख,
तामे एक झूठो मिल पानिप घटै नहीं॥१।१३॥

ग्वाल प्रथमत आचाय थे और तदनन्तर कवि। अत उनके कवि पर उनका आचाय पदे पदे आरूढ मिलता है। यही कारण है कि आनुप्रासिक पद योजना और अनूठी उत्प्रेक्षाओ के चमत्कार प्रदशन के भार स उ

आधारात दवी हुई है। इतने पर भी वह जीवत और प्रभावशाली है। वे प्रतिभावान् और साहित्य निपुण कवि थे। उनकी अनुभूति समृद्ध थी। उनम आत्म तत्व भरापूरा था, अत वाह्य अवलम्ब ग्रहण करने की यहाँ आवश्यकता ही नहीं थी। उन का काव्य केशव, विहारी, मतिराम, देव, भिखारीदास, पद्माकर आदि के काव्यों की भाति ही मौलिक है।

रीति निरूपण क क्षेत्र म ग्वाल का प्रभाव हरदेव आदि दो चार कवियो पर ही पड़ा। इसका कारण यह है कि उनके ग्रन्थ अनुपलब्ध रहे हैं। उनका दुलभ ग्रन्थ साहित्यानन्द' हिन्दी साहित्य की अमूल्य रत्न निधि है जो सौभाग्य से अब उपलब्ध हुआ है। पीछे प्रभाव परीक्षण म लिखा जा चुका है कि इनकी कविता से पद्माकर जस रससिद्ध रीति कवि प्रभावापन्न हैं। इनसे प्रभावित उनके समसामयिक और परवर्ती कवियो की एक लम्बी सूची है जिसम नवनीत चतुर्वेदी और लछिराम जसे पडित भी आते हैं। ग्वाल की कविता ने वत्तमान मे भी ब्रज भाषा के बीसियो कवियो को प्रभावित कर रखा है। ग्वाल की लोकप्रियता का रहस्य उनके काव्य की मौलिकता ही है।

४ हिन्दी साहित्य म ग्वाल का स्थान

समस्त हिन्दी साहित्य म ग्वाल का स्थान निश्चित करना सहज सम्भाव्य नहीं है। ग्वाल मूलत रीति कवि हैं। अत उनका साहित्य मुक्तक काव्य की श्रेणी म आता है। रीति काव्य की दो मूल प्रवृत्तियाँ हैं—१ रीति विवचन, और २ शृगारिकता। इसके अतिरिक्त ग्वाल ने वीर काव्य की रचना भी की है। भक्ति, नीति और वराग्य उनके आनुषगिक काव्य विषय रहे हैं तथा एक काव्यानुवाद भी उन्होंने प्रस्तुत किया है। भक्ति और वराग्य उनके प्रमुख प्रतिपाद्य विषय नहीं हैं, अत इन प्रवृत्तियो म उनकी तुलना करना उचित नहीं है। इस दृष्टि से उक्त सजातीय साहित्य के अन्तगत ही उनका स्थान निर्धारित करना समीचीन होगा। अतएव ग्वाल का स्थान हम हिन्दी के रीति आचार्यों, शृगार मुक्तककारो वीर काव्यकर्त्ताओ नीतिकारो और अनुवादको की परम्परा म ही निश्चित कर सकते हैं।

भारतीय साहित्यशास्त्र को हिन्दी रीति कवि कोई मौलिक योग नही दे सके। इस सम्बन्ध म आचाय रामचन्द्र शुक्ल की धारणा पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। वे लिखते हैं — हिन्दी म लक्षण ग्रन्थो की परिपाटी पर रचना करने वाले जो सकड़ो कवि हुए वे आचाय कोटि में नही आ सकते। व वास्तव म कवि ही थे। उनम आचायत्व के गुण नहीं थे। उनके अपर्याप्त लक्षण साहित्य शास्त्र का सम्यक बोध कराने म असमथ है।' आगे चल कर

वे लिखते हैं कि 'अपनी ओर से उन्होंने न तो अलंकार क्षेत्र में कुछ मौलिक विवेचन किया न रसक्षेत्र में।'[1] डा० नगेन्द्र ने भी आचार्य शुक्ल की इस धारणा की पुष्टि की है।[2] इस क्षेत्र में ग्वाल ने मौलिक उद्भावनाएँ तो नहीं कीं, परन्तु जैसा कि हम इनके रीति निरूपण और आचार्यत्व के प्रसंग में निष्कर्ष निकाल चुके हैं वे एक समर्थ आचार्य हैं और उन्होंने आचार्यत्व कर्म को अत्यन्त गम्भीरता पूर्वक ग्रहण किया और मनोयोग पूर्वक निभाया है। साहित्य शास्त्र के सर्वांग पर इन्होंने बहुत कुछ लिखा और विशदता एवं स्वच्छता पूर्वक विवेचन प्रस्तुत किया है। रस विवेचन से पहले मनोवैज्ञानिक आधार पर भाव-वर्णन की वरीयता, रस सिद्धान्त की अनुशीलनात्मक और गहन मंडनात्मक विवेचना भक्ति सम्प्रदाय के सख्य, दास्य और वात्सल्य रसों की हिन्दी में प्रथम बार विवृति, अलंकार सम्बन्धी नवीन दृष्टि, शास्त्रीय कसौटी पर कस कर हिन्दी के पूर्ववर्ती कवियों के काव्य दोषों का सप्रमाण निर्दुष्टीकरण, लम्बी-लम्बी गद्य वार्ताओं और टीकाओं का सिद्धान्त विवेचन में प्रचुरता के साथ प्रयोग आदि ग्वाल के आचार्यत्व कर्म की कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जिनके समान्तर दर्शन केशव, चिन्तामणि, देव, मतिराम, भिखारीदास, जसराज, कुलपति मिश्र, गोविन्द, प्रतापसाहि आदि के निरूपण में भी नहीं मिलते। गद्य का प्रयोग कुलपति मिश्र, भिखारीदास, गोविन्द, प्रतापसाहि आदि कतिपय आचार्यों ने भी किया है परन्तु बहुत सीमित रूप में। पिंगल का ग्वाल के अतिरिक्त बहुत ही कम कवियों ने निरूपण किया है इस कथन की आवृत्ति करने से हमारा अभिप्राय इस बात पर बल देने का है कि ग्वाल की दृष्टि और विवेचन पद्धति सर्वथा नवीन है और वैज्ञानिक, अतः मौलिक कहलाने की अधिकारिणी है। यह एक सफल आचार्य की सूझ बूझ मात्र की ही परिचायक नहीं बल्कि उसकी विषय में गहरी पैठ, पांडित्य प्रखरता और निर्भीक आलोचना शक्ति पर भी प्रकाश डालने को पर्याप्त है। आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र[3] और डा० महेन्द्र कुमार[4] की तथ्यपूर्ण

---

१ हि० सा० का इतिहास पृ० २२७। २ देव और उनकी कविता पृ० ३०५।

३ 'कवि रूप में ग्वाल कवि का महत्व चाहे उतना न हो पर रीति ग्रन्थकार के रूप में इनका पूरा महत्व माना जाना चाहिए।' हिन्दी साहित्य का अतीत, द्वितीय खण्ड, पृ० ६१०।

४ यह कहने में संकोच नहीं होता कि आचार्यत्व निरूपण की दृष्टि से ये चिन्तामणि, कुलपति आदि की परम्परा के कवि हैं।' हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास षष्ठ भाग पृ० [illegible]

निष्पत्तियो मे मेरी ग्वाल विषयक उक्त प्रतिष्ठापनाओ की अनन्त पुष्टि हो जाती है।

हिन्दी म आचार्यों के तीन वग मिलत हैं—(१) मम्मट और विश्वनाथ आदि की शैली पर काव्य के दशाग का विवेचन करने वाले आचाय, (२) शृगार तिलक और रस मजरी आदि के अनुसार केवल शृगार रस और उस की प्रधान आलम्बन नायिका का वणन कर न वाले आचाय और (३) चन्द्रालोक तथा कुवलयानन्द आदि के आधार पर अलकार मात्र का निरूपण करने वाले आचाय। ग्वाल न काव्य के सर्वांग का विवेचन किया है, अतएव स्पष्टत ही उनका स्थान पहले वग के अन्तगत आता है। इस वग म उनके प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी आचाय हैं—केशव चिन्तामणि कुलपति मिश्र, पदुमनदास देव, कुमारमणि श्रीपति, सोमनाथ भिखारीदास, जनराज जगतसिंह, गोविन्द और प्रतापसाहि।

केशव को संस्कृत रीति शास्त्र को हिन्दी म उतारने का ऐतिहासिक श्रेय प्राप्त है। इन्होंने अलकार और रस सम्प्रदायो की हिन्दी म प्रतिष्ठापना की। ग्वाल ने अनेकत्र इनकी मान्यताओ का प्रमाण रूप म उल्लेख करते हुए उनका आभार स्वीकार किया है और अन्यत्र इनके छन्दो को शास्त्रीय पद्धति से सदोष ठहराते हुए निर्दुष्ट भी बना कर दिखाया है। इससे सिद्ध होता है कि ग्वाल म केशव के पांडित्य के प्रति मान्यता भी है और उनके कवित्व के प्रति आलोचक और सुधारक दृष्टि भी। केशव के लक्षण जहाँ अस्पष्ट और अस्वच्छ हैं वहाँ ग्वाल के स्पष्ट और स्वच्छ। ग्वाल का विशद निरूपण तथा गद्य प्रयोग उसे केशव से और ऊंचा उठा देते हैं। पांडित्य म दोनों लगभग समान रूप म पारंगति रखते हैं। परन्तु ग्वाल ने आचाय कर्म को केशव से कहीं अधिक गम्भीरता से निर्वाह किया है।

चिन्तामणि ने दो चार स्थानो पर गद्य का आश्रय लेकर स्वनिर्मित लक्षणोदाहरणो का समन्वय मात्र दिखाया है ग्वाल की भाँति शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत नहीं किया। चिन्तामणि की अधिकाधिक सामग्री संस्कृत का प्राय दुरूह अनुवाद मात्र है। अत लक्षण और उदाहरण स्वच्छ नहीं है। परन्तु चिन्तामणि का मम्मट की पद्धति पर किया गया प्रथम प्रयास महत्त्व रखता है। ग्वाल के युग तक यह परम्परा पर्याप्त मज चुकी थी। अत यदि ग्वाल [illegible]तस अच्छा विवेचन कर सके, तो विशेष आश्चय की बात नहीं। चिन्तामणि [illegible]ति के प्रारम्भ काल के आचाय है जबकि ग्वाल उसके प्रौढ़काल के। जो भी [illegible] ग्वाल उनसे बहुत आगे हैं।

मम्मट की आधार परम्परा म कुलपति मिश्र ने आचायत्व को यथेष्ट गम्भीरतापूर्वक ग्रहण किया, गद्य का भी थोड़ा थोड़ा आश्रय लिया और शास्त्रीय विवेचन भी किया। परन्तु यह ग्वाल की तुलना मे परिमाण और गुण म कुछ-कुछ हल्का है। कुलपति ने भी ग्वाल की भाति मम्मट और विश्वनाथ आदि आचार्यों पर आक्षेप किये है। परन्तु दोनो के ही य आक्षेप प्राय विवादास्पद और अव्यवस्थित हैं। ग्वाल न कुलपति के सिद्धान्ता के प्रमाणस्वरूप अनेक उल्लेख किये हैं और उनके रस सिद्धान्त का तर्कपूर्ण खण्डन करके अपने मत की प्रतिष्ठा भी की है। दोनो ही शास्त्रविद पण्डित है। दोनो के लक्षण और उदाहरण स्वच्छ हैं। परन्तु एक तो ग्वाल का विषय क्षेत्र व्यापक है, दूसरे उन्होने विस्तृत गद्य का अपने विवेचन में लाभ उठाया है, तीसरे उन्होने भक्ति सम्प्रदाय तक के रस सिद्धान्त को अपनाकर शास्त्र को अद्यतन बनाया और चौथे पिंगल का भी उन्होन विशद विवेचन किया है। कुल मिला कर ग्वाल म कुलपति से अधिक विशेषताएँ हैं। हिन्दी को उनकी देन भी कुलपति स निश्चित रूप से अधिक है।

पद्मनदास रीति के सामान्य विविधाग निरूपक आचार्य हैं। इनका रीति निरूपण अत्यन्त संक्षिप्त और शास्त्रीय विवेचन सामान्य कोटि का है। सम्पूर्ण विवेचन काव्य मंजरी' के ७१६ दोहो मे समाप्त हो गया है। गुण, परिमाण और विवेचन की शास्त्रीय पद्धति के निर्वाह म वे कहीं भी ग्वाल के समकक्ष नही ठहरते।

विषय-क्षेत्र की दृष्टि से देव ग्वाल की तुलना म आने योग्य हैं। परन्तु आचार्य कर्म को ग्वाल के समान गम्भीरता और मनोयोग पूर्वक देव ग्रहण नही कर सके। ग्वाल पाण्डित्य के धनी आचार्य है तो देव सूक्ष्म एव गहरी रस चेतना के अधिकारी आचार्य देव म कहीं-कहीं निरर्थक विस्तार का आग्रह है, जबकि ग्वाल जो है उसी की प्रौढ विवेचना करके सिद्धान्तो को स्थिरता देने के पक्ष म है।' ग्वाल आचार्य पहले हैं और तत्पश्चात् कवि, देव कवि पहले हैं और तत्पश्चात् आचार्य। आचार्य रूप म ग्वाल देव स पर्याप्त आगे हैं।

चिन्तामणि और कुलपति मिश्र क पश्चात् शास्त्रीय विवेचन की शुद्धता के विचार से कुमारमणि का नाम प्रथम आता है। इनकी भाषा ग्वाल की भाषा म अधिक सरल और स्पष्ट है। भले ही इनम ग्वाल की सी मौलिक धारणाओ का अभाव है। परन्तु विवेचन म भाषा वैविध्य, जो कहीं-कहीं ग्वाल म परिलक्षित है कुमारमणि म देखने को नहीं मिलता। परन्तु

का विषय क्षेत्र कुमारमणि से अधिक विस्तृत और व्यापक है। ग्वाल का विवेचन कुमारमणि के विवेचन से अधिक विशद और प्रौढ है। जो समन्वयक दृष्टि ग्वाल के विवेचन मे पाई जाती है, कुमारमणि म उसका अभाव है।

कुलपति मिश्र के पश्चात् ग्वाल के समान अत्यन्त पाडित्यपूर्ण विवेचन करने वाले और पूर्ववर्ती कवियो तक के उद्धरण देने म सकोच न करने वाले आचार्य श्रीपति आते हैं। श्रीपति म ग्वाल के समान ही पाडित्य प्रतिभा, साहित्य निपुणता आलोचना शक्ति और निर्णय देने का साहस मिलता है। इनका विषय क्षेत्र ग्वाल के समान ही व्यापक है परन्तु ये पिंगल नही लिख पाये। विवेचन विस्तार और समन्वय की दृष्टि भी ग्वाल को इनसे ऊँचा उठा देती है।

गद्य का यत्र-तत्र आश्रय लेकर लक्षण उदाहरण लिखने वाले आचार्य सोमनाथ शास्त्र का सम्यक विवेचन प्रस्तुत नही कर सके। उनका उद्देश्य सुकुमार बुद्धि पाठको के लिये काव्य शास्त्रीय सामग्री प्रस्तुत करना था, न कि गम्भीर विवेचन। इनकी काव्य शास्त्र सामग्री कही कही अत्यन्त सक्षिप्त और अपूर्ण रह गई है। परन्तु भाषा सरल और स्वच्छ है। दोष प्रकरण नही के बराबर है। रस प्रकरण विशद है। विषय क्षेत्र ग्वाल के समान व्यापक है और सोमनाथ ने शास्त्र के दसाग का वर्णन किया है। पिंगल निरूपण नहीं हुआ। ग्वाल की विशेषताए इनमे देखने को नही मिलती। पाडित्य की दृष्टि से भी ग्वाल से इनकी तुलना नही बैठती।

भिखारीदास ने काव्य शास्त्र के विवेचन को गम्भीरता पूर्वक ग्रहण करके कुलपति मिश्र और श्रीपति की शास्त्रीय विवेचना पद्धति को आगे बढाया। इन्होने काव्य के व्यापक क्षेत्र म कार्य किया और सफलता पूर्वक गद्य वार्तिकों का आश्रय लेकर विवेचन को स्पष्ट किया। दास के आचार्यत्व की विशेषताएँ हैं—मौलिक भावनाओ की प्रस्तुति का प्रयास, हिन्दी भाषा का आदर्श सामने रख कर ग्रन्थ निर्माण व्यावहारिक विवेचन और तर्क सम्मत धारणायें। ग्वाल म भी कुछ ऐसी ही विशेषताएँ मिलती हैं। दास काव्य का लक्षण नही दे पाये। इनके शक्ति के प्रसग भी अपूर्ण हैं। इनकी कुछ विषय सामग्री अपूर्ण है और कतिपय स्थलो पर भाषा शैथिल्य भी उनके विवेचन म पाया जाता है। ग्वाल की भाति काव्य शास्त्रीय सिद्धान्तो का यह परिपक्व विवेचन नहीं कर पाये। परन्तु इन्होने पिंगल को अवश्य ग्वाल की भाति विशद विस्तृत रूप से निरूपित किया है। दास का छन्दोऽर्णव पिंगल महत्वपूर्ण है। गद्य की विशदता भाषा की स्पष्टता, शास्त्रीय खडन मडन पद्धति

का आद्योपान्त निर्वाह आदि कुछ विषयों में ग्वाल कवि दास जी से कुछ आगे हैं। परन्तु दास के कुछ सिद्धान्तों के उल्लेख करके ग्वाल ने उनकी श्रेष्ठता स्वीकार की है। अतः ग्वाल के आगे दास के महत्व को कम नहीं किया जा सकता। दोनों ही अपने अपने युग के प्रसिद्ध रीति ग्रन्थकार हैं।

जनराज साधारण आचार्य हैं। इनका विषय क्षेत्र ग्वाल के समान ही व्यापक है। रीति का विवेचन सामान्यतः परम्परा के निर्वाहार्थ ही हुआ है। इनके शास्त्र निरूपण में शास्त्रीय तर्कपूर्ण विवेचन का प्रायः अभाव है। इन्होंने कोई नवीन धारणा स्थापित नहीं की। ग्वाल के शास्त्रीय निरूपण की विशेषतायें इनमें दुर्लभ हैं।

जगतसिंह का रीति निरूपण सामान्य कोटि का है। काव्यांगों में दोष प्रकरण किंचित विस्तार के साथ और शेष अंगों का साधारण वर्णन हुआ है। ग्वाल के से व्यवस्थित शास्त्रीय विवेचन का इनमें अभाव पाया जाता है। परन्तु इनकी भाषा ग्वाल की भाषा से अधिक सरल और स्पष्ट है। परन्तु कई क्षेत्रों में ग्वाल इनसे आगे हैं।

गोविन्द (रसिक गोविन्द) आचार्यत्व की दृष्टि से ग्वाल के अग्रवर्ती हैं। साहित्यशास्त्र पर इनका अच्छा अधिकार है। इनके अधिकांश लक्षण गद्य में होने के कारण स्वच्छ और सुकुमार बुद्धि के पाठकों के उपयुक्त हैं। इन्होंने शास्त्र को अत्यन्त संक्षेप में निपुणतापूर्वक बोधगम्य बनाने का सफल प्रयास किया है। ग्वाल की भांति ये गम्भीरतापूर्वक शास्त्रीय ऊहापोह के पचड़े में नहीं पड़े। इनके उदाहरण ग्वाल के उदाहरणों से सुन्दर बन पड़े हैं। ग्वाल की भांति इतर पूर्ववर्ती प्रसिद्ध कवियों के छन्दों को इन्होंने उदाहृत करने में संकोच नहीं किया। काव्य के दशांग का इन्होंने एक सफल काव्य पण्डित की भांति विवेचन किया है। गोविन्द कवि पहले है और आचार्य बाद में और ग्वाल मूलतः आचार्य है तदनन्तर कवि। कुछ स्थलों को गोविन्द चलता कर गये हैं, जबकि ग्वाल ने प्रत्येक विषय को गम्भीर विवेचन का विषय बनाया है।

प्रतापसाहि उत्कृष्ट कोटि के रसवादी कवि और सामान्य कोटि के आचार्य हैं। ये काव्य शास्त्रीय विषय से भलीभांति अवगत थे। इनके अधिकांश उदाहरण शास्त्र सम्मत विशुद्ध और काव्य के उत्कृष्ट आदर्श हैं। ग्वाल की सी विवेचन प्रतिभा और विषय वर्णन की विशदता का इनमें अभाव है। प्रतापसाहि का महत्व उनकी सूक्ष्म रस चेतना के कारण अधिक है। काव्य के अन्य क्षेत्रों में उनकी गति है, गहरी पैठ नहीं। इनका शास्त्र गम्भीर

विवेचन का थोड़ा बहुत आभास मात्र देता है। तथापि इन का आचार्यत्व प्रभावित करने वाला है, परन्तु ग्वाल के आचार्यत्व के आगे कुछ हल्का पड़ता है।

निष्कर्ष—उपर्युक्त तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर निश्चयपूर्वक यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हिन्दी मे आचार्य की जो मान्य परिभाषा और विशेषताएँ एक उच्च कोटि के रीति ग्रन्थकार के लिये विद्वानों ने निर्धारित की है, वे समग्र रूप में ग्वाल में विद्यमान है। अब तक खेद का विषय यह रहा है कि इनके ग्रन्थो के अनुपलब्ध रहने से इनके आचार्यत्व का सम्यक् परीक्षण नही हो पाया और इस रूप में आज से पूर्व उनका काव्य अभी प्रस्तुत नही हो सका। सभी दृष्टियो से अध्ययन करने पर वे हिन्दी के आचार्यों की प्रथम पंक्ति मे बठने के अधिकारी हैं।

कवि के रूप मे—शृंगारिक मुक्तककारों की परम्परा मे विद्यापति, केशव, बिहारी, देव, मतिराम, घनानन्द और पद्माकर प्रमुख कवि हैं। इनमें सूरदास को भी लिया जा सकता है परन्तु दृष्टिकोण काव्य प्रेरणा तथा प्रतिभा के धरातल की दृष्टि से विद्वानों ने उन्हें इस श्रेणी से पृथक रखना ही उचित समझा है। विद्यापति मानव शृंगार, विशेषकर मानव सौंदर्य के कवि है। उनमें सौंदर्य की सूक्ष्म और रसमय चेतना की व्याप्ति है। इस नाते उनकी तुलना मे ग्वाल आते ही नही। देव में आत्म रस और नीति तत्व प्रभूत मात्रा में मिलता है। इनमें भाषा और भाव का मान्य संगीत भी प्रचुरता से पाया जाता है। ग्वाल उक्ति-वैचित्र्य प्रधान कवि हैं। उनमें देव की कविता की आत्म निलयता, आत्म रस सांगीतिकता भावुकता आदि नहीं मिलती। केशव और बिहारी दो ऐसे कवि हैं जिनकी कविता अत्यन्त लोकप्रिय रही हैं। दोनो में ही चमत्कार प्रियता के प्रति विशेष रुचि है। इन नाते ग्वाल की तुलना इन दोनों से की जा सकती है। परन्तु रसार्द्रता तन्मयता एव द्रवणशीलता में ग्वाल केशव के समकक्ष और बिहारी से हलके बैठते हैं। उक्ति वैचित्र्य में ग्वाल दूर की कौड़ी लाते हैं और अनुप्रास एव उत्प्रेक्षा के धनी भी हैं। इस क्षेत्र में वे केशव और बिहारी से आगे हैं। काव्य शिल्प की दृष्टि से ग्वाल का पक्ष सामान्यतः उक्त दोनों कवियों के समान ही प्रबल है। यहाँ बिहारी की कला केशव और ग्वाल दोनो से अधिक सचेष्ट है। सौंदर्य के सूक्ष्म तत्वों को पकड़ कर शब्द बद्ध करने में ग्वाल बिहारी की भांति ही सक्षम हैं परन्तु ग्वाल सौन्दर्य में उतने रस मग्न नही है, जितने बिहारी। दोनों की सामासिक शैली

॥ सौन्य के पूर्ण चित्र उतारने मे बिहारी जितने कुशल है, ग्वाल कवित्त और सवयो म भी उतनी कुशलता से सौन्य को नही बाध पाय। केशव के समान ग्वाल म आलकारिक अनौचित्य नही दिखता। पर तु वे केशव की तुलना के रसिक नहीं ठहरते। इन दोनों कवियो के कवित्व पर उनका आचाय सवत्र आरुढ रहता है। चमत्कार प्रियता के लोभ म केशव की भाति ग्वाल ने भी कही कही उक्ति की वक्रता की उपक्षा कर दी है।

देव प्रेमानुभूति की तन्मयता के रसज्ञ कवि हैं। उन के काय की आत्मा बिहारी क का य की आत्मा से भी अधिक समृद्ध है। ग्वाल यहा देव की तुलना मे पर्याप्त हलके पडते हैं। न तो उनकी भाषा देव की भाषा के समान प्रौढ है और न उनका शिल्प ही देव के समान विकसित और सामज स्यमय है। ग्वाल मे नाद सौदय और सगीतात्मकता तो है परन्तु देव के समान औज्ज्वल्य और गतिमय प्रवाह का उनक का य म अभाव है। जहाँ ग्वाल की दृष्टि वस्तु परक है, वहा देव की भाव परक। अत ग्वाल की सौदय चेतना देव की सौ दय चेतना के समान पूणत रस मग्न नही है। निश्चय ही ग्वाल की कविता देव की कविता की तुलना म पर्याप्त हलकी है।

मतिराम का भाव पक्ष ग्वाल के भाव पक्ष स अधिक सबल है। भाषा की प्रौढता और स्वच्छता भी मतिराम की कविता मे ग्वाल की कविता से कही अधिक है। मतिराम भाव गाम्भीय म भी ग्वाल स बढे चढे हैं। उधर ग्वाल का कलापक्ष मतिराम के कलापक्ष से भारी बैठता है। मतिराम का शिल्प ग्वाल के शिल्प से अधिक मँजा हुआ है। उक्ति वचित्र्य के दोनो ही कवि धनी है। परन्तु कल्पना की उडान मे ग्वाल मतिराम को पीछ छोड जाते हैं। ग्वाल की भाषा म नाद प्रकृति और सगीतात्मकता मतिराम से अधिक बढी चढी है।

घनान द ने प्रेमानुभूति की गहराइया म डूब कर कविता की है। उन की अनुभूति की सचाई और आत्म रस ग्वाल म तो क्या पूरे रीति काव्य म ही विरल है। घनान द का सा आत्म तत्व ग्वाल म शायद ही कहीं मिले। लाक्षणिक वक्रता तीव्रता, तन्मयता और अभूतपूव सम्प्रेषणीयता, जो घना न द के काव्य के निजी गुण हैं ग्वाल के काव्य म ढूँढने स नहीं मिलत।

पद्माकर भावानुभूति के गम्भीर कवि हैं। आत्म तत्व की व्यापकता, अनुभूति की सचाई, स्निग्धता और कोमलता में ग्वाल उनस पिछडे हुए हैं। पद्माकर की कविता का कलापक्ष ग्वाल की कविता क —

परिशिष्ट [ख]

हिन्दी ग्रन्थ सूची

आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका	डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, १९५२ ई० संस्करण इलाहाबाद।
उर्दू साहित्य का इतिहास	सैयद ऐहतिशाम हुसन, १९५४ ई० संस्करण।
उर्दू साहित्य परिचय	प० हरी शंकर शर्मा प्रथम संस्करण, आगरा।
उर्दू काव्य की एक नई धारा	उपेन्द्र नाथ अश्क' १९४१ ई० इलाहाबाद।
उद्धव शतक	बा० जगन्नाथ दास रत्नाकर, १९४६ ई०।
उन्नीसवीं शताब्दी	डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय प्रथम संस्करण १९६३ ई० इलाहाबाद।
कविता कौमुदी (प्रथम भाग)	प० राम नरेश त्रिपाठी छटा संस्करण स० १९९० वि०।
कविवर पद्माकर और उनका युग	डा० व्रज नारायण सिंह, प्रकाशन अनुसन्धान प्रकाशन प्र० संस्करण १९६६ ई०, कानपुर।
कविता मे प्रकृति चित्रण	डा० रामेश्वरप्रसाद खण्डेलवाल १९५४ ई०।
काव्य कल्पद्रुम (प्रथम भाग रस मंजरी)	सेठ कन्हैया लाल पोद्दार स० २००९ वि०, मथुरा।
काव्य कल्पद्रुम (द्वितीय भाग अलंकार मंजरी)	सेठ कन्हैया लाल पोद्दार स० २००९ वि०, मथुरा।
काव्यानुशीलन	डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, रतन प्रकाशन मन्दिर प्रथम संस्करण आगरा।
काव्य कानन	राजा चक्रधर सिंह, प्र० साहित्य समिति राय गढ़ प्रथम संस्करण स० १९९३ वि०।
काव्य दर्पण	प० राम दहिन मिश्र, द्वितीय संस्करण।
काव्य शास्त्र	डा० भगीरथ मिश्र विश्वविद्यालय गोरखपुर, प्रथम संस्करण १९५७ ई०।
काव्य और संगीत का पारस्परिक सम्बन्ध	डा० उमा मिश्र, प्रथम दिल्ली।

काव्य प्रभाकर	श्री जगन्नाथ प्रसाद भानु प्रथम संस्करण सं० १९६६ वि०, बम्बई।
केशव ग्रन्थावली	सं० पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, १९५४ ई०।
ग्वाल ग्रन्थावली (हस्तलिखित)	संकलनकर्त्ता भगवान सहाय पचौरी 'भवेश',।
ग्वाल कवि	श्री प्रभु दयाल मीतल प्र० साहित्य संस्थान, मथुरा प्र० सं० २०१७ वि०।
ग्वाल रत्नावली	कवि किंकर प्र० भारतवासी प्रेस, इलाहाबाद, सं० १९४५ ई०।
ग्वाल स्मृति ग्रन्थ	सम्पादक—भगवान सहाय पचौरी 'भवेश', प्रका० ब्रज साहित्य मंडल मथुरा, अप्रैल सन् १९६८ ई०।
गोविन्द ग्रन्थावली (हस्तलिखित)	संकलनकर्त्ता भगवान सहाय पचौरी भवेश मथुरा।
गोपी प्रेम पीयूष प्रवाह	सम्पादक कवि रत्न नवनीत चतुर्वेदी बम्बई भूषण यंत्रालय मथुरा, प्रथम संस्करण।
गोपालराय ग्रन्थावली (हस्तलिखित)	संकलनकर्त्ता भगवान सहाय पचौरी भवेश' मथुरा।
घनानन्द और मध्य काल की स्वछन्द काव्य धारा	डा० मनोहर लाल गौड़ नागरी प्रचारिणी सभा बनारस प्रथम संस्करण।
चैतन्य मत और ब्रज साहित्य	श्री प्रभु दयाल मीतल, सं० २०१९ वि०।
छन्द प्रभाकर	श्री जगन्नाथ प्रसाद भानु, संस्करण १९६२।
ठाकुर ठसक (कविवर ठाकुर कृत)	सम्पादक लाला भगवानदीन, प्रथम संस्करण सं० १९२३ वि० काशी।
ठाकुर शतक (कविवर ठाकुर कृत)	सम्पादक डा० काशी प्रसाद सं० १९६१ वि० काशी।
दरबारी संस्कृति और हिन्दी मुक्तक	डा० त्रिभुवन सिंह प्रथमावृत्ति, सन् १९५८ ई०।
दिग्विजय भूषण	गोकुल प्रसाद ब्रज सम्पादक डा० भगवतीशरण सिंह सं० २०१६ वि०।
गोविन्दानन्द घन (हस्तलिखित)	कविवर गोविन्द।
दीन दयाल गिरि ग्रन्थावली	सम्पादक डा० श्याम सुन्दर दास, सं० १९७६
देव और उनकी कविता	डा० नगेन्द्र तीसरा संस्करण १९६० ई०।

देव दशन	श्री हर दयालु सिंह सस्करण १६४१ ई० ।
नन्दकिशोर ग्रन्थावली	सकलनकर्ता भगवान सहाय पचौरी 'भवेश'।
नवीन सग्रह	श्री हफीजुल्ला खा हाफिज, १६३४ ई० ।
नखशिख हजारा (परमानन्द सुहाने)	नवल किशोर प्रेस, लखनऊ स० १८६३ वि० ।
नखशिख	मुशी गिरधारी लाल कायस्थ, १६०२ ई०, लखनऊ प्रिंटिंग प्रेस लखनऊ ।
नायिका भेद	प० हरि शकर शर्मा, आगरा ।
नायक नायिका भेद	डा० छैल बिहारी गुप्त राकेश, १६५२ ई० ।
निम्बार्क माधुरी	श्री ब्रह्मचारी बिहारी शरण, वृन्दावन ।
पद्म कर पचामृत	प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्र० सस्करण ।
पद्माकर ग्रन्थावली	प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र प्रथम सस्करण ।
पद्माकर रत्नावली	कवि किंकर प्रथम सस्करण सन् १६५० ई० ।
पुस्तक साहित्य	डा० माता प्रसाद गुप्त ।
पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ	प्रथम स० डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, प्र० ब्रज साहित्य मडल, मथुरा, स० २०१० ।
पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास	प० चन्द्रकान्त वाली, प्र० नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम सस्करण १६६२ ई० ।
पजाब का हिन्दी साहित्य	श्री सत्यपाल गुप्त, प्र० हिन्दी साहित्य सम्मेलन पटियाला सन् १६५६ ई० ।
बिहारी और उनका साहित्य	डा० हरवश लाल शर्मा एव डा० परमानन्द शास्त्री, प्रथम सस्करण, अलीगढ ।
ब्रज भाषा रीति शास्त्र ग्रन्थ कोश	(छन्द, अलकार, शास्त्र ग्रन्थ) हस्तलिखित, प० जवाहर लाल चतुर्वेदी, प्र० हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग प्र० सस्करण, १६६५ ई० ।
ब्रज भाषा साहित्य का नायिका भेद	श्री प्रभु दयाल मीतल मथुरा, स० २००५ वि० ।
ब्रज साहित्य का इतिहास	डा० सत्येन्द्र प्र० भारती भवन इलाहाबाद, प्रथम सस्करण सन् १६६७ ई० ।
ब्रज भाषा साहित्य का ऋतु सौन्दय	श्री प्रभु दयाल मीतल मथुरा, स० २००७ वि० ।

ब्रह्म भट्ट कवि सरोज — प० दुर्गा प्रसाद शर्मा, मथुरा स० २०१८।

विजय हजारा — मौलवी अब्दुल हक डूमरपुर स० १९७१

ब्रज का इतिहास — डा० सत्येन्द्र भाग १ और २ अ० भा० ब्रज साहित्य मडल, स० २०१५ वि० स करण।

ब्रज का सास्कृतिक इतिहास — खण्ड १ श्री प्रभुदयाल मीतल सन् १९६७ सस्करण दिल्ली।

भारतीय मूर्तिकला — डा० रायकृष्ण दास, प्रथम सस्करण।

भारत की मूर्तिकला — डा० रायकृष्ण दास सस्करण स० २००७ वि०

भारतीय सगीत का इतिहास — श्री उमेश मिश्र प्रथम सस्करण १९५० ई०।

भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक रेखायें — श्री परशुराम चतुर्वेदी प्र० सस्करण १९५५ ई०।

भारतीय काव्य शास्त्र की परम्परा — डा० नगेन्द्र प्रका० नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, सन् १९६४ ई०।

भारतीय साहित्य शास्त्र — श्री बलदेव उपाध्याय द्वितीय भाग काशी।

भारतीय काव्य शास्त्र की परम्परा — डा० नगेन्द्र, प्रथम सस्करण स० २०१३ वि०।

भारतीय दर्शन — बलदेव उपाध्याय,१९४२ ई० सस्करण, काशी

मध्य युगीन हिन्दी साहित्य मे नारी भावना — डा० उषा पाडेय सन् १९५९ ई०।

मसनवी मीर हसन — ल० मीर हसन १९०९ ई० सस्करण कानपुर।

मतिराम ग्रन्थावली — श्री कृष्ण बिहारी मिश्र प्रथम सस्करण।

मतिराम — कविऔर आचार्य डा० महेन्द्र कुमार, १९६० ई० दिल्ली।

मध्य युगीन भारतीय सस्कृति — डा० युसूफ हुसन, प्रथम सस्करण अलीगढ।

मनोजमजरी भाग १, २, ३, ४ नकछेदी तिवारी १९०६ वि०।

मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन — डा० मोतीलाल गुप्त प्रथम राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान प्रथमावृत्ति, स०२०१९ वि०।

मान मयक — श्री हर दयाल सिंह, प्रथम सस्करण २००२ वि० इलाहाबाद।

मिश्र बन्धु विनोद — द्वितीय भाग, मिश्र बन्धु प्रका० गगा पुस्तक कार्यालय लखनऊ द्वितीय बार स० १९८४।

मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक तात्विक अध्ययन — डा० सत्येन्द्र, प्रथम सस्करण, आगरा।

रस सिद्धान्त — डा० नगेन्द्र सस्करण १९६४ ई०, दिल्ली।

रस रत्नाकर — डा० हरि शकर शर्मा, प्रथम सस्करण, सन् १९४५ ई० आगरा।

रस चन्द्रिका — कविवर हरि देव कृत, सम्पादक बाबा कृष्ण दास स० २०२२ वि, मथुरा।

रसिक विनोद — कविवर चन्द्रशेखर वाजपेयी कृत, सम्पादक डा० रामकृष्ण वर्मा, प्रथम सस्करण, काशी।

रस मीमासा — आचार्य राम चन्द्र शुक्ल सम्पादक प० विश्व नाथ प्रसाद मिश्र द्वितीय सस्करण काशी।

रस कुसुमाकर — राजा प्रताप नारायण सिंह, इण्डियन प्रेस इलाहाबाद, सन् १८९४ ई० काशी।

रसिक गोविन्द (हस्तलिखित) — कविवर गोविन्द कृत।

राजस्थान में हिन्दी — के हस्तलिखित ग्रन्थो की खोज भाग ३।

राधावल्लभ सम्प्रदाय (सिद्धान्त और साहित्य) — डा० विजयेन्द्र स्नातक, २०१४ वि० दिल्ली।

रीतिकाल और आधुनिक हिन्दी कविता — डा० रमेश कुमार शर्मा प्रका० विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्र० सस्करण १९६७ ई०।

रीति काव्य की भूमिका — डा० नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पचम सस्करण सन् १९६४ ई०।

रीति काव्य और चित्रकला — डा० गिरीश किशोर अग्रवाल, अलीगढ़ टकित शोध प्रबन्ध, १९६८ ई०।

रीतिकालीन कवियों की प्रेम व्यजना — डा० बच्चन सिंह, प्र० ना० प्र० सभा वाराणसी प्रथमावृत्ति स० २०१५ वि०।

रीतिकालीन काव्य में सम्पता का प्रयोग — डा० अरविन्द पाडेय प्र० जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, प्रथम सस्करण सन् १९६८ ई०।

रीतिकालीन अलकारों का शास्त्रीय विवेचन — डा० ओम प्रकाश शर्मा, दिल्ली, सस्करण १९६६ ई०।

रीति श्रृगार — डा० नगेन्द्र प्रका० गौतम बुक डिपो, दिल्ली।

रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि — डा० शिवलाल जोशी, प्रथम सस्करण १९६२ ई० दिल्ली।

साहित्य और संस्कृति	डा० देवराज, नन्द किशोर एण्ड ब्रादर्स, बनारस प्रथम संस्करण।
सांस्कृतिक परम्परा और साहित्य	श्री तारक नाथ बाली, प्रथम संस्करण १९५९ ई०।
सिख इतिहास	डा० देश राज, सं० २०११ वि० गंगा नगर राजस्थान।
सिखों का उत्थान और पतन	नन्द कुमार देव शर्मा, ना० प्र० सभा काशी।
सुन्दरी सर्वस्व	पं० मन्ना लाल 'द्विज कवि' बनारस, सं० १८४६ वि० चन्द्रप्रभा काशी प्रेस।
सुन्दरी तिलक	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र काशी, मथुरा, बारहवां संस्करण सं० १८३३ वि०।
सुन्दरी तिलक	नवल किशोर प्रेस, लखनऊ सन् १९३३ ई० बारहवीं बार।
हम्मीर हठ	कविवर चन्द्र शेखर वाजपेयी कृत संपा० बा० जग नाथ दास रत्नाकर, सं० १९२८ ई०।
हफीजुल्ला का हजारा	हफीजुल्ला खां हाफिज सन् १९१५ कानपुर।
हिन्दी ध्वन्यालोक	सं० डा० नगेन्द्र, प्रथम संस्करण दिल्ली।
हिन्दी काव्यालंकार सूत्र	(आचार्य वामन) सं० डा० नगेन्द्र, प्र० संस्करण, सं० २०११ वि० दिल्ली।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य पं० राम चन्द्र शुक्ल, प्र० काशी ना० प्र० सभा तेरहवां पुनर्मुद्रण सं० २०१८ वि०
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' सन् १९३१।
हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास	पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्र० पुस्तक भण्डार लहेरिया सराय, द्वितीय संस्करण सं० १९९७ वि०।
हिन्दी साहित्य का ऐतिहासिक अनुशीलन	डा० रामकुमार वर्मा इलाहाबाद, प्र० संस्करण।
हिन्दी साहित्य द्वितीय खण्ड	सं० डा० धीरेन्द्र वर्मा, प्रका० भारतीय हिन्दी परिषद, प्रयाग प्र० संस्करण सन् १९५९ ई०
हिन्दी साहित्य का अतीत, (दूसरा भाग)	आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्र० वाणी वितान प्रकाशन वाराणसी, द्वितीय संस्करण, सं० २०२३ वि०।

हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य चतुरसेन शास्त्री, सन् १९४६ संस्करण, दिल्ली।
हिन्दी के अलंकार ग्रंथों पर संस्कृत का प्रभाव	डा० कुन्दन लाल जैन, १९६४ बरेली।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	पं० सूर्यकान्त शास्त्री प्रथम संस्करण लाहौर
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० कृष्ण शंकर शुक्ल प्रथम संस्करण।
हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास	डा० भगीरथ मिश्र, लखनऊ विश्व विद्यालय द्वितीय संस्करण सं० २०१५ वि०।
हिन्दी रीति साहित्य	डा० भगीरथ मिश्र प्र० राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९५६ ई०।
हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	डा० रामरतन भटनागर, प्र० साथी प्रकाशन सागर, तृतीय संस्करण सन् १९६६ ई०।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० गिरधारी लाल शास्त्री प्र० भारत प्रकाशन मन्दिर अलीगढ़, प्रथम संस्करण १९६६।
हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	डा० गुलाब राय प्रका० साहित्य रत्न भंडार, आगरा।
हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास (षष्ठ भाग)	प्र० सम्पादक डा० नगेन्द्र, नागरी प्रचा० सभा वाराणसी, प्रथम संस्करण सं० २०१५ वि०।
हिन्दी काव्य शास्त्र में दोष विवेचन	डा० रणवीर सिंह दिल्ली (अप्रकाशित शोध प्रबंध)।
हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास	माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ नादर्न हिन्दुस्तान का हिन्दी अनुवाद अनु० डा० किशोरी लाल गुप्त प्र० हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय।
हिन्दी अलंकार साहित्य	डा० ओम प्रकाश प्रथम संस्करण, दिल्ली।
हिन्दुई साहित्य का इतिहास	गार्सां द तासी के फ्रांसीसी भाषा में मूल ग्रंथ 'इस्त्वार दल लितरेत्यूर ऐंदूई ऐ ऐंदुस्तानी' का अनुवाद, हिन्दी रूपान्तरकार डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय। १९५३ ई० इलाहाबाद।
हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ	डा० जय किशन प्रसाद षष्ठ संस्करण, सन् १९६७ ई० विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण	डा० किरण कुमारी गुप्ता हिन्दी सा० स० प्रयाग, २००६ वि०।

हिम्मत बहादुर विरुदावली — (कविवर पद्माकर कृत), सम्पादक लाला भगवानदीन दूसरा संस्करण, काशी ।

हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव — डा० सरनामसिंह सन् १८५२ ई० दिल्ली ।

हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों की खोज रिपोर्ट — नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सन् १६००, १६०१, १६०४, १६०५, १६०६ ८, १६०६-११, १६१७ १६, १६२० २२ १६२३-२५, १६२६ २८ १६२६ ३१, १६३२ ३४, १६ ३५ ३७ १६३८ ४० १६४१ ४३ ।

हिन्दी साहित्य का इतिहास — कृष्ण शंकर शुक्ल ।

आधुनिक हिन्दी साहित्य — डा० राम गोपाल सिंह चौहान विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा १६६५ ।

आधुनिक हिन्दी साहित्य — डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय तृतीय संस्करण १६-५४ ई० १५, २०, २१, २४ हिन्दी परिषद् विश्वविद्यालय आगरा ।

आधुनिक साहित्य — नन्द दुलारे वाजपेयी भारती भण्डार इलाहाबाद चतुर्थ सं० २०२२ वि० ।

हिन्दुत्व — रामदास गौड १६८५ वि० संस्करण काशी ।

हिन्दी और काव्य — डा० टीकम सिंह तोमर, १६५४ ई० ।

हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास — राम बहोरी शुक्ल एवं डा० भगीरथ मिश्र हिन्दी भवन जालन्धर एवं प्रयाग ।

हिन्दी साहित्य का विकास और प्रमुख प्रवृत्तियाँ — डा० गोविन्दराम शर्मा हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली प्रथम संस्करण ।

हिन्दी रीति परंपरा के प्रमुख आचार्य — डा० सत्यदेव चौधरी प्रथम संस्करण, इलाहाबाद ।

हिन्दी काव्य मे शृंगार परंपरा और महाकवि बिहारी — डा० गणपति चन्द्र गुप्त, प्रथम संस्करण, आगरा ।

हिन्दी साहित्य और प्रगति — डा० विजयेन्द्र स्नातक दिल्ली ।

हिन्दी साहित्य मे प्रकृति चित्रण — डा० किरण कुमारी गुप्त ।

हिन्दी भाषा और साहित्य — डा० उदय नारायण तिवारी ।

हिन्दी विश्व भारती — खण्ड ८ सं० कृष्ण वल्लभ द्विवेदी

हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य चतुरसेन शास्त्री, सन् १९४८ संस्करण, दिल्ली ।
हिन्दी के अलंकार ग्रंथों पर संस्कृत का प्रभाव	डा० कुंदन लाल जैन, १९५४ बरेली ।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	प० सूर्यकांत शास्त्री प्रथम संस्करण लाहौर
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० कृष्ण शंकर शुक्ल, प्रथम संस्करण ।
हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास	डा० भगीरथ मिश्र, लखनऊ विश्व विद्यालय द्वितीय संस्करण सं० २०१५ वि० ।
हिन्दी रीति साहित्य	डा० भगीरथ मिश्र, प्र० राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९५६ ई० ।
हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	डा० रामरतन भटनागर, प्र० साथी प्रकाशन सागर, तृतीय संस्करण सन् १९६६ ई० ।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० गिरधारी लाल शास्त्री, प्र० भारत प्रकाशन मंदिर अलीगढ़, प्रथम संस्करण १९६६ ।
हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	डा० गुलाब राय प्रका० साहित्य रत्न भंडार, आगरा ।
हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास (षष्ठ भाग)	प्र० सम्पादक डा० नगेन्द्र, नागरी प्रचा० सभा वाराणसी, प्रथम संस्करण सं० २०१५ वि० ।
हिन्दी काव्य शास्त्र में दोष विवेचन	डा० रणवीर सिंह दिल्ली (अप्रकाशित शोध प्रबंध) ।
हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास	माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ नादर्न हिंदुस्तान का हिन्दी अनुवाद अनु० डा० किशोरी लाल गुप्त प्र० हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय ।
हिन्दी अलंकार साहित्य	डा० ओम प्रकाश प्रथम संस्करण, दिल्ली ।
हिन्दुई साहित्य का इतिहास	गार्सां द तासी के फ्रांसीसी भाषा के मूल ग्रंथ 'इस्त्वार दल लितरेत्यूर ऐंदूई ए ऐंदुस्तानी' का अनुवाद, हिन्दी रूपांतरकार डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय । १९५३ ई० इलाहाबाद ।
हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियां	डा० जय किशन प्रसाद षष्ठ संस्करण सन् १९६७ ई० विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा ।
हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण	डा० किरण कुमारी गुप्ता, हिन्दी सा० स० प्रयाग, २००६ वि० ।

हिम्मत बहादुर विरुदावली (रविचर पद्माकर कृत), सम्पादक लाला भगवानदीन, दूसरा सस्करण, काशी।

हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव डा० सरनामसिंह सन् १८५२ ई० दिल्ली।

हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थो की खोज रिपोर्ट नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सन् १६००, १६०१ १६०४, १६०५ १६०६ ८, १६०६ ११, १६१७ १६, १६२० २२, १८२३-२५, १८२६ २८ १६२८ ३१, १६३२ ३४, १६ ३५ ३७ १८३८ ४० १८४१ ४३।

हिन्दी साहित्य का इतिहास कृष्ण शकर शुक्ल।

आधुनिक हिन्दी साहित्य डा० राम गोपाल सिंह चौहान विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा १६६५।

आधुनिक हिन्दी साहित्य डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय तृतीय सस्करण १६-५४ ई० १५ २० २१, २४ हिन्दी परिषद, विश्वविद्यालय आगरा।

आधुनिक साहित्य न द दुलार बाजपेयी भारती भण्डार इलाहाबाद चतुर्थ स० २०२२ वि०।

हिन्दुत्व रामदास गौड १६६५ वि० सस्करण, काशी।

हिन्दी वीर काव्य डा० टीकम सिंह तोमर, १६५४ ई०।

हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास राम बहोरी शुक्ल एव डा० भगीरथ मिश्र हिन्दी भवन जालधर एव प्रयाग।

हिन्दी साहित्य का विकास और प्रमुख प्रवृत्तियाँ डा० गोविन्दराम शर्मा, हिन्दी साहित्य ससार दिल्ली प्रथम सस्करण।

हिन्दी रीति परपरा के प्रमुख आचार्य डा० सत्यदेव चौधरी, प्रथम सस्करण, इलाहाबाद।

हिन्दी काव्य मे शृगार परपरा और महाकवि बिहारी डा० गणपति च द्र गुप्त प्रथम सस्करण, आगरा।

हिन्दी साहित्य और प्रगति डा० विजयेन्द्र स्नातक दिल्ली।

हिन्दी साहित्य मे प्रकृति चित्रण डा० किरण कुमारी गुप्त।

हिन्दी भाषा और साहित्य डा० उदय नारायण तिवारी।

हिन्दी विश्व भारती खण्ड ८ स० कृष्ण वल्लभ द्विवेदी।

(ख) हिन्दी पत्रिकायें

पत्रिका	विवरण
इन्दु	कला ६ खण्ड २ अगस्त १९१५ ई०।
कादम्बिनी	वर्ष ७ अंक ७ मई १९६७ ई०।
देशबन्धु	जनवरी १८८६ ई०।
धर्मयुग	होली अंक, १९६८ ई०।
ब्रज भारती	वर्ष १ अंक १, २, ३, ५, ७ ११ फाल्गुन सं० १९९७ वि०, ज्येष्ठ आषाढ़ भाद्रपद माघ सं० १९९८ वि० ज्येष्ठ १९९९ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष ४ अंक ७, ८ ९ आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष सं० २००३ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष ५ अंक २ आषाढ़ सा० भाद्रपद २००४।
ब्रज भारती	वर्ष ६ अंक ३ ४ आश्विन सं० २००५ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष ७ अंक १ २ चैत्र से भाद्रपद २००६।
ब्रज भारती	वर्ष ९ अंक ४ पौष माघ, फाल्गुन सं० २००८ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष ११ अंक ५ पौष फाल्गुन २०१० वि०।
ब्रज भारती	वर्ष १४ अंक १ ज्येष्ठ २०१३ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष २२ अंक १ ज्येष्ठ २०२५ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष १५ अंक ३ मार्गशीर्ष सं० २०१४ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष १७ अंक १, २, ३ ज्येष्ठ २०१६ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष २० अंक १ ज्येष्ठ २०२३ वि०।
मर्यादा	भाग ६, संख्या २ ३ जून जुलाई १९१३ ई०।
माधुरी	वर्ष ११ भाग २२ संख्या १ मई १९३४ ई०।
विद्यार्थी सम्मिलित हरिश्चन्द्र चन्द्रिका और मोहन चन्द्रिका	उदयपुर, कला ८ किरण ३ संवत् १९३८ वि०।
विशाल भारत	वर्ष २ अंक १ २ अप्रैल व मई १९२८ ई०।
विशाल भारत	एण्डज अंक जनवरी १९४१ ई०।
वीणा	वर्ष ८ अंक ११ सितम्बर १९३५ ई०।
वीणा	नवम्बर १९५८।
विश्वमित्र	वर्ष ५ खंड ९ अंक १ अक्टूबर १९३६ ई०।
सरस्वती	दिसम्बर १९३३, जनवरी १९५६ ई०।
सम्मेलन पत्रिका	भाग २१ सं० २००१ वि०।

सप्तसिंधु	वीर काव्य, विशेषांक, वर्ष २, अंक ६, जून १९५५ ई० ।
"	शृंगारिक कविता, विशेषांक वर्ष २ अंक ७, जुलाई १९५५ ।
"	उपदेशात्मक काव्य, अंक वर्ष ३ अंक १ २ जनवरी फरवरी १९५६ ई० ।
"	वर्ष ३ अंक १२ दिसम्बर १९५६ ई० ।
"	वर्ष ४ अंक ३ मार्च १९५७ ई० ।
"	वर्ष ४ अंक ६ जून १९५७ ई० ।
"	वर्ष ४ अंक ११ नवम्बर १९५७ ई० ।
"	वर्ष ५ अंक १ जनवरी १९५८ ई० ।
"	वर्ष १४ अंक १० अक्टूबर १९६७ ई० ।
"	दिसम्बर १९६२ ई० ।
सुकवि	वर्ष १५ अंक ८ जून १९४३ ई० ।
श्रीकृष्ण ■ देश	अक्टूबर १९६७ ई० ।
साप्ताहिक हिंदुस्तान	दिनांक १७ मार्च १९६८ ई० वर्ष १८ अंक २५ ।
साहित्य संदेश	रीति काव्यालोचनांक १९५९ ई० आलोचना परिशिष्टांक १९५२ ई०, शोध विशेषांक १९६० ६१ ई, साहित्य शास्त्र विशेषांक १९६२ ६३ ई० ।
हिंदी अनुशीलनांक	धीरेंद्र वर्मा, विशेषांक, वर्ष १३ अंक १-२ ।
कानदा	वर्ष १ अंक १ सन् १९६७ ई० ।

(ख) संस्कृत ग्रन्थ

अमरु शतक	(अमरु), अनुवादक कमलेश दत्त त्रिपाठी, प्रथम संस्करण ।
आर्या सप्त शती	काव्यमाला सीरीज संस्करण १८८५ ई० ।
उज्ज्वल नीलमणि	श्री रूप गोस्वामी स० बाबा कृष्ण दास ।
काम सूत्र	वात्सायन प्र० श्याम काशी प्रेस, मथुरा ।
काव्य प्रकाश	(मम्मटाचार्य) अनुवादक, पं० हरिमंगल मिश्र, द्वितीय संस्करण, इलाहाबाद ।

खेद प्रकाश

हम खेद है कि विद्युत अवरोध के कारण इस पुस्तक के मुद्रण म इतना अधिक समय लग गया कि जो स्तर निर्धारित किया गया था उसम क्रम भग यदा-कदा हो गया है तथा मशीन प्रूफो मे कही कहीं ऐसी अशुद्धियाँ रह गयी है जो हमारे गौरव क अनुकूल नही कही जा सकती हैं।

कागज की कमी को महसूस करते हुये हमने एसी व्यवस्था बनायी थी इस पुस्तक पर उसका प्रभाव न पड सकें। खद है अति वृष्टि क कारण पुस्तक के लिय सुरक्षित रख कागज का एक अश नष्ट हो जाने क फल स्वरूप पिछले तीस चालीस पृष्ठो मे हमे जो कागज लगाना पडा है। उसका हम अत्याधिक खद है।

आशा है विज्ञ पाठक इस स्वीकारोक्ति मे सन्तुष्ट होगे और हमारी परि-स्थितियो एव मजबूरियो को ध्यान म रख कर इस पुस्तक के इन दोषो को अधिक महत्व न देंगे।

—प्रमोद बिहारी

परिशिष्ट (क)

चित्र १

कविरत्न स्वर्गीय श्री नवनीत चतुर्वेदी द्वारा नाथद्वारा के पेंटर वल्लभदास कन्हैयालाल द्वारा बनवाये गये रंगीन चित्र का छाया चित्र

महाकवि ग्वालजी मथुरा

खेद प्रकाश

हमे खेद है कि विद्युत अवरोध के कारण
अधिक समय लग गया कि जो स्तर निर्धारित कि
यदा-कदा हो गया है तथा मशीन प्रूफो मे कहीं
हैं जो हमारे गौरव के अनुकूल नही कही जा सक

कागज की कमी को महसूस करते हुये
इस पुस्तक पर उसका प्रभाव न पड सके। खेद
लिये सुरक्षित रखे कागज का एक अंश नष्ट
तीस चालीस पृष्ठो मे हमे जो कागज लगाना प
खेद है।

आशा है कि पाठक इस स्वीकारोक्ति
स्थितियों एवं मजबूरियों को ध्यान मे रख
अधिक महत्व न देंगे।

चित्र २
'बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखबास ।'—ग्वाल कवि ।
मथुरा नगर के मध्य चूना ककड मोहल्ले मे स्थित 'ग्वाल
हवेली' के नाम से प्रसिद्ध ग्वाल कवि द्वारा
निर्मित उनका निजी आवास ।
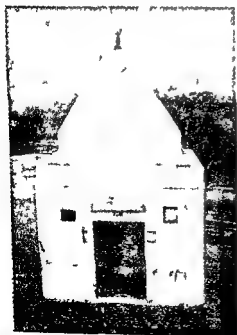
चित्र ३
'ग्वाल हवेली' के बाहर 'ग्वाल चबूतरा' नाम से प्रसिद्ध स्थान पर ग्वाल कवि ने पूजार्थ स १८२१ वि म अपने इष्ट देव भगवान शकर का मन्दिर निर्माण कराया जो आज भी 'ग्वालेश्वर मन्दिर' के नाम से प्रसिद्ध सार्वजनिक स्मारक है ।

चित्र २
'वासी वृंदा विपिन के श्री मथुरा सुखवास ।'—ग्वाल कवि ।
मथुरा नगर के मध्य चूना ककड़ मोहल्ले मे स्थित 'ग्वाल हवेली' के नाम से प्रसिद्ध ग्वाल कवि द्वारा निर्मित उनका निजी आवास ।
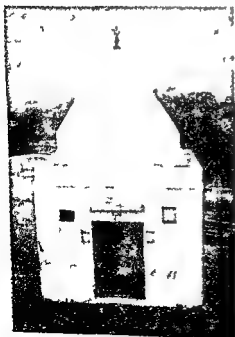
चित्र ३
'ग्वाल हवेली' के बाहर 'ग्वाल चबूतरा' नाम से प्रसिद्ध स्थान पर ग्वाल कवि ने पूर्वार्ध स १९२१ वि मे अपने इष्ट देव भगवान शकर का मंदिर निर्माण कराया जो आज भी 'ग्वालेश्वर मंदिर' के नाम से प्रसिद्ध सार्वजनिक स्मारक है ।

चित्र ४

मथुरा से प्राप्त प्रति भक्त भावन का प्रथम पृष्ठ

चित्र ५

भक्त भावन का अंतिम ११८ वा पृष्ठ

चित्र ८

[illegible] का प्रथम पृष्ठ—स्व० सेठ कन्हैयालाल पोद्दार की हस्तलिपि

चित्र ६

साहित्यानन्द का प्रथम पृष्ठ

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर की प्रति से

चित्र १०

साहित्यानन्द का अंतिम २५३ वां पृष्ठ